हिंदी के कवि और काव्य

(भाग २)

प्रकाशक—
हिंदुस्तानी एकेडेमी, संयुक्त प्रांत,
इलाहाबाद

मूल्य { कपड़े की जिल्द ३॥)
सादी जिल्द ३)

मुद्रक—
ओंकार प्रसाद गौड़, मैनेजर,
कायस्थ पाठशाला प्रेस व प्रिंटिंग स्कूल, प्रयाग

भूमिका

हिंदी के कवि और काव्य' के प्रथम और द्वितीय भाग प्रकाशित हो चुके हैं। यह संतोष का विषय है कि विद्वन्मंडली तथा विशेष कर हिंदी साहित्य के विद्यार्थियों के लिये यह उपयोगी सिद्ध हो सके हैं। इसी बीच प्रथम भाग को प्रयाग विश्व-विद्यालय ने हिंदी की एम्० ए० परीक्षा के लिये पाठ्य-पुस्तक बनाने का निश्चय कर लिया है। यह प्रथम भाग वीरगाथा काल से संबंध रखता है।

द्वितीय भाग में कबीर आदि प्रमुख संतों की श्रेष्ठ रचनाएँ तथा संत साहित्य का समालोचनात्मक अनुशीलन है। यह भाग हाल ही मे प्रकाशित हुआ है, अतः हिंदी जगत् का यथोचित ध्यान अभी तक नहीं आकृष्ट कर सका है।

अब यह तृतीय भाग हिंदी संसार के सामने उपस्थित किया जा रहा है। इस का संबंध हिंदी के प्रेमगाथा या दूसरे शब्दों में आख्यानक काव्य से है। इस में जायसी, नूरमुहम्मद, उसमान, निसार तथा आलम की रचनाएँ सगृहीत हैं।

इन मे से निसार कृत 'यूसुफ-ज़ुलेखा' तथा आलम कृत 'माधवानल-काम-कंदला अप्रकाशित ग्रंथ है। इस संग्रह मे पहले-पहल उक्त दोनों की रचनाएँ प्रकाशित हो रही हैं। स्मरण रहे कि यह आलम 'आलमकेलि' नामक ग्रंथ के रचयिता आलम से भिन्न हैं। खेद है कि अभी तक भ्रमवश सभी हिंदी साहित्य के इतिहास लेखक इन दोनों को अभिन्न मानते आये हैं। समालोचना खंड (पृ० १४) मे इस संबंध मे विशेष कहा गया है।

इस संग्रह मे सुविधा के लिये समालोचना खंड तथा संग्रह खंड अलग-अलग रक्खे गये हैं। पहले पाँचों कवियों की जीवनी तथा गवेषणा आदि फिर संग्रह—ऐसा क्रम रक्खा गया है।

संग्रह का क्रम ऐसा रक्खा गया है कि सब पढ़ने पर मूल कथा का सारांश स्पष्ट हो जाता है।

'माधवानल-कामकंदला' अद्यावधि अप्रकाशित तथा छोटा होने के कारण पूरा ले लिया गया है।

गणेशप्रसाद द्विवेदी

विषय-सूची

विनयशीलता में यह कवि उसमान से भी बाजी मार ले जाता है। पर जो भी हो, एक नवयुवक कवि की कविता मे यौवन की स्फूर्ति और उमंग का होना स्वाभाविक है, जिसका परिचय हमें बराबर इस काव्य में मिलता है।

कवि ने अपनी वंशावली या गुरु परंपरा का वर्णन नहीं किया है। स्तुति के रूप में इन्होंने 'सिरजनहार' ईश्वर का स्मरण किया है और उस के बाद अपने 'अरबी' नबी मुहम्मद साहब का स्मरण किया है। 'अपने कुल की रीति' का पालन करने के ये क़ायल थे। ये कहते हैं--

है मगु बहुत जगत महँ, तिन मगु की नहिं चाव।
आपन पंथ देखावहु, राखौं तापर पाँव॥
सुमिरौं चेत धरें मन ठाऊँ। अरबी नबी मुहम्मद नाऊँ॥
जा कहँ करता दरस देखाएउ। कै किरपा सब भेद बताएउ॥

रचना काल

ये अंतिम मुगल सम्राट मुहम्मद शाह के सम-कालीन थे और पैग़म्बर की स्तुति के बाद ही इन्होंने शाह की प्रशंसा की है--

करौं मुहम्मद साह बखानूं। है सूरज दिल्ली सुलतानू॥
धरम पंथ जग बीच चलावा। निबरन सबरै सौ दुख पावा॥
पहिरे सजातीन जग केरे। आये सुहँस बने हैं चेरे॥
इहै साह नित धरम चढ़ावे। जेहि पहराँ मानुस सुख पावै॥
सब काहू पर दाया करई। धरम सहित सुलतानी करई॥

कला प्रेमी, कवि, तथा निपुण संगीतज्ञ मुहम्मद शाह उपनाम "रँगीले" का नाम अब भी प्राचीन परिपाटी के गायकों तथा शायरों की जबान पर रहता है। इन का जीवन ही संगीत-साहित्यमय था। इन के रचे हुए सैकड़ों ख्याल अस्थायी अब भी गवैयों को याद हैं। ऐसी अवस्था मे कोई आश्चर्य नहीं कि सुदूर पूर्व सबरहद निवासी नूरमोहम्मद तक इन से प्रभावित हुए हों। अस्तु

अपने ग्रथ का रचना काल नूर मोहम्मद ने सन् ११५७ हिजरी (संवत १८०१) दिया है—

सन इग्यारह सौ रहेउ, सत्तावन उपनाह।
कहै लगेउ पोथी तबै, पाय तपी कर बाँह॥

इस हिसाब से इनकी रचना उसमान १०२२ हिजरी से १३५ वर्ष और जायसी ९४७ हि० से २१० वर्ष बाद की ठहरती है। पंडित रामचंद्र शुक्ल के हिंदी साहित्य के इतिहास मे कहा गया है कि 'इस ग्रंथ' (इंद्रावती) को सूफीपद्धति का अंतिम ग्रंथ मानना चाहिये। पर तब तक शायद शेख निसार का पता नहीं लग सका था। यह इन के बाद के हैं और अभी तक इन की रचना अप्रकाशित रही हैं। हो सकता है कि इन के 'सूफी पद्धति' के कवि होने में मतभेद हो। पर इतना निश्चय

है कि यूसुफ-जुलेखा सोलहो आने प्रेम-गाथा काव्य हैं और इन का सभी ढंग 'पद्मावत' आदि के समान है। सूफी ढंग के रहस्यवाद का दृष्टिकोण कुछ कवियों के सामने कम रहा है और कुछ के सामने अधिक। आलम और निसार (मुख्यतः आलम) अपेक्षाकृत यदार्थ-वादी कवि हुए हैं। और निसार का कथानक अपना आदर्श ईरानी संस्कृति से अधिक लेता है, बजाय भारतीय के। जो हो, उक्त तिथि से नूर मोहम्मद की जन्म तथा निधन तिथि का अटकल लगाना असंभव है। सिवाय इंद्रावती के इन के रचे हुए अन्य किसी ग्रंथ का पता नहीं चल सका है, अभी तक।

कथा का रूप

उसमान की भाँति इन की कथा भी पूर्णतः काल्पनिक प्रतीत होती है[1]। उधर उसमान कहते हैं 'कथा एक मैं हिए उपाई, और इधर नूरमुहम्मद को स्वप्न में इस की प्रेरणा मिली !

एक रात सपना मैं देखा। सिंधु तीर वह तपिय सरेखा॥
अहै ठाढ़ मोहि लीन्ह बुलाई। कहेसि कि सिंधु में बूड़हु भाई॥
त्रसा छोड़ पोढ़ा कै हीया। मोती काढ़हु होइ मरजीया॥
ससि मोती को हार सँवारहु। इंद्रावति की गोद महँ डारहु॥
लै मोती दोउ हाथन माहाँ। भारू रतन। सीर उपराहाँ॥
तेहि पल तपसी दरस देखाएउ। मोहि संग एहिबात सुनाएउ॥
राज कुँवर रानी इंद्रावती। हैं रवि कमल औ भँवर मालती॥
चुनि परसुन दुइ हार सँवारहु। तिनके ग्रीव बीच लै डारहु॥
अज्ञा मान तपी कर, चलेउ जहाँ फुलवार।
खुला न पायउँ द्वार को, मालिहि दिएउँ पुकार॥
माली कहा जपत सन होई। कोहु फूल नहिं बरजित कोई।
तन पलुहा बारी की नाँईं। मन भा फूलवारी तेहि ठाईं॥
किरपा सों बारी मँह, माली दीन्ह साथ।
आडे कीउ न आएउ, भै फुलवारी हाथ॥

स्पष्ट है कि नूर मोहम्मद को स्वप्न में किसी तपस्वी द्वारा इस कथा की अंतः-प्रेरणा मिली और माली गुरु ने रास्ता दिखाया। कवि का हृदय ही एक फुलवारी है। और वहीं माला गूंथने की सामग्री मिल जाती है। यदि माली द्वार खोल देता है तो दर-दर भटकने की जरूरत नहीं है।

फिर कहते हैं मन ही समुद्र है और उस में गहरा गोता लगाने से ही मुक्तावत्

---

[1]चूंकि कथा अधूरी है और कोई ऐतिहासिक आधार नहीं है अतः इसका संक्षेप देना व्यर्थ समझा गया। हां संग्रहीत अंश इस ढङ्ग से रखे गये है कि कथा का संबंध लगता चला जायगा।

कवि-वचन-सुधा की प्राप्त हो सकती है और उन्हीं मोतियों से दोहा चौपाई की शकल में हार गूंथे जा सकते हैं।

फिर इनके हृदय ने कहा कि दो हार बना कर एक राजकुँवर के और एक इन्द्रावती के गले में पहिनावो।

कथा की उपज के सबंध में कवि के इन प्रवचनों से उसका रहस्यवादी दृष्टिकोण स्पष्ट हो जाता है। कालिंजर नाम अवश्य ऐतिहासिक है (यहाँ का किला देश-प्रसिद्ध है) पर पात्र कल्पित हैं, जैसा कि नाम ही से प्रगट है। राजा का नाम 'भूपति', राजकुमार का नाम 'राजकुँवर'; और यह नाम ज्योतिषियों ने बहुत विचार तथा गणना के बाद तय किया!

राजैं पंडित वेगि हँकारेउ। पंडित आइ सुजनम विचारेउ ॥
कहा पुत्र के हीयरे, बाढ़ै प्रेम वियोग।
रूप एक पर रीझै, वेहि नित साधै योग ॥
'राजकुँवर' तेहि राखा नाऊँ। जनम नछत्र वड़ो के भाऊँ'।

ख़ैर, कालिंजर के इन्ही राजकुवर का प्रेम आगमपुर[1] की राजकुमारी से होता है; स्वप्न दर्शन विधि के अनुसार। फिर नाना प्रकार की चौरासी भोगते हुए (वही जोगी खंड, सुवा खंड युद्ध, खड आदि होते हुए) अंत में इन का मिलन होता है।

आगमपुर इंद्रावती कुवर कलिंजर राय।
प्रेम हुतें दोउन्ह कहँ, दीन्हा अलख मिलाय ॥

यहां पर 'अलख' शब्द ध्यान देने योग्य है। 'अलख' 'निरंजन' माया आदि नाथपथियों और फिर कबीर दादू आदि सतों की बोली में ही ज्यादातर आते हैं; और सूफी कवि भी इनकी विचारधारा से काफी प्रभावित हैं। फिर इस संबध में कवि के निम्नलिखित प्रवचन भी ध्यान देने योग्य हैं—

आपुहु भोग रूप धरि, जग सो मानत भोग।
आपुहि जोगी भेस होई, निस-दिन साधत जोग ॥
अलख प्रेम कारन जग कीन्हा। धन जो सीस प्रेम महँ दीन्हा ॥
जाना जेहिक प्रेम महँ हीया। मरै न कबहूं सो मर जीया ॥
प्रेम खेत है यह दुनियाई, प्रेमी पुरुष करत बोवाई।
जीवन जाग प्रेम को अहई। सोवन मीच वो प्रेमी कहई ॥
आग तपन जल चाल समूझो। पुनि टिका मौटी कहं बूझो ॥

इन पंक्तियों से स्पष्ट है कि कवि नाथ पथियों या सतों के एकेश्वर वाद को मानता हुआ भी हठयोगी मार्ग का क़ायल नही था। उस की प्रणाली प्रेम की

---

[1]यह नाम भी काल्पनिक है, ऐतिहासिक नहीं।

थी। और प्रेम ही उस का मार्ग तथा ध्येय दोनों एक साथ था। इस से यह स्पष्ट हो जाता है कि सूफी दृष्टिकोण के रहस्यवाद में एक साथ ही कबीर और खैयाम के रहस्यवाद का कितना मधुर सम्मिश्रण है।

प्रबंधशैली

इन्होंने भी प्रबंधरचना जायसी और उसमान के ढंग पर ही किया है। खंड-विभाग और कथा का किकास प्रायः समान है। भाषा की प्रौढ़ता उसमान से घट कर है। नव-युवक कवि की रचना तो है ही। ढाँचे मे एक खास फर्क है कि इन्होंने पाँच-पाँच चौपाई के बाद दोहा बैठाया है और जायसी आदि ने सात-सात के बाद। हाँ निसार ने नौ चौपाई का क्रम रक्खा है; और इन्होंने (निसार ने) दोहा चौपाई के सिवा सोरठा, कवित्त सवैया आदि अन्य छंदों का भी यथास्थान उपयोग किया है और उन स्थानों पर इन की भाषा मे व्रजभाषा की छटा आये विना नहीं रह सकी है।

भाषा

पर नूर मोहम्मद की भाषा शुद्ध अवधी है और उसमान की भाँति परिमार्जित नहीं है। ठेठ और ग्रामीण प्रयोग बहुत आये हैं। इन्होंने कहा भी तो है कि 'पोथी कहना' मेरा काम नहीं; मैं ने तो खेल खेल में यह कथा लिख डाली है।

उसमान-कृत चित्रावली

अन्य प्रेमगाथाओं की भांति चित्रावली मे भी कवि ने ग्रंथ का रचनाकाल और व्यक्तिगत परिचय तथा निवासस्थान आदि का पर्याप्त विवरण दे दिया है। इन्होंने अपनी कथा के आदर्शस्वरूप तीन कथाओं का स्मरण आरंभ मे किया है। मृगावती (मिरगावति) मधुमालती और पदमावत। इन मे से जायसी कृत पदमावत अभी तक इस कोटि का पहला काव्य माना जाता था (९४७ हिज़री या १५४० ईसवी) पर जायसी ने स्वय अपने काव्य में कुछ कथाओं का उल्लेख किया है। जब तक ये ग्रंथ मिले नही थे तब तक जायसी की इन पंक्तियों पर यथोचित ध्यान आलोचकों ने नहीं दिया। जायसी ने कहा है—

विक्रम धँसा प्रेम के बारा, सपनावति लगि गयो पतारा।
सिरी भोज खँडरावति लागी, गगनपूर होइगा बैरागी॥
राजकुँवर कंचनपुर गैऊ, मिरगावति तजि जोगी भैऊ॥
साधा कुवर मनोहर जोगू, मधुमालति कहँ कीन्ह वियोगू॥

इस मे से मिरगावति का पता काशी नागरीप्रचारिणी सभा को सन १९०० में लगा। इस के रचयिता कुतुबन के अनुसार इसकी रचना ९०९ हिज़री अर्थात् १५०२ ईसवी में हुई।

मधुमालती की भी एक खंडित प्रति चित्रावली के संपादक श्री जगमोहन वर्मा को मिली थी (सन् १६१२) इस के आदि अत के पन्ने गायब होने के कारण रचना काल तथा कवि का परिचय आदि ठीक न प्राप्त हो सका। कवि का ठीक नाम भी नही मालूम हो सका। 'मझन' नाम मिलता है जो स्पष्टतः उपनाम सा जाँचता है। कवि अपना परिचय आमतौर से आदि या अत के पन्नों मे देता है और वही पन्ने गायब हैं। प्रतिलिपिकार ने एक जगह ११ रबी उस्सानी सन् १०६९ हिजरी की तारीख लिखी है। इस हिसाब से इसकी प्रतिलिपि सन् १६५१ ई० की ठहरती है तो फिर असल रचना काफी पहले की होगी। पर इस संबंध में ज्यादा से ज्यादा अटकल ही हो सकते हैं। जो हो, आशा यह की जा सकती है कि शायद किसी दिन सपनावति और खँडरावति का भी अनुसधान मिल जाय।

पर उसमान ने सपनावति और खँडरावति का स्मरण नहीं किया। शायद इनके समय तक इन कथाओं को लोग भूल चुके हों या कवि ने इनको इतनी महत्वपूर्ण न समझा हो।

मृगावली मुख रूप बसेरा। राज कुवँर भयो प्रेम अहेरा॥
सिंघल पदुमावति भो रूपा। प्रेम कियो है चितउर भूपा॥
मधुमालति होइ रूप दिखावा। प्रेम मनोहर होइ तहँ आवा॥

कवि

उसमान अपना जन्म स्थान गाजीपुर बतलाते हैं। तत्कालीन नगर का बड़ा सुन्दर और सजीव वर्णन इन्होंने किया है।

गाज़ीपुर उत्तम अस्थाना। देवस्थान आदि जग जाना॥
गंगा मिलि जमुना तहँ आई। बीच मिली गोमती सुहाई॥
तिरधारा उत्तम तट चीन्हा। द्वापर तहँ देवतन्ह तप कीन्हा॥ इत्यादि

शेख

इनके पिता का नाम शेख़ हुसेन था और ये पाँच भाई थे। हुसेन के पाँचो पुत्र योग्य और किसी न किसी कला में पारंगत थे।

कवि उसमान बसै तेहि गाऊँ। सेख हुसेन तनै जग नाऊँ॥
पाँच भाई पाँचो कवि हीये। एक-एक भाँति सो पाँचो लीये॥
शेख़ अजीज पढ़े लिखि जाना। सागर सील ऊँच कर दाना॥
मानुल्लह बिधि मारग गहा। जोग साधि जो मौन होइ रहा॥
शेख़ फैजुल्लह बीर अपारा। गनै न काहु गहे हथियारा॥
शेख़ हसन गायन भल अहा। गुन विद्या कहँ गुनी सराहा॥

अन्य मसनवी कवियो की भाँति उसमान ने अपनी या अपने पिता की वशं-परंपरा या गुरू परंपर की तालिका नहीं दी है। निसार अपने को विख्यात मौलवी रूम का वंशज कहता है। जायसी प्रसिद्ध औलिया शेख़ निजामउद्दीन चिश्ती की शिष्य परंपरा मे थे। पर इस तरह की कोई बात उसमान ने अपने संबंध मे नहीं कही है। यहाँ, प्रथारभ मे, शाह निजामउद्दीन चिश्ती तथा एक बाबा हाजी की प्रशंसा इन्होंने की है। हाजी बाबा को इन्होंने अपना गुरू कहा है।

बाबा हाजी सिद्ध अपारा। सिद्ध देत जेहि लाग न पारा॥
मोहि माया कै एक दिन, श्रवन लागि गहि बाच।
गुरू मुख बचन सुनाय कै, कलिमहँ कीन्ह सनाथ॥

निसार ने अपने को अरबी फारसी आदि अन्य भाषाओं का ज्ञाता तथा इन भाषाओं मे ग्रंथ रचना करने की बात भी कही है, पर उसमान (उपनाम "मान") ने इस तरह का कोई दावा नहीं किया। यह बहुत निरभिमामी और ख़ाकसार तबियत के कवि थे। अपनी विद्याबुद्धि आदि के संबध में इन्होंने सिर्फ इतनाही कहना उचित समझा कि चार अच्छर पढ़ना हमने भी सीख लिया था और सो भी माथे मे लिखा था इस वजह से हो गया।

कहा इसे भी वहाँ ले चलो, सो तो रहा ही है, कहीं रख देंगे और लौटते वक्त फिर लेते आवेंगे। यही राय तय पाई और वे दोनों देव आकाशमार्ग से सुजान को ले उड़े और वहां जाकर चित्रावली की चित्रसारी में इसे सुला दिया और खुद उत्सव देखने बाहर चले गये।

इधर रात मे सुजान की नींद जब टूटी तो वह अपने को इस अपूर्व चित्र-शाला में पड़ा देख बड़ा चकराया, पर सामने ही चित्रावली का मनमोहक चित्र देख कर मुग्ध हो गया और उसी के बगल मे अपना चित्र खींच कर फिर सो गया। इधर सुबह देव लोग उसे फिर वहीं उड़ा ले गये। उठने पर सुजान को सब बातें याद आईं और उसे स्वप्न का भ्रम हुआ पर कपड़ों में रंग और तूलिका का दाग़ वगैरह लगा देख कर सच्ची घटना का निश्चय हो गया और उसे चित्रावली की याद सताने लगी।

इधर राज्य में कुमार के लापता होने के कारण सब लोग व्याकुल होकर ढूंढने चले और कुछ सेवक उस मढ़ी तक आ पहुँचे और उसे राज्य में ले आये पर वह प्रेम की पीर से बेसुध पड़ा रहा। सुजान का एक मित्र सुबुद्धि नाम का ब्राह्मण था, उसने युक्ति से सब बातें सुजान से पूँछ ली। और एक राय कर दोनों फिर उसी मढ़ी में पहुँचे। और वहां पहुँच कर उन दोनों ने अन्न-सत्र जारी किया।

इधर कुमार का चित्र देख कर चित्रावली का भी यही हाल हुआ। उसने अपने नपुसक भृत्यो को कुमार की खोज में रवाना किया जिनमे से एक इस मढी तक पहुँच भी गया। इसी बीच एक कुटीचर ने चित्रावली की माता हीरा से शिकायत कर दी जिससे उसने कुमार का चित्र धुलवा डाला। पर इस अपराध मे कुमारी ने उसका सिर मुड़वा कर उसे राज्य से निकलवा दिया। इधर यह जोगी कुमार के पास पहुँचा और उसे रूपनगर में लाकर युक्ति से शिव के मंदिर में चित्रावली से साक्षात्कार करवा दिया। पर इसी बीच उस कुटीचर ने उसे अपना शत्रु मान कर उसे अंधा बना एक पहाड की कदरा मे डाल दिया जहाँ इसे एक अजगर निगल गया, पर इसमें विरह की आग इतनी भयंकर थी कि अजगर ने तुरंत उगल दिया। इस घटना को एक बनमानुस देखता था और उसने एक ऐसा अजन दिया जिससे उसकी दृष्टि फिर पूर्ववत् होगई। पर इसके बाद इसे एक हाथी ने पकड़ा और उस हाथी को एक पक्षिराज ले उड़ा। तब हाथी ने उसे छोड़ दिया और वह एक समुद्र तट पर गिरा और घूमता हुआ सागर गढ़ राज्य मे पहुँचा जहा की राजकुमारी अपनी फुलवाडी मे इसे घूमता देख इस पर मोहित हो गई। कुमार उस समय योगी वेश मे था। कौलावती ने योगियों की एक दावत की जिसमे इसको भी शरीक किया। पर इसके भोजन मे अपना हार छिपा कर रख दिया था और इस प्रकार इसे चोरी मे फँसा कर कैद करवा लिया। फिर कौलावती के रूप गुण से मुग्ध होकर सोहिल नाम का राजा सैन्य लेकर सागरगढ पर चढ आया, पर सुजान ने इसे अपने बाहुबल से मार गिराया। इस पर कौलावती के पिता ने प्रसन्न होकर

सुजान के साथ उसका विवाह कर दिया पर उसने कौलावती से प्रतिज्ञा कर ली थी कि वह चित्रावली के मिलन से विरोध न करेगी।

कुमार कौलावती के साथ गिरनार पहुँचा और वहां चित्रावली के भेजे हुए दूत से उसकी भेंट हुई और उसने उसका समाचार चित्रावली के पास पहुँचाया। फिर किसी प्रकार वह योगी कुमार को लेकर रूपनगर की सीमा पर पहुँचाया और यह खबर चित्रावली को मिली। अब रूपनगर के राजा को चित्रावली के विवाह की चिंता सता रही थी। उसने चार चित्रकार राजकुमारों के चित्र लाने के लिये भेजे। इधर रानी हीरा कुमारी को खिन्न देख कर उसका हाल पूँछ रही थी पर वह अपने मन का भेद बताती नहीं थी। इसी समय सुजान को एक जगह बैठा कर वह दूत कुमारी को खबर देने आ रहा था। रानी ने उसे मार्ग में ही पकड़वा कर क़ैद करा दिया। पर वह पागल हो चित्रावली नाम ले लेकर भागने लगा। राजा तक ख़बर पहुँची। उसने अपजस के डर से इसे मरवा डालने की ठानी और इस पर हाथी छोड़वा दिया, पर सुजान ने अपने बाहुबल से इसे मार गिराया। इस पर राजा स्वयं इसे मारने चला पर इसी बीच एक चितेरा सागरगढ़ से एक कुमार का चित्र लाया जिसने सोहिल को मारा था। देखने पर वह चित्र इसी का निकला। राजा ने उचित पात्र समझ कर चित्रावली का विवाह इसके साथ कर दिया।

इसके कुछ दिन बाद विरहाकुल कौलावती ने कुमार की ख़बर लाने को हंस-मित्र को दूत बना कर भेजा। कुमार ने अपने पिता और कौलावती का स्मरण कर रूपनगर से बिदा ली और वहां से सागरगढ़ आ कौलावती को बिदा करा लिया और अपने राज्य को रवाना हुआ। पर रास्ते में असख्य विघ्न बाधाएं उपस्थित हुईं। समुद्र में तूफान आया पर किसी प्रकार सब से बच कर वह जगन्नाथ पुरी में पहुँचे जहाँ पुरोहित काशी पाँडे से इनकी भेंट हुई। वहां से अपने राज्य में पहुँचे और शोक-संतप्त माता-पिता से मिले। दुख से रोते-रोते माता अंधी होगई थी पर इनके आने की ख़ुशी में इसकी आँखें ठीक होगईं और सुजान अपनी रानियों सहित आनंदोपभोग करने लगा।

इस कथा के सरांश से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि यह आद्योपान्त काल्पनिक है और इसमें अनेक अस्वाभाविक और बेतुकी बातें भरी पड़ी हैं पर यह सब होते हुए भी कथा बड़ी रोचक बन पड़ी है, और कहीं भी जी नहीं ऊबता। इनकी प्रबंध-शैली कुछ ऐसी हो पड़ी है कि बालक, युवा वृद्ध, योगी, भोगी सभी वर्ग के लोग इसका आनंद ले सकते हैं। कवि स्वयं कहता है—

बालक सुनत कान रस लावा। तरुनन्ह के मन काम बढ़ावा॥
बिरिध सुनै मन होइ गियाना। यह संसार धंधा कै जाना॥
जोगी सुनै जोग पँथ पावा। भोगी कहँ सुख भोग बढ़ावा॥
इच्छा तरु एक आह सोहावा। जेहि जस इच्छा तेस फल पावा॥

कथा का आध्यात्मिक दृष्टिकोण

न्यूनाधिक रूप से सभी सूफी कवियों की रचना मे अध्यात्मवाद की कुछ न कुछ झलक आ ही जाती है। शाह निजामुद्दीन चिश्ती की शिष्य परपरा मे होने के कारण हम इनको जायसी का गुरु भाई भी कह सकते हैं और इनका आध्यात्मिक दृष्टिकोण भी जायसी से बहुत कुछ मिलता है। इनकी सारी कथा भी अन्योक्ति के रूप में समझी जा सकती है और कवि का अभिप्राय हर बात से ऐसा ही प्रतीत होता है कि श्रोतागण इसे इसी रूप में समझें बूझें। और यही मुख्य कारण जान पड़ता है कि इन्होंने किसी ऐतिहासिक घटना या इतिहास प्रसिद्ध नायक-नायिका का सदुपयोग या दुरुपयोग करना उचित नही समझा। जायसी ने बड़ी भूल की थी। इन्हें प्रतिपादन तो करना था एक विशेषवाद (सूफीवाद) जो वेदांत, रहस्य, अध्यात्म या एकेश्वरवाद आदि कई 'वादों' की पँचमेल खिचड़ी है और पात्र तथा घटनाएं इन्होंने इतिहास से लीं। आधी कथा लिखने के बाद इन्हे शायद अपनी भयानक भूल का पता चला और इन्होंने यथासंभव कल्पित नाम और घटनाओं का आश्रय लिया। जायसी की इस फजीहत से उसमान ने पूरा लाभ उठाया। ऐतिहासिक महा-काव्य और मसनवी ढंग की प्रेमा गाथा दो जुदा चीजे हैं; और इस पार्थक्या को उसमान ने भलीभाँति समझा था। दोनों को मिला कर चलाने या दोनों का सामजस्य किसी प्रकार स्थिर रखते हुए अत में सूफी एकीश्वरवाद के सिद्धांत का निष्कर्ष निकालना एक असभव बात है। यही जायसी से भूल हुई पर उसमान ने इस भूल को पहचाना और पहले से तैयार होकर खूब सोच समझ कर कहानी का प्लाट और पात्रो के नामकरण आदि को अपने आध्यात्मिक निष्कर्ष को दृष्टिपथ मे रखते हुए किया। और वे सफल हुए।

चरितनायक 'सुजान' का नाम बहुत सोच समझ कर रक्खा गया है। वह शिव का 'अंश' अतः born जोगी या पैदाइशी साधक हैं। कौलावती और चित्रावली इन दोनों नायिकाओं को हम अविद्या और विद्या के रूप मे देखते हैं। कौलावती से विवाह तो हुआ पर शर्त यह रही कि जब तक चित्रावली न मिलेगी तब तक सहवास नहीं होगा। 'सुजान' अर्थात् वास्तविक ज्ञानी बिना विद्या के प्राप्त किए अपनी साधना पूरी नहीं समझना। इसी प्रकार विचारने से सभी पात्र-पात्री तथा उनका सारा कार्य-कलाप हम आध्यात्मिक साधना, तज्जनित विघ्न-बाधाए और अंतिम निर्वाण के रूप में पढ़ सकते हैं। सरोवर-क्रीड़ा वाले खंड मे इन्होंने बड़ी सुंदर रीति से ईश्वर की प्राप्ति की ओर संकेत किया है।

इस कथा की कविता और भाषा आदि के सबध में हमें कोई नई बात नहीं कहनी है। भाषा, व्याकरण, प्रबंध, शैली, खड-विभाग आदि सब ढग जायसी का ही है; केवल अंतर यही है कि इनकी भाषा विशेष परिमार्जित और प्रौढ़ है। यह

तुलसी के समसामयिक थे और संस्कृत का ज्ञान यदि इन्हे होता तो इनकी भाषा प्रौढ़ता में उनके आस-पास पहुँचती।

इनकी जानकारी बढ़ी-चढ़ी थी, समय-समय पर लोकोक्तियाँ ये 'बड़े मार्के से' बैठाते गये हैं। एक जगह इन्होंने अंग्रेजो का भी वर्णन किया है—

बुलंदीप देश अँगरेजा। तहाँ जाइ जेहि कठिन करेजा॥
ऊँच नीच धन संपति हेरा। मद बराह भोजन जेहि केरा॥

सन् १६१२ में ईष्ट इण्डिया कम्पनी ने सूरत में अपनी गुदाम खोली थी, और सन् १६१३ की यह रचना है। कहाँ सूरत और कहाँ गाजीपुर; और इस समय न रेल, न पोस्ट, न तार न अखबार। इनका भौगोलिक ज्ञान भी असाधारण था, जैसा कि संग्रह से जान पड़ेगा। 'जोगी ढूंढ़न खंड' में इन्होंने काबुल, बदख्शाँ, खुरासान, रूस, साम, मिस्र, इस्तंबोल, गुजरात, सिंहल आदि-आदि अनेक देशों का वर्णन किया है।

यों तो सभी सूफी कवि विरह वर्णन में कलम तोड़ देते हैं, पर इस के सिवा इनके अन्य वर्णन भी मार्के के हुए हैं; यथा विदाई के समय रानी हीरा के उपदेश आदि। ये अंश हमे तुलसी की याद दिलाते हैं। इसके सिवा विरह वर्णन के अंतर्गत इनका यह ऋतु-वर्णन कुछ नवीन और बड़े सुंदर ढंग से हुआ है।

आलम कृत माधवानल-कामकंदला

इस कवि के संबंध में आरंभ से ही हिंदी संसार में एक भ्रांत धारणा फैली हुई है, और वह यह कि 'माधवानल-कामकंदला' के आलम और 'आलमकेलि' के लेखक आलम दो अभिन्न व्यक्ति हैं। आलम केलि के रचयिता तथा शेख रँगरेजिन के प्रेम में पड़ कर मुसलमान हो जाने वाले आलम (जो पहले जाति के ब्राह्मण थे) का रचना काल संवत् १७४०–६० तक माना गया है। पर माधवानल-कामकंदला के रचयिता आलम का रचना काल सं० १६४० या ई० १५८४ था। इनका शेख रँग-रेजिन से कोई सरोकार नहीं था और न इनके जाति के ब्राह्मण होने का ही कोई प्रमाण है।

हिंदी साहित्य के सभी इतिहास लेखकों ने आलम के संबंध में यह भद्दी भूल की है। स्पष्ट है कि यह भूल प्रथम इतिहास लेखक से आरंभ हुई और बाद के सभी इतिहास लेखक आँख मूंद कर इस भूल का अनुकरण करते गये।[1]

अस्तु, आलम केलि के रचयिता विशुद्ध ब्रज भाषा में शृङ्गार संबधी फुट कर पदों की रचना करते थे, पर प्रस्तुत आलम अवधी के कवि थे और इनका रचनाकाल उनसे ठीक सौ वर्ष पहले का था।

सन नौ सै इक्यानुवे आहि। करौं कथा अब बोलौं ताहि ॥

सन् नौ सै इक्यानवे हिजरी और तदनुसार सं १६४० में इन्होंने इस ग्रंथ की रचना की। उस समय दिल्ली के सिंहासन पर सम्राट अकबर विराजमान थे और इनके अर्थसचिव राजा टोडर मल हमारे कवि के आश्रयदाता थे। ग्रंथारंभ में कवि ने दोनों की प्रशंसा की है।

दिल्लिय पति अकबर सुरताना। सप्त दीप मैं जाकी आना ॥
सिंहन पति जगन्नाथ सुहेला। आपनु गुरू जगत सब चेला।
जब घर भूमि पयानौ करई। बासुक इंद्र आसन थर थरई ॥

---

[1] यदि किसी भी साहित्य के इतिहास लेखक ने 'माधवानल-कामकंदला' को देखने का कष्ट उठाया होता तो इस भ्रांति का निराकरण कभी का हो गया होता। पर कटु सत्य यह है कि आज के हिंदी साहित्य के 'इतिहास' ग्रंथों के अध्ययन के फलस्वरूप नहीं लिखे गये हैं, वल्कि पिछले लेखकों की नक़ल के आधार पर। वास्तव में साहित्य के इतिहास लेखन से बढ़ कर कर श्रमसापेक्ष और उत्तरदायित्व पूर्ण कोई दूसरा काम नहीं है, पर हिंदी में तो जितने साहित्य के स्रष्टा नहीं हैं उनसे अधिक इतिहास लेखक हो रहे हैं और नक़ल से बढ़ कर आसान कोई काम होता भी नहीं !

धर्म राज सब देस चलावा। हिंदू तुरक पंच सबुलावा॥
आगरैंबु महामति मडनु। नृप राजा टोडर मल डंडनु॥

रचनाकाल, तत्कालीन दिल्लीसम्राट तथा आश्रय दाता राजा टोडर मल आदि का उल्लेख कवि ने अपने ग्रन्थ मे इतनी स्पष्ट रीति से किया है कि इनके समय के बारे में संदेह करने की कोई गुंजाइश नहीं है। हाँ, इतना अवश्य है कि केवल इनके रचनाकाल की तिथि ही जानी जा सकती है, जन्म-मरण-तिथि नहीं। इन्होंने अपनी वंशावली या गुरु-परंपरा के संबंध मे भी कुछ नहीं कहा है।

कथा

आलम की यह रचना मौलिक नहीं है। इस नाम का एक नाटक संस्कृत मे है और इसी की कथा के आधार पर इन्होंने इस काव्य की रचना की। पर इसका तद्वत अनुकरण नहीं किया है। अपनी आवश्यकतानुसार कुछ घटाया-बढ़ाया है। वह साफ़ कहते हैं कि कुछ अपनी और कुछ 'परकृति' मैंने 'चुराई' है।

कुछ अपनी कुछ परकृति चोरौं। यथा सकति करि अच्छर जोरौं।
सकल सिंगार बिरह की रीति। माधौ काम कंदला प्रीति॥

हो सकता है कि आलम संस्कृत के विद्वान रहे हों, क्योकि इनकी रचना मे संस्कृत के शब्द इस शाखा के अन्य कवियों से अधिक आते हैं पर यह कोई जरूरी नहीं है, क्योकि यह साफ कहते है कि संस्कृत की कथा 'सुन' कर मैंने भाषा चौपाई में इसका रूपांतर किया—

कथा संस्कृत सुनि कछु थोरी। भाषा बाँधि चौपही जोरी॥

कथा का सारांश

पुष्पावती नामक नगर मे गोपीचंद नामक एक राजा राज्य करता थो। वह बड़ा न्यायपरायण और धर्मनिष्ठ था। उसी नगर मे माधव नामक एक बैरागी ब्राह्मण रहता था। वह नित्य प्रातःकाल राजा के पास जाकर पूजा कराता था। माधव बड़ा विद्वान और संगीत कला मे पारदर्शी था। वेद, पुराण, ज्योतिष, व्याकरण, सामुद्रिक आदि विविध शास्त्रों मे भी वह निपुण था। विद्या मे बृहस्पति और रूप मे कामदेव के समान था। अभूत पूर्व वीणा वादक था। उसकी बीन सुन कर नगर की स्त्रियाँ अपना काम छोड़ देती थीं और सब बेहाल हो जाती थीं। कोई मूर्छित होकर गिर पड़ती थी और उसके पीछे-पीछे घूमती थी। अंत मे नौबत यहाँ तक पहुँची कि माधव का मोहक स्वरलाहरी शहर के लिये अभिशाप हो गई। लोगों के घर-गृहस्थी की शांति भंग होने लगी। किसी को वक्त पर खाना नहीं मिल रहा है, किसी के घर की बीबियाँ घर का काम धंधा छोड़ कर बेसुध पड़ी हुई हैं। सब हैरान थे। अंत में नगर निवासियों का डेपुटेशन राजा के यहाँ इस आशय का गया

कि या तो आप इस बला को (माधव को) यहाँ से हटाइए या तो हम लोग सब आपका राज्य छोड़ कर दूसरे देश को जाते हैं। राजा बड़े धर्म सकट में पड़ा, पर अंत में यह निर्णय किया कि अकेले माधव के लिये सारी प्रजा को देश निकाला दे देना ठीक न होगा पर इसके पहले उन्होंने माधव पर लगाए गए इलजाम की जाँच कर लेना मुनासिब समझा। इस दृष्टि से उन्होंने बीस नव-यौवना सेविकाओं को बुलवा कर एक कतार में कमल के पत्तों पर बिठलाया। इधर माधव को सामने बैठा कर वीणा का आलाप करने कहा। आलाप शुरू हुआ, कुछ ही देर बाद सभी स्त्रियाँ स्पष्ट रूप से कामार्द्रा हो गईं। अब राजा को निश्चय हो गया और उसने माधव से हाथ जोड़ लिया।

तब राजा गयो पौरि पगारैं। तुम को ठोर न विप्र हमारें॥
तीन पान को बीरा कयो। राइ हाथ माधौ के दयौ॥

इस प्रकार विचारा माधव पुष्पावती से विदा हुआ, और अपनी वीणा सभाल कर एक ओर को चल दिया। वह चलते-चलते कामावती नामक नगरी में पहुँचा और वहाँ विश्राम करने के लिये ठहर गया।

उस नगर मे कामकंदला नाम की वारांगना रहती थी जो रूप लावण्य और संगीत तथा नृत्यकला दोनों ही मे अद्वितीय थी। एक दिन राजा के दरबार में जलसा था जिसमे कामकदला का नृत्य होने को था। शहर के अनेक लोग देखने जा रहे थे। माधव स्वयं सगीत कला का अन्यतम साधक था। उसे भी उत्सुकता हुई और अपनी बीन कंधे पर रख दरबार के दरवाजे पर पहुँचा पर अपरिचित होने के कारण दरबानों ने भीतर जाने से रोक दिया। खैर वह बाहर ही बैठ कर सुनने लगा। भीतर कामकंदला का नृत्य हो रहा था और संगत में बारह मृदंग एक साथ बज रहे थे। पर इनमें से एक पखावजी के जो चौथे के बाद बैठा हुआ था, चार ही उँगलियाँ थीं जिससे उसकी थाप बेसुरी और बेताली पड़ती थी। माधव के कान इतने अभ्यस्त थे कि इन सब बातों का पता उसने बाहर से ही लगा लिया। और सिर धुन कर कहने लगा कि सभा मे सब उल्लू के पट्ठे बैठे हैं, किसी को पता नहीं, द्वारपाल से कहा कि राजा से जाकर कह दो कि एक ब्राह्मण बाहर बैठा हुआ ऐसा-ऐसा कह रहा है। राजा के पास जब यह अद्भुत समाचार पहुँचा तो पहले तो बहुत चकराया पर जाँच कराने पर माधव की बाते सच्ची साबित हुई। वह फौरन भीतर बुलाया गया और राजा ने बड़े आदर से उसे अपनी गद्दी पर दाहिनी ओर बैठाया। राजा ने उसे सोने का मुकुट पहिनाया और दो करोड़ रुपये भेंट किये। राजा टाडर ने अपनी अँगूठी उतार कर माधव को पहिना दिया। इसके बाद माधव का गायन और वीणा वादन हुआ। सब लोग मुग्ध हुए, खास कर कामकदला बहुत प्रभावित हुई। अंत में कामकंदला का नृत्य हुआ। उसने सिर पर पानी से भरा हुआ कटोरा रख कर एक कठिन नृत्य आरंभ किया। नाचते समय जब वह भावप्रदर्शन में लीन थी

उसी समय एक शहद की मक्खी उसके वक्षस्थल पर बैठ कर काटने लगी। अब वह अगर हाथ से उसको हटाती है तो नृत्य बिगड़ता है। यह सोच कर वहीं से उसने नृत्य की गति चौगुन करके एक चक्करदार टुकड़ा लिया जिसके पवन के वेग से वह मक्खी उड़ गई। इस बात को सिवा माधव के और कोई लक्ष्य न कर सका। माधव ने खुले आम कामकंदला की प्रशंसा की और जो कुछ भेंट उसे वहाँ मिली थी सब उतार कर कामकंदला को दे दिया। इसका कारण पूँछे जाने पर उसने राजा से कहा—"तुम्हारी सारी सभा मूर्ख मंडली है, कोई गुण का समझने वाला नहीं है, कामकदला इतना चमत्कारपूर्ण काम कर गई और किसी के पहचान मे वह न आया।" राजा को इस अपमान से क्रोध चढ़ आया और उसने कहा कि "यदि तुम ब्राह्मण न होते तो तुम्हारा सिर उड़ा देता, तुम फौरन हमारे राज्य से बाहर चले जाओ।" माधव इसके पहले ही उठ चुका था और यह कहता हुआ चल पड़ा कि "ऐसे मूर्ख राजा के यहाँ रहने में ही मेरा अपमान है।"

पर उसके गुण को पहिचानने वाली कामकंदला से यह न देखा गया। वह आग्रह कर के माधव को अपने घर ले गई और उसे छिपा कर रक्खा। दोनों एक दूसरे के रूप-गुण पर मुग्ध थे। कामकंदला ने वहाँ माधव से प्रेम-कला सिखाने की प्रार्थना की। कई दिन तक दोनों आकंठ आनंदोपभोग में रत रहे। अन्त में माधव ने यह कह कर बिदा चाही कि यदि यहाँ हमारा रहना राजा को मालूम हो जायगा तो तुम विपद में पड़ोगी पर कामकंदला ने एक रात्रि और उसके यहाँ व्यतीत करने की प्रार्थना की और माधव रुक गया। मध्य रात्रि में कामकंदला ने प्रार्थना की कि कोई ऐसा उपाय करो कि इस रात का अंत न हो। माधव ने बीन सँभाली और अलाप शुरू किया। कहते हैं कि उस अपूर्व संगीत के प्रभाव से चन्द्रमा की गति रुक गई और ग्रह उपग्रह आदि अपनी-अपनी धुरी पर रुक गये।

खैर, आखिर उसका संगीत खतम हुआ, रात बीती और सबेरा हुआ और माधव चलने को तैयार हुआ। इस अवसर पर कामकंदला का दुख बड़ा हृदय-विदारक है। माधव के जाने पर वह एक प्रकार से मर ही गई। किसी प्रकार सखियों ने होश दिलाया पर 'माधव' 'माधव' कहती हुई विक्षिप्त की सी अवस्था मे रहने लगी। वह सूख कर काँटा होगई और खाना-पीना सभी भूल कर जीवित ही मृत सी अवस्था मे रहने लगी।

इधर माधव की अवस्था भी लगभग वैसी ही थी। सिवा रात-दिन रोने के और कोई काम न था। अन्त में उसने बहुत सोच-विचार कर राजा विक्रम की शरण लेने की ठानी। उसने सुन रक्खा था कि वह बड़ा परोपकारी राजा है। यह तै कर वह उज्जैन पहुँचा, पर राजा तक उसकी पहुँच न हो पाती थी। पर अपनी अर्जी राजा तक पहुँचाने का उसने एक उपाय निकाल ही लिया। वहाँ एक महादेव का मंदिर था जहाँ राजा नित्य आता था। उसी मंदिर में माधव ने अपनी वेदना-सूचक एक दोहा लिख दिया और राजा की निगाह में वह दोहा पड़ गया और

उसने उसे दासियों को भेज कर पता लगाया। 'ज्ञानवती' नाम की एक चेरी राजा का सदेस लेकर माधव के पास पहुँची और अपने साथ राजा के पास लिवा ले गई। माधव को देखते ही राजा को विश्वास हो गया कि यह विरह पीड़ित कोई सच्चा प्रेमी है और कहा कि मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ। माधव ने अपना और अपने गुण का परिचय देते हुए अपनी रामकहानी कह सुनाई। राजा ने आश्वासन देते हुए सहायता करने का वचन दिया। पर पहले उसको बहुत ऊँच-नीच समझाया कि गणिका से प्रीत करना ठीक नहीं। पर माधव ने कुछ इस ढंग से अपने सच्चे प्रेम का परिचय इतनी करुण रीति से किया कि सारी राजसभा रोने लगी और सब को यह निश्चय हो गया कि यह सच्चा प्रेमी है और अगर कामकंदला इसे न मिली तो यह घुल-घुल कर मर जायगा।

अंत में राजा विक्रम ने कामसेन राजा के नगर पर चढ़ाई कर दी। पर जब नगर थोड़ी दूर रह गया तो वहीं ठहर कर वह कामकंदला के प्रेम की परीक्षा करने का निश्चय कर के छद्म-वेश से उसके घर गया, और कामकंदला को बड़ी बुरी हालत में, विरह में म्रियमाण अवस्था में पाया। पर तो भी प्रेम की परीक्षा करने के इरादे से उसे यह खबर दी कि माधव तो वियोग में घुलते-घुलते मर गया। यह सुनते ही पिंगला की भाँति कामकंदला ने भी तत्काल माधव का नाम उच्चारण करते हुऐ प्राण त्याग दिये। राजा बड़ा चकराया और उदास होकर अपने खेमे मे आया और यह दुखद समाचार उसने सभा में कहा। गजब हो गया। इधर माधव ने भी अपनी प्रियतमा का निधन सुनकर वहीं दम तोड़ दिया। सारे कटक में हाहाकार मच गया। इधर राजा ने दो प्रेमियों का खून अपने सर लेकर जब कोई उपाय न सूझा तो आत्म-हत्या करने की ठानी और चंदन की चिता तैयार करवाई और बहुत सा दान पुण्य कर सूर्य नमस्कार कर चिता पर बैठ गया।

स्वर्गलोक तक यह बात पहुँची; देवी देवता सब अपने-अपने विमानों पर आरूढ़ होकर यह विचित्र दृश्य देखने पहुँचे। राजा के मित्र बैताल को भी यह खबर मिली। राजा अग्निदान की आज्ञा ले रहा था कि इसी समय बैताल ने पहुँच कर हाथ थाम लिया और राजा की नियति का सब हाल जान तुरत अमृत ले आया और माधव को जिलाया। वह कामकंदला का नाम लेता हुआ उठ बैठा। तब राजा वैद्य के वेश मे अमृतकलश लेकर कंदला के यहाँ पहुँचे और उसे भी जिलाया और बहुत कुछ आश्वासन देकर खेमे मे आये। वहाँ से राजा के यहाँ दूत भेज कर यह कहलवाया कि जिस किसी मूल्य पर हो आप कामकंदला को हमारे हवाले कर दीजिये। पर उसने इसमे अपमान समझ कर युद्ध की ठानी।

दोनों में घमासान युद्ध हुआ चार प्रहर तक। अंत में कामसेन राजा पराजय स्वीकार कर, हथियार फेंक हाथ जोड़ विक्रम के सामने खड़ा हुआ और माफी माँगी। फिर उसने कामकंदला को लाकर राजा के खेमें मे दाखिल कर दिया।

चिर विरही माधव और कामकंदला का मिलन हुआ और आर्त दुखहारी राजा विक्रम दोनों को लेकर अपनी राजधानी उज्जैन चला गया।

× × ×

इस काव्य की भाषा परिमार्जित अवधी है। चूं कि यह ग्रंथ छोटा और अभी तक अप्रकाशित है इसलिए इस संग्रह में यह समूचा दे दिया गया है।

शेख़ निसार

हिंदी के मुसलमान कवियों में हम यह विशेषता देखते हैं कि वह अपनी रचनाओं मे अपना संक्षिप्त व्यक्तिगत परिचय तथा रचना काल आदि का कुछ ब्योरा दे देते हैं जिससे संपादक को बड़ी सुविधाएं हो जाती हैं। काश की यही प्रथा हिंदी के अन्य कवियों मे भी होती तो आज गड़े मुर्दे उखाड़ने में जो दिक्कतें हो रही हैं; विभिन्न कवियों के काल निर्णय के सबध में विद्वानो मे जो भीषण मतभेद की सृष्टि हुई हैं, और समालोचकों मे आये दिन व्यर्थ का झगड़ा और विद्वेष हो रहा है वह न होता, और समय तथा विद्वत्ता का इतना दुरुपयोग न होता। तमाशा यह है कि तुलसी, भूषण आदि हमारे अधिकांश प्रमुख महाकवियों के ही संबध मे अभी तक सर्व- सम्मति से सब बातें नही तय हो पाई हैं। अस्तु,

सौभाग्य से इन अख्यानक कवियों ने अपना परिचय तथा रचना काल का स्पष्ट उल्लेख कर बड़ी दूरदर्शिता से काम लिया है।

कवि निसार का रचनाकाल देहली के अंतिम मुग़लसम्राट शाह आलम के समय में हुआ था।

आलम शाह हिंद सुलताना। तेहि के राज यह कथा बखाना॥

× × ×

साथ ही यह भी लिखते हैं कि उस समय अवध मे नवाब आसिफ़ुद्दौला राज्य करते थे। और उनके हिंदू मंत्री बड़े न्याय निष्ट तथा राजनीतिकुशल थे।

चहुँ दिसि अंध धुंध सब छावा। अवध देस कों दियो दिहावा॥
येहिया खां आसिफ़ उद्दौला। तासु सहाय अहर नित मौला॥
हिंदू सचिव वह बली नरेसा। तेहि के धरम सुखी सब देसा॥
तेहि के राजनीत जग छाए। धरम दान को सरवर पाए॥

× × ×

शेख़ निसार का जन्म अवध के अंतर्गत शेखपुर नामक एक कसबे में हुआ था। डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर से पता चलता है कि शेखपुरा नाम का एक कसबा जिला रायबरेली परगना बड़रावाँ और तहसील महराजगंज मे है। यहाँ शेख़ों की अच्छी बस्ती है। पिछली मर्दुमशुमारी में वहाँ शेख़ों की संख्या ८,७१९ थी।

कवि निसार ने कहा है कि शेखपुरा उनके पूर्वज शेख़ हबीबुल्ला द्वारा बसाया गया था।

शेखपुर इत गाँव सुहावा। शेख निसार जनम तहँ पावा॥
शेख हबीबुल्लाह सुहाये। शेखपूर जिन आन बसाये॥

× × ×

फिर आगे चल कर कवि कहता है कि सम्राट अकबर के समय में वे (शेख हबीबुल्लाह) देहली से अवध आये और बीस वर्ष तक वहाँ रहे। इनके पुत्र शेख मुहम्मद हुए। इनके पुत्र का नाम गुलाम मुहम्मद था और यही शेख निसार के पिता थे। फिर निसार ने अपने पूर्वज शेख हबीबुल्लाह को प्रसिद्ध मौलाना रूम का वंशज माना है।

पातशाह अकबर सुलताना। तेहि के राज कर जगत बखाना॥
अवध देस सूच होय आए। बीस बरस तहँ रहे सुहाए॥
तेहि के शेख मुहम्मद बारा। रूपवंत भू के अवतारा॥
ता सुत गुलाम मुहम्मद नाऊँ। सो हम पिता सो ताकर गाऊँ॥
वंस मौलवी रूम के, शेख हबीबुल्लाह।
जेहि के मसनवी जगत महँ, अगम निगम अवगाह॥

× × ×

अपनी शिक्षा दीक्षा तथा ग्रंथ रचना आदि के संबंध मे भी कवि स्वयं पर्याप्त सामग्री दे देता है। अरबी, फारसी, तुर्की, और सस्कृत आदि कई भाषाओं में कवि को गति थी और इन्होंने सात ग्रंथ रचे थे जिनमे तीन गद्य, एक दीवान, एक अलंकार ग्रंथ तथा एक भाखा काव्य (युसुफ-जुलेखा) मुख्य थे। कवि की पक्तियों से यह व्यक्त होता है कि इनके ग्रंथ फारसी, अरबो और सस्कृत में भा थे, पर इनका हमें अभी तक पता नहीं लग सका है।

सात गरंथ अनूप सुहाए। हिंदी औ पारसी सोहाए॥
संस्कृत तुरकी मन भाए। अरबी और फारसी सुहाए॥
हीर निकार के गेहूँ खाने। रस मनोज रस गीत बखाने॥
औ दिवान मसनवी भाखा। कर दोइ नसर पारसी राखा॥

कवि का समय

निसार कवि कहते हैं कि बुढौती में उन्होंने युसुफ जुलेखा लिखी। सात दिन में वह ग्रंथ लिखा गया और उस समय उनकी अवस्था ५७ सत्तावन वर्ष की थी। ग्रंथरचना का समय १२०५ हिजरी दिया हुआ है। प्रतिलिपि मे सवत् १८२७ पर हिसाब लगाने पर यह संवत् १८४७ होता है। स्पष्ट है कि यहाँ लिपिकार ने भूल की है। फारसी लिपि में 'सैंतालीस' का 'सत्ताइस' पढ़ा जाना या लिखा जाना दोनों ही संभव है। जायसी के संबंध मे भी ठीक इसी तरह की भूल हुई है जहाँ कि

९४७ हि० का ९२७ पढ़ा गया था। अस्तु इस प्रकार हम देखते हैं कि कवि का जन्म १८४७—५७=संवत् १७९० में मानना चाहिये और तदनुसार ई० सन् १७२२ इनकी जन्म तिथि हुई।

बार बैस महँ कथा वनाए। हीर निकार अनूप सोहाए॥
रस मनोज रस गीत सोहावा। समै बात का भेस बतावा॥
सत्तावन बरस बीते आयू। तब उपज्यो यह कथा क चारू॥
सात दिवस महँ कथा समापत। दुरमति नाम रह्यो सो संमत॥
हिजरी सन बारह सै पाँचा। बरनेउँ प्रेम कथा यह साँचा॥
अठारह सै सत्ताईसा। संवत बिक्रम सेन नरेसा॥

× × ×

काव्य रचना का निमित्त

'यूसुफ जुलेखा' काव्य की रचना का संबंध कवि के जीवन की एक दुःखद घटना से है। काव्य के अंत में कवि ने इस करुण घटना का उल्लेख किया है। इनके एक मात्र पुत्र लतीफ की मृत्यु २२ वर्ष की अवस्था में हो गई। कवि कहता है कि उसके निधन से मैं पागल सा हो गया था। मृत्यु शय्या पर पड़े हुए उसने मुझे रोते देख कर कहा था कि पिता तुम रोते क्यों हो, बड़े लोगों को सदा दुःख सहना पड़ता है। नबी यूसुफ को दुःख भोगना पड़ा था, राम को दुःख सहन करना पड़ा। दुःख में ही मनुष्य की परीक्षा होती है। आगे पीछे एक दिन सब को जाना है। जब से उसकी मृत्यु हुई मैं नित्य याकूब की याद करता था। उसी की भाँति पुत्र-शोक में अकालवृद्धत्व को प्राप्त हुआ। उसी के विरह में रो रो कर मैंने यह गाथा लिखी। ससार के रहस्य का कुछ पता नहीं। अब तो ईश्वर मुझे जल्दी ही मौत दे और मेरे सांसारिक दुःखों का अंत हो। मैं तो रहूँगा नहीं पर यह कहानी सदा रहेगी। जो इस कथा को पढ़ें सुनें उनसे बिनती है कि मुझे आशीर्वाद दें कि मेरी सद्गति हो। कथा के अंत का यह भाग करुण रस की कविता का एक अपूर्व नमूना है। कुछ पंक्तियाँ यहां उद्धृत की जाती हैं।

जब तें जनम लीन्ह जग माहीं। छुटि दुख अवर सो देख्यों नाहीं॥
अवर दुःख मैं सब कुछ सहा। भयो एक दुख आउर महा॥
पुत्र अनूप दई मोहिं दीन्हा। रूप अनूप बुधि आगे कीन्हा॥
बाइस बरिस रहा जग माहीं। छुट विद्या उन जान्यो नाही॥
नाम लतीफ अनूप सोहाये। सम गुन ज्ञान दई अधिकाये॥

बाइस बरिस के बैस महँ, आँखि दीन्ह उन देह।
सूरत अनूप गुलाब सो, जाय मिले पुन खेह॥

तब मैं भय जो बाढर भेसा। करौं सदा अँतकाल अँदेसा ॥
अब तें लतीफ कर मरम बिसेख्यों। तप संपत अमिरथा देख्यौं ॥
रोम रोम यह बिरह बखानी। कोउ न रहा जग रहै कहानी ॥
देहु दया मोहै कब मोखू। हरहु मोर अन अवगुन दोखू ॥
पढ़ै प्रेम कै अच्छर कोई। दई असीस मोर गति होई ॥
हम न रहब आखर रहि जाई। सब हि जोग होइहि सुख दाई ॥
× × ×
सात दिवस में कथा सोहाई। कीन्ह समापत दीन्ह बनाई ॥

इत्यादि।

कवि निसार सैयद इंशाअल्ला खाँ के सम सामयिक थे इसका पता भी आभ्यंतरिक प्रमाणों से मिल जाता है, साथ ही यह भी पता चलता है कि हंस-जवाहिर' नामक मसनवी काव्य भी इनके समय में प्रचलित था।

हंस जवाहिर प्रेम कहानी। कहा मसनवी अँविरत बानी ॥
हंसा कहे जहाँ लह भेदू। औ सब कथा जहां लह वेदू ॥
झूंठ ज्ञान सम तिन मन भापा। अब यह सोंच कथा चित लागा ॥
× × ×

कथा का सारांश

यूसुफ जुलेखा की कथा का आधार है प्रसिद्ध फारसी काव्य 'यूसुफ-जुलेखा'। कवि निसार ने इसको भारतीय जामा पहिनाने की चेष्टा की है पर इस चेष्टा में यह अधिक सफल नही हो सके हैं। मूल कथा यो है।

नबी याकूब किनआँ नगर मे रहते थे जो कि 'नूह' साहब का बसाया हुआ था। नबी 'लूत' की लड़की से इसहाक् ने शादी की थी जिससे 'ईस' और 'याकूब' नाम के दो बेटे पैदा हुए थे। याकूब की सात बीबियां थीं और उनसे बारह बेटे हुए इनकी 'रोहेल' नाम की बीबी से 'यूसुफ' नामक पुत्र और 'दुनियां' नाम की कन्या हुई। याकूब यूसुफ को बहुत ज्यादा मानते थे और इससे अन्य सब लड़के इनसे भयानक ईर्ष्या करते थे। बात यहाँ तक पहुँची कि शेष सब भाइयों ने मिल कर यूसुफ का प्राणांत करने का निश्चय किया। इस विचार से जब वे जङ्गल मे भेड़ चराने जाने लगे तो पिता से कह सुन कर यूसुफ को भी ले गये। वहां इन लोगों ने उसे कुएँ में ढकेल दिया।[1] उसका एक कुरता छीन कर बकरी के ख़ून से रँग दिया और घर में पिता के सामने कुरता पेश करते हुए कहा कि यूसुफ को भेड़िये ने मार डाला।

---

[1]इस स्थल की यूसुफ़ की कही हुई बातें और उसका व्यवहार ईसा या मुहम्मद की उच्चता की याद दिलाती हैं; साथ ही यहाँ की कविता भी उच्च कोटि की बन पड़ी है।

इधर यूसुफ कुएँ मे पड़े रहे। एक दिन कुछ सौदागर उधर से गुज़रे। इनमें एक ने पानी निकालने को डोल डाली जिसे यूसुफ ने पकड़ ली और तब सबो ने इन्हें मिल कर बाहर निकाला। सौदागरों के सरदार ने यूसुफ के रूप और कांति पर मुग्ध हो इन्हे अपने साथ ले जाना चाहा, पर इतने ही मे इनके हत्यारे भाई भी उधर आ पहुँचे और उन्होंने कहा कि यह मेरा ग़ुलाम है और भाग आया है तुम चाहो तो इसे ख़रीद सकते हो। सौदागर ने मुह माँगा दाम देकर यूसुफ को ख़रीद लिया इस प्रकार इन भाइयों ने यूसुफ को अपने राह के कंटक के समान दूर तो किया ही, साथ ही अच्छी खासी रक़म भी वासूल की।[1] ख़ैर सौदागर ने मिस्र की राह ली।

उधर मग़रिब (पश्चिम) देश मे तैमूस नामक एक सुलतान राज्य करता था जिसके ज़ुलेखा नाम की एक अनिंद्य सुंदरी बेटी थी। संसार मे कोई उसके समकक्ष नही थी। दुनियाँ के कोने-कोने से बड़े से बड़े बादशाहो के विवाह के प्रस्ताव आये पर सुलतान ने सब को कोरा जवाब दिया।

इधर ज़ुलेखा ने स्वप्न मे यूसुफ को देख कर मन ही मन उसे ही पति बनाने की प्रतिज्ञा की। पर उससे मिलने का कोई उपाय न देख वह दिन-दिन घुलने लगी। वैद्य, हकीम सब थक गये पर उसकी अवस्था शोचनीय हो चली। उसकी धाय बड़ी चतुर थी और ज़ुलेखा ने उससे अपनी सब बातें प्रगट कर दी। उसने राय दी कि यदि फिर कभी स्वप्न मे उस पुरुष के दर्शन हों तो उसका 'नाँव गॉव' सब पूँछ लेना। और हुआ भी ऐसा ही। फिर जब स्वप्न हुआ तो बहुत जिद करने पर यूसुफ ने कहा मिसिर के सचिव के यहां आवो तो मुझसे भेंट होगी। धाय ने यह भेद सुलतान पर प्रगट किया कि यदि आप अपनी लड़की की जिंदगी चाहते हैं तो मिस्र के वज़ीर के साथ इसकी शादी कर दीजिये।

सुलतान बड़ा दुःखी हुआ, क्योंकि वज़ीर की हैसियत उससे कहीं नीचे थी। पर आख़ीर क्या करता। पैग़ाम भेजा गया और मिस्र के वज़ीर ने बहुत झेंप कर इसे मंजूर किया और शादी हुई। ज़ुलेखा रुख़सत हुई। रास्ते मे धाय से इसने ज़िद किया कि एक बार 'उन्हे' दिखा दो। पर जब उसने पति को देखा तो मानों आसमान से गिरी। वह तो स्वप्न मे आने वाला वह सुंदर पुरुष नहीं था। अब घोर सकट इनके सामने उपस्थित हुआ। बात यह हुई थी कि स्वप्न वाले मनुष्य ने यह तो कहा नहीं था कि मै मिस्र का वज़ीर हूँ। यह तो सिर्फ उसके यहां मुलाज़िम था। पर ज़ुलेखा ने समझा कि वही वज़ीर है। इसी ग़लतफ़हमी पर कथा का सारी दिलचस्पी निर्भर करती है।

---

[1] बिदा होते समय फिर यूसुफ़ ने बडे करुण शब्दों में केवल यही कहा कि 'भाई मेरा अपराध क्षमा करना और कभी-कभी याद करना, और पिता को कहना मेरे लिये दुःखी न हों। पर भाइयों ने भेद खुलने के डर से यूसुफ़ का मुह बंद कर दिया।

ख़ैर, आख़िर ज़ुलेखा मिस्र के वज़ीर के हरम में दाख़िल हुई। पर अपने सतीत्व की रक्षा के लिये उसने धाय की सलाह से एक उपाय सोच निकाला। वह बीमारी का बहाना कर के पड़ रही। धाय ने वज़ीर को समझा दिया कि इसको यह रोग है। इस तरह से बड़े दुःख के साथ ज़ुलेखा के दिन कटने लगे।

इधर वह सौदागर यूसुफ को लिये हुये मिसर पहुँचा। वहां उसने ग़ुलामों के बाजार मे बेचने ये लिए यूसुफ को खड़ा किया। उसका अपूर्व रूपसौंदर्य देख कर सारा मिस्र हैरान था। सारा देश उसकी एक झलक देखने के लिये उमड़ा पड़ता था। बड़ी-बड़ी कीमतें लग रहीं थी। ऐसी शोहरत सुन धाय को लेकर ज़ुलेखा भी उसके दर्शन को चली। देखते ही उसने पहचान लिया कि यह तो वही पुरुष है जिसने स्वप्न में अपनी सूरत दिखा उसका मन हर लिया था। ख़ैर, धाय की सलाह से यह तय पाया कि वजीर से कह कर इस दास को खरीदवाया जाय। वजीर ने ज़ुलेखा को ख़ुश करने के इरादे से यूसुफ को खरीद कर उसकी सेवा के लिये रख दिया।

अब ज़ुलेखा कुछ ख़ुश रहने लगी। धीरे-धीरे ज़ुलेखा अपने मनो-भाव यूसुफ पर प्रगट करने लगी पर वह इस पर कुछ ध्यान न देता। वह अधिकतर उदासीन ही रहता। पर क्रमशः ज़ुलेखा की चेष्टाएं बहुत स्पष्ट होती गईं और एक दिन यूसुफ बहुत कामातुर हो गया और ज़ुलेखा को पकड़ने को बढ़ा पर उसी समय उसके पिता की मूर्ति उसके सामने खड़ी हो गई। वह तुरत सँभल गया और उलटे पाँव भागा। पर भागते समय ज़ुलेखा ने उसका कुरता पकड़ लिया और झटके में वह फट भी गया पर यूसुफ निकल भागा। इससे ज़ुलेखा ने अपने को अपमानित समझ कर वजीर से यह शिकायत कर दी कि यूसुफकी निगाह ठीक नहीं है, उसने उस पर हमला किया था। प्रमाणस्वरूप उसने उसके फटे कुरते का टुकड़ा पेश किया। पर कुरते के पीछे का हिस्सा फटा देख वज़ीर ने असल बात का पता लगा लिया पर ऊपर से चुप रहा और ज़ुलेखा का मान रखने के लिये यूसुफ को सिर्फ़ कारावास का दंड दिया।

अब ज़ुलेखा को अपने ऊपर बड़ी ग्लानि हुई। वह बहुत सतप्त रहने लगी। कारागार में यूसुफ के सुख के लिये भाँति-भाँति के प्रयत्न गुप्त रीति से करने लगी पर वह इन सब हरकतों से बिलकुल उदासीन रहने लगा और कभी ज़ुलेखा की चेष्टाओं पर आकर्षित न होता था।

एक दिन एक सवार किनआँ नगर से मिस्र आया। यूसुफ ने कारागार की खिड़की से उसे देखा और अपने देश का आदमी पहचान कर उसे बुलाया और अपने नगर और अपने पिता का हाल चाल पूँछना चाहा, पर उसने यूसुफ को न पहचान कर इसकी बातों पर कुछ ध्यान न देकर आगे बढ़ना चाहा पर न जाने किस दैवशक्ति से उसके ऊँट के पाँव ही आगे न बढ़ते थे। आख़िर उसने यूसुफ से कहा कि मैं व्यापार करने मिस्र आया हूँ। यूसुफ ने पिता के लिये अपना संदेसा

कहा और कहा कि वे ईश्वर से प्रार्थना करें कि मैं जेल से छुटकारा पाऊँ। उसने लौट कर याक़ूब से यह सँदेसा कहा भी। उधर यूसुफ ने कई पत्र पिता के पास भिजवाये पर कोई भी उनके पास तक न पहुँचा।

इधर मिस्र मे .ज़ुलेखा की बडी निंदा होने लगी। सब स्त्रियाँ उसे दुराचारिणी कहतीं। आख़िर जब .ज़ुलेखा से न रहा गया तो उसने शहर की बहुत सी औरतो को दावत दी और सब को एक कतार मे बैठा कर सब के सामने एक एक तरबूज और एक-एक चाकू रखवा दिया। जब सब तरबूज काटने मे लगी तब ठीक उसी समय .ज़ुलेखा ने यूसुफ को बुला कर उनके सामने से गुज़ारा। सब उसके रूप को देख कर इतनी तन्मय हागईं कि सबों ने चाकू से अपना हाथ काट डाला। इस प्रकार .ज़ुलेखा ने यह सिद्ध कर दिया कि यूसुफ़ का रूप ही ऐसा है कि उसे देख कर कोई अपने बस में नहीं रह सकता। आख़िर यूसुफ़ के चले जाने पर सब स्त्रियाँ बड़ी लज्जित हुईं और सबो ने ज़ुलेखा से क्षमा माँगी।

यूसुफ़ सात साल तक जेलखाने मे सड़ता रहा। .ज़ुलेखा उसे मुक्त करने के उपाय सोचा करती पर उसकी कोई तरकीब कारगर न होती थी। इसी बीच मिस्र के सुलतान ने एक बडा बेढब सपना देखा जिसका कोई अर्थ ही न बता सकता था। यूसुफ़ के पाण्डित्य और अनोखी सूझ-बूझ की बडी शोहरत थी। आख़िर इस स्वप्न-फल के विचार के लिये सुलतान ने इन्हे तलब किया। इन्होंने बताया कि इसका अर्थ यह है कि सात साल तक वर्षा न होगी और यदि शांति का समुचित प्रबध किया जायगा तो प्रजा के प्राण बँच जायँगे। इस पर सुलतान ने समुचित प्रबंध करना शुरू किया और बहुत बड़े पैमाने पर अन्न वस्त्र एकत्रित करने लगा। इसी सिल-सिले मे सुलतान ने यूसुफ़ के कैद होने का कारण पूछा और प्रसंगवश .ज़ुलेखा ने अपनी सारी आत्म-कथा साफ़-साफ़ सुलतान पर प्रगट कर दी। मंत्री ने क्रोधवश .ज़ुलेखा को त्याग दिया।

पर इस सुलतान ने युसुफ को ही इस मंत्री के पद पर बड़े आदर से बैठाया। इधर ज़ुलेखा तप करने लगी। मंत्री होने पर सात साल तक अच्छी खेती हुई। युसुफ़ ने बहुत सा अन्न तथा खाद्य द्रव्य इकट्ठा कर लिया। इसके बाद घोर दुर्भिक्ष का समय आया चारों ओर त्राहि-त्राहि मँची। इस अकाल के पाँचवें साल वह मिस्र का पुराना वज़ीर मर गया। यूसुफ़ का मान और भी बढ़ गया और सुलतान ने सारा राज-काज इन्ही के हाथ सौंप दिया।

इधर यूसुफ़ की जन्म-भूमि किनआँ मे भी अकाल पड़ रहा था। याक़ूब ने अपने लड़को को अन्न लाने और युसुफ़ का पता लगाने के लिये मिस्र की ओर रवाना किया। दसों भाई मिस्र पहुँचे और यूसुफ़ ने सब को पहचाना पर अपने को इन पर प्रगट नहीं किया। सब का हाल-चाल पूछ कर और बहुत सा अन्न आदि देकर बिदा किया और साथ ही यह भी कहला भेजा कि अपने छोटे भाई इब्नअमीं को लाओ तो और भी बहुत सा सामान देंगे।

सभों ने आकर पिता से सब हाल कहा। उन्होंने बड़े दुःख से इब्नअमीं को जाने दिया क्योंकि यसुफ़ के बाद यही सब से प्यारा बेटा होगया था।

आखिर ये लोग फिर यूसुफ के पास पहुँचे और इन्होंने सब का बड़ा स्वागत किया। सब एक साथ भोजन करने बैठे। छः थालियाँ लगीं और एक-एक मे दो-दो भाई एक-साथ भोजन करने बैठे। इब्नअमीं अकेला पड़ता था, इससे ख़ुद यूसुफ़ उसके साथ बैठ गया। इस मौके पर इब्नअमी यूसुफ को पहचान गया। विदा होते समय यूसुफ ने फिर सबको बहुत सा अन्न वग़ैरह दिया पर इब्न को रोकने की ग़रज से उसके कपड़े मे बॉट रखवा दी जिससे वह चोर समझ कर पकड़ा गया। कहते हैं कि इस पर किनआँ और मिस्र वालो में घोर युद्ध हुआ और किनआँ वाले हार कर बंदी कर लिये गये और सुलतान ने सब को मरवा डालने का हुक्म दिया पर यूसुफ ने किसी तरह माफ करवाया। बाद को सब भाइयों ने यूसुफ को पहचाना और सब गले मिल कर बहुत देर तक रोये और सबों ने अपनी पिछली करनी पर बडा दुःख प्रगट किया। बाद को सब किनआँ गये पर यूसुफ ने इब्न और यहूदा दो भाइयों को रोक लिया था। किनआँ पहुँचने पर सब को यूसुफ का पता चला और याकूब के साथ सारा किनआँ यूसुफ के दर्शन को चला। यूसुफ़ ने सब की बडे प्रेम से ख़ातिर की और तीस वर्ष बाद पिता पुत्र मिले। मिस्र का सुलतान भी बड़ा सुखी हुआ। वह निस्सतान था और क़ाफी बूढ़ा हो गया था अतः उसने इस मौके पर यूसुफ को अपने सिंहासन पर बैठा कर राज्याभिषेक कर दिया। यूसुफ अब सुलतान था।

इधर जुलेखा को यूसुफ़ के विरह में तप करते ४० वर्ष होगये थे। वह बूढ़ी और रोते-रोते अंधी होगई थी। वह अपना सब कुछ खो चुकी थी। अब वह पथ की भिखारिन थी।

एक दिन शहर में यूसुफ़ की सवारी निकली। यद्यपि नेत्र-हीन थी, उसे यूसुफ़ के अंतिम दर्शन की बडी अभिलाषा हुई और बड़ी ख़ुशामद के बाद कुछ औरतों ने उसे यूसुफ़ के रास्ते में खड़ा किया। संयोग से यूसुफ़ ने इसे तुरत पहिचाना और इसे बडी दया आई। यूसुफ ने पूँछा तुम्हारा यह हाल क्योंकर हुआ। उसने कहा सब तुम्हारे कारण। याकूब को भी सब हाल मालूम हुआ। उन्होंने ज़ुलेखा को दुआ दी जिससे वह फिर षोड़षी रूप में परिणत हुई और रूपलावण्य पहले से भी उज्ज्वलतर हुआ। अंत में दोनो का विवाह हुआ और याकूब ने दोनो को दुआ दी।

पर जब सब कुछ हो गया तब आख़िर को ज़ुलेख़ा को कुछ शरारत सूझी। उसने यूसुफ को छकाने की ठानी ताकि उसे कुछ पता तो चले कि कैसे हमने ये ४० बरस बिताये हैं। आख़िर को यूसुफ को नाकों चना चबवा कर तब अन्त में जब उसके मरने की नौबत आई तब ज़ुलेख़ा ने आत्मसमर्पण किया।

कथा का आधार तथा उसकी विशेषता

यूसुफ ज़ुलेखा की कथा पदमावत आदि अन्य कथाओं से एक महत्व-पूर्ण विभिन्नता रखती है और उस पर ध्यान देना आवश्यक है। अन्यः सभी प्रेमगाथा या आख्यानक काव्य जो अभी तक प्राप्त हो सके हैं, किसी न किसी लोकप्रसिद्ध भारतीय ऐतिहासिक घटना का आश्रय लेकर रचे गये है। अंतर इतना ही है कि कुछ मे यह आश्रय केवल नाम मात्र का और कुछ मे ऐतिहासिक तथ्यो के सामजस्य का आद्योपांत यथाशक्ति ध्यान रक्खा गया है। हाँ कविता की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए जितनी निरंकुशता का अधिकार इस कोटि के महाकाव्य लेखकों को हो सकता है इसका किसी ने बहुत दुरुपयोग किया है, किसी ने कम। पर यूसुफ-ज़ुलेखा की कथा भारतीय इतिहास या संस्कृति से कोई सबध नही रखती, इसका आधार या आश्रय पूर्णतया विदेशी है। इसमें जिस समाज का चित्र खींचा गया है वह भी भारतीय न होकर ईरानी या मिसरी कहा जाता है। इसकी प्रेमपरपरा का कोई सबध भारतीय-जीवन से नही है। वह सोलह आने ईरान या अरब आदि इस्लामी देशों की है।

ज़ुलेखा की प्रेमपरंपरा

स्वप्न में किसी अपरिचित पुरुष को देख कर उसके प्रेम में पागल हो जाना, भारतीय काव्य और रसपद्धति के लिये एक नई बात है। प्राचीन सस्कृत या हिंदी काव्यों में हम इस प्रकार के प्रेम पर आधारित कोई बड़ा काव्य नहीं पाते। 'ऊषा-अनिरुद्ध' की बात छोड़ दीजिये, वह एक दूसरे ही ढग की चीज है। 'गुणश्रवण' 'चित्रदर्शन' आदि ढंग तो हमारे यहां मिलते हैं, और अधिकतर प्रेमगाथाओं मे अपनाये गये हैं। पर 'स्वप्नदर्शन' पर आधारित प्रेम बहुत अंश तक अस्वाभाविक होता है और वास्तविक जीवन मे असंभव सा ही है। वन, वीथी, तड़ाग आदि कहीं पर नायक-नायिका का एक बार परस्पर साक्षात्कार हो चुका हो, निगाहें चार हो चुकी हों, उसके बाद स्वप्न-दर्शन होना स्वभाविक है, और ऐसा वास्तविक जीवन और काव्य दोनों ही मे हम प्रायः देखते हैं। पर जिसको कभी न देखा न सुना, न चित्र ही देखा, उसे स्वप्न में देखना और सदा के लिये उसी मे अपने को लीन कर देना यह फ़ारिस की ही देन है।

फिर दूसरी विभिन्नता यह है कि पदमावत आदि मसनवी काव्यो में गुण-श्रवण या चित्र-दर्शन आदि जिस किसी कारण से भी प्रेम आरंभ होता है, दोनों ओर नायक-नयिका मे समान रूप से आरंभ होता है। यहां सब कुछ ज़ुलेखा की तरफ से ही हैं। यूसुफ़ इससे बिलकुल बरी रक्खा गया हैं। इसने कभी न स्वप्न ही देखा न इसकी याद में अस्थिपिंजर मात्र ही दिखलाया गया, इधर ज़ुलेखा इसके कारण अपमानित और लांछित होकर परित्यक्ता हुई और ४० वर्ष तक तप करते-करते अंधी, बूढ़ी और मरणसान्न अवस्था को प्राप्त हुई, इधर यूसुफ़ दास से मन्त्री, फिर

मिस्र का सुलतान तक हो गया। इसे मानों पता भी नहीं कि ज़ुलेखा इसकी याद में मर रही है। अगर इत्तफाक से ख़ुलेखा की कुटिया की तरफ से उसकी सवारी न निकलती तो शायद ज़ुलेखा मर ही जाती और कोई यूसुफ तक उसके मरने की खबर तक पहुँचाने वाला न था।

लौकिक और अलौकिक

इस प्रकार की अस्वाभाविकताओं का हम एक ही कारण देखते हैं। इस कथा में नायक दो रूप मे चित्रित किया गया है—लौकिक और अलौकिक। राम-चरित-मानस के नायक के संबंध मे भी महाकवि तुलसीदास ने जाने या अन-जाने में ऐसा ही किया है। उनके संबध में 'कवि' तुलसी और 'भक्त' तुलसी दोनों अपनी-अपनी बात बारी-बारी से कहते हैं। पर कवि निसार के संबध मे यह बात नहीं है। उन्होंने भगवद्भक्ति से प्रेरित होकर यह कथा नहीं लिखी है। पर इस्लाम की दुनियां में यूसुफ 'नबी' या ईश्वर के प्रतिनिधि, मनुष्य रूप मे माने गये हैं; और इनकी कथा फारसी यूसुफ-ज़ुलेखा में वर्णित है। इस मौलिक ग्रंथ का कहाँ तक अनुकरण निसार ने किया है यह जानने का हमारे पास कोई साधन नही है। पर इतना हम कह जानते हैं कि जहाँ-जहाँ चाहे जिसी जाति या भाषा के कवि नायक मे एक साथ ही 'मनुष्यत्व' और 'ईश्वरत्व' का आरोप करते हुए चले हैं वहाँ इसी तरह का गपड़चौथ हुआ है। कवि कुलगुरु तुलसी की प्रतिभा असाधारण थी। उन्होंने दोनों का निर्वाह कर ही दिया है एक प्रकार से, और बातें इतनी खटकीं भी नही।

चरित्र-चित्रण

पर यही बात हम निसार के संबंध मे नहीं कह सकते। यूसुफ के चरित्र-चित्रण में कवि ने किसी हद तक उनको 'हर्ष-विषाद-रहित' महामानव के रूप मे चित्रित करने का प्रयास किया है पर सफलता नहीं मिल सकी है। वह 'उदात्त' गांभीर्य हम यूसुफ मे नही पाते। कहीं-कहीं तो इनका व्यवहार काफी निम्न-कोटि का-सा भी बन पड़ा है। अब जैसे युसुफ के हृदय मे ज़ुलेखा की प्रबल काम-चेष्टाओं से कामातुर होकर उस को आलिंगन करने को दौड़ पड़ना, फिर यकायक पिता की तस्वीर सामने आजाने पर सँभलना और उल्टे पाँव भाग खड़ा होना और ज़ुलेखा का उसे रोकने के लिये झपटना और कुरता थाम लेना, कुरते का फट जाना आदि कुछ ऐसी बातें हैं जो नायक और नायिका दोनों के चरित्र को बहुत नीचे गिरा देती है। पर ज़ुलेखा का चरित्र तो यहाँ बहुत ही निम्नकोटि का कर दिया गया है। कहा गया है कि ऐन मौके पर यूसुफ के भाग निकलने से उसे इतना घृणित क्रोध होता है कि वह अपने पति से शिकायत करती है कि यूसुफ ने उस पर बलात्कार की चेष्टा की थी, पर उसने किसी तरह अपनी इज्जत बचाई। अपने कथन की सत्यता में वह यूसुफके फटे कुर्ते का भाग पेश करती है। यह व्यवहार तो कुछ-कुछ

मुग़ल कोर्ट की रखेलियों और बाँदियों के intrigues या छल-कपट और प्रेम षड-यंत्रों की याद दिलाता है। पर इसके लिये हम निसार को कहाँ तक उत्तरदायी ठहरावें ? यह तो फारसी काव्य-पद्धति और इस्लामी समाज-चित्र की बातें हैं जिन्हें कवि ने अवधी में वर्णन मात्र कर दिया है।

नायक, नायिका के सिवा धाय का चरित्र विशेष ध्यान देने योग्य है। मुसलमान बादशाहों में अंतःपुर में दाई या धाय जैसी होती थीं उनका सच्चा चित्र हम देखते हैं। गुप्त प्रेम में शाहों और सुलतानों की बेटियों को ये दाइयाँ डूबते को तिनके के सहारे की भाँति थीं। ये दूती का काम करती थीं और आख़ीर तक साथ देती थीं।

भाइयों के पारस्परिक द्वेष का निकृष्टतम उदाहरण इस काव्य में मिलता है। बाप यूसुफ को और भाइयों से ज्यादा मानता था इसलिये उन्होंने बिचारे को खपाई डाला और बाप से आकर कह दिया कि उसे भेड़िये ने खा डाला ! फिर वह किसी तरह से कुएँ से निकला भी तो उसे अपना दास कह कर बेंच डाला और अच्छी ख़ासी रकम वसूल कर ली ! नबी के सगे भाइयों का यह हाल है ! विमाता के पुत्र भरत और शत्रुघ्न की याद बरबस आ जाती है। कितना असम्भव पार्थक्य है !

कविता

यह हम पहले भी कह चुके हैं कि इन मसनवी कवियों की कविता प्रायः सभों की एक ही ढर्रे की हुई है। रहा अवधी भाषा। वही दोहे, चौपाईयों की छंदावली और वही विषय ! पर निसार का काव्य भाषा और विषय दोनों ही दृष्टि से अन्य मसनवी काव्यों से काफी पार्थक्य रखता है। विषय या कथावस्तु का पार्थक्य हम ऊपर दिखा चुके हैं।

निसार की भाषा में हमें साहित्यिक अवधी के परिमार्जित रूप का आभास मिलता है। पद्मावत के ढंग के ग्रामीण या rustic या ठेठ प्रयोग ज़ुलेखा में शायद ही कहीं मिलते हों। मानस की अवधी से भी कुछ अंशों में निसार की भाषा परिष्कृत है। अरबी, फारसी के शब्द प्रायः आते रहते हैं। इन्होंने अपनी रचना में विशेष कर ऋतुवर्णन और बारहमासा बर्णन के समय कवित्त और सवैये भी खूब लिखे हैं जो कि प्रेम-गाथा कवियों के संबंध में एक अनहोनी बात है। इनके कवित्तों में ब्रज-भाषा की छाया भी प्रचुर परिमाण में मिलती है। एक उदाहरण दिया जाता है।

मासा भादों महँ सुहावन जगत सुख छायो सभै,
रितु फलत फूलत और तरुवर गैल सों पूरन भए।
भुवन सीतल छाँह सुंदर, सुख सँजोगिन के रहै,
कवन हरियर करै पिउ बिन बेल बिरही सों डहै ॥

इस तरह का छंद पदमावत, चित्रावली, मृगावती आदि किसी में न मिलेगा।

अलंकार आदि बाहरी सजावट निसार के काव्य में कम है, अनुप्रास का शौक़ भी इनको न था। हाँ, रस का परिपाक अच्छा हुआ है। इस काव्य में करुणा रस का प्राधान्य आद्योपांत है। यों तो विरह-वर्णन सभी सूफी कवियों का मुख्य व्यवसाय रहा है और इस संबंध में ये लोग प्रायः ऐसी उड़ान भरने के अभ्यासी होते हैं कि पढ़ कर रसबोध के स्थान पर हँसी आये बिना नहीं रहती। सारा कथानक ही उपहासास्पद हो जाता है। पर जायसी और निसार इसके अपवाद हैं। निसार ने इस काव्य की रचना एक नितांत दुःखद (पुत्र शोक) सांसारिक घटना के बाद लिखी थी। वह इस समय स्वयं ५७ वर्ष के थे और इस समय उनके एक मात्र सुयोग्य पुत्र का निधन निश्चय ही एक दुखांत घटना थी। इस मर्मांतक घटना को यथाकथंचित् भुलाने के उद्देश्य से ही उन्होंने इस कथा की रचना में हाथ डाला था।

× × ×

जायसी आदि अन्य मसनवी शाखा के कवियों का उद्देश्य लौकिक प्रेम के मिस अलौकिक का निर्देश करना होता था पर यहाँ हम वह बात भी नहीं पाते। दो एक स्थान पर हम 'अलख' आदि ऐसे शब्दो का प्रयोग पाते हैं पर उस अध्यात्म-तत्व या रहस्यवाद का पता कहीं नही चलता जिनके लिये जायसी और उनके पदमावत की इतनी ख्याति हुई। इस श्रेणी के प्रायः सभी काव्यों में कवि अंत में स्पष्ट रूप से कह देता है कि यह सारी कथा 'अन्योक्ति' के रूप में कही गई हैं और पाठकों से स्पष्ट अनुरोध रहता है कि वह कथा में वर्णित प्रेम-कहानी को इसी रूप में लें। नायक को साधक, नायिका या माशूक़ को खुदा या ईश्वर, राह बताने वाले 'सुआ' को गुरु, इसी प्रकार 'शैतान,' माया, सांसारिक बंधन आदि सभी के प्रतिनिधि स्वरूप कोई-न-कोई कथा का पात्र होता है। पर इस कथा में हम इस तरह की कोई बात नहीं देखते। यहाँ 'प्रेम की पीर' पहले नायिका पर ही चोट करती है और वही नायक की तलाश मे, जिसके नाँउ-ठाँउ का कोई पता नहीं, बाहर निकलती है। सूफ़ी परंपरा में ईश्वर की कल्पना माशूक़ के रूप में की गई है और एक 'गुरु' की अनिवार्यता पर बहुत ज़ोर दिया गया है। पर कितना ही खींच-तान करने पर भी यहाँ इस तरह की कोइ 'अन्योक्ति' ठीक बैठती नही; और न कवि कहीं इस तरह का कोई स्पष्ट निर्देश ही करता है।

इस संग्रह में कथा का प्रारंभिक भाग और अंतिम भाग लिया गया है। बीच के कुछ भाग इस ढंग से संग्रहीत हैं कि कथा का संबंध ठीक बैठ जाता है। यह ग्रंथ अभी तक अप्रकाशित है और यह संग्रह पहले पहल प्रेस में जा रहा है। इसी की फारसी में लिखी हुई प्रति-लिपि पहले पूरी संपादन के निमित्त ही एकेडेमी में आई थी, और मुझे तथा श्री सत्यजीवन वर्मा को इसका भार सौंपा गया था, पर अभी तक यह पूरी प्रकाशित न हो सकी। इसकी पांडु-लिपि फारसी में होने के कारण पाठ में असंख्य गड़बड़ी होना स्वाभाविक है। तुलना के लिये नागरी अक्षरों में लिखी हुई कोई दूसरी पांडु-लिपि भी अभी तक नहीं मिल सकी है।

मलिक मुहम्मद जायसी

हिंदी और संस्कृत के अधिकांश प्राचीन कवियों की भाँति जायसी की भी जन्म-मरण-तिथि, जन्मस्थान, तथा माता पिता आदि के संबंध मे प्रामाणिक रूप से कुछ ज्ञात नहीं है। इतना तो इन के उपनाम 'जायसी' से ही प्रगट है कि ये अवध प्रांत के अंतर्गत 'जायस' नामक स्थान के रहने वाले थे। प्रकृत मातृभूमि, या जन्म स्थान चाहे जायस न रहा हो पर इन के क्रियाकलाप का केंद्र यही रहा होगा। पद्मावत मे आई हुई इस पंक्ति से भी यही धारणा पुष्ट होती है—

जायस नगर धरम अस्थानू। तहाँ आइ कवि कीन्ह बखानू॥

इस पंक्ति से यह स्पष्ट है कि कहीं से आकर ('तहाँ आइ') यह जायस में बस गए थे; कहाँ से आकर इस का कुछ पता नहीं।

इन की उत्पत्ति के संबंध में यह किंवदंती बहुत दिन से चली आ रही है कि इन का जन्म गाजीपुर जिले के एक बड़े दरिद्र परिवार में हुआ था। सात वर्ष की अवस्था मे इन्हे चेचक की बीमारी हुई, जिस में इन के प्राण तो बच गए पर इन की एक आँख जाती रही। कहते हैं इस बीमारी से जायसी की रक्षा करने के लिये इन की माता ने मकनपुर के पीर मदार शाह की मनौती मानी थी और उन्हीं की दुआ से इन की जान बची। पर मनौती पूरी करने के पहले ही इन की माता का स्वर्गवास हो गया और इन के पिता तो पहले ही मर चुके थे। कवि के एकाक्ष होने का प्रमाण पद्मावत की इस पंक्ति से मिलता है —

एक नयन कवि महमद गुनी।

एक दोहे में इस बात का भी उल्लेख मिलता है कि बीमारी में इन की बाँई आँख तो फूटी थी ही, साथ ही बाँयां कान भी बहरा हो गया था। वह दोहांश नीचे दिया जाता है—

मुहम्मद बाईं दिसि तजा एक सरवन एक आँखि।

इन किंवदंतियों तथा अन्य ऐतिहासिक वृत्तांतों से यह स्पष्ट हो जाता है कि शीतला देवी ने इन के शरीर और स्वरूप के साथ मनमाना अत्याचार किया था। इन के अत्यंत कुरूप होने का प्रमाण इस कथा से मिलता है। एक बार अवध का कोई राजा जो इन्हे पहचानता नहीं था, इन के कुरूप चेहरे को देखकर हंसा।

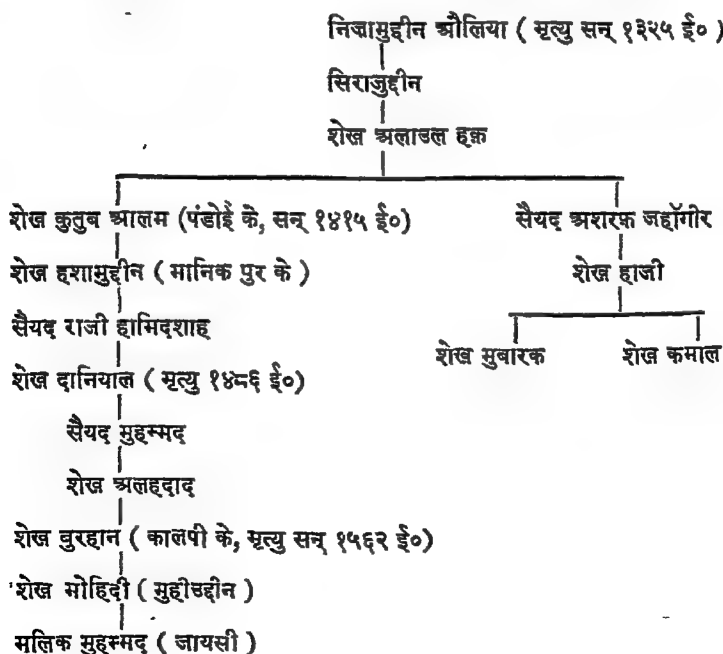
इस पर जायसी ने इन से केवल इतना ही कहा—"मोंहि का हंसेसि कि कोंहरहि," अर्थात् तू मुझ पर हसा कि उस कुम्हार (निर्माता, ईश्वर) पर ? कहते हैं कि इस पर वह बड़ा लज्जित हुआ और बाद में इन का परिचय जानने पर बहुत तरह से इन से क्षमा माँगी।

इन के जीवन काल का कुछ अनुमान पद्मावत के रचनाकाल से लगता है जो कि इन्होने उक्त ग्रंथ में दे दिया है—

सन् नव सै सैंतालिस अहा। कथा अरंभ बैन कवि कहा ॥

इस ग्रथ का आरंभ सन् ९४७ हिजरी अथवा तदनुसार सवत् १५९७ में हुआ था। यह शेरशाह का राजत्वकाल था और ग्रंथारंभ में कवि ने इस की प्रशंसा में भी बहुत से पद्य लिखे हैं। बस इसी से जायसी के आविर्भाव और कविताकाल का स्थूल अनुमान किया जा सकता है।

जायसी के गुरु शेख़ मोहिदी (मुहीउद्दीन) थे। इनकी गुरुपरंपरा का वर्णन जायसी की 'पद्मावत' और 'अखरावट' दोनों मे मिलता है। यह परपरा निज़ामुद्दीन औलिया से आरंभ होती है। इस की प्रतिलिपि नीचे दी जाती है—



उपर्युक्त परंपरा जायसी के अनुयायी मुसलमानों में अब तक प्रचलित है। पद्मावत में दी हुई वंशावली इस से कुछ भिन्न है। अखरावट में इन्होंने अपनी गुरु-परंपरा का इस प्रकार वर्णन किया है—

पा—पाएउं गुरु मोहदी मीठा। मिला पंथ सो दरसन दीठा॥
नाँव पियार सेख बुरहानू। नगर कालपी हुत गुरु थानू॥
औ तिन्ह दरस गोसांई पावा। अलहदाद गुरु पंथ लखावा॥
अलहदाद गुरु सिद्ध नवेला। सैयद मुहमद के वै चेला॥
सैयद मुहमद दीनहिं सांचा। दानियाल सिख दीन्ह सुवाचा॥
जुग जुग अमर सो हजरत ख्वाजे। हजरत नबी रसूल नेवाजे॥
दानियाल तहँ परगट कीन्हा। हजरत ख्वाज खिजिर पथ दीना॥

दोनों वंशावलियों का मिलान करने से मालूम होगा कि शेख दानियाल तक तो दोनों एक हैं, पर इस के आगे जायसी की दी हुई वंशावली में दानियाल के गुरु हामिदशाह और इन के ऊपर के गुरुओं का उल्लेख नहीं है। अस्तु, यह तो हुई जायसी की वास्तविक गुरुपरंपरा। परंतु इन के ग्रंथ को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इन्होंने अन्य सम्प्रदाय वालों से भी बहुत कुछ संस्कृति और ज्ञानोपार्जन किया था। इन की रचनाओं में योग, तथा वेदांत दर्शन के बहुत से सिद्धांतों का सूफी संप्रदाय के सिद्धांतों के साथ एक बड़ा रुचिर संमिश्रण देखने में आता है जो शायद अन्य किसी भी कवि की रचना में दुष्प्राप्य है। परमात्मा की प्राप्ति के लिये भिन्न भिन्न आचार्यों ने जितने मार्ग दिखाए हैं उन में से किसी की भी इन्होंने कबीर की भांति तीव्र आलोचना नहीं की है। जहाँ जिस की चर्चा की है वहाँ उस के प्रति श्रद्धा ही प्रगट की है। पर इस के साथ ही एक सच्चे मुसलमान की भाँति मुहम्मद साहेब के बताए हुए मार्ग को सब से सुगम और अतएव उसे सर्वश्रेष्ठ माना है। नीचे लिखी हुई चौपाइयों से यह बात स्पष्ट हो जायगी—

विधिना के मारग हैं ते ते। सरग नखत तन रोवाँ जेते॥
तिन्ह महं पथ कहौं भल गाई। जेहि दूनौ जग छाज बड़ाई॥
सो बड़ पथ मुहम्मद केरा। है निरमल कैलास बसेरा॥

जायसी की एक मुख्य विशेषता यही है कि एक सच्चे पहुँचे हुए फकीर या साधक की भाँति ये सदा दैन्य भाव से ही रहे। न तो इन्होंने कबीर आदि की भाँति अपना कोई नया पंथ ही चलाने का विचार किया और न इन्होंने अपनी फकीरी के संबंध में किसी प्रकार की गर्वोक्ति ही की। कबीर का तो यहाँ तक दावा था कि जिस चादर (चोला या शरीर) को सुर, नर, मुनि सब ने ओढ़कर धब्बा लगा दिया उसे मैंने ज्यों की त्यों धर दी। जायसी की भगवद्-भक्ति में अहंकार के लिये स्थान नहीं था। उन्हें हम सदा एक विनयावनत जिज्ञासु के रूप में ही देखते हैं।

इन के एक मात्र आश्रयदाता तत्कालीन अमेठी के महाराज माने जाते हैं। अमेठी दरबार मे इन का प्रवेश इस प्रकार हुआ। एक बार इन का कोई शिष्य अमेठी में जाकर इन का रचा हुआ नागमती का बारहमासा (पद्मावत का एक प्रकरण) गा गा कर भीख माँग रहा था। लोगो ने इसे बहुत पसद किया और इसे राजा साहब के पास ले जाकर उन्हे भी इसे सुनवाया। राजा साहब को भी यह बहुत पसंद आया और ख़ास कर उन्हे यह दोहा बहुत ही अच्छा लगा था—

कवल जो विगसा मानसर, बिनु जल गएउ सुखाइ।
सूखि बेलि पुनि पलुहै, नौ पिउ सींचै आइ॥

इस शिष्य से पूछने पर मालूम हुआ कि यह मलिक मुहम्मद नामक एक संत कवि की रचना है। राजा साहब ने तुरत बड़े आदर और आग्रह से उन्हें बुलावा भेजा और वहां आने के बाद जायसी वहीं रहने लगे और वहीं पद्मावत की रचना भी पूरी हुई। कहते हैं कि अमेठी के राजा के कोई सतति नही थी और इन्हीं की दुआ से उन का वश चला। तब से इन की मान प्रतिष्ठा उक्त दरबार में बहुत बढ़ गई और लोग इन्हे कोई असाधारण सिद्ध पुरुष समझकर दूर दूर से इन के दर्शनो को आने लगे। इन के देहावसान होने पर अपने कोट के सामने ही इन की क़ब्र बनवाई गई जो अद्यावधि वर्तमान है।

जायसी के ग्रंथ

'पद्मावत' और 'अखरावट' नाम के जायसी रचित केवल दो ही ग्रथ प्राप्त और प्रकाशित हैं। इन में मुख्य पद्मावत है जो कि अवधी का प्रबध-काव्य है। यह ग्रथ दोहा चौपाइयों में है और इसी के ढग पर सौ वर्ष बाद गोस्वामी तुलसीदास ने अपने जगत्प्रसिद्ध ग्रंथ रामचरित-मानस की रचना की थी।

प्रेमगाथा-साहित्य

प्रेमगाथा का प्रादुर्भाव

जायसी से क़रीब सौ सवा सौ वर्ष पहिले ही हिंदू और मुसलमान जनता सांप्रदायिक विद्वेष को बहुत कुछ किनारे कर एक दूसरे की संस्कृति, उपासना और विचार आदि को सहानुभूतिपूर्वक समझने और परस्पर इन के आदान प्रदान की ओर रुचि करने लगी थी। यद्यपि तत्कालीन मुसलमान शासकों का भाव हिंदू-प्रजा के प्रति उतना सहानुभूतिपूर्ण नहीं था तथापि हिंदू और मुसलमान प्रजा में एक प्रकार का भ्रातृभाव स्थापित हो चला था और वह उत्तरोत्तर दृढ़ से दृढ़तर होता चला जा रहा था। मुसलमान प्रजा यह समझने लगी थी कि यदि हमे हिंदुस्तान में रहना ही है तो हिंदुओं के विश्वास, सस्कृति तथा साहित्य आदि के प्रति छत्तीस होकर रहना असंभव है। शायद यही कारण था कि तत्कालीन कुछ मुसलमान विचारक, फ़क़ीर और कवि हिंदुओं के साहित्य और संस्कृति के अध्ययन की ओर

तो भुके ही पर कुछ ने हिंदुओं की तत्कालीन काव्यभाषा में साहित्य निर्माण का भी श्री गणेश किया। इन लोगों ने इस बात को ठीक ठीक समझ लिया था कि दोनो संप्रदायों के लोगों में एक दूसरे की संस्कृति और साहित्य के प्रचार और लोकप्रिय बनाने से बढ़कर आपस मे घनिष्ठता और सौहार्द स्थापित करने का दूसरा उपाय नही हो सकता। इसी विचार से प्रेरित हो कर खुसरो, कबीर और जायसी आदि कुछ दूरदर्शी कवियो ने इस दिशा की ओर पैर बढ़ाया और इस मे उन्हे अच्छी सफलता भी मिली।

सब से पहले खुसरो ही इस कार्य मे अग्रसर हुए। खुसरो की कविता का एक बहुत बड़ा भाग लुप्त हो गया है, तो भी जो प्राप्त है उस से उन की हिंदुओं के धर्मग्रथ, संस्कृति तथा साहित्य आदि के प्रति पूरी श्रद्धा और सहानुभूति स्पष्ट है। कबीर का मार्ग सब से निराला था। इन्हों ने दोनो की बुराइयो का प्रतिवाद करते हुए उन्हे प्रेम के साधारण सूत्र मे बाँधने की चेष्टा की। इन के प्रतिवाद प्रायः इतने तीव्र परंतु सच्चे हुआ करते थे कि दोनों ही संप्रदायो के कट्टर और धर्मांध लोग इन के घोर विरोधी हो गए। पर इतना होते हुए भी दोनो ही संप्रदायो की अधिकांश जनता पर इन की शिक्षाओं का बड़ा प्रभाव पड़ा और दोनो ही जातियों की अधिकांश जनता जो धार्मिक कट्टरपन की बहॅक से बरी थी, कबीर की अनुयायी हुई, इस के बाद कुतुबन और जायसी आदि का समय आता है। कबीर की उद्दंड उक्तियों से जो बात नही हुई वह इन की प्रेमगाथाओं से हुई।

प्रेमगाथाओं का लक्ष्य

इन लोगो ने अपनी प्रेमगाथाओं द्वारा यह सिद्ध कर दिखाया कि सभी मनुष्यो के हृदय मे, चाहे वह हिंदू हो या मुसलमान या कोई हो प्रेमभावना का वही बीज समान रूप से अंकुरित होता है। इन लोगो ने आख्यानक-काव्य द्वारा यह दिखलाया कि किसी के रूप, गुण से आकर्षित हो कर उस से एक होने की इच्छा करना, इस कार्य की सिद्धि के लिए नाना प्रकार के असह्य कष्ट झेलना, अत मे उस की प्राप्ति से सुख, फिर इस के वियोग के दुख और प्रेम की पीर, आदि हृदय के विविध भाव और उस की तरंगे, क्या हिंदू क्या मुसलमान सभी के हृदय में समान रूप से उठती है। इन लोगों ने मुसलमान होकर हिंदू घराने मे प्रचलित प्राचीन प्रेम-कहानियों को उन्ही की भाषा में कहा, पर अपने ढग से, और इस प्रकार यह सिद्ध कर दिया कि जहाँ प्रेम है वहां जाति, सम्प्रदाय या मतमतांतर का भेद कोई अर्थ नही रखता। इस प्रकार की प्रेमगाथा लिखने वालों में सब से पहले कवि जिन की रचना प्राप्य है, शेख कुतुबन हैं। ये चिश्तीवश के शेख बुरहान के शिष्य थे और इन की रचित 'मृगावती' (निर्माण काल ९०९ हिजरी अर्थात् १५५६ वि०) इस प्रकार का पहला आख्यानक काव्य है। इस मे अवधी बोली में दोहा चौपाइयो मे चंद्रनगर के राजा गणपतिदेव के राजकुमार और कंचन नगर के राजा रूपमुरार की राजकन्या मृगावती की प्रेम-कहानी वर्णित है।

हम ऊपर कह चुके हैं कि इन लोगों ने कहीं तो इन्होंने हिंदुओं की कहानियां पर उन्हे अपने ढंग से कही। ढंग से यहां मेरा मतलब है इन की रचनाओं के ढांचे और वर्णन शैली से। भारतीय साहित्य मे प्रबंधकाव्यों की जो सर्गबद्ध प्रथा पुराकाल से चली आ रही थी उस से इन्होंने काम नहीं लिया। इन्होंने फारसी की मसनवियों को आदर्श बनाया। इन मे विस्तार के अनुसार कथा सर्गों या अध्याओ मे विभक्त नही होती। एक सिरे से इन का क्रम अखंड रूप से बराबर चला जाता है, केवल कहीं कही घटनाओं या प्रसंगो का उल्लेख शीर्षकों के रूप मे दे दिया जाता है, जैसे—'सात समुद्र खंड' राजा गढ़ छेका खड' या 'राजा बादशाह युद्ध खड', इत्यादि। मसनवियों के रचना के संबध मे कुछ विशेष साहित्यिक परंपराओ के पालन का प्रतिबंध नहीं होता। इन मे केवल इतना ही आवश्यक होता है कि सारी रचना केवल एक ही छद मे हो, पर कथावस्तु के सबंध मे एक परपरा का पालन अवश्य करना पड़ता था। आरभ में परमेश्वर, नबी और तत्कालीन बादशाह की स्तुति मसनवियो में अनिवार्य समझी जाती थी। इस परंपरा का पालन जायसी और कुतुबन आदि सभी प्रेमगाथाकारों ने नियम से किया है। छंद भी इन लोगो ने आद्योपांत दोहा चौपाई ही (सात सात या कही कहीं नौ नौ चौपाइयो के बाद एक एक दोहा) रक्खा है। चौपाइयों की विषम सख्या देखकर यह धारणा होती है कि ये लोग दो ही चरणों से चौपाई पूरी मानते रहे होंगे, पर जैसा कि 'चौपाई' शब्द ही से स्पष्ट है, चार चरणो मे एक चौपाई पूरी होती है। तुलसी दास जी ने ऐसा ही किया है।

गाथाओं की विशेषताएं

सब से मार्के की बात इन प्रेमगाथाओं के सबध मे यह है कि ये सभी अवधी मे और दोहा चौपाई छंद मे ही लिखी गई हैं। अब तक प्रायः दस प्रेमगाथाओ का पता लग चुका है पर उन में के प्रकाशित सस्करण केवल तीन ही हमारे देखने मे आए हैं। पर सभो की भाषा, शैली तथा विषय निर्वाह आदि के सबध में आश्चर्य-जनक समानता पाई गई है। यहां तक कि लेखको के भिन्न भिन्न नाम यदि न बताए जायँ तो पाठक यही समझेगा कि ये सब एक ही लेखक की लिखी हुई हैं। विषय प्रायः सभों मे कुछ कुछ इसी ढग का होता है — कोई राजकुमार किसी राजकुमारी के रूप गुण की प्रशसा सुन या प्रत्यक्ष या स्वप्न या चित्र में देख कर आकर्षित होता है। उधर भी यही हालत होती है। अत मे वह कुछ विश्वस्त साथियो को साथ ले कर उस की खोज मे चल पड़ता है। प्रायः उसे कोई मार्गप्रदर्शक भी मिल जाता है। यह अधिकतर राजकुमारी का भेजा हुआ कोई दूत या दूत का काम करने वाला कोई पक्षी या तोता हुआ करता है। राह मे उसे बड़ी विघ्न-बाधाओं का सामना करना पड़ता है। कई बार उसे फलागम होते होते कोई ऐसा विघ्न या कोई ऐसी भूल उस से हो जाती है जिस से उस की

प्रेमगाथाओं का रूप और विषय

उद्देश्यसिद्धि फिर एक अनिश्चित काल तक के लिए रुक जाती है। कारागार और प्राण-संकट तक की नौबत आती है। रक्त-पात और युद्धवर्णन भी इन आख्यायिकाओं का एक आवश्यक अग होता है। इन के संबध मे यह सदा स्मरण रखना चाहिए कि इन कहानियो का आधार सदा ऐतिहासिक होता है और बहुत सी घटनाएं भी ऐतिहासिक होती हैं, यद्यपि कवि उस मे अपनी आवश्यकतानुसार हेर फेर किए रहता है। पर इन इतिहासमूलक कथानको के अतिरिक्त कवि अपनी इच्छा या आवश्यकता के अनुसार एक या अधिक काल्पनिक कथानक भी मिला देता है। यह प्रायः चरितनायक के उत्कर्ष को बढ़ाने और कथा मे अलौकिक या आध्यात्मिक पक्ष को स्पष्ट करने के उद्देश्य से होता है।

प्रेमगाथाओं मे रहस्यवाद

इन प्रेमगाथाओं का सब से महत्त्वपूर्ण वह अंश होता है जिस का संबंध अध्यात्म या रहस्यवाद से होता है। लौकिक कथा के द्वारा कवि जो परोक्ष की ओर सकेत करता है वही शायद रचना का प्रधान उद्देश्य रहता था। कथा के अत में कवि स्पष्ट रूप से कह देता है कि यह सारी कथा अन्योक्ति रूप मे कही गई है और इसी रूप मे कथा को समझने के लिए वह पाठक से अनुरोध करता है। उदाहरणार्थ पद्मावत में नायक रतनसेन को साधक समझना चाहिए। पद्मावती को प्राप्त करने की इच्छा से जो उस के हृदय मे प्रेम की पीर उठती है उसे ईश्वरोन्मुख प्रेम या लगन समझना चाहिए। पद्मावती तक पहुँचने की राह बताने वाले 'सुआ' को गुरु, राघव दूत को शैतान, रानी नागमती को सांसारिक बंधन, तथा सुलतान अलाउद्दीन को माया का प्रतिनिधि या शैतान बताया गया है। निम्नलिखित चौपाइयां देखिए—

मैं एहि अरथ पंडितन्ह बूझा। कहा कि हम्ह किछु और न सूझा॥
चौदह भुवन जो तर उपराहीं। ते सब मानुष के घट माहीं॥
तन चितउर मन राजा कीन्हा। हिय सिंघल बुधि पदमिनि चीन्हा॥
गुरू सुआ जेइ पथ देखावा। बिनु गुरु जगत को निरगुन पावा?॥
नागमती यह दुनिया-धंधा। बाँचा सोइ न एहि चित बंधा॥
राघव दूत सोइ सैतानू। माया अलाउदी सुलतानू॥
प्रेम-कथा एहि भाँति बिचारहु। बूझि लेहु जौ बूझै पारहु॥

इस प्रकार अंतिम चौपाई मे कवि एक प्रकार से चुनौती सी दे देता है कि यदि उक्त रीति से कथा को समझ सको तो समझ लो।

पद्मावत की कथा

अब यहां पर पद्मावत की कथा भी संक्षेप से दे देना आवश्यक है। सिंहल द्वीप के राजा गंधर्वसेन की पुत्री पद्मावती रूप-गुण मे अद्वितीय थी, यहां तक कि उस के योग्य वर कहीं नहीं मिलता था। उस के पास हिरामन नाम का एक तोता था जो कि बड़ा विद्वान् और वाक्पटु था। पद्मावती के वर न मिलने के संबध मे वह एक दिन

अपने विचार प्रकट कर रहा था पर सयोग से राजा ने उस के विचारो को सुन लिया जिस से उसे बड़ा क्रोध आया और उस ने तोते को अपने यहां से निकलवा दिया। इधर उधर कुछ दिनों तक भटकने के बाद हिरामन रतनसेन के यहां पहुँचा और उस ने उसे अपने यहां रख भी लिया। एक दिन जब वह कहीं शिकार खेलने गया तब उस की रानी नागमती ने हिरामन से पूछना आरभ किया कि 'हिरामन तू तो दुनिया मे बहुत घूमा फिरा है, बता तो तूने कहीं मेरे समान कोई और भी सुंदरी देखी है ?' हिरामन ने सिहलद्वीप की राजकुमारी पद्मावती की चर्चा करते हुए कहा कि 'उस मे और तुम मे दिन और अँधेरी रात का अतर है।' यह सुन कर रानी ने बड़े क्रोध मे आकर उसे मरवा डालने की आज्ञा दे दी। पर चेरियों ने राजा के भय से उसे मारा नहीं, केवल एक जगह छिपा कर रख दिया। शिकार से लौटने पर अपने प्यारे तोते को न पाकर रतनसेन का मिजाज बहुत बिगड़ा, यहां तक कि अत में उस के गुस्से से डर कर बांदियों ने हिरामन को उस के सामने लाकर रख दिया। पूछने पर उस ने सब वृत्तांत कह सुनाया और प्रसंगवश पद्मावती के सौंदर्य का भी वर्णन किया। राजा के हृदय पर उस की सुनी हुई सुदरता का ही इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि वह मूर्छित होकर गिर ही पड़ा और होश मे आने पर योगीवेश मे सिहलगढ़ की ओर चल पड़ा और सोलह हज़ार उस के साथी राजकुमार भी योगी का बाना धारण कर उस के साथ हो लिये। इस योगियों की पलटन का नेता और मार्गप्रदर्शक वही हिरामन तोता था।

अंत में अनेक विघ्न-बाधाएं झेलते हुए दुर्गम समुद्र पार कर यह विचित्र दल सिंघल द्वीप पहुंचा और रतनसेन ने एक मंदिर मे, जहां कभी कभी पद्मावती पूजन करने आया करती थी, पड़ाव डाला और वहीं पद्मावती की मानसिक पूजा मे लीन हो गया। कुछ समय के उपरांत श्री पंचमी के पर्व के दिन पद्मावती वहां पूजन के निमित्त आई पर रतनसेन ऐन मौके पर चूक गया। वह उसे देखते ही मूर्छित हो गया। तोते ने महल मे जाकर उस की करुण कहानी पद्मावती को कह सुनाई। पद्मावती ने कहला भेजा कि वक़्त पर तो तुम चूक गए अब इस दुर्गम सिहलगढ़ तक चढ़ो तभी मुझे देख सकते हो। राजा अपने साथी जोगियों सहित किले में घुसा पर गढ़ में पहुँचते पहुँचते सवेरा हो गया और वह वहीं पकड़ा गया। राजा के सामने उस का विचार हुआ और उसे सूली पर चढ़ाने की आज्ञा दी गई। पर यह हाल देख कर उस के साथी योगियों ने गढ़ घेर लिया और उन की सहायता के लिये शिव, हनुमान आदि सारे देवता भी उन के दल मे मिल गए। फल यह हुआ कि गंधर्वसेन की सारी सेना हार गई। उस ने जोगियो के बीच जब साक्षात शिव को लड़ते हुए तो देखा तो वह दौड़ कर उन के पैरों पर गिर पड़ा और बोला, "महाराज पद्मावती आप की है जिसे चाहिए उसे दीजिए।" अब रतनसेन के मार्ग में कोई रुकावट न थी। उस का विवाह पद्मावती से हो गया और वह उसे लेकर चित्तौर गढ़ लौट भी आया।

रतनसेन के दरबार मे राघवचेतन नामक एक पंडित रहता था। वह बड़ा तांत्रिक था और उसे यक्षिणी सिद्ध थी। उस ने अपनी माया से दरबार के अन्य पंडितों को बडा नीचा दिखाया। राजा को इस पर बड़ा क्रोध आया और उसने उसे देश निकाले का दंड दे दिया। राघव इस अपमान का बदला लेने की नीयत से दिल्ली के तत्कालीन बादशाह अलाउद्दीन के पास पहुँचा और उस से पद्मावती के रूप की बड़ी प्रशसा की। अलाउद्दीन ने उसे प्राप्त करने के अनेक उपाय किए, रतनसेन से कई बार युद्ध हुआ पर प्रत्येक बार उसे नीचा देखना पड़ा। अत में सधि हुई और धोखे से उसने रतनसेन को पकड़ लिया और कहवा दिया कि जब पद्मावती मेरे पास आएगी तभी रतनसेन छूट सकेंगे। इस पर रानी ने कहलवा दिया कि मैं सात सौ बांदियों के साथ तुम्हारे पास आ रही हूँ और एक बार राजा से अंतिम साक्षात् कर उन्हे चित्तौर रवाना कर तुम से आ मिलूँगी। इस मे सुलतान ने कोई आपत्ति नहीं की। पर इन सात सौ पालकियों के अंदर, और उन के ढोने वाले कहार सब वीर राजपूत योद्धा थे। सुलतान के खीमो में पहुँच कर इधर तो रतनसेन को छुड़ा कर एक घोड़े पर बैठा कर वीर बादल के साथ चित्तौर रवाना कर दिया गया और उधर गोरा इन राजपूत वीरो के साथ यवनों को रोके रहा। चित्तौर पहुंचने पर पद्मावती ने कुंभलनेर के राजा देवपाल द्वारा अपने पास दूती भेजी जाने की बात कही। इस पर राजा ने कुंभलनेर जा घेरा और दोनों एक दूसरे से लड़ते हुये वीर गति को प्राप्त हुए। इधर जब नागमती और पद्मावती के पास यह समाचार पहुँचा तो दोनो सहर्ष अपने पति के शव के साथ सती हो गईं। बाद मे जब अलाउद्दीन गढ़ में पहुँचा तो उसे जलती हुई चिताओं को छोड़ कर और कुछ नहीं दिखाई पड़ा।

कथा में कल्पना और इतिहास का सम्मिश्रण

इस कहानी का पूर्वार्द्ध तो प्राय: पूरा कल्पित है पर उत्तरार्द्ध ऐतिहासिक घटनाओं के आधार पर है। इस के नायक नायिका दोनों ही इतिहास-प्रसिद्ध पात्र हैं और जायसी यद्यपि मुख्य मुख्य स्थलों पर ऐतिहासिक आधार का अनुसरण करते हुये चले हैं तथापि अपनी अपूर्व कल्पना और अनुभूति के साहाय्य से वे पूरी कथा को एक ऐसा रूप देने में सफल हुये हैं जो जनता के हृदय में परंपरा से अवस्थित था और यही कारण है कि यह कथा इतनी लोकप्रिय हुई।

जायसी की कविता

भाषा

जायसी की भाषा ठेठ अवधी है। अवधी में इतनी बड़ी और व्यापक प्रबंध-रचना सब से पहले इन्ही की मिलती है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरित मानस की रचना के समय इन की पद्मावती को बहुत सी बातों मे आदर्श बनाया होगा। कम से कम मानस का बाह्य रूप और विशेषत: उस की भाषा तो पद्मावती से बहुत कुछ मिलती जुलती

है, अंतर केवल इतना ही है कि मानस में हम अवधी का परिमार्जित, सुसस्कृत और सर्वथा साहित्यिक रूप देखते हैं पर पद्मावत मे यह अपने ठेठ रूप मे है और प्रायः ग्रामीणता लिये हुये है। जायसी उतने काव्यकला-कुशल तो थे नहीं पर साथ ही यह भी मानना पड़ेगा कि जिस भाषा का प्रयोग उन्हो ने किया है उस पर उन्हें पूरा अधिकार था। तुलसी की भाषा जो इतनी सुसज्जित या साहित्यिक कही जाती है उस का कारण है उन का सस्कृत का गंभीर पांडित्य। मानस की चौपाइयो का माधुर्य, उन का ओज तथा उन की साहित्यिकता बहुत कुछ उन में प्रयुक्त संस्कृत की कोमल-कान्त पदावली पर निर्भर करती है। जायसी मे यह कमी है, या यो कहिये कि यही उन की खूबी है। अवधी का स्वाभाविक माधुर्य जायसी की ही भाषा में प्रस्फुटित हो पाया है। यह कहना कठिन है कि तुलसी ने अपने चुने हुये संस्कृत के तत्सम शब्दों या वाक्यांशो के आभूषण भार से उस की शोभा को सचमुच और प्रदीप्त करके दिखाया है या उस की नैसर्गिक शोभा को ढाँक दिया है।

रस और अलकार

यों तो जायसी ने अपने काव्य मे प्रायः सभी रसों का समावेश किया है पर उन की स्वाभाविक रुचि विप्रलंभ-शृंगार की ओर जान पड़ती है। सभोग-शृगार, वीर, और करुणा मे भी इन्हे अच्छी सफलता मिली है। यद्यपि जायसी का रस-वर्णन भारतीय कविपरंपरा-प्रणाली के अनुसार ही हुआ है, तथापि कुछ बातों मे इन का ढंग सब से निराला है। उर्दू कवियों के वियोग-वर्णन मे प्रायः जो एक प्रकार की वीभत्सता पाई जाती है उस की प्रचुरता पद्मावत में भी है, और शृगार के संभोग पक्ष के सबंध में यह भी कहा जा सकता है कि वह बहुत परिष्कृत अथवा कोमल नहीं है। उस में मिठास या प्रेमनिर्भरता की मात्रा इतनी अधिक हो गई है कि कुछ लोगों को उस में ग्रामीणता या अश्लीलता की बू भी मिल सकती है। वीर-रस का वर्णन इन का सर्वत्र शृंगार की आड़ लिये हुए है और उसी के आधार पर स्थित जान पड़ता है। वीर के साथ ही उचित अवसरो पर रौद्र, भयानक और वीभत्स भी अपनी अपनी छटा दिखाते हैं। 'राजा-बादशाह युद्ध खंड' मे वीर, और 'लक्ष्मी-समुद्र खड' मे भयानक रस का बड़ा सुदर समावेश हुआ है। परंतु एक बार फिर कहना पड़ेगा कि यह सभी ग्रथ के स्थायी रस-शृंगार के आधार पर स्थित हैं। ग्रथ के स्थायीरस पर विचार करते समय एक बात और स्मरण रखनी पड़ेगी। यह सारा ग्रंथ एक प्रकार से अन्योक्ति के रूप मे है। कवि ने अत में स्पष्ट कर दिया है कि इस मे वर्णित नायक-नायिका के प्रेम को साधारण लौकिक प्रेम न समझ कर साधक का ईश्वरोन्मुख प्रेम समझना चाहिए। इस दृष्टि से ग्रंथ का स्थायीरस शांत मानना पड़ेगा।

अलकारों के संबंध में भी जायसी ने अधिकतर कवि-कुलागत पद्धति का ही अनुसरण किया है। इन के अलंकारों मे सादृश्यमूलक अलंकारों का ही एक

प्रकार से साम्राज्य है। यद्यपि अलकारो के प्रयोग मे इन्होने अधिकतर भारतीय काव्य-पद्धति को ही आदर्श माना है तथा स्थान स्थान पर फारसी कवित्व की भी झलक स्पष्ट है, विशेष कर करुण रस और विरह वर्णन के अवसरो पर। अलकारो का समावेश दो उद्देश्यों से होता है। प्रस्तुत विषय को स्पष्ट करने और भाव को प्रदीप्त करने के लिये। और भी उद्देश्य हो सकते हैं पर मुख्य यही दोनो होते हैं। इस के साथ ही भावुक कवि अलंकारों के प्रयोग के समय इस बात का बड़ा ध्यान रखता है कि कहीं उस के द्वारा प्रयुक्त अलंकार से रस के परिपाक में बाधा न पड़े। प्रायः लोग वर्णन को स्पष्ट करने के लिये ऐसी उपमा या उत्प्रेक्षा आदि रख देते हैं जिस से एक प्रकार से वर्णन तो स्पष्ट हो जाता है पर साथ ही रंग में भंग भी हो जाता है। जायसी भी स्थान स्थान पर इस दोष के भागी हुए हैं। विरह-वर्णन के समय शृंगार को वीभत्स के आधारभूत करना इन के लिये साधारण बात है। नख सिख वर्णन के समय इन की उपमा और उत्प्रेक्षाएं, विशेषतः हेतूत्प्रेक्षाएँ, भिन्न भिन्न वर्णनीय अंगों की विशेषताओं का तो बहुत स्पष्ट परिचय देती हैं पर साथ ही हँसी भी आती है। शृंगार रस के लिये अलंकार भी वैसे ही होने चाहिए जिन से सौंदर्य भावना में व्याघात न पड़े। पर जायसी की उड़ान तो कही कहीं उपहासास्पद सी जान पड़ने लगती है।

प्रबंध-कुशलता

पद्मावत एक बृहत् प्रबंध-काव्य है। इस में कवि को थोड़े से ऐतिहासिक आधार पर एक बहुत बड़ी इमारत खड़ी करनी पड़ी है। किसी भी इमारत का सर्वांगसुंदर बनना असभव है और फिर जायसी के सामने ऐसे आदर्श भी नही थे जिन से वे कोई विशेष लाभ उठा सकते। मधुमालती, मुग्धावती, मृगावती, तथा प्रेमावती, आदि कुछ प्रेमगाथाओ का उल्लेख पद्मावत मे मिलता है और इस से यह स्पष्ट है कि जायसो के पहले कुछ कवि इस प्रकार की प्रेमगाथा-काव्यो की रचना कर चुके थे पर इस से यह निष्कर्ष निकालना कि इन्हीं को आदर्श मान कर जायसी ने अपने ग्रंथ की रचना की होगी, भूल है। पहले तो उक्तगाथाओ में से मुग्धावती और प्रेमावती का अभी तक पता ही नही लगा। मधुमालती और मृगावती की खंडित प्रतियां नागरी प्रचारिणी सभा को देखने में मिली हैं। इन का जो भाग देखने मे आया है उन से यह किसी प्रकार सिद्ध नहीं होता कि जायसी ने अपनी प्रबन्धकल्पना में इन को आदर्श बनाया होगा। सारांश यह कि इतने विस्तृत और व्यापक रूप से एक प्रबंधकाव्य की रचना में जायसी का प्रयास बहुत कुछ मौलिक था। अब यहां पर देखना यह है कि इन को इस काम मे कहां तक सफलता मिली है। किसी भी प्रबंधकाव्य की सफलता की विवेचना के पहले यह देखना चाहिए कि कवि का दृष्टिकोण क्या रहा है। क्या अपनी कथा के परिणाम द्वारा कवि किसी विशेष आदर्श को स्थापित करना चाहता है अथवा उस का उद्देश्य कथा के रूप में कोई

सुंदर वस्तु पाठकों के सामने उपस्थित करना है। यह तो हम तुरत कह सकते हैं कि इस रचना में किसी आदर्श विशेष को सामने रख कर उसे स्थापित करने के उद्देश्य से पात्रों के स्वाभाविक विकास अथवा घटनाओं के नैसर्गिक प्रवाह को किसी खास दिशा की ओर नहीं मोड़ा गया है, फिर जायसी और भारतीय काव्य-परम्परा के प्राचीन आदर्श — 'अंत भले का भला और बुरे का बुरा,' — के भी क़ायल नहीं थे। इस के प्रमाण में इतना ही कहना यथेष्ट होगा कि इस कथा का अंत बड़ा करुण और अत्यंत दुखांत है, सब आपत्तियों के टलने के बाद नायक नायिका आदि सभी मुख्य पात्र मृत्युमुख में पतित होते हैं और सारे फसाद की जड़ उस राघव चेतन, या अलाउद्दीन ही का, कोई परिणाम-दुखद था सुखद्-दिखलाना कवि ने आवश्यक नहीं समझा। और फिर कथा के इतने करुण अंत को कविने उपसंहार मे एक विचित्र रूप से शांत रस मे परिणत कर दिया है। पर्यवसान के समय कवि इस चातुरी से अपना दृष्टिकोण दार्शनिक बना लेता है जिस से यह स्पष्ट भासित होने लगता है कि मनुष्य के वास्तविक जीवन का वास्तविक अंत दुःखमय नहीं बल्कि सांसारिक माया-मोह से उदासीन और पूर्ण रूप से शांत होना चाहिए। इस धारणा का कारण यही है कि जहाँ कवि ने कथा के बीच बीच में नागमती और पद्मावती को प्रिय-वियोग में अत्यंत खिन्न और विषाद पूर्ण दिखलाया है वहाँ प्रिय के निधन अवसर पर भी विषादपूर्ण करुण-क्रंदन अपेक्षित था। पर ऐसा नहीं हुआ। हम देखते हैं कि रतनसेन के मरने पर दोनों महिषियों का विलाप में रत न हो शोक से उदासीन होकर एक शांतिमय आनंद के साथ मृतपति के साथ सती हो जाती हैं। यही हाल वीरगति को प्राप्त अन्य पुरुषों की स्त्रियों का भी दिखलाया गया है। सब कुछ शेष हो जाने पर अलाउद्दीन जब बड़ी बड़ी उम्मीदें बाँधता हुआ गढ़ मे घुसा तो इस के सामने एक ऐसा दृश्य आया जिस की उसे स्वप्न में भी आशा न थी। वह दृश्य इस लोक का नहीं था। उस के हृदय पर भी इस दृश्य का गहरा प्रभाव पड़े बिना नहीं रह सका। सतियों के चिताओं की एक मुट्ठी भस्म उसने उठाई और दुनियाँ को इसी (भस्म) की भाँति झूठी समझा —

"छार उठाइ लीन्ह एक मूठी। दीन्ह उठाइ पिरिथिवी झूँठी"

सिंहलद्वीप वर्णन खंड

पुनि महुवा चुअ अधिक मिठासू । मधु जस मीठ, पुहुप जस बासू ॥
और खजहजा अनबन नाऊँ । देखा सब राउन अमराऊँ ॥
लाग सबै जस अमृत साखा । रहै लोभाइ सोइ जो चाखा ॥
लवँग सुपारी जायफर, सब फर फरे अपूर ।
आस पास घन इमिली, औ घन तार खजूर ।
बसहिं पखि बोलहिं बहु भाखा । करहिं हुलास देखि कै साखा ॥
भोर होत बोलहिं चुहचूही । बोलहि पॉडुक "एकै तूही" ॥
सारौं सुआ जो रहचह करहीं । कुरहिं परेवा औ करबरहीं ॥
"पीव पीव" कर लाग पपीहा । "तुही तुही" कर गडुरी जीहा ॥
"कुहू कुहू" करि कोइलि राखा । औ भिंगराज बोल बहु भाखा ॥
"दही दही" करि महरि पुकारा । हारिल बिनवै आपन हारा ॥
कुहकहिं मोर सोहावन लागा । होइ कुराहर बोलहिं कागा ॥
जावत पखी जगत के, भरि बैठे अमराउँ ।
आपनि आपनि भाषा, लेहिं दई कर नाउँ ॥
पैग पैग पर कुवाँ बावरी । साजी बैठक और पाँवरी ॥
और कुंड बहु ठावहिं ठाऊँ । सब तीरथ औ तिन्ह के नाऊँ ॥
मठ मंडप चहुँ पास सँवारे । तपा जपा सब आसन मारे ॥
कोइ सु ऋषीसुर, कोइ सन्यासी । कोइ रामजती बिस्वासी ॥
कोई ब्रम्हाचर पथ लागे । कोइ सो दिगबर बिचरहिं नाँगे ॥
कोई सु महेसुर जंगम जती । कोइ एक परखै देवी सती ॥
कोइ सुरसती कोई जोगी । कोई निरास पथ बैठ बियोगी ॥
सेवरा, खेवरा, बानपर, सिध, साधक, अवधूत ।
आसन मारे बैठ सब, जारि आतमा भूत ॥
मानसरोदक बरनौं काहा । भरा समुद अस अति अवगाहा ॥
पानि मोति अस निरमल तासू । अमृत आनि कपूर सुबासू ॥
लंक दीप कै सिला अनाई । बाँधा सरवर घाट बनाई ॥
खँड खँड सीढ़ी भई गरेरी । उतरहिं चढ़हिं लोग चहुँ फिरी ॥
फूला कँवल रहा होइ राता । सहस सहस पखुरिन कर छाता ॥
उलथहिं सीप, मोति उतिराहीं । चुगहिं हंस औ केलि कराहीं ॥
खनि पतार पानी तहँ काढ़ा । छीरसमुद्र निकसा हुत बाढ़ा ॥
ऊपर पाल चहूँ दिसि, अमृत-फल सब रूख ।
देखि रूप सरवर कै, गै पियास औ भूख ॥
पानि भरै आवहिं पनिहारी । रूप सुरूप पदमिनी नारी ॥
पदुमगंध तिन्ह अंग बसाहीं । भँवर लागि तिन्ह संग फिराहीं ॥

लंक - सिंघिनी, सारँगनैनी। हंसगामिनी कोकिलबैनी॥
आवहिं झुंड सो पाँतिहिं पाँती। गवन सोहाइ सु भाँतिहि भाँती॥
कनक कलस मुखचंद दिपाहीं। रहस केलि सन आवहिं जाहीं॥
जा सहुँ वै हेरैं चख नारी। बाँक नैन जनु हनहिं कटारी॥
केस मेघावर सिर ता पाईं। चमकहिं दसन बीजु कै नाईं॥
माथे कनक गागरी आवहिं रूप अनूप।
जेहि के असि पनहारी सो रानी केहि रूप॥
ताल तलाव बरनि नहिं जाहीं। सूझै वार पार किछु नाहीं॥
फूले कुमुद सेत उजियारे। मानहुँ उए गगन महँ तारे॥
उतरहिं मेघ चढ़हि लेइ पानी। चमकहिं मच्छ बीजु कै बानी॥
पौरहि पंख सुसंगहि संगा। सेत पीत राते बहु रंगा॥
चकई चकवा केलि कराहीं। निसिक बिछोह, दिनहि मिलि जाहीं॥
कुररहिं सारस करहि हुलासा। जीवन मरन सो एकहिं पासा॥
बोलहिं सोन ढेक बगलेदी। रही अबोल मीन जल-भेदी॥
नग अमोल तेहि तालहिं, दिनहिं बरहिं जस दीप।
जो मरजिया होइ तहँ, सो पावै वह सीप॥
आस पास बहु अमृत बारी। फरी अपूर, होइ रखवारी॥
नारंग नींबू सुरंग जँभीरा। औ बदाम बहु भेद अँजीरा॥
गलगल तुरंज सदाफर फरे। नारंग अति राते रस भरे॥
किसमिस सेव फरे नौ पाता। दारिउँ दाख देखि मन राता॥
लागि सुहाई हरफारयौरी। उनै रही केरा कै घौरी॥
फरे तूत कमरख औ न्योजी। रायकरौंदा बेर चिरौंजी॥
संगतरा व छुहारा दीठे। और खजहजा खाटे मीठे॥
पानि देहिं खंड़वानी कुवहिं खाड़ बहु मेलि।
लागी घरी रहँट कै सीचहिं अमृतबेलि॥
पुनि फुलवारि लागि चहुँ पासा। बिरिछ बेधि चन्दन भइ बासा॥
बहुत फूल फूलीं घनबेली। केवड़ा चम्पा कुंद चमेली॥
सुरंग गुलाल कदम औ कूजा। सुगंध बकौरी गंध्रब पूजा॥
जाही जूही बगुचन लावा। पुहुप सुदरसन लाग सुहावा॥
नागेसर सदबरग नेवारी। औ सिंगारहार फुलवारी॥
सोनजरद फूलीं सेवती। रूपमंजरी और मालती॥
मौलसिरी बेइलि औ करना। सबै फूल फूले बहु बरना॥
तेहि सिर फूल चढ़हिं वै जेहि माथे मनि भाग।
आछहिं सदा सुगन्ध बहु जनु बसंत औ फाग॥

सिंहलनगर देखु पुनि बसा। धनि राजा अस जे कै दसा ॥
ऊँची पौरी ऊच अवासा। जनु कैलास इन्द्र कर बासा ॥
राव रंक सब घर घर सुखी। जो दीखै सो हसता-मुखी ॥
रचि रचि साजे चन्दन चौरा। पोते अगर मेद औ गौरा ॥
सब चौपारहि चन्दन खँभा। औंठँघि सभापति बैठे सभा ॥
मनहुँ सभा देवतन्ह कर जुरी। परी दीठि इंद्रासन पुरी ॥
सबै गुनी औ पंडित ज्ञाता। ससकिरित सब के मुख बाता ॥

असकै मंदिर सवारैं जनु सिवलोक अनूप।
घर घर नारि पदमिनी मोहहि दरसन रूप ॥

पुनि देखी सिंहल कै हाटा। नवो निद्धि लछिमी सब बाटा ॥
कनक हाट सब कुहकुह लीपी। बैठ महाजन सिंघलदीपी ॥
रचहिं हथौड़ा रूपन ढारी। चित्र कटाव अनेक सँवारी ॥
सोन रूप भल भयउ पसारा। धवल सिरी पोतहिं घर बारा ॥
रतन पदारथ मानिक मोती। हीरा लाल सो अनबन जोती ॥
औ कपूर बेना कस्तूरी। चदन अगर रहा भरपूरी ॥
जिन्ह एहि हाट न लीन्ह बेसाहा। ता कहँ आन हाट कित लाहा ॥

कोई करै बेसाहनी काहू केर बिकाइ।
कोई चलै लाभ सन कोई मूर गँवाइ ॥

पुनि सिंगारहाट भल देसा। किए सिंगार बैठी तहँ बेसा ॥
मुख तमोल, तन चीर कुसुंभी। कानन कनक जड़ाऊ खुंभी ॥
हाथ बीन सुनि मिरिग भुलाहीं। नर मोहहि सुनि, पैग न जाहीं ॥
भौंह धनुष तिन्ह नैन अहेरी। मारहि बान सान सौं फेरी ॥
अलक कपोल डोल हँसि देहीं। लाइ कटाछ मारि जिउ लेहीं ॥
कुछ कचुक जानौ जुग सारी। अंचल देहि सुभावहि ढारी ॥
केत खिलार हारि तेहि पासा। हाथ झारि उठि चलहि निरासा ॥

चेटक लाइ हरहि मन जब लहि होइ गथ फेंट।
साठनाठ उठि भए बटाऊ ना पहिचान न भेंट ॥

लेइ के फूल बैठि फुलहारी। पान अपूरब धरे सँवारी ॥
सोंधा सबै बैठ लै गाँधी। फूल कपूर खिरौरी बाधी ॥
कतहूँ पडित पढहिं पुरानू। धरम पथ कर करहि बखानू ॥
कतहूँ कथा कहै किछु कोई। कतहूँ नाच-कूद भल होई ॥
कतहुँ चिरहँटा पखी लावा। कतहुँ पखडी काठ नचावा ॥
कतहूँ नाद सबद होइ भला। कतहूँ नाटक चेटक-कला ॥
कतहुँ काहु ठगविद्या लाई। कतहुँ लेहि मानुष बौराई ॥

चरपट चोर गँठिछोरा मिले रहहिं ओहि नाच ॥
जो ओहि हाट सजग भा गथ ताकर पै बाँच ॥

पुनि आए सिंहलगढ पासा। का बरनौं जनु लाग अकासा ॥
तरहि करिन्ह बासुकि कै पीठी। ऊपर इंद्रलोक पर दीठी ॥
परा खोह चहुँ दिसि अस बाँकी। काँपै जाँघ, जाइ नहि झाँकी ॥
अगम असूझ देखि डर खाई। परै सो सपत-पतारहि जाई ॥
नव पौरी बाँकी, नवखंडा। नवौ जो चढै जाइ बरम्हंडा ॥
कंचन कोट जरे नग सीसा। नखतहि भरी बीजु जनु दीसा ॥
लंका चाहि ऊँच गढ ताका। निरखि न जाइ, दीठि मन थाका ॥
हिय न समाइ दीठि नहि, जानहुँ ठाढ सुमेर।
कहँ लगि कहौं उँचाई कहँ, लगि बरनौं फेर ॥

निति गढ बाँचि चलै ससि सूरू। नाहि त होइ बाजि रथ चूरू ॥
पौरी नवौ बज्र कै साजी। सहस सहस तहँ बैठे पाजी ॥
फिरहि पाँच कोतवार सुभौंरी। काँपै पाँव चपत वह पौरी ॥
पौरिहि पौरि सिंध गढ़ि काढ़े। डरपहिं लोग देखि तँह ठाढ़े ॥
बहुविधान वै नाहर गढ़े। जनु गाजहिं चाहहि सिर चढ़े ॥
टारहिं पूँछ, पसारहिं जीहा। कुंजर डरहिं कि गुँजरि लीहा ॥
कनक-सिला गढ़ि सीढी लाई। जगमगाहिं गढ ऊपर ताई ॥
नवौ खंड नव पौरी औ तहँ बज्र-केवार।
चारि बसेरे सौं चढै, सत सौं उतरै पार ॥

नव पौरी पर दसवँ दुवारा। तेहि पर बाज राज घरियारा ॥
घरी सो बैठि गनै घरियारी। पहर पहर सो आपनि बारी ॥
जबहीं घरी पूजि तेहिं मारा। घरी घरी घरियार पुकारा ॥
परा जो डाँड़ जगत सब डाँड़ा। का निचिंत माटी कर भाँड़ा ॥
तुम्ह तेहि चाक चढ़े हौ काँचे। आएहु रहै, न थिर होइ बाँचे ॥
घरी जो भरी घटी तुम्ह आऊ। का निचिंत होइ सोउ बटाऊ ॥
पहरहि पहर गजर निति होई। हिया बजर, मन जाग न सोई ॥
मुहमद जीवन जल भरन रहँट घरी कै रीति।
घरी जो आई ज्यो भरी, ढरी-जनम गा बीति ॥

गढ़ पर नीर खीर दुइ नदी। पनिहारी जैसे दुरपदी ॥
और कुंड एक मोतीचूरू। पानी अमृत, कीच कपूरू ॥
ओहि क पानि राजा पै पीया। बिरिध होइ नहिं जौ लहि जीया ॥
कंचन-बिरिछ एक तेहि पासा। जस कलपतरु इंद्र कैलासा ॥
मूल पतार, सरग ओहि साखा। अमरबेलि को पाव, को चाखा ॥
चाँद पात औ फूल तराई। होइ उजियार नगर जहँ ताई ॥

वह फल पावै तप करि कोई । बिरिध खाइ तौ जोबन होई ॥
राजा भए भिखारी सुनि वह अमृत भोग ।
जेइ पावा सो अमर भाई, ना किछु व्याधि न रोग ॥
गढ पर बसहि झारि गढ़पती । असुपति गजपति भू-नर-पती ॥
सब धौराहर सोने साजा । अपने अपने घर सब राजा ॥
रूपवंत धनवंत सभागे । परस-पखान पौरि तिन्ह लागे ॥
भोग बिलास सदा सब माना । दुख चिंता कोइ जनम न जाना ॥
मँदिर मँदिर सब के चौपारी । बैठि कुँवर सब खेलहिं सारी ॥
पासा ढरहिं खेल भल होई । खड़गदान सरि पूज न कोई ॥
भाँट बरनि कहि कीरति भली । पावहिं हस्ति घोड़ सिंहली ॥
मँदिर मँदिर फुलवारी चोवा चंदन बास ।
निसि दिन रहै बसंत तहँ छवौ ऋतु बारह मास ॥
पुनि चलि देखा राज दुआरा । मानुष फिरहिं पाइ नहिं बारा ॥
हस्ति सिंघली बाँधे बारा । जनु सजीव सब ठाढ़ पहारा ॥
कौनौ सेत पीत रतनारे । कौनौ हरे धूम औ कारे ॥
बरनहिं बरन गगन जस मेघा । औ तिन्ह गगन पीठि जनु ठेघा ॥
सिंघल के बरनौं सिंघली । एक एक चाहि एक एक बली ॥
गिरि पहार वै पैगहि पेलहिं । बिरिछ उचारि डारि मुख मेलहिं ॥
माते तेइँ सब गरजहिं बाँधे । निसि दिन रहहिं महाउत काँधे ॥
धरती भार न अँगवै, पावँ धरत उठ हालि ।
कुरुम टुटै भुइँ फाटै, तिन्ह हस्तिन्ह के चाल ॥
पुनि बाँधे रजबार तुरंगा । का बरनौं जस उन्हकै रंगा ॥
लील, समंद चाल जग जाने । हाँसल, भौंर, गियाह बखाने ॥
हरे, कुरंग, महुआ बहु भाँती । गरर, कोकाह, बुलाह सु पाँती ॥
तीख तुखार चाँड़ औ बाँके । सँचरहि पौरि ताज बिनु हाँके ॥
मन ते अगमन डोलहिं बागा । लेत उसास गगन सिर लागा ॥
पौन-समाज समुद्र पर धावहिं । बूड़ न पावँ, पार होइ आवहिं ॥
थिर न रहहिं रिस लोह चबाहीं । भाँजहिं पूँछ, सीस उपराहीं ॥
अस तुखार सब देखे जनु मन के रथवाह ।
नैन-पलक पहुँचावहि जहँ पहुँचा कोइ चाह ॥
राज सभा पुनि देख बईठी । इंद्रसभा जनु परि गै डीठी ॥
धनि राजा असि सभा सँवारी । जानहु फूलि रही फुलवारी ॥
मुकुट बाँधि सब बैठे राजा । दर निसान नित जिन्हके बाजा ॥
रूपवंत, मनि दिपै ललाटा । माथे छात, बैठ सब पाटा ॥
मानहुँ कवल सरोवर फूले । सभा क रूप देखि मन भूले ॥

पान कपूर मेद कस्तूरी । सुगँध बास भरि रही अपूरी ॥
माँझ ऊँच इंद्रासन साजा । गंध्रबसेन बैठ तहँ राजा ॥
छत्र गगन लगि ताकर, सूर तवै जस आप ।
सभा कंवल अस बिगसइ, माथे बड़ परताप ॥
साजा राजमंदिर कैलासू । सोने कर सब धरति अकासू ॥
सात खंड धौराहर साजा । उहै सँवारि सकै अस राजा ॥
हीरा ईंट, कपूर गिलावा । औ नग लाइ सरग लै लावा ॥
जावत सबै उरेह उरेहे । भाँति भाँति नग लाग उवेहे ॥
भा कटाव सब अनबन भाँती । चित्र कोरि कै पाँतिहि पाँती ॥
लाग खंभ मनि-मानिक जरे । निसि दिन रहहि दीप जनु बरे ॥
देखि धौरहर कर उँजियारा । छपि गए चाँद सूरुज औ तारा ॥
सुना सात बैकुंठ जस तस साजे खँड सात ।
बेहर बेहर भाव तस खंड खंड उपरात ॥
बरनौ राजमँदिर रनिवासू । जनु अछरीन्ह भरा कैलासू ॥
सोरह सहस पदमिनी रानी । एक एक तें रूप बखानी ॥
अति सुरूप औ अति सुकुवाँरी । पान फूल के रहहिं अधारी ॥
तेहि ऊपर चंपावति रानी । महा सुरूप पाट-परधानी ॥
पाट बैठि रह किए सिंगारू । सब रानी ओहि करहिं जोहारू ॥
निति नौरंग सुरंगम सोई । प्रथम बैस नहि सरवरि कोई ॥
सकल दीप महँ जेती रानी । तिन्ह महँ दीपक बारह-बानी ॥
कुँवरि बतीसो-लच्छनी, अस सब माँह अनूप ।
जावत सिंघलदीप के सबै बखानैं रूप ॥

———

मानसरोदक खंड

मानसरोदक खंड

एक दिवस पून्यो तिथि आई। मानसरोदक चली नहाई ॥
पदमावति सब सखी बुलाई। जनु फुलवारि सबै चलि आई ॥
कोइ चंपा कोइ कुंद सहेली। कोइ सुकेत करना, रस बेली ॥
कोइ सु गुलाल सुदरसन राती। कोइ सो बकावरि-बकुचन भाँती ॥
कोइ सो मौलसिरि, पुहपावती। कोइ जाही जूही सेवती ॥
कोई सोनजरद कोइ केसर। कोइ सिंगार-हार नागेसर ॥
कोइ कूजा सदबर्ग चमेली। कोई कदम सुरस रस-बेली ॥
चलीं सबै मालति सँग फूलीं कवँल कुमोद।
बेधि रहे गन गँधरब बास-परमदामोद ॥

खेलत मानसरोवर गईं। जाइ पाल पर ठाढी भईं ॥
देखि सरोवर हँसैं कुलेली। पदमावति सौं कहहिं सहेली ॥
ए रानी! मन देखु बिचारी। एहि नैहर रहना दिन चारी ॥
जौ लगि अहै पिता कर राजू। खेलि लेहु जो खेलहु आजू ॥
पुनि सासुर हम गवनब काली। कित हम, कित यह सरवर-पाली ॥
कित आवन पुनि अपने हाथा। कित मिलि कै खेलब एक साथा ॥
सासु ननद बोलिन्ह जिउ लेहीं। दारुन ससुर न निसरै देहीं ॥
पिउ पियार सिर ऊपर, पुनि सो करै दहुँ काह।
दहुँ सुख राखै की दुख, दहुँ कस जनम निबाह ॥

मिलहिं रहसि सब चढहिं हिंडोरी। झूलि लेहिं सुख बारी भोरी ॥
झूलि लेहु नैहर जब ताईं। फिरि नहि झूलन देइहि साईं ॥
पुनि सासुर लेइ राखिहि तहाँ। नैहर चाह न पाउब जहाँ ॥
कित यह धूप, कहाँ यह छाहाँ। रहब सखी बिनु मंदिर माहाँ ॥
गुन पूछिहि औ लाइहि दोखू। कौन उतर पाउब तहँ मोखू ॥
सासु ननद के भौंह सिकोरे। रहब सँकोचि दुवौ कर जोरे ॥
कित यह रहसि जो आउब करना। ससुरेइ अंत जनम दुख भरना ॥
कित नैहर पुनि आउब कित ससुरे यह खेल।
आपु आपु कहँ होइहि परब पखि जस डेल ॥

सरवर तीर पदमिनी आई। खोंपा छोरि केस मुकलाईं ॥
ससि मुख, अंग मलयगिरि बासा। नागिन झाँपि लीन्ह चहुँ पासा ॥
ओनई घटा परी जग छाहाँ। ससि कै सरन लीन्ह जनु राहाँ ॥

छपि गै दिनहिं भानु कै दसा। लेइ निसि नखत चाँद परगसा॥
भूलि चकोर दीठि मुख लावा। मेघ घटा मँह चंद देखावा॥
दसन दामिनी, कोकिल भाखी। भौंहैं धनुख गगन लेइ राखी॥
नैन खँजन दुइ केलि करेहीं। कुच-नारँग मधुकर रस लेहीं॥
सरवर रूप बिमोहा हिए हिलोरहि लेइ।
पावँ छुवै मकु पावौं एहि मिस लहरहिं देइ॥
धरी तीर सब कचुकि सारी। सरवर मह पैठीं सब बारी॥
पाइ नीर जानौं सब बेली। हुलसहिं करहिं काम कै केली॥
करिल केस बिसहर बिस-भरे। लहरैं लेहि कवँल मुख धरे॥
नवल बसंत सँवारी करी। होइ प्रगट जानहु रस-भरी॥
उठी कोंप जस दारिंव दाखा। भई उनत पेम कै साखा॥
सरवर नहिं समाइ ससारा। चाँद नहाइ पैठ लेइ तारा॥
धनि सो नीर ससि तरई ऊईं। अब कित दीठ कमल औ कूईं॥
चकई बिछुरि पुकारै कहाँ मिलौं, हो नाँह।
एक चाँद निसि सरग मँह, दिन दूसर जल माँह॥
लागी केलि करै मझ नीरा। हंस लजाइ बैठ ओहि तीरा॥
पदमावति कौतुक कहँ राखी। तुम ससि होहु तराइन साखी॥
बाद मेलि कै खेल पसारा। हार देइ जो खेलत हारा॥
सँवरिहि साँवरि, गोरिहि गोरी। आपनि आपनि लीन्ह सो जोरी॥
बुझि खेल खेलहु एक साथा। हार न होइ पराए हाथा॥
आजुहि खेल, बहुरि कित होई। खेल गए कित खेलै कोई॥
धनि सो खेल खेल सह पेमा। रउताई औ कूसल खेमा॥
मुहमद बाजी पेम कै ज्यों भावै त्यों खेल।
तिल फूलहि के संग ज्यों होइ फुलायल तेल॥
सखी एक तेइ खेल न जाना। भै अचेत मनि-हार गँवाना॥
कवँल डार गहि भै बेकरारा। कासों पुकारौं आपन हारा॥
कित खेलै आइउँ एहि साथा। हार गँवाइ चलिउँ लेइ हाथा॥
घर पैठत पूँछत यह हारू। कौन उतर पाउब पैसारू॥
नैन सीप आँसू तस भरे। जानौ मोति गिरहिं सब ढरे॥
सखिन कहा बौरी कोकिला। कौन पानि जेहि पौन न मिला॥
हार गँवाइ सो ऐसै रोवा। हेरि हेराइ लेइ जौं खोवा॥
लागीं सब मिलि हेरै बूड़ि बूड़ि एक साथ।
कोइ उठी मोती लेइ काहू घोंघा हाथ॥
कहा मानसर चाह सो पाई। पारस-रूप इहाँ लगि आई॥
भा निरमल तिन्ह पायँन्ह परसे। पावा रूप रूप के दरसे॥

मलय-समीर बास तन आई। भा सीतल-गै तपनि बुझाई॥
न जानौं कौन पौन लेइ आवा। पून्य-दसा भै, पाप गँवावा॥
ततखन हार वेगि उतिराना। पावा सखिन्ह चंद बिहँसाना॥
बिगसा कुमुद देखि ससि-रेखा। भै तहँ ओप जहाँ जोइ देखा॥
पावा रूप रूप जस चहा। ससि-मुख जनु दरपन होइ रहा॥
नयन जो देखा कँवल भा, निरमल नीर सरीर।
हँसत जो देखा हंस भा, दसन-जोति नग हीर॥

———

नखशिख खंड

नखशिख—खंड

का सिँगार ओहि बरनौं, राजा । ओहिक सिँगार ओही पै छाजा ॥
प्रथम सीस कस्तूरी केसा । बलि बासुकि, का और नरेसा ॥
भौंर केस, वह मालति रानी । बिसहर लुरे लेहि अरघानी ॥
बेनी छोरि झार जौ बारा । सरग पतार होइ अँधियारा ॥
कोंवर कुटिल केस नग कारे । लहरन्हि भरे भुअँग बैसारे ॥
बेधे जनौ मलयगिरि बासा । सीस चढ़े लोटहि चहुँ पासा ॥
घुघुरवार अलकैं विषभरी । सँकरैं पेम चहैं गिउ परी ॥

अस फँदवार केस वै परा सीस गिउ फाँद ।
अस्टौ कुरी नाग सब अरुझ केस के बाँद ॥

बरनौं माँग सीस उपराही । सेंदुर अबहि चढा जेहि नाहीं ॥
बिनु सेंदुर अस जानहु दीआ । उजियर पँथ रैनि महँ कीआ ॥
कँचन रेख कसौटी कसी । जनु घन महँ दामिनि परगसी ॥
सुरुज-किरिन जनु गगन बिसेखी । जमुना माँह सुरसती देखी ॥
खाँड़ै धार रुहिर जनु भरा । करवत लेइ बेनी पर धरा ॥
तेहि पर पूरि धरे जो मोती । जमुना माँझ गग कै सोती ॥
करवत तपा लेहि होइ चूरू । मकु सो रुहिर लेइ देइ सेंदूरू ॥

कनक दुवादस बानि होइ चह सोहाग वह माँग ।
सेवा करहि नखत सब उवै गगन जस गाँग ॥

कहौ लिलार दुइज कै जोती । दुइजहि जोति कहाँ जग ओती ॥
सहस किरिन जो सुरुज दिपाई । देखि लिलार सोउ छपि जाई ॥
का सरवरि तेहि देउँ मयकू । चाँद कलकी वह निकलकू ॥
औ चाँदहि पुनि राहु गहासा । वह बिनु राहु सदा परगासा ॥
तेहि लिलार पर तिलक बईठा । दुइज पाट जानहु ध्रुव दीठा ॥
कनक-पाट जनु बैठा राजा । सबै सिगार-अत्र लेइ साजा ॥
ओहि आगे थिर रहा न कोऊ । दहुँ का कहँ अस जुरै सजोऊ ॥

खरग, धनुक, चक, बान दुइ जग मारन तिन्ह नाँव ।
सुनि कै परा मुरुछि कै (राजा) मो कहँ हए कुठाव ॥

भौंहैं स्याम धनुक जनु ताना । जा सहुँ हेर मार विष-बाना ॥
हनै धुनै उन्ह भौंहनि चढे । केइ हतियार काल अस गढे ? ॥
उहै धनुक किरसुन पहँ अहा । उहै धनुक राघौ कर गहा ॥

ओहि धनुक रावन सघारा। ओहि धनुक कसासुर मारा॥
ओहि धनुक बेधा हुत राहू। मारा ओहि सहस्राबाहू॥
उहै धनुक मैं तापहँ चीन्हा। धानुक आप बेझ जग कीन्हा॥
उन्ह भौंहनि सरि केउ न जीता। अछरी छपीं छपीं गोपीता॥
भौंह धनुक, धनि धानुक, दूसर सरि न कराइ।
गगन धनुक जो ऊगै लाजहिं सो छपि जाइ॥
नैन बॉक, सरि पूज न कोऊ। मानसरोदक उलथहिं दोऊ॥
राते कँवल करहिं अलि भवाँ। घूमहि माति चहहिं अपसवाँ॥
उठहि तुरग लेहिं नहिं बागा। चाहहि उलथि गगन कहँ लागा॥
पवन झकोरहि देइ हिलोरा। सरग लाइ भुइँ लाइ बहोरा॥
जग डोलै डोलत नैनाहाँ। उलटि अडार जाहि पल माहाँ॥
जबहिं फिराहि गगन गहि बोरा। अस वै भौर चक्र के जोरा॥
समुद-हिलोर फिरहिं जनु झूले। खजन लरहि मिरिग जनु भूले॥
सुभर सरोवर नयन वै मानिक भरे तरग।
आवत तीर फिरावहीं काल भौर तेहि सग॥
बरुनी का बरनौं इमि बनी। साधे बान जानु दुइ अनी॥
जुरी राम रावन कै सैना। बीच समुद्र भए दुइ नैना॥
वारहिं पार बनावरि साधा। जा सहुँ हेर लाग बिष-बाधा॥
उन्ह बानन्ह अस को जो न मारा ? बेधि रहा सगरौ ससारा॥
गगन नखत जो जाहि न गने। वै सब बान ओही के हने॥
धरती बान बेधि सब राखी। साखी ढाढ देहि सब साखी॥
रोवँ रोवँ मानुष तन ठाढे। सूतहि सूत बेध अस गाढ़े॥
बरुनि-बान अस ओपहँ बेधे रन बन-ढॉख।
सौजहिं तन सब रोवाँ पखिहि तन सब पॉख॥
नासिक खरग देउँ कह जोगू। खरग खीन, वह बदन-सँजोगू॥
नासिक देखि लजानेउ सूआ। सूक आइ बेसरि होइ ऊआ॥
सुआ जो पिअर हिरामन लाजा। और भाव का बरनौ राजा॥
सुआ सो नाक कठोर पँवारी। वह कोंवर तिल पुहुप सँवारी॥
पुहुप सुगध करहिं एहि आसा। मकु हिरकाइ लेइ हम पासा॥
अधर दसन पर नासिक सोभा। दारिउँ बिंब देखि सुक लोभा॥
खंजन दुहुँ दिसि केलि कराहीं। दहुँ वह रस कोउ पाव कि नाहीं॥
देखि अमिय रस अधरन्ह भएउ नासिका कीर।
पौन बास पहुँचावै अस रम छोंड़ न तीर॥
अधर सुरग अमी-रस-भरे। बिब सुरग लाजि बन फरे॥
फूल दुपहरी जानौं राता। फूल झरहि ज्यों ज्यों कह बाता॥

हीरा लेइ सो विद्रुम-धारा। विहँसत जगत होइ उजियारा ॥
भए मँजीठ पानन्ह रँग लागे। कुसुम-रंग थिर रहै न आगे ॥
अस कै अधर अमी भरि राखे। अबहिं अछूत, न काहू चाखे ॥
मुख तँबोल-रँग धारहिं रसा। केहि मुख जोग सो अमृत बसा ? ॥
राता जगत देखि रँगराती। रुहिर भरे आछहिं विहँसाती ॥
अमी अधर अस राजा सब जग आस करेइ।
केहि कहँ कंवल बिगासा को मधुकर रस लेइ ॥
दसन चौक बैठे जनु हीरा। औ बिच बिच रँग स्याम गँभीरा ॥
जस भादौं-निसि दामिनि दीसी। चमकि उठै तस बनी बतीसी ॥
वह सुजोति हीरा उपराही। हीरा-जोति सो तेहि परछाहीं ॥
जेहि दिन दसनजोति निरमई। बहुतै जोति जोति ओहि भई ॥
रवि ससि नखत दिपहिं ओहि जोती। रतन पदारथ मानिक मोती ॥
जहँ जहँ विहसि सुभावहि हँसी। तहँ तहँ छिटकि जोति परगसी ॥
दामिनि दमकि न सरवरि पूजी। पुनि ओहि जोति और को दूजी ? ॥
हँसत दसन अस चमके पाहन उठे छरक्कि।
दारिउँ सरि जो न कै सका, फाटेउ हिया दरक्कि ॥
रसना कहौं जो कह रस बाता। अमृत-बैन सुनत मन राता ॥
हरै सो सुर चातक कोकिला। बिनु बसंत यह बैन न मिला ॥
चातक कोकिल रहहिं जो नाहीं। सुनि वह बैन लाज छपि जाहीं ॥
भरे प्रेम-रस बोलै बोला। सुनै सो माति घूमि कै डोला ॥
चतुरवेद-मत सब ओहि पाहाँ। रिग, जजु, साम अथरबन माहाँ ॥
एक एक बोल अरथ चौगुना। इंद्र मोह, ब्रह्मा सिर धुना ॥
अमर, भागवत, पिंगल गीता। अरथ बूझि पंडित नहिं जीता ॥
भासवती औ ब्याकरन पिंगल पढ़ै पुरान।
बेद-भेद सौं बात कह सुजनन्ह लागै बान ॥
पुनि बरनौं का सुरँग कपोला। एक नारँग दुइ किए अमोला ॥
पुहुप-पंक रस अमृत साधे। केइ यह सुरंग खिरौरा बाँधे ॥
तेहि कपोल बाँए तिल परा। जेइ तिल देख सो तिलतिल जरा ॥
जनु घुँघची ओहि तिल कर मुहीं। बिरह-बान साधे सामुहीं ॥
अगिनि-बान जानौं तिल सूझा। एक कटाछ लाख दस जूझा ॥
सो तिल गाल मेटि नहिं गएऊ। अब वह गाल काल जग भयऊ ॥
देखत नैन परी परछाहीं। तेहि तें रात साम उपराहीं ॥
सो तिल देखि कपोल पर गगन रहा धुव गाड़ि।
खिनहि उठै खिन बूड़ै डोलै नहिं तिल छाँड़ि ॥
स्रवन सीप दुइ दीप सँवारे। कुंडल कनक रचे उजियारे ॥

मनि-कुंडल झलकैं अति लोने । जनु कौंधा लौकहिं दुइ कोने ॥
दुहुँ दिसि चाँद सुरुज चमकाहीं । नखतन्ह भरे निरखि नहिं जाहीं ॥
तेहि पर खूँट दीप दुइ बारे । दुइ धुव दुऔ खूँट बैसारे ॥
पहिरे खुभी सिंघलदीपी । जनौ भरी कचपचिआ सीपी ॥
खिन खिन जबहि चीर सिर गहै । काँपति बीजु दुऔ दिसि रहै ॥
डरपहिं देवलोक सिंघला । परै न बीजु टूटि एक कला ॥
करहिं नखत सब सेवा स्रवन दीन्ह अस दोउ ।
चाँद सुरुज अस गोहने और जगत का कोउ ? ॥
बरनौं गीउ कंबु कै रीसी । कंचन-तार-लागि जनु सीसी ॥
कुंदै फेरि जानु गिउ काढी । हरी पुछार ठगी जनु ठाढी ॥
जनु हिय काढि परेवा ठाढा । तेहिं तें अधिक भाव गिउ बाढा ॥
नाक चढाइ साँच जनु कीन्हा । बाग तुरग जानु गहि लीन्हा ॥
गए मयूर तमचूर जो हारे । उहै पुकारहिं साँझ सकारे ॥
पुनि तेहिं ठाँव परी तिन रेखा । घूँट जो पीक लीक सब देखा ॥
धनि ओहि गीउ दीन्ह बिधि भाऊ । दहुँ का सौं लेइ करै मेराऊ ॥
कंठसिरी मुकुतावली सोहै अभरन गीउ ।
लागै कंठहार होइ को तप साधा जीउ ? ॥
कनक-दंड दुइ भुजा कलाई । जानौं फेरि कुँदेरै भाई ॥
कदलि-गाभ कै जानौ जोरी । औ राती ओहि कँवल-हथोरी ॥
जानौ रकत हथोरी बूडी । रवि-परभात तात, वै जूडी ॥
हिया काढि जनु लीन्हेसि हाथा । रुहिर भरी अँगुरी तेहि साथा ॥
औ पहिरे नग-जरी अँगूठी । जग बिनु जीउ, जीउ ओहि मूठी ॥
बाहूँ कंगन, टाड़ सलोनी । डोलत बाँह भाव गति लोनी ॥
जानौ गति बेडिन देखराई । बाँह डोलाइ जीउ लेइ जाई ॥
भुज उपमा पौंनार नहि खीन भएउ तेहि चिंत ।
ठाँवहिं ठाँव बेध भा ऊबि साँस लेइ निंत ॥
हिया थार, कुच कंचन लारू । कनक कचोर उठे जनु चारू ॥
कुंदन बेल साजि जनु कूंदे । अमृत रतन मनो दुइ मूँदे ॥
बेधे भौंर कंट केतकी । चाहहिं बेध कीन्ह कंचुकी ॥
जोबन बान लेहिं नहि बागा । चाहहिं हुलसि हिये हठि लागा ॥
अगिनि-बान दुइ जानौं साधे । जग बेधहिं जौं होहिं न बाँधे ॥
उतंग जँभीर होइ रखवारी । छुइ को सकै राजा कै बारी ॥
दारिउँ दाख फरे अनचाखे । अस नारँग दहुँ का कहँ राखे ॥
राजा बहुत मुए तपि लाइ लाइ भुइँ माथ ॥
काहू छुवै न पाए गए मरोरत हाथ ॥

पेट परत जनु चदन लावा । कुहँकुहँ केसर बरन सुहावा ॥
खीर अहार न कर सुकुवाँरा । पान फूल के रहै आधारा ॥
साम भुअंगिनि रोमावली । नाभी निकसि कँवल कँह चली ॥
आइ दुऔ नारँग बिच-भई । देखि मयूर ठमकि रहि गई ॥
मनहुँ चढ़ी भौंरन्ह कै पाँती । चदन-खाँभ बास कै माती ॥
की कालिंदी बिरह-सताई । चलि पयाग अरइल बिच आई ॥
नाभि-कुंड बिच बारानसी । सौंह को होइ, मीचु तहँ बसी ?॥
सिर करवत, तन करसी बहुत सीझ तेहि आस ॥
बहुत धूम घुटि घुटि मुए उतर न देइ निरास ॥

बैरिनि पीठि लीन्ह वह पाछे । जनु फिरि चली अपछरा काछे ॥
मलयागिरि कै पीठि सँवारी । वेनी नागिनि चढी जो कारी ॥
लहरै देति पीठि जनु चढी । चीर-ओहार केंचुली मढी ॥
दहुँ का कहँ अस वेनी कीन्हीं । चदन बास भुअगै लीन्ही ॥
किरसुन करा चढा ओहि माथे । तब तौ छूट, अब छुटै न नाथे ॥
कारे कँवल गहे मुख देखा । ससि पाछे जनु राहु बिसेखा ॥
को देखै पावै वह नागू । सो देखै जेहि के सिर भागू ॥
पन्नग पकज मुख गहे खजन तहाँ बईठ ॥
छत्र, सिंघासन, राज, धन ताकहँ होइ जो डीठ ॥

लक पुहुमि अस आहि न काहू । केहरि कहौं न ओहि सरि ताहू ॥
बसा लक बरनै जग भीनी । तेहि तें अधिक लक वह खीनी ॥
परिहँस पियर भए तेहि बसा । लिए डक लोगन्ह कहँ डसा ॥
मानहुँ नाल खंड दुइ भए । दुहुँ बिच लक-तार रहि गए ॥
हिय के मुरे चलै वह तागा । पैग देत कित सहि सक लागा ? ॥
छुद्रघटिका मोहहिं राजा । इंद्र-अखाड़ आइ जनु बाजा ॥
मानहुँ बीन गहे कामिनी । गावहिं सबै राग रागिनी ॥
सिघ न जीता लक सरि हारि लीन्ह बन बासु ॥
तेहि रिस मानुस-रकत पिय, खाइ मारि कै माँसु ॥

नाभिकुंड सो मलय-समीरू । समुद-भँवर जस भवै गँभीरु ॥
बहुतै भँवर बवडर भए । पहुँचि न सके सरग कहँ गए ॥
चदन माँझ कुरंगिनि खोजू । दहुँ को पाउ, को राजा भोजू ॥
को ओहि लागि हिवंचल सीझा । का कहँ लिखी, ऐस को रीझा ?॥
तीवइ कवँल-सुगध सरीरू । समुद-लहरि सोहै तन चीरू ॥
झूलहिं रतन पाट के झोंपा । साजि मैन अस का पर कोपा ? ॥
अबहिं सो अहै कवँल कै करी । न जनौ कौन भौंर कहँ घरी ॥

बेधि रहा जग बासना परिमल मेद सुगंध।
तेहि अरघानि भौंर सब लुबुधे तजहिं न बंध॥
बरनौं नितंब लंक कै सोभा। औ गज-गवन देखि मन लोभा॥
जुरे जंघ सोभा अति पाए। केरा-खंभ-फेरि जनु लाए॥
कवँल-चरन अति रात बिसेखी। रहैं पाट पर, पुहुमि न देखी॥
देवता हाथ हाथ पगु लेहीं। जहँ पगु धरै सीस तहँ देही॥
माथे भाग कोउ अस पावा। चरन-कँवल लेइ सीस चढ़ावा॥
चूरा चाँद सुरुज उजियारा। पायल बीच करहिं झनकारा॥
अनवट बिछिया नखत तराईं। पहुँचि सकै को पायँन ताईं॥
बरनि सिंगार न जानेउँ नखसिख जैस अभोग।
तस जग किछुइ न पाएउँ उपमा देउँ ओहि जोग॥

प्रेम-खंड

सुनतहि राजा गा मुरझाई। जानौ लहरि सुरुज कै आई॥
प्रेम-घाव-दुख जान न कोई। जेहि लागै जानै पै सोई॥
परा सो पेम समुद्र अपारा। लहरहिं लहर होइ बिसँभारा॥
बिरह-भौंर होइ भाँवरि देई। खिन खिन जीउ हिलोरा लेई॥
खिनहिं उसास बूड़ि जिउ जाई। खिनहिं उठै निसरै बौराई॥
खिनहिं पीत, खिन होइ मुख सेता। खिनहिं चेत, खिन होइ अचेता॥
कठिन मरन तें प्रेम-बेवस्था। ना जिउ जियै न दसवँ अवस्था॥
जनु लेनिहार न लेहिं जिउ हरहिं तरासहिं ताहि।
एतनै बोल आव मुख करै 'तराहि तराहि'॥
जहँ लगि कुटुँब लोग औ नेगी। राजा राय आय सब बेगी॥
जावत गुनी गारुडी आए। ओझा, बैद, सयान बोलाए॥
चरचहिं चेष्टा, परिखहिं नारी। नियर नाहिं ओषद तहँ बारी॥
राजहि आहि लखन कै करा। सकति-बान मोहा है परा॥
नहिं सो राम, हनिवँत बड़ि दूरी। को लेइ आव सजीवन-मूरी?॥
बिनय करहिं जे जे गढ़पाती। का जिउ कीन्ह, कौन मति मती?॥
कहहु सो पीर, काह पुनि खाँगा?। समुद सुमेरु आव तुम्ह माँगा॥
धावन तहाँ पठावहु देहि लाख दस रोक।
होइ सो बेलि जेहि बारी, आनहि सबै बरोक॥
जब भा चेत उठा बैरागा। बाउर जनौ सोइ उठि जागा॥
आवत जग बालक जस रोआ। उठा रोइ 'हा ज्ञान सो खोआ'॥
हौं तौ अहा अमरपुर जहाँ। इहाँ मरनपुर आएउँ कहाँ?॥
केइ उपकार मरन कर कीन्हा। सकति हँकारि जीउ हरि लीन्हा॥
सोवत रहा जहाँ सुख-साखा। कस न तहाँ सोवत बिधि राखा?॥
अब जिउ उहाँ, इहाँ तन सूना। कब लगि रहै परान-बिहूना॥
जौ जिउ घटहि काल के हाथा। घट न नीक पै जीउ निसाथा॥
अहुठ हाट तन-सरवर हिया कवँल तेहि माहँ॥
नैनहि जानहु नीयरे, कर पहुँचत औगाह॥
सबन्ह कहा मन समुझहु राजा। काल सेंति कै जूझ न छाजा॥
तासौं जूझ जात जो जीता। जानत कृस्न तजा गोपीता॥
औ न नेह काहू सौं कीजै। नाँव मिटै, काहे जिउ दीजै॥
पहिले सुख नेहहि जब जोरा। पुनि होइ कठिन निबाहत ओरा॥

अहुठ हाथ तन जैस सुमेरू । पहुँचि न जाइ परा तस फेरू ॥
ज्ञान-दिस्टि सौं जाइ पहूँचा । पेम अदिस्ट गगन तें ऊँचा ॥
धुव तें ऊँच प्रेम-धुव ऊआ । सिर देइ पाँव देइ सो छूआ ॥
तुम राजा औ सुखिया करहु राज-सुख भोग ।
एहि रे पंथ सो पहुँचै सहै जो दुःख वियोग ॥
सुए कहा मन बूझहु राजा । करब पिरीति कठिन है काजा ॥
तुम राजा जेई घर पोई । कवँल न भेंटेउ, भेंटेउ कोई ॥
जानहि भौंर जो तेहि पंथ लुटे । जीउ दीन्ह औ दिएहु न छूटे ॥
कठिन आहि सिंघल कर राजू । पाइय नाहि जूझ कर साजू ॥
ओहि पंथ जाइ जो होइ उदासी । जोगी, जती, तपी, सन्यासी ॥
भोग किए जौ पावत भोगू । तजि सो भोग कोइ करत न जोगू ॥
तुम राजा चाहहु सुख पावा । भोगिहि जोग करत नहि भावा ॥
साधन्ह सिद्धि न पाइय जौ लगि सधै न तप्प ।
सो पै जानै बापुरा, करै जो सीस कलप्प ॥
का भा जोग-कथनि के कथे । निकसै घिउ न बिना दधि मथे ॥
जौ लहि आप हेराइ न कोई । तौ लहि हेरत पाव न सोई ॥
पेम-पहार कठिन बिधि गढा । सो पै चढै जो सिर सौं चढा ॥
पंथ सूरि कर उठा अंकूरू । चोर चढै की चढ मसूरू ॥
तू राजा का पहिरसि कथा । तोरे घरहि माँझ दस पंथा ॥
काम, क्रोध, तिस्ना, मद, माया । पाँचौ चोर न छाँड़हिं काया ॥
नवौ सेंध तिन्ह कै दिठियारा । घर मूसहि निसि, की उजियारा ॥
अबहू जागु अजाना होत आव निसि भोर ।
तब किछु हाथ न लागिहिं मूसि जाहि जब चोर ॥
सुनि सो बात राजा मन जागा । पलक न मार पेम, चित लागा ॥
नैनन्ह ढरहि मोति औ मूँगा । जस गुर खाइ रहा होइ गूँगा ॥
हिय कै जोति दीप वह सूझा । यह जो दीप अँधियारा बूझा ॥
उलटि दीठि माया सौं रूठी । पलटि न फिरी जानि कै झूठी ॥
जौ पै नाहीं अहथिर दसा । जग उजार का कीजिय बसा ॥
गुरू बिरह-चिनगी जो मेला । जो सुलगाइ लेइ सो चेला ॥
अब करि फनिग भृंग कै करा । भौंर होहुँ जेहि कारन जरा ॥
फूल फूल फिरि पूँछौं जौ पहुँचौं ओहि केत ।
तन नेवछावरि कै मिलौं ज्यों मधुकर जिउ देत ॥
बधु मीत बहुतै समुझावा । मान न राजा कोउ भुलावा ॥
उपजी पेम-पीर जेहि आई । परबोधत होइ अधिक सो आई ॥

अमृत बात कहत विष जाना। पेम क बचन मीठ कै माना॥
जो ओहि विषै मारि कै खाई। पूँछहु तेहि सन पेम-मिठाई॥
पूँछहु बात भरथरिहि जाई। अमृत राज तजा विष खाई॥
औ महेस बड़ सिद्ध कहावा। उनहूँ विषै कंठ पै लावा॥
होत आव रवि किरिन बिकासा। हनुवँत होइ को देइ सुआसा॥
तुम सब सिद्धि मनावहु होइ गनेस सिधि लेव।
चेला को न चलावै तुलै गुरु जेहि भेव॥

जोगी खंड

तजा राज, राजा भा जोगी। औ किंगरी कर गहेउ वियोगी ॥
तन विसँभर मन बाउर लटा। अरुझा पेम, परी सिर जटा ॥
चँद्र-बदन औ चंदन-देहा। भसम चढ़ाइ कीन्ह तन खेहा ॥
मेखल, सिंघी, चक्र, धँधारी। जोगबाट, रुदराछ, अधारी ॥
कंथा पहिरि दंड कर गहा। सिद्ध होइ कहँ गोरख कहा ॥
मुद्र स्रवन, कंठ जपमाला। कर उदपान, काँध बघछाला ॥
पाँवरि पाँव, दीन्ह सिर छाता। खप्पर लीन्ह भेस करि राता ॥

चला भुगुति माँगै कहँ साधि कया तप जोग।
सिद्ध होइ पदमावति जेहि कर हिये वियोग ॥

गनक कहहिं गनि गौन न आजू। दिन लेइ चलहु, होइ सिध काजू ॥
पेम-पंथ दिन घरी न देखा। तब देखै जब होइ सरेखा ॥
जेहि तन पेम कहाँ तेहि माँसू। कया न रकत नैन नहिं आँसू ॥
पंडित भूल, न जानै चालू। जीउ लेत दिन पूछ न कालू ॥
सती कि बौरी पूछहि पाँडे। औ घर पैठि कि सैंतै भाँड़े ॥
मरै जो चलै गंग-गति लेई। तेहि दिन कहाँ घरी को देई ? ॥
मैं घर बार कहाँ कर पावा। घरी क आपन, अंत परावा ॥

हौं रे पथिक पखेरू जेहि बन मोर निबाहु ॥
खेलि चला तेहि बन कहँ तुम अपने घर जाहु ॥

चहुँ दिसि आन साँटिया फेरी। भै कटकाई राजा केरी ॥
जावत अहहिं सकल अरकाना। साँभर लेहु, दूरि है जाना ॥
सिंघलदीप जाइ अब चाहा। मोल न पाउब जहाँ बेसाहा ॥
सब निबहै तहँ आपनि साँठी। साँठि बिना सोर ह मुखमाटी ॥
राजा चला साजि कै जोगू। साजहु बेगि चलहु सब लोगू ॥
गरब जो चढ़े तुरय कै पीठी। अब भुइँ चलहु सरग कै डीठी ॥
मंतर लेहु होहु सँग-लागू। गुदर जाइ सब होइहि आगू ॥

का निचिंत रे मानुस ! आपन चीते आछु।
लेहि सजग होइ अगमन मन पछिताव न पाछु ॥

बिनवै रतनसेन कै माया। माथे छात, पाट निति पाया ॥
बिलसहु नौ लख लच्छि पियारी। राज छाँड़ि जिनि होहु भिखारी ॥
निति चंदन लागै जेहि देहा। सो तन देख भरत अब खेहा ॥

सब दिन रहेहु करत तुम भोगू। सो कैसे साधब तप जोगू ?॥
कैसे धूप सहब बिनु छाहाँ। कैसे नींद परिहि भुइँ माँहाँ ?॥
कैसे ओढब काथरि कथा। कैसे पाव चलब तुम्ह पथा ?॥
कैसे सहब खिनहि खिन भूखा। कैसे खाब कुरकुटा रूखा ?॥

राजपाट, दर, परिगह तुम्ह ही सौं उजियार॥
बैठि भोग रस मानहु कै न चलहु अँधियार॥

मोहिं यह लोभ सुनाव न माया। काकर सुख काकर यह काया॥
जो निआन तहै होइहि छारा। माटिहि पोखि मरै को मारा ?॥
का भूलौं एहि चदन चोवा। बैरी जहाँ अग कर रोवाँ॥
हाथ, पाँव, सरवन औ आँखी। ए सब उहाँ भरहिं मिलि साखी॥
सूत सूत तन बोलहि दोखू। कहु कैसे होइहि गति मोखू॥
जौं भल होत राज औ भोगू। गोपिचद नहि साधत जोगू॥
उन्ह हिय-दीठि जो देख परेवा। तजा राज कजरी-बन सेवा॥

देखि अत अस होइहि गुरू दीन्ह उपदेस।
सिघलदीप जाब हम माता देहु अदेस॥

रोवहि नागमती रनिवासू। केइ तुम्ह कत दीन्ह बनवासू॥
अब को हमहि करहि भोगिनी। हमहूँ साथ होब जोगिनी॥
की हम लावहु अपने साथा। की अब मारि चलहु सेइ हाथा॥
तुम्ह अस बिछुरै पीउ पिरीता। जहँवाँ राम तहाँ सग सीता॥
जो लहि जिउ सँग छाड़ न काया। करिहौं सेव पखरिहौं पाया॥
भलेहि पदमिनी रूप अनूपा। हम ते कोइ न आगरि रूपा॥
भँवै भलेहि पुरुखन कै डीठी। जिनहि जान तिन्ह दीन्ही पीठी॥

देहि असीस सबै मिलि तुम्ह माथे निति छात।
राज करहु चितउरगढ राखहु पिय अहिवात॥

तुम्ह तिरिया मति हीन तुम्हारी। मूरुख सो जो मतै घर नारी॥
राघव जो सीता सँग लाई। रावन हरी, कौन सिधि पाई ?॥
यह ससार सपन कर लेखा। बिछुरि गए जानौं नहि देखा॥
राजा भरथरि सुना जो ज्ञानी। जेहि के घर सोरह सै रानी॥
कुच लीन्हें तरवा सहराई। भा जोगी, कोउ सग न लाई॥
जोगिहि काह भोग सौं काजू। चहै न धन घरनी औ राजू॥
जूड कुरकुटा भीखहि चाहा। जोगी तात भात कर, काहा ?॥

कहा न मानै राजा तजी सबाई भीर।
चला छाँड़ि कै रोवत फिरि कै देइ न धीर॥

रोवत माय न बहुरत बारा। रतन चला, घर भा अँधियारा ॥
बार मोर जो राजहि रता। सो लै चला, सुआ परवता ॥
रोवहिं रानी, तजहिं पराना। नोचहिं बार, करहिं खरिहाना ॥
चूरहिं गिउ, अभरन-उर हारा। अब का पर हम करब सिंगारा।
जा कहँ कहहि रहसि कै पीऊ। सोइ चला, काकर यह जीऊ ॥
मरै चहहि, पर मरै न पावहि। उठै आगि सब लोग बुझावहि ॥
घरी एक सुठि भएउ अँदोरा। पुनि पाछे बीता होइ रोरा ॥

टूटे मन नौ मोती फूटे मन दास काँच।
लीन्ह समेटि एक अभरन होइगा दुख कर नाच ॥

निकसा राजा सिंगी पूरी। छाँड़ नगर मेलि कै धूरी ॥
राय रान सब भये बियोगी। सोरह सहस कुँवर भए जोगी ॥
माया मोह हरा सेइ हाथा। देखेन्हि बूझि निआन न साथा ॥
छाँड़ेन्हि लोग कटुँब सब कोऊ। भए निनार सुख दुख तजि दोऊ ॥
सँवरै राजा सोइ अकेला। जेहि के पंथ चले होइ चेला ॥
नगर नगर औ गाँवहिं गाँवाँ। छाँड़ि चले सब ठाँवहिं ठावाँ ॥
का कर मढ, का कर घर माया। ता कर सब जाकर जिउ माया ॥

चला कटक जोगिन्ह कर कै गेरुआ सब भेसु।
कोस बीस चारिहु दिसि जानौं फूला टेसु ॥

आगे सगुन सगुनियै ताका। दहिने माछ रूप के टाँका ॥
भरे कलस तरुनी जल आई। 'दहिउ लेहु' ग्वालिनि गोहराई ॥
मालिनि आव मौर लिए गाँथे। खजन बैठ नाग के माथे ॥
दहिने मिरिग आइ बन धाएँ। प्रतीहार बोला खर बाएँ ॥
बिरिख सँवरिया दहिने बोला। बाएँ दिसा चाषु चरि बोला ॥
बाएँ अकासी धौरी आई। लोवा दरस आइ दिखराई ॥
बाएँ कुररी दहिने कूचा। पहुँचै भुगुति जैस मन रुचा ॥

जा कहँ सगुन होहि अस औ गवनै जेहि आस।
अस्ट महासिधि तेहि कहँ जस कवि कहा बियास ॥

भएउ पयान चला पुनि राजा। सिंग-नाद जोगिन कर बाजा ॥
कहेन्हि आजु किछु थोर पयाना। काल्हि पयान दूरि है जाना ॥
ओहि मिलान जौ पहुँचै कोई। तब हम कहब पुरुष भल सोई ॥
है आगे परवत कै बाटा। बिषम पहार अगम सुठि घाटा ॥
बिच बिच नदी खोह औ नारा। ठाँवहि ठाँव बैठि बटपारा ॥
हनुवँत केर सुनब पुनि हाँका। दहुँ को पार होइ, को थाको ॥
अस मन जानि सँभारहु आगू। अगुआ केर होहु पछलागू ॥

करहिं पयान भोर उठि पथ कोस दस जाहिं ।
पथी पथी जे चलहिं ते का रहहिं ओठाहिं ॥
करहु दीठि थिर होइ बटाऊ । आगे देखि धरहु भुइँ पाऊ ॥
जो रे उवट होइ परे भुलाने । गए मारि, पथ चलै न जानै ॥
पाँयन पहिरि लेहु सब पौरी । काँट धसैं, न गड़ै अँकरौरी ॥
परे आइ बन परबत माहाँ । दंडाकरन बीझा-बन जाहाँ ॥
सघन ढाँख बन चहुँ दिसि फूला । बहु दुख पाव उहाँ कर भूला ॥
झाँखर जहाँ सो छाँड़हु पथा । हिलगि मकोइ न फारहु कंथा ॥
दहिने बिदर, चँदेरी बाएँ । दहुँ कहँ होइ बाट दुइ ठाएँ ॥
एक बाट गइ सिंघल, दुसरि लंक समीप ।
हैं आगे पथ दूओौ दहुँ गौनब केहि दीप ॥
ततखन बोला सुआ सरेखा । अगुआ सोइ पंथ जेइ देखा ॥
सो का उड़ै न जेहि तन पाँखु । लेइ सो परासहि बूड़त साखू ॥
जस अंधा अंधै कर सगी । पथ न पाव होइ सहलगी ॥
सुनु मत, काज चहसि जौं साजा । बीजानगर बिजयगिरि राजा ॥
पहुँचौ जहाँ कुंड औ गोला । तजि बाएँ अँधियार खटोला ॥
दक्खिन दहिने रहहि तिलगा । उत्तर बाएँ गढ़-काटंगा ॥
माँझ रतनपुर सिंघदुवारा । झारखंड देइ बाँव पहारा ॥
आगे पाव उड़ैसा बाएँ दिये सो बाट ।
दहिनावरत देइ कै उतरु समुद कै घाट ॥
होत पयान जाइ दिन केरा । मिरिगारन महँ भयउ बसेरा ॥
कुस-साँथरि भइ सौर सुपेती । करवट आई बनी भुइँ सेंती ॥
चलि दस कोस ओस तन भीजा । काया मिलि तेहिं भसम मलीजा ॥
ठाँव ठाँव सब सोअहि चेला । राजा जागै आपु अकेला ॥
जेहि के हिए पेम-रँग जामा । का तेहि भूख नींद बिसरामा ॥
बन अँधियार, रैनि अँधियारी । भादों बिरह भएउ अति भारी ॥
किंगरी हाथ गहे बैरागी । पाँच ततु धुनि ओही लागी ॥
नैन लाग तेहि मारग पदमावति जेहि दीप ।
जैस सेवातिहि सेवै बन चातक जल सीप ॥

बोहित खंड

सो न डोल देखा गजपती । राजा सत्त दत्त दुहुँ सेंती ॥
अपनेहि कया, अपनेहि कंथा । जीउ दीन्ह अगुमन तेहि पथा ॥
निहचै चला भरम जिउ खोई । साहस जहाँ सिद्धि तहँ होई ॥
निहचै चला छाँड़ि कै राजू । बोहित दीन्ह, दीन्ह सब साजू ॥
चढ़ा बेगि, तब बोहित पेले । धनि सो पुरुष पेम जेइ खेले ॥
प्रेम-पथ जौं पहुँचै पारा । बहुरि न मिलै आइ एहि छारा ॥
तेइ पावा उत्तिम कैलासू । जहाँ न मीचु, सदा सुख-बासू ॥

एहि जीवन कै आस का? जस सपना पल आधु ।
मुहमद जियतहि जे मुए तिन्ह पुरुषन्ह कै साधु ॥

जस बन रेंगि चलै गज-ठाटी । बोहित चले, समुद गा पाटी ॥
धावहि बोहित मन उपराहीं । सहस कोस एक पल महँ जाहीं ॥
समुद अपार सरग जनु लागा । सरग न घाल गनै बैरागा ॥
ततखन चाल्हा एक देखावा । जनु धौला गिरि परबत आवा ॥
उठी हिलोर जो चाल्ह नराजी । लहरि अकास लागि भुइँ बाजी ॥
राजा सेंती कुँवर सब कहहीं । अस अस मच्छ समुद महँ अहहीं ॥
तेहि रे पथ हम चाहहि गवना । होहु सँजूत बहुरि नहीं अवना ॥

गुरु हमार तुम्ह राजा, हम चेला तुम्ह नाथ ।
जहाँ पाँव गुरु राखै चेला राखै माथ ॥

केवट हँसे सो सुनत गवेजा । समुद न जानु कुवाँ कर मेजा ॥
यह तौ चाल्ह न लागै कोहू । का कहिहौ जब देखिहौ रोहू ?॥
सो अबहीं तुम्ह देखा नाहीं । जेहि मुख ऐसे सहस समाहीं ॥
राजपंखि तेहि पर मेंड़राहीं । सहस कोस तिन्ह कै परछाहीं ॥
तेइ ओहि मच्छ ठोर भरि लेहीं । सावक-मुख चारा लेइ देहीं ॥
गरजै गगन पंखि जब बोला । डोल समुद्र डैन जब डोला ॥
तहाँ चाँद औ सूर असूझा । चढै सोइ जो अगुमन बूझा ॥

दस महँ एक जाइ कोइ करम, धरम, तप, नेम ।
बोहित पार होइ जब तबहि कुसल औ खेम ॥

राजै कहा कीन्ह मैं पेमा । जहाँ पेम कहँ कूसल खेमा ॥
तुम्ह खेवहु जौ खेवै पारहु । जैसे आपु तरहु मोहि तारहु ॥
मोहि कुसल कर सोच न ओता । कुसल होत जौ जनम न होता ॥

धरती सरग जाँत-पट दोऊ । जो तेहि बिच जिउ राख न कोऊ ॥
हौ अब कुसल एक पै माँगौ । पेम-पंथ सत बाँधि न खागौं ॥
जौ सत हिय तौ नयनहि दीया । समुद न डरै पैठि मरजीया ॥
तहँ लगि हेरौ समुद ढढोरी । जहँ लगि रतन पदारथ जोरी ॥
सप्त पतर खोजि कै काढौ बेद गरथ ।
सात सरग चढि धावौ पदमावति जेहि पथ ॥

सात समुद्र खंड

सायर तरै हिये सत पूरा। जौ जिउ सत, कायर पुनि सूरा ॥
तेइ सत बोहित कुरी चलाए। तेइ सत पवन पख जनु लाए ॥
सत साथी सत कर ससारू। सत्त खेइ लेइ लावै पारू ॥
सत्त ताक सब आगू पाछू। जहँ जहँ मगर मच्छ औ काछू ॥
उठै लहरि जनु ठाढ पहारा। चढ़ै सरग औ परै पतारा ॥
डोलाइ बोहित लहरै खाहीं। खिन तर होहिं, खिनहिं उपराहीं ॥
राजै सो सत हिरदै बाँधा। जेहि सत टेकि करै गिरि काधा ॥

खार समुद सो नाँघा आए समुद जहं खीर।
मिले समुद वै सातौ बेहर बेहर नीर ॥

खीर समुद का बरनौं नीरू। सेत सरूप पियत जस खीरू ॥
उलथाइ मानिक, मोती, हीरा। दरब देखि मन होइ न थीरा ॥
मनुआ चाह दरब औ भोगू। पथ भुलाइ बिनासै जोगू ॥
जोगी होइ मनहिं सो सँभारै। दरब हाथ कर समुद पवारै ॥
दरब लेइ सोई जो राजा। जो जोगी तेहि के केहि काजा ?॥
पथिहि पथ दरब रिपु होई। ठग, बटपार, चोर सँग सोई ॥
पथी सो जो दरब सौं रूसे। दरब समेटि बहुत अस मूसे ॥

खीर-समुद सो नाँघा, आए समुद-दधि माँह।
जो हैं नेह क बाउर तिन्ह कहँ धूप न छाँह ॥

दधि-समुद्र देखत तस दाधा। पेम क लुबुध दगध पै साधा ॥
पेम जो दाधा धनि वह जीऊ। दधि जामाइ मथि काढ़ै घीऊ ॥
दधि एक बूँद जाम सब खीरू। काँजी-बूँद बिनसि होइ नीरू ॥
साँस डाँडि मन मथनी गाढी। हिये चोट बिनु फूट न साढ़ी ॥
जेहि जिउ पेम चँदन तेहि आगी। पेम बिहून फिरै डर भागी ॥
पेम कै आगि जरै जौ कोई। दुख तेहि कर न अँबिरथा होई ॥
जो जानै सत आपुहि जारै। निसत हिये सत करै न पारै ॥

दधि-समुद्र पुनि पार भे, पेमहि कहा सँभार ?।
भावै पानी सिर परै, भावै परै अँगार ॥

आए उदधि समुद्र अपारा। धरती सरग जरै तेहि भारा ॥
आगि जो उपनी ओही समुदा। लका जरी ओहि एक बुंदा ॥
बिरह जो उपना ओहि-तें गाढा। खिन न बुझाइ जगत महँ बाढा ॥
जहाँ सो बिरह आगि कह डीठी। सौंह जरै, फिरि देइ न पीठी ॥

जग महँ कठिन खडग कै धारा। तेहि तें अधिक बिरह कै झारा॥
अगम पंथ जो ऐस न होई। साध किए पावै सब कोई॥
तेहि समुद्र महँ राजा परा। जरा चहै पै रोवँ न जरा॥
तलफै तेल कराह जिमि इमि तलफै सब नीर।
यह जो मलयगिरि प्रेम कर बेधा समुद समीर॥
सुरा-समुद पुनि राजा आवा। महुआ मद-छाता देखरावा॥
जो तेहि पियै सो भाँवरि लेई। सीस फिरै, पथ पैगु न देई॥
पेम-सुरा जेहि के हिय माहाँ। कित बैठे महुआ कै छाहाँ॥
गुरु के पास दाख-रस रसा। बैरी बबुर मारि मन कसा॥
बिरह के दगध कीन्ह तन भाठी। हाड़ जराइ दीन्ह जस काठी॥
नैन-नीर सौं पोता किया। तस मद चुवा बरा जस दिया॥
बिरह सरागन्हि भूँजै माँसू। गिरि गिरि परै रकत कै आँसू॥
मुहमद मद जो पेम कर गए दीप तेहि साध।
सीस न देइ पतंग होइ तौ लगि लहै न खाध॥
पुनि किलकिला समुद महँ आए। गा धीरज, देखत डर खाए॥
भा किलकिल अस उठै हिलोरा। जनु अकास टूटै चहुँ ओरा॥
उठै लहरि परबत कै नाई। फिरि आवै जोजन सौ ताई॥
धरती लेइ सरग लहि बाढा। सकल समुद जानहुँ भा ठाढ़ा॥
नीर होइ तर ऊपर सोई। माथे रंभ समुद जस होई॥
फिरत समुद जोजन सौ ताका। जैसे भँवै कोहार क चाका॥
भै परलै नियराना जबहीं। मरै जो जब परलै तेहि तबहीं॥
गै औसान सबन्ह कर देखि समुद कै बाढि।
नियर होत जनु लीलै रहा नैन अस काढि॥
हीरामन राजा सौं बोला। एही समुद आए सत डोला॥
सिंघलदीप जो नाहि निबाहू। एही ठाँव साँकर सब काहू॥
एहि किलकिला समुद्र गभीरू। जेहि गुन होइ सो पावै तीरू॥
इहै समुद्र-पंथ मँझधारा। खाँडे कै असि धार निनारा॥
तीस सहस्र कोस कै पाटा। अस साँकर चलि सकै न चाँटा॥
खाँड़ैं चाहि पैनि बहुताई। बार चाहि ताकर पतराई॥
एही ठाँव कहँ गुरु सँग लीजिय। गुरु सँग होइ पार तौ कीजिय॥
मरन जियन एही पथहि एही आस निरास।
परा सो गयउ पतारहि, तरा सो गा कैलास॥
राजै दीन्ह कटक कहँ बीरा। सुपुरुष होहु, करहु मन धीरा॥
ठाकुर जेहिक सूर भा कोई। कटक सूर पुनि आपुहि होई॥
जौ लहि सता न जिउ सत बाँधा। तौ लहि देइ कहाँर न काँधा॥

पेम-समुद महँ बाँधा बेरा । यह सब समुद बूँद जेहिं केरा ॥
ना हौं सरग न चाहौं राजू । ना मोहिं नरक सेंति किछु काजू ॥
चाहौं ओहि कर दरसन पावा । जेइ मोहिं आनि पेम-पथ लावा ॥
काठहि काह गाढ का ढीला? । बूड़ न समुद, मगर नहि लीला ॥
कान समुद धँसि लीन्हेसि भा पाछे सब कोइ ।
कोइ काहू न सँभारै आपनि आपनि होइ ॥
कोइ बोहित जस पौन उड़ाहीं । कोई चमकि बीजु अस जाहीं ॥
कोई जस भल धाव तुखारू । कोई जैस बैल गरियारू ॥
कोई जानहुँ हरुआ रथ हाँका । कोई गरुअ भार बहु थाका ॥
कोई रेंगहिं जानहुँ चाँटी । कोई टूटि होहिं तर माटी ॥
कोई खाहिं पौन कर झोला । कोई करहिं पात अस डोला ॥
कोई परहिं भौंर जल माहा । फिरत रहहिं, कोइ देइ न बाहाँ ॥
राजा कर भा अगमन खेवा । खेवक आगे सुआ परेवा ॥
कोइ दिन मिला सबेरे कोइ आवा पछ-राति ।
जा कर जस जस साजु हुत सो उतरा तेहि भाँति ॥
सतएँ समुद मानसर आए । मन जो कीन्ह साहस, सिधि पाए ॥
देखि मानसर रूप सोहावा । हिय हुलास पुरइनि होइ छावा ॥
गा अँधियार, रैनि-मसि छूटी । भा भिनसार किरिन-रवि फूटी ॥
'अस्ति अस्ति' सब साथी बोले । अँध जो अहे नैन विधि खोले ॥
कवँल बिगस तस बिहँसी देहीं । भौंर दसन होइ कै रस लेहीं ॥
हँसहिं हंस औ करहि किरोरा । चुनहिं रतन मुकुताहल हीरा ॥
जो अस आव साधि तप जोगू । पूजै आस, मान रस भोगू ॥
भौंर जो मनसा मानसर लीन्ह कँवलरस आइ ।
घुन जो हियाव न कै सका भूर काठ तस खाइ ॥



पद्मावती–वियोग खंड

पद्मावति तेहि जोग सँजोगा। परी पेम-बस गहे वियोगा ॥
नींद न परै रैनि जौं आवा। सेज केंवाच जानु कोइ लावा ॥
दहै चंद और चंदन चीरू। दगध करै तन बिरह गँभीरू ॥
कलप समान रैनि तेहि बाढ़ी। तिल तिल भर जुग जुग जिमि गाढ़ी ॥
गहै बीन मकु रैनि बिहाई। ससि बाहन तहँ रहै ओनाई ॥
पुनि धनि सिंघ उरेहै लागै। ऐसिहिं बिथा रैनि सब जागै ॥
कहँ वह भौंर कँवल रस-लेवा। आइ परै होइ घिरिनि परेवा ॥
से धनि बिरह-पतंग भइ, जरा चहै तेहि दीप।
कंत न आव भिरिंग होइ, का चंदन तन लीप ॥
परी बिरह बन जानहुँ घेरी। अगम असूझ जहाँ लगि हेरी ॥
चतुर दिसा चितवै जनु भूली। सो बन कहँ जहँ मालति फूली? ॥
कँवल भौंर ओही बन पावै। को मिलाइ तन-तपनि बुझावै? ॥
अंग अंग अस कँवल सरीरा। हिय भा पियर कहै पर-पीरा ॥
चहै दरस, रबि कीन्ह बिगासू। भौंर-दीठि मनो लागि अकासू ॥
पूँछै धाय, बारि कहु बाता। तुइँ जस कवँल फूल रँग राता ॥
केसर बरन हिया भा तोरा। मानहुँ मनहिं भएउ किछु भोरा ॥
पौन न पावै संचरै, भौंर न तहाँ बईठ।
भूलि कुरंगिनि कस भई, जानु सिंघ तुइँ दीठ ॥
धाय सिंघ बरु खातेउ मारी। की तसि रहति अही जसि बारी ॥
जोबन सुनेउँ कि नवल बसंतू। तेहि बन परेउ हस्ति मैमंतू ॥
अब जोबन-बारी को राखा। कुँजर-बिरह बिधंसै साखा ॥
मैं जानेउँ जोबन रस भोगू। जोबन कठिन सँताप वियोगू ॥
जोबन गरुअ अपेल पहारू। सहि न जाइ जोबन कर भारू ॥
जोबन अस मैमंत न कोई। नवैं हस्ति जौं आँकुस होई ॥
जोबन भर भादौं अस गंगा। लहरै देइ, समाइ न अंगा ॥
परिउँ अथाह, धाय! हौं, जोबन-उदधि गँभीर।
तेहि चितवौं चारिहु दिसि जो गहि लावै तीर ॥
पद्मावति तुइँ समुद सयानी। तोहि सरि समुद न पूजै, रानी ॥
नदी समाहिं समुद महँ आई। समुद डोलि कहु कहाँ समाई? ॥
अबहीं कँवल-करी हिय तोरा। आइहि भौंर जो तो कहँ जोरा ॥
जोबन-तुरी हाथ गहि लीजिय। जहाँ जाइ तहँ जाइ न दीजिय ॥

जोबन जोर मात गज अहै । गहहु ज्ञान-आकुस जिमि रहै ॥
अबहिं बारि तुइँ पेम न खेला । का जानसि कस होइ दुहेला ॥
गगन दीठि करु नाइ तराहीं । सुरुज देखु कर आवै नाहीं ॥
जब लगि पीउ मिलै नहि साधु पेम कै पीर ।
जैसे सीप सेवाति कहँ तपै समुद मंझ नीर ॥
दहै, धाय जोबन एहि जीऊ । जानहुँ परा अगिनि महँ घीऊ ॥
करवत सहौं होत दुइ आधा । सहि न जाइ जोबन कै दाधा ॥
बिरह समुद्र भरा असँभारा । भौंर मेलि जिउ लहरिन्ह मारा ॥
बिरह नाग होइ सिर चढि डसा । होइ अगिनि चदन महँ बसा ॥
जोबन पखी, बिरह बियाधू । केहरि भएउ कुरंगिनि-खाधू ॥
कनक-पानि कित जोबन कीन्हा । औटन कठिन बिरह ओहि दीन्हा ॥
जोबन-जलहि बिरह मसि छूआ । फूलहि भौंर, फरहि भा सूआ ॥
जोबन चाँद उआ जस बिरह भएउ सँग राहु ।
घटतहि घटत छीन भइ, कहै न पारौं काहु ॥
नैन ज्यों चक्र फिरे चहुँओरा । बरजै धाय, समाहि न कारा ॥
कहेसि पेम जौं अपना, बारी । बाँधु सत्त, मन डोल न भारी ॥
जेहि जिउ महँ होइ सत्त पहारू । परै पहार न बाँकै बारू ॥
सती जो जरै पेम सत लागी । जौं सत हिय तौ सीतल आगी ॥
जोबन चाँद जो चौदस-करा । बिरह के चिनगी सो पुनि जरा ॥
पौन बाँध सो जोगी जती । काम बाँध सो कामिनी सती ॥
आव बसंत फूल फुलवारी । देव बार सब जैहैं बारी ॥
तुम्ह पुनि जाहु बसत लेइ पूजि मनावहु देव ।
जीव पाइ जग जनम है पीउ पाइ कै सेव ॥
जब लगि अवधि आइ नियराई । दिन जुग जुग बिरहिनि कहँ जाई ॥
भूख नींद निसि दिन गै दोउ । हियै मारि जस कलपै कोऊ ॥
रोवँ रोवँ जनु लागहिं चाँटे । सूत सूत बेधहि जनु काँटे ॥
दगधि कराह जरै जस घीऊ । बेगि न आव मलयगिरि पीऊ ॥
कौन देव कहँ जाइ कै परसौं । जेहि सुमेरु हिय लाइय कर सौं ॥
गुपुत जो फूलि साँस परगटै । अब होइ सुभर दहहि हम्ह घटै ॥
भा सँजोग जो रे भा जरना । भोगहि गए भोगि का करना? ॥
जोबन चँचल ढीठ है, करै निकाजे काज ।
धनि कुलवति जो कुल धरें कै जोबन मन लाज ॥

पद्मावती सुआ भेंट खंड

तेहि वियोग हीरामन आवा। पदमावति जानहुँ जिउ पावा॥
कंठ लाइ सूआ सौं रोई। अधिक मोह जौं मिलै बिछोही॥
आगि उठे दुख हिये गँभीरू। नैनहिं आइ चुवा होइ नीरू॥
रही रोइ जब पदमिनि रानी। हँसि पूछहिं सब सखी सयानी॥
मिले रहस भा चाहिय दूना। कित रोइय जौं मिलै बिछूना?॥
तेहि क उतर पदमावति कहा। बिछुरन दुख जो हिए भरि रहा॥
मिलत हिए आएउ सुख भरा। वह दुख नैन-नीर होइ ढरा॥

बिछुरता जब भेंटै सो जानै जेहि नेह॥
सुक्ख सुहेल उग्गवै दुःख झरै जिमि मेह॥

पुनि रानी हँसि कूसल पूछा। कित गवनेहु पींजर कै छूँछा॥
रानी तुम्ह जुग जुग सुख पाटू। छाज न पखिहि पींजर-ठाटू॥
जब भा पख कहाँ थिर रहना। चाहै उड़ा पखि जौ डहना॥
पींजर महँ जो परेवा घेरा। आइ मजारि कीन्ह तहँ फेरा॥
दिन एक आइ हाथ पै मेला। तेहि डर बनोवास कहँ खेला॥
तहाँ बियाध आइ नर साधा। छूटि न पाव मीचु कर बाँधा॥
वै धरि बेचा बाम्हन हाथा। जंबूदीप गएउँ तेहि साथा॥

तहाँ चित्र चितउरगढ़ चित्रसेन कर राज।
टीका दीन्ह पुत्र कहँ आपु लीन्ह सिव साज॥

बैठ जो राज पिता के ठाऊँ। राजा रतनसेन ओहि नाऊँ॥
बरना काह देस मनियारा। जहँ अस नग उपना उँजियारा॥
धनि माता औ पिता बखाना। जेहि के बंस अंस अस आना॥
लछन बतीसौ कुल निरमला। बरनि न जाइ रूप औ कला॥
वै हौं लीन्ह, अहा अस भागू। चाहै सोने मिला सोहागू॥
सो नग देखि हींछा भइ मोरी। है यह रतन पदारथ जोरी॥
है ससि जोग इहै पै भानू। तहाँ तुम्हार मैं कीन्ह बखानू॥

कहाँ रतन रतनागर, कंचन कहाँ सुमेरु।
दैव जो जोरी दुहुँ लिखी मिलै सो कौनेहु फेर॥

सुनत बिरह-चिनगी ओहि परी। रतन पाव जौं कंचन-करी॥
कठिन पेम बिरहा दुख भारी। राज छाँड़ि भा जोगि भिखारी॥
मालति लागि भौंर जस होई। होइ बाउर निसरा बुधि खोई॥
कहेसि पतंग होइ धनि लेऊँ। सिंघलदीप जाइ जिउ देऊँ॥

पुनि ओहि कोउ न छाँड़ अकेला । सोरह सहस कुँवर भए चेला ॥
और गनै को सग सहाई? । महादेव मढ मेला जाई ॥
सूरुज पुरुष दरस के ताई । चितवै चद चकोर कै नाईं ॥
तुम्ह बारी रस जोग जेहि, कँवलहि जस अरघानि ।
तस सूरुज परगास कै भौंर मिलाएउ आनि ॥
हीरामन जो कही यह बाता । सुनिकै रतन पदारथ राता ॥
जस सूरुज देखे होइ ओपा । तस भा बिरह, कामदल कोपा ॥
सुनि कै जोगी केर बखानू । पदमावति मन भा अभिमानू ॥
कंचन करी न काँचहि लोभा । जौं नग होइ पाव तब सोभा ॥
कचन जौं कसिए कै ताता । तब जानिय दहुँ पीत कि राता ॥
नग कर मरम सो जड़िया जाना । जड़ै जो अस नग देखि बखाना ॥
को अब हाथ सिंघ मुख घालै । को यह बात पिता सौं चालै ॥
सरग इद्र डरि काँपै बासुकि डरै पतार ।
कहा सो अस बर प्रिथिमी मोहिं जोग ससार ॥
तू रानी ससि कचन-करा । वह नग रतन सूर निरमरा ॥
बिरह-बजागि बीच का कोई । आगि जो छुवै जाइ जरि सोई ॥
आगि बुझाइ परे जल गाढे । वह न बुझाइ आपु ही बाढ़ै ॥
बिरह के आगि सूर जरि कापा । रातिहि दिवस जरै ओहि तापा ॥
खिनहिं सरग, खिन जाइ पतारा । थिर न रहै एहि आगि अपारा ॥
धनि सो जीउ दगध इमि सहै । अकसर जरै, न दूसर कहै ॥
सुलगि सुलगि भीतर होइ सावाँ । परगट होइ न कहै दुख नावाँ ॥
काह कहौं हौं ओहि सौं जेइ दुख कीन्हं निमेट ।
तेहि दिन आगि करै वह बाहा जेहि दिन होइ सो भेट ॥
सुनि कै धनि, 'जारी अस कया' । तन भा मयन हिये भै मया ॥
देखौं जाइ जरै कस भानू । कचन जरे अधिक होइ बानू ॥
अब जो मरै वह पेम-बियोगी । हत्या, मोहिं जेहि कारन जोगी ॥
सुनि कै रतन पदारथ राता । हीरामन सौं कह यह बाता ॥
जो वह जोग सभारै छाला । पाइहि भुगुति, देहुँ जैमाला ॥
आव बसत कुसल जो पावौं । पूजा मिस मडप कहँ आवौं ॥
गुरु के बैन फूल हौं गाँथे । देखौ नैन, चढावौं माथे ॥
कवल भँवर तुम्ह बरना मैं माना पुनि सोइ ।
चाँद सूर कहँ चाहिय जो रे सूर वह होइ ॥
हीरामन जो सुना रस बाता । पावा पान भएउ मुख राता ॥
चला सुआ, रानी तब कहा । भा जो परावा कैसे रहा? ॥
जो नीति चलै सँवारे पाखा । आजु जो रहा, कालिह को राखा? ॥

न जनौं आजु कहाँ दुहुँ ऊआ। आएहु मिलै, चलेहु मिलि, सूआ॥
मिलि कै बिछुर मरन कै आना। कित आएहु जौं चलेहु निदाना? ॥
सुनु रानी हौं रहतेउँ राधा। कैसे रहौं बचन कर बाँधा॥
ता करि दिस्टि ऐसि तुम्ह सेवा। जैसे कुँज मन रहै परेवा॥
बसै मीन जल धरती अबा बसै अकास।
जौ पिरीत पै दुवौ महँ अंत होहिं एक पास॥
आवा सुआ बैठ जहँ जोगी। मारग नैन, बियोग बियोगी॥
आइ पेम-रस कहा सँदेसा। गोरख मिला, मिला उपदेसा॥
तुम्ह कहँ गुरू मया बहु कीन्हा। कीन्ह अदेस, आदि कहि दीन्हा॥
सबद, एक उन्ह कहा अकेला। गुरु जस भिंग फनिग जस चेला॥
भिंगी ओहि पाँखि पै लेई। एकहि बार छीनि जिउ देई॥
ताकहँ गुरु करै असि माया। नव औतार देइ, नव काया॥
होइ अमर जो मरि कै जीया। भौंर कवँल मिलि कै मधु पीया॥
आवै ऋतु बसंत जब तब मधुकर, तब बासु।
जोगी जोग जो इमि करै सिद्धि समापत तासु॥

———

पार्वती-महेश खंड

ततखन पहुँचे आइ महेसू। बाहन बैल-कुस्टि कर भेसू॥
काथरि कथा, हड़ावरि बाँधे। मुंड-माल औ हत्या काँधे॥
सेसनाग जाके कठमाला। तनु भभूति, हस्ती कर छाला॥
पहुँची रुद्र कवँल कै गटा। ससि माथे औ सुरसरि जटा॥
चँवर, घंट औ डँवरू हाथा। गौरा पारबती धनि साथा॥
औ हनुवंत बीर सँग आवा। धरे भेस बाँदर जस छावा॥
अवतहि कहेन्हि न लावहु आगी। तेहि कै सपथ जरहु जेहि लागी॥

की तप करै न पारेहु, की रे नसाएहु जोग?।
जियत जीउ कस काढहु? कहहु सो मोहिं बियोग।'

कहेसि मोहि बातन्ह बिलँभावा। हत्या केरि न डर तोहि आवा॥
जरै देहु, दुख जरौं अपारा। निस्तर पाइ जाउँ एक बारा॥
जस भरथरी लागि पिंगला। मो कहँ पदमावति सिंघला॥
मैं पुनि तजा राज औ भोगू। सुनि सो नावँ लीन्ह तप जोगू॥
एहि मढ सेएउँ आइ निरासा। गइ सो पूजि, मन पूजि न आसा॥
तैं यह जिउ डाढे पर दाधा। आधा निकसि रहा घट आधा॥
जो अधजर सो बिलँब न लावा। करत बिलंब बहुत दुख पावा॥

एतना बोल कहत मुख उठी बिरह कै आगि।
जौं महेस न बुझावत जाति सकल जग लागि॥

पारबती मन उपना चाऊ। देखौं कुँवर केर सत भाऊ॥
ओहि एहि बीच, कि पेमहि पूजा। तन मन एक कि मारग दूजा॥
भइ सुरूप जानहुँ अपछरा। बिहँसि कुँवर कर आँचर धरा॥
सुनहु कुँवर मो सौं एक बाता। जस मोहि रंग न औरहि राता॥
औ बिधि रूप, दीन्ह है तोका। उठा सो सबद जाइ सिव-लोका॥
तब हौं तोपहँ इंद्र पठाई। गइ पदमिनि, तैं अछरी पाई॥
अब तजु जरन, मरन, तप, जोगू। मोसौं मानु जनम भरि भोगू॥

हौं अछरी कैलास कै जेहि सरि पूज न कोइ।
मोहि तजि सँवरि जो ओहि मरसि, कौन लाभ तोहि होइ?॥

भलेहि रंग अछरी तोर राता। मोहिं दुसरे सौं भाव न बाता॥
मोहि ओहि सँवरि मुए तस लाहा। नैन जो देखसि पूछसि काहा?॥
अबहिं ताहि जिउ देइ न पावा। तोहि असि अछरी ठाढि मनावा॥
जौं जिउ देइहौं ओहि कै आसा। न जानौं काह होइ कैलासा॥

हौ कैलास काह लै करऊँ। सोइ कैलास लागि जेहि मरऊँ ॥
ओहि के बार जीउ नहि बारौं। सिर उतारि नेवछावरि सारौं ॥
ताकर चाह कहै जो आई। दोउ जगत तेहि देहुँ बड़ाई ॥
ओहि न मोरि किछु आसा हौ ओहि आस करेउँ।
तेहि निरास पीतम कहँ जिउ न देउँ का देउँ ॥
गौरइ हँसि महेस सौ कहा। निहचै एहि बिरहानल दहा ॥
निहचै यह ओहि कारन तपा। परिमल पेम न ओछे छपा ॥
निहचै पेम पर यह जागा। कसे कसौटी कञ्चन लागा ॥
बदन पियर जल डभकहिं नैना। परगट दुवौ पेम के बैना ॥
यह एहि जनम लागि ओहि सीझा। चहै न औरहि ओही रीझा ॥
महादेव देवन्ह के पिता। तुम्हरी सरन राम रन जिता ॥
एहूँ कहँ तस मया करेहू। पुरवहु आस कि हत्या लेहू ॥
हत्या दुइ के चढ़ाए काँधे बहु अपराध।
तीसर यह लेउ माथे जौ लेवै कै साध ॥
सुनि कै महादेव कै भाखा। सिद्ध पुरुष राजै मन लाखा ॥
सिद्धहि अग न बैठे माखी। सिद्ध पलक नहि लावै आँखी ॥
सिद्धहि सग होइ नहि छाया। सिद्धइ होइ भूख नहिं माया ॥
जेहि जग सिद्ध गोसाईं कीन्हा। परगट गुपुत रहै को चीन्हा ॥
बैल चढ़ा कुस्टी कर भेसू। गिरजापति सत आहि महेसू ॥
चीन्है सोइ रहै जो खोजा। जस बिक्रम औ राजा भोजा ॥
जो ओहि तत सत्त सौं हेरा। गएउ हेराइ जो ओहि भा मेरा ॥
बिनु गुरु पथ न पाइय भूलै सो जो भेट।
जोगी सिद्ध होइ तब जब गोरख सौं भेट ॥
ततखन रतनसेन गहबरा। रोउब छाँड़ि पाँव लेइ परा ॥
मातै पितै जनम कित पाला। जो अस फाँद पेम गिउ घाला ॥
धरनी सरग मिले हुत दोऊ। केइ निनार कै दीन्ह बिछोऊ ॥
पदिक पदारथ कर हुँत खोवा। टूटहि रतन रतन तस रोवा ॥
गगन मेघ जस बरसै भला। पुहुमी पूरि सलिल बहि चला ॥
सायर टूट सिखर गा पाटा। सूझ न बार पार कहुँ घाटा ॥
पौन पानि होइ होइ सब गिरइ। प्रेम के फंद कोइ जनि परई ॥
तस रोवैं तस जिउ जरै गिरै रकत औ आँसु।
रोवँ रोवँ सब रोवहि सूत सूत भरि आँसु ॥
रोंवत बूडि उठा ससारू। महादेव तब भयउ मयारू ॥
कहेन्हि न रोव बहुत तैं रोवा। अब ईसर भा दारिद खोवा ॥
जो दुख सहै होइ सुख ओका। दुख बिनु सुख न जाइ सिवलोका ॥

अब तैं सिद्ध भएसि सिधि पाई। दरपन कया छूटि गइ काई ॥
कहौ बात अब हौं उपदेसी। लागु पथ भूले परदेसी ॥
जौं लगि चोर सेंधि नहि देई। राजा केरि न मूसै पेई ॥
कहौं सो तोहि सिंघलगढ़ है खँड सात चढाव।
फिरा न कोई जियत जिउ सरग पथ देइ पाव ॥
गढ़ तस बाँक जैसि तोरि काया। पुरुख देखु ओही कै छाया ॥
पाइय नाहिं जूझ हठि कीन्हे। जेइ पावा तेइ आपुहि चीन्हें ॥
नौ पौरी तेहि गढ़ मझियारा। औ तहँ फिरहि पाँच कोटवारा ॥
दसवँ दुवार गुपुत एक ताका। अगम चढ़ाव बाट सुठि बाँका ॥
भेदै जाइ कोइ ओहि घाठी। जो लह भेद चढे होइ चाँटी ॥
गढ तर कुँड सुरँग तेहि माहाँ। तँह वह पथ कहौं तेहि पाहाँ ॥
चोर बैठ जस सेंध सँवारी। जुआ पैंत जस लाव जुआरी ॥
जस मरजिया समुद धँस हाथ आव तब सीप।
ढूँढि लेइ जो सरग-दुआरी चढै सो सिंघलदीप ॥
दसवँ दुआर ताल कै लेखा। उलटि दिस्टि जो लाव सो देखा।
जाइ सो तहाँ साँस मन बधी। जस धसि लीन्ह कान्ह कालिंदी ॥
तू मन नाथु मारि कै साँसा। जो पै मरहि आपु करि नासा ॥
परगट लोकचार कहु बाता। गुपुत लाउ मन जासौं राता ॥
हौं हौं कहत सबै मति खोई। जौं तू नाहिं आहि सब कोई ॥
जियतहि जुरै मरै एक बारा। पुनि का मीचु को मारै पारा ॥
आपुहि गुरु सो आपुहि चेला। आपुहि सब औ आपु अकेला ॥
आपुहि मीच जियन पुनि आपुहि तन मन सोइ।
आपुहि आपु करे जो चाहै कहाँ सो दूसर कोइ ॥



पद्मावती-रत्नसेन-भेंट

सात खंड ऊपर कैलासू। तहवाँ नारि-सेज सुख बासू॥
चारि खंभ चारिहु दिसि खरे। हीरा- रतन-पदारथ जरे॥
मानिक दिया जरावा मोती। होइ उजियार रहा तेहिं जोती॥
ऊपर राता चँदवा छावा। औ भुइँ सुरँग बिछाव बिछावा॥
तेहि महँ पालक सेज सो डासी। कीन्ह बिछावन फूलन्ह बासी॥
चहुँ दिसि गेडुआ औ गल सूई। काँची पाट भरी धुनि रूई॥
बिधि सो सेज रची केहि जोगू। को तहँ पौढि मान रस भोगू॥

अति सुकुवाँरि सेज सो डासी छुवै न पारै कोइ।
देखत नवै खिनहिं खिन पावँ धरत कसि होइ॥

राजै तपत सेज जो पाई। गाँठि छोरि धनि सखिन्ह छपाई॥
कहैं कुँवर हमरे अस चारू। आज कुँवरि कर करब सिंगारू॥
हरदि उतारि चढाउब रंगू। तब निसि चाँद सुरुज सौ संगू॥
जस चातक मुख बूँद सेवाती। राजा चख जोहत तेहि भाँती॥
जोगि छरा जनु अछुरी साथा। जोग हाथ कर भएउ बेहाथा॥
वै चातुरि कर लै अपसईं। मंत्र अमोल छीनि लेइ गईं॥
बैठेउ खोइ जरी औ बूटी। लाभ न पाव मूर भइ टूटी॥

खाइ रहा ठग-लाड़ू तंत मंत बुधि खोइ।
भा धौराहर बनखंड ना हँसि आव न रोइ॥

अस तप करत गएउ दिन भारी। चारि पहर बीते जुग चारी॥
परी साँझ पुनि सखी सो आई। चाँद रहा अपनी जो तराई॥
पूँछहि गुरु कहाँ रे चेला। बिनु ससि रे कस सूर अकेला॥
"धातु कमाय सिखे तैं जोगी। अब कस भा निर्धातु बियोगी?॥
"कहाँ सो खोएहु बिरवा लोना। जेहि तें होइ रूप औ सोना॥
"का हरतार पार नहिं पावा। गंधक काहे कुरकुटा खावा॥
"कहा छपाए चाँद हमारा? जेहि बिनु रैनि जगत अँधियारा"॥

नैन कौड़िया हिय समुद गुरु सो तेहि महँ जोति।
मन मरजिया न होइ परे हाथ न आवै मोति॥

का पूछहु तुम धातु निछोही। जो गुरु कीन्ह अँतरपट ओही॥
सिधि गुटिका अब मो सँग कहा। भएउँ राँग सत हिए न रहा॥
सो न रूप जासौं दुख खोलौं। गएउ भरोस तहाँ का बोलौं॥
जहँ लोना बिरवा कै जाती। कहि कै संदेस आन को पाती॥

कै जो पार हरतार करीजै। गधक देखि अबहि जिउ दीजै॥
तुम्ह जोग कै सूर मयकू। पुनि बिछोहि सो लीन्ह कलंकू॥
जो एहि घरी मिलावै मोहीं। सीस देउँ बलिहारी ओही॥
होइ अबरक ईंगुर भया फेरि अगिनि महँ दीन्ह।
काया पीतर होइ कनक जौ तुम चाहहु कीन्ह॥
का बसाइ जौ गुरु अस बूझा। चकाबूह अभिमनु ज्यौं जूझा॥
बिष जो दीन्ह अमृत देखराई। तेहि रे निछोही को पतियाई॥
मरै सोइ जो होइ निगूना। पीर न जानै बिरह बिहूना॥
पार न पाव जो गधक पीया। सो हत्यार* कहौ किमि जीया॥
सिद्धि-गुटीका जा पहँ नाहीं। कौन धातु पूछहु तेहि पाहीं॥
अब तेहि बाज राँग भा डोलौ। होइ सार तौ बर के बोलौ॥
अबरक कै पुनि ईंगुर कीन्हा। तो मन फेरि अगिनि महँ दीन्हा॥
मिलि जो पीतम बिछुरहि काया अगिनि जराइ।
की तेहि मिले तन तप बुझै की अब मुए बुझाइ॥
सुनि कै बात सखी सब हँसी। जनहुँ रैनि तरई परगसीं॥
अब सो चाँद गगन महँ छपा। लालच कै कित पावसि तपा॥
हमहुँ न जानहिं दहुँ सो कहाँ। करब खोज औ बिनउब तहाँ॥
औ अस कहब आहि परदेसी। करहि मया हत्या जनि लेसी॥
पीर तुम्हारि सुनत भा छोहू। दैउ मनाउ होइ अस ओहू॥
तू जोगी फिरि तपि करु जोगू। तो कहँ कौन राजसुख भोगू॥
वर रानी जहवाँ सुख राजू। बारह अभरन करै सो साजू॥
जोगी ढिढ़ आसन करै अहथिर धरि मन ठाँव।
जो न सुना तौ अब सुनहि बारह अभरन नावँ॥
प्रथमै मज्जन होइ सरीरू। पुनि पहिरै तन चदन चीरू॥
साजि माँग सिर सेंदुर सारै। पुनि लिलाट रचि तिलक सँवारै॥
पुनि अजन दुहुँ नैनन्ह करै। औ कुडल कानन्ह महँ पहिरै॥
पुनि नासिका भल फूल अमोला। पुनि राता मुख खाइ तमोला॥
गिउ अभरन पहिरै जहँ ताई। औ पहिरै कर कँगन कलाई॥
कटि छुद्रावलि अभरन पूरा। पायन्ह पहिरै पायल चूरा॥
बारह अभरन अहै बखाने। ते पहिरै बरहौ अस्थाने॥
पुनि सो रहा सिंगार जस चारिहु चौक कुलीन।
दीरघ चारि चारि लघु चारि सुभर चौ खीन॥

*पाठातर—हरतार।

पदमावति जो सवारै लीन्हा। पुनिउँ राति दैउ ससि कीन्हा॥
करि मज्जन तन कीन्ह नहानू। पहिरे चीर गएउ छपि भानू॥
रचि पत्रावलि माँग सेंदूरू। भरे मोति और मानिक चूरू॥
चदन चीर पहिर वह भाँती। मेघ घटा जानहुँ बग-पाँती॥
गूँथि जो रतन माग बैसारा। जानहुँ गगन टूट निसि तारा॥
तिलक लिलाट धरा तस दीठा। जनहुँ दुइज पर सुहल बईठा॥
कानन्ह कुँडल खूँट औ खूटी। जानहुँ परी कचपची टूटी॥

पहिरि जराऊ ठाढि भइ कहि न जाइ तस भाव।
मानहुँ दर्पन गगन भा तेहि ससि तार देखाव॥

बाँक नैन औ अजन रेखा। खजन मनहुँ सरद ऋतु देखा॥
जस जस हर फेर चख मोरी। लरै सरद महँ खजन जोरी॥
भौहैं धनुक धनुक पै हारा। नैनन साधि बान विष मारा॥
करनफूल कानन्ह अति सोभा। ससि मुख आइ सूर जनु लोभा॥
सुरँग अधर औ मिला तमोरा। सोहै पान फूल कर जोरा॥
कुसुमगध अति सुरँग कपोला। तेहि पर अलक भुअगिनि डोला॥
तिल कपोल अलि कवँल बईठा। बेधा सोइ जेइ वह तिल दीठा॥

देखि सिंगार अनूप विधि बिरह चला तब भागि।
काल कस्ट इमि ओनवा सब मोरे जिउ लागि॥

का बरनौं अभरन औ हारा। ससि पहिरे नखतन्ह कै मारा॥
चीर चारु औ चदन चोवा। हीर हार नग लाग अमोला॥
तेहि झाँपी रोमावलि कारी। नागिनि रूप डसै हत्यारी॥
कुच कचुकी सिरीफल उभे। हुलसहिं चहहिं कत हिय चुभे॥
बाहन्ह बहुँटा टाँड़ सलोनी। डोलत बाँह भाव गति लोनी॥
तरवन्ह कवँल करी जनु बाँधी। बसा लक जानहुँ दुइ आधी।
छुद्र घट कटि कचन तागा। चलतै उठहिं छतीसौ रागा॥

चूरा पायल अनवट पायन्ह परहिं बियोग।
हिए लाइ टुक हम कहँ समदहु मानहु भोग॥

अस बारह सोरह धनि साजै। छाज न और ओहि पै छाजै॥
बिनवहिं सखी गहरु का कीजै। जेइ जिउ दीन्ह ताहि जिउ दीजै॥
सँवरि सेज धनि मन भइ सका। ठाढि तेवानि टेकि कर लका॥
अनचिन्ह पिउ काँपौं मन माहाँ। का मै कहब गहब जौ बाहाँ॥
बारि बैस गइ प्रीति न जानी। तरुनि भई मैमत भुलानी॥
जोबन गरब न मैं किछु चेता। नेह न जानौ साव कि सेता॥
अब सो कत जो पूछिहि बाता। कस मुख होइहि पीत कि राता॥

हौं बारी औ दुलहिनी पीउ तरुन सह तेज।
ना जानौं कस होइहि चढत कँत के सेज ॥

सुनु धनि डर हिरदय तब ताईं। जौ लगि रहसि मिलै नहिं साईं ॥
कौन कली जो भौर न राईं। डार टूट पुहुप गरु आईं ॥
मातु पिता जौ बियाहै सोईं। जनम निबाह कंत सँग होईं ॥
भरि जीवन राखै जहँ चहा। जाइ न मेंटा ताकर कहा ॥
ताकहँ बिलँब न कीजै बारी। जो पिउ-आयसु सोइ पियारी ॥
चलहु बेगि आयस भा जैसे। कंत बोलावै रहिये कैसे ॥
मान न करसि पोढ करु लाड़ू। मान करत रिस मानै न चाँड़ू ।

साजन लेइ पठावा आयसु जाइ न मेंट।
तन मन जीवन साजि कै देइ चली लेइ भेंट ॥

पदमिनि गवन हंस गए दूरी। कुंजर लाज मेल सिर धूरी ॥
बदन देखि घटि चंद छपाना। दसन देखि कै बीजु लजाना ॥
खंजन छपे देखि कै नैना। कोकिल छपी सुनत मधु बैना ॥
गीव देखि कै छपा मयूरू। लंक देखि कै छपा सदूरू ॥
भौंहन्ह धनुक छपा आकारा। बेनी बासुकि छपा पतारा ॥
खड़ग छपा नासिका बिसेखी। अमृत छपा अधररस देखी ॥
पहुँचहिं छपी कवँल पौनारी। जंघ छपा कदली होइ बारी ॥

अछरी रूप छपानी जबहिं चली धनि साजि।
जावत गरब गहेली सबै छपीं मन लाजि ॥

मिलीं गोहने सखी तराईं। लेइ चाँद सूरुज पहँ आईं ॥
पारस रूप चाँद देखराईं। देखत सूरुज गा मुरछाईं ॥
सोरह कला दिस्टि ससि कीन्ही। सहसौ कला सुरुज कै लीन्हीं ॥
भा रवि अस्त तराईं हसी। सूर न रहा चाँद परगसी ॥
जोगी आहि न भोगी होईं। खाइ कुरकुटा गा पै सोईं ॥
पदमावति जसि निरमल गंगा। तू जो कंत जोगी भिखमंगा ॥
आइ जगावहिं चेला जागै। आवा गुरू पाय उठि लागै ॥

बोलहिं सबद सहेली कान लागि गहि माथ।
गोरख आइ ठाढ भा, उठु रे चेला नाथ ॥

सुनि यह सबद अमिय अस लागा। निद्रा टूटि सोइ अस जागा ॥
गही बाँह धनि सेजवाँ आनी। अंचल ओट रही छपि रानी ॥
सकुचै डरै मनहिंमन बारी। गहु न बाँह रे जोगि भिखारी ॥
ओहट होसि, जोगि! तोरि चेरी। आवै बास कुरकुटा केरी ॥
देखि भभूति छूति मोंहि लागै। काँपै चाँद सूर सौं भागै ॥

जोगि तोरि तपसी कै काया। लागि चहै मोरे अँग छाया॥
बार भिखारि न माँगि से भीखा। माँगै आइ सरग पर सीखा॥
जोगि भिखारी कोई मंदिर न पैठै पार॥
मागि लेहु किछु भिच्छा जाइ ठाढ़ होइ बार॥
मैं तुम्ह कारन पेम पियारी। राज छाँड़ि कै भएऊ भिखारी॥
नेह तुम्हार जो हिये समाना। चितउर सौ निसरेउँ होइ आना॥
जस मालति कहँ भौंर वियोगी। चढ़ा वियोग चलेउ होइ जोगी॥
भौंर खोजि जस पावै केवा। तुम्ह कारन मैं जिउ पर छेवा॥
भएउँ भिखारि नारि तुम्ह लागी। दीप लग होइ अंगएउँ आगी॥
एक बार मरि मिलै जो आई। दूसरि बार मरै कित जाई॥
कित तेहि मीचु जो मरि के जीया। भा सो अमर अमृत मधु पीया॥
भौंर जो पावै कँवल कहँ बहु आरति बहु आस।
भौंर होइ नेवछावरि कँवल देइ हँसि बास॥
आपने मुंह न बड़ाई छाजा। जोगी कतहुँ होहि नहिं राजा॥
हौं रानी, तू जोगि भिखारी। जोगिहिं भोगिहि कौन चिन्हारी॥
जोगी सबै छंद अस खेला। तू भिखारि तेहि माहिं अकेला॥
पौन बाँधि अपसवहिं अकासा। मनसहि जाहि ताहिके पासा॥
एही भाँति सिस्टि सब छरी। एही भेख रावन सिय हरी॥
भौंरहिं मीचु नियर जब आवा। चंपा बास लेइ कहँ धावा॥
दीपक जोति देखि उजियारी। आइ पाँखि होइ परा भिखारी॥
रैनि जो देखै चंदमुख ससि तन होइ अलोप।
तुहुँ जोगी तस भूला करि राजा कर ओप॥
अनुधनि तू निसियर निसि माहाँ। हौं दिनिअर जेहि कै तू छाहाँ॥
चाँदहि कहाँ जोति औ करा। सुरुज के जोति चाँद निरमरा॥
भौंर बास चंपा नहिं लेई। मालति जहाँ तहाँ जिउ देई॥
तुम्ह हुँत भएउँ पतंग कै करा। सिंघलदीप आइ उड़ि परा॥
सेएउँ महादेव कर बारू। तजा अन्न भा पवन अहारू॥
अस मैं प्रीति गाँठि हिय जोरी। कटै न काटे छुटै न छोरी॥
सीतै भीखि रावनहि दीन्ही। तूँ असि निठुर अंतरपट कीन्ही॥
रँग तुम्हारेहि रातेउँ चढ़ेउँ गगन होइ सूर॥
जँह ससि सीतल तहँ तपौं मन हींछा धनिपूर॥
जोगि भिखारि करसि बहु बाता। कहसि रंग देखौं नहि राता॥
कापर रंगे रँग नहिं होई। उपजै औटि रंग भल सोई॥
चँद के रंग सुरुज जस राता। देखै जगत साँझ परभाता॥
दगधि विरह निति होइ अँगारा। ओही आंच धिके संसारा॥

जौ मजीठ औटै बहु आँचा । सो रँग जनम न डोलै राँचा ॥
जरै बिरह जस दीपक-बाती । भीतर जरै उपर होइ राती ॥
जरि परास होइ कोइल भेसू । तब फूलै राता होइ टेसू ॥

पान सुपारी खैर जिमि मेरइ करै चकचून ।
तौ लगि रंग न राँचै जौ लगि होइ न चून ॥

का, धनि पान रग का चूना । जेहिं तन नेह दाध तेहिं दूना ॥
हौं तुम्ह नेह पियर भा पानू । पेजी हुँत सोनरास बखानू ॥
सुनि तुम्हार ससार बड़ौना । जोग लीन्ह तन कीन्ह गड़ौना ॥
करहिं जो किंगरी लेइ बैरागी । नौती होइ बिरह कै आगी ॥
फेरि फेरि तन कीन्ह भुँजैाना । औटि रक्त रग हिरदय औना ॥
सूखि सोपारी भा मन मारा । सिरहिं सरौता करवत सारा ॥
हाड चून भा बिरहहि दहा । जानै सोइ जो दाध इमि सहा ॥

सोइ जान वह पीरा जहि दुःख ऐस सरीर ।
रकत पियासा होइ जो का जानै पर पीर ॥

जोगिन्ह बहुत छंद न ओराहीं । बूद सेवाती जैस पराहीं ॥
परहिं भूम पर होइ कचूरू । परहिं कदलि पर होइ कपूरू ॥
परहिं समुद्र खार जल ओही । परहिं सीप तौ मोती होहीं ॥
परहिं मेरु पर अमृत होई । परहि नाग मुख विष होइ सोई ॥
जोगी भौंर निठुर ए दोऊ । केहि आपन भए कहै जौ कोऊ ॥
एक ठाँव ए थिर न रहाहीं । रस लेइ खेलि अनत कहुं जाहीं ॥
होइ गृही पुनि होइ उदासी । अत काल दूवौ बिसवासी ॥

तेहि सौ नेह को दिढ करै । रहहिं न एकौ देस ।
जोगी भौंर भिखारी इन्ह सौ दूरि अदेस ॥

थल थल नग न होहिं जेहिं जोती । जल जल सीप न उपनहिं मोती ॥
बन बन बिरिछ न चदन होई । तन तन बिरह न उपनै सोई ॥
जेहि उपना सो औटि मर गएऊ । जनम निनार न कबहूँ भयऊ ॥
जल अबुज रवि रहै अकासा । जौं इन्ह प्रीति जानु एक पासा ॥
जोगी भौंर जो थिर न रहहीं । जेहिं खोजहिं तेहि पावहिं नाहीं ॥
मैं तोहिं पाएँउ आपन जीऊ । छौंड़ि सेवाति न आनहिं पीऊ ॥
भौंर मालती मिलै जौ आई । सो तजि आन फूल कित जाई ॥

चपा प्रीति न भौंरहि दिन दिन आगरि बास ।
भौंर जो पावै मालती मुएहु न छौंड़हिं पास ॥

ऐसे राजकुँवर नहिं मानौ । खेलु सारि पासा तव जानौ ॥
काँचे बारह परा जो पाँसा । पाके पैंत परी तनु रासा ॥
रहै न आठ अठारह भाखा । सोरह सतरस रहैं न राखा ॥

सत जो धरै सो खेलन हारा । ढारि इग्यारह जाइ न मारा ॥
तूँ लीन्हें आछसि मन दूवा । औ जुग सारि चहसि पुनि छूवा ॥
हौं नव नेह रचौ तेहि पाहाँ । दसवँ दाँव तोरे हिय माहाँ ॥
तौ चौपर खेलौ करि हिया । जौ तरहेल होइ सौतिया ॥
जेहि मिलि बिछुरन औ तपनि अंत होइ जौ नित ।
तेहि मिलि गाजन को सहै बरु बिनु मिले निचित ॥
बोलौ रानि बचन सुनु साँचा । पुरुष न बोल सपथ औ बाचा ॥
यह मन लाएँउ तोहि अस नारी । दिन तुइ पासा औ निसि सारी ॥
पौ परि बारहि बार मनाएउ । सिरसौ खेलि पैंत जिउ लाएउ ॥
हौ अब चौक पज ते बाची । तुम्ह बिन गोट न आवहि काँची ॥
पाकि उठाएउ आस करीता । हौं जिउ तोहि हारा तुम्ह जीता ॥
मिलि कै जुग नहि होहु निनारी । कहाँ बीच दूती देनहारी ॥
अब जिउ जनम जनम तोहि पासा । चढ़ेउँ जोग आएउँ कैलासा ॥
जाकर जीउ बसै जेहि तेहि पुन ताकरि टेक ।
कनक सोहाग न बिछुरै औटि मिलै होइ एक ॥
बिहँसी धनि सुनि कै सत बाता । निहचय तू मोरे रँग राता ॥
निहचय भौंर कँवल रस रसा । जो जेहि मन सो तेहि मन बसा ॥
जब हीरा मन भएउ सँदेसी । तुम्ह हुँत मँडप गएउँ परदेसी ॥
तोर रूप तस देखिउँ लोना । जनु जोगी तू मेलेसि टोना ॥
सिधि गुटिका जो दिस्टि कमाई । पारहि मेलि रूप बैसाई ॥
भुगुति देइ कह मै तोहि दीठा । कँवल नैन होइ भौंर बईठा ॥
नैन पुहुप तू अलि भा सोभी । रहा बेधि अस उड़ा न लोभी ॥
जाकँरि आस होइ जेहि तेहि पुनि ताकरि आस ।
भौंर जो दाधा कँवल कह कस न पाव सो बास ॥
कौन मोहनी दहुँ हुति तोही । जो तोहि बिथा सो उपनी मोही ॥
बिनु जल मीन तलफ जस जीऊ । चातकि भइउ कहत पिउ पीऊ ॥
जरिउँ बिरह जस दीपक बाती । पंथ जोहत भई सीप सेवाती ॥
डाढ़ि डाढ़ि जिमि कोइल भई । भइउ चकोरि नींदि निसि गई ॥
तोरे पेम पेम मोहि भएऊ । राता हेम अगिनि जिमि तयऊ ॥
हीरा दिपै जौ सूर उदौती । नाहित कित पाहन कहँ जोती ॥
रवि परगासे कँवल बिगासा । नाहित कित मधुकर कित बासा ॥
तासौं कौन अँतरपट जो अस पीतम पीउ ।
नेवछावरि अब सारौ तन, मन, जोबन जीउ ॥
हँसि पदमावत माना बाता । निहचय तू मोरे रंग राता ॥
तू राजा दुहुँ कुल उजियारा । अस कै चरचिउ मरम तुम्हारा ॥

पै तू जबू दीप बसेरा। किमि जानेसि कस सिंघल मेरा॥
किमि जानेसि सो मानस केवा। सुनि सो भौर भा जिउ पर छेवा॥
ना तुइ सुनी न कबहूँ दीठी। कैस चित्र होइ चितहि पईठी॥
जैा लहि अगिनि करै नहि भेदू। तौ लहि औटि चुवै नहि मेदू॥
कहँ सकर तोहिं ऐस लखावा। मिला अलख अस पेम चखावा॥

जेहि कर सत्य सँघाती तेहि कर डर सोइ मेट।
सो सत कहु कैसे भा दुवौ भाँति जो भेट॥

सत्य कहौ सुनु पदमावती। जहँ सत पुरुष तहाँ सुरसती॥
पाएउ सुवा कही वह बाता। भा निहचय देखत मुख राता॥
रूप तुम्हार सुनेउँ अस नीका। जेहिं चढा काहु कह टीका॥
चित्र किएउ पुनि लेइ लेइ नाऊ। नैनहि लागि हिये भा ठाऊँ॥
हौं भा साँच सुनत ओहि घड़ी। तुम होइ रूप आइ चित चढ़ी॥
हौ भा काठ मूति मन मारे। चहै जो कर सब हाथ तुम्हारे॥
तुम्ह जौ डोलाइहु तबहीं डोला। मैान साँस जौ दीन्ह तौ बोला॥

को सोवै का जागै अस हौ गएउ बिमोहि।
परगट गुपुत न दूसर जह देखौं तहँ तोहि॥

बिहँसी धनि सुनि कै सत भाऊ। हौं रामा तू रावन राऊ॥
रहा जो भौंर कँवल के आसा। कस न भोग मानै रस बासा॥
जस सत कहा कुँवर तू मोही। तस मन मोर लाग पुनि तोही॥
जब हुँत कहि गा पखि सँदेसी। सुनिउ कि आवा है परदेसी॥
तब हुँत तुम्ह बिन रहै न जीऊ। चातकि भइउँ कहत पिउ पीऊ॥
भइउँ चकोरि सो पथ निहारी। समुद सीप जस नैन पसारी॥
भइउ बिरह दहि कोइल कारी। डार डार जिमि कूकि पुकारी॥

कौन सो दिन जब पिउ मिलै यह मन राता जासु।
वह दुख देखै मोर सब हौं दुख देखौं तासु॥

कहि सत भाव भई कठँ लागू। जनु कचन औ मिला सोहागू॥
चौरासी आसन पर जोगी। खट रस बधक चतुर सो भोगी॥
कुसुम माल असि मालति पाई। जनु चपा गहि डार ओनाई॥
कली बेधि जन भँवर भुलाना। हना राहु अरजुन के बाना॥
कचन करी जरी नग जोती। बरमा सौ बेधा जनु मोती॥
नारँग जानि कीर नख दिये। अधर आमरस जानहुँ लिए॥
कौतुक केलि करहिं दुख नसा। खूँदहिं कुरलहि जनु सर हसा॥

रही बसाइ बासना चोवा चदन मेद।
जेहि अस पदमिनि रानी सो जानै यह भेद॥

रतनसेन सो कंत सुजानू। खटरस-पंडित सोरह बानू ॥
तस होइ मिले पुरुष औ गोरी। जैसी बिछुरी सारस जोरी ॥
रची सारि दूनौ एक पासा। होइ जुग जुग आवहिं कैलासा ॥
पिय धनि गही दीन्हि गलबाहीं। धनि बिछुरी लागी उर माहीं ॥
ते छकि रस नव केलि करेहीं। चोका लाइ अधर रस लेहीं ॥
धनि नौ सात सात औ पाँचा। पुरुष दस तेरह किमि बाँचा ॥
लीन्ह बिधाँसि बिरह धनि साजा। औ सब रचन जीत हुत राजा ॥

जनहुँ औटि कै मिलि गए तस दूनौ भए एक।
कंचन कसत कसौटी हाथ न कोऊ टेक ॥

चतुर नारि चित अधिक चिहूँटी। जहाँ पेम बाढ़ै किमि छूटी ॥
कुरला काम केरि मनुहारी। कुरल जेहिं नहिं सो न सुनारी ॥
कुरलहिं होइ कंत कर तोखू। कुरलहिं किए पाव धनि मोखू ॥
जेहिं कुरला सो सोहाग सुभागी। चंदन जैस साम कंठ लागी ॥
गेंद गोद कै जानहु लई। गेंद चाहि धनि कोमल भई ॥
दारिउ दाख बेल रस चाखा। पिय के खेल धनि जीवन राखा ॥
भएउ बसंत कली मुख खोली। बैन सोहावन कोकिल बोली ॥

पिउपिउ करत जो सूखि रहि धनि चातक की भाँति।
परी सो बूंद सीप जनु मोती होइ सुख साँति ॥

भयउ जूझ जस रावन रामा। सेज बिधाँसि बिरह संग्रामा ॥
लीन्हि लंक कंचन गढ़ टूटा। कीन्ह सिंगार अहा सब लूटा ॥
औ जोबन मैमंत बिधाँसा। बिचला बिरह जीउ जो नासा ॥
टूटे अंग अंग सब भेसा। छूटी माँग भंग भए केसा ॥
कंचुकि चूर चूर भइ तानी। टूटे हार मोति छहरानी ॥
बारी टाँड़ सलोनी टूटी। बाहूँ कँगन कलाई फूटी ॥
चंदन अंग छूट अस भेंटी। बेसरि टूटि तिलक गा मेटी ॥

पुहुप सिंगार सँवार सब जोबन नवल बसंत।
अरगज जिमि हिय लाइ कै मरगज कीन्हेउ कंत ॥

बिनय करै पदमावति बाला। सुधि न सुराही पिएउ पियाला ॥
पिउ आयसु माथे पर लेऊ। जो माँगै नइ नइ सिर देऊ ॥
पै पिय एक बचन सुनु मोरा। चाखु पिया मधु थोरै थोरा ॥
पेम सुरा सोई पै पिया। लखै न कोई कि काहू दिया ॥
चुवा दाख मधु जो एक बारा। दूसरि बार लेत बेसँभारा ॥
एक बार जो पी कै रहा। सुख जीवन सुख भोजन लहा ॥
पान फूल रस रंग करीजै। अधर अधर सौ चाखा कीजै ॥

जो तुम चाहौ सो करौ न जानौ भल मद।
जो भावै सो होइ मोहि तुम्ह पिउ चहौं आनद॥

सुनु धनि प्रेम सुरा के पिए। मरन जियन डर रहै न हिए॥
जेहि मद तेहि कहाँ ससारा। की सो धूमि रह की मतवारा॥
सो पै जान पियै जो कोई। पी न अघाई जाइ परि सोई॥
जा कह होइ बार एक लाहा। रहै न ओहि बिनु ओही चाहा॥
अरथ दरब सो देइ बहाई। की सब जाहु न जाइ पियाई॥
रातिहु दिवस रहै रस भीजा। लाभ न देख न देखै छीजा॥
भोर होत तब पुलह सरीरू। पाव खुमारी सीतल नीरू॥

एक बार भरि देहु पियाला बार बार को माँग ?।
मुहमद किमिन पुकारै ऐस दाँव जो खाँग॥

भा बिहान ऊठा रवि साई। चहुँ दिसि आई नखत तराई॥
सब निसि सेज मिला ससि सूरु। हार चीर बलया भए चूरू॥
सो धनि पान चून भइ चोली। रँग रँगीलि निरँग भइ भोली॥
जागत रैनि भएउ भिनसारा। भई अलस सोवत बेकरारा॥
अलक सुरगिनि हिरदय परी। नारँग छुव नागिनि विष भरी॥
लरी मुरी हिय हार लपेटी। सुरसरि जनु कालिंदी भेंटी॥
जनु पयाग अरइल बिचमिली। सोभित बेनी रोमावली॥

नाभी लाभुपुंजि कै कासी कुंड कहाव।
देवता करहिं कलप सिर आपुहि दोष न लाव॥

बिहँसि जगावहिं सखी सयानी। सूर उठा, उठु पदमिनि रानी॥
सुनत सूर जनु कँवल बिगासा। मधुकर आइ लीन्ह मधु बासा॥
जनहुँ भाति निसयानी बसी। अति बेसँभार फूलि जनु अरसी॥
नैन कवँल जानहुँ दुइ फूले। चितवन मोहि मिरिग जनू भूले॥
तन न सँभार केस औ चोली। चित अचेत जनु बाउरि भोली॥
भइ ससि हीन गहन अस गही। बिथुरे नखत सेज भरि रही॥
कँवल माँह जनु केसरि दीठी। जोबन हुत सो गँवाइ बईठी॥

बेलि जो राखी इंद्र कहँ पवन बास नहि दीन्ह।
लागेउ आइ भौंर तेहि कली बेधि रस लीन्ह॥

हँसि हँसि पूछहि सखी सरेखी। मानहुँ कुमुद चंद्र मुख देखी॥
रानी तुम ऐसी सुकुमारा। फूल बास तन जीव तुम्हारा॥
सहि नहि सकहु हिये पर हारु। कैसे सहिउ कत कर भारू॥
मुख अंबुज बिगसै दिन राती। सो कुँभिलान कहहु केहि भाँती॥
अधर कवँल जो सहा न पानू। कैसे सहा लाग मुख भानू॥

लंक जो पैग देत मुर जाई। कैसे रही जौ रावन राई॥
चंदन चोव पवन अस पीऊ। भइउ चित्र सम कस भा जीऊ॥
सब अरगज मरगज भएउ, लोचन बिंब सरोज।
सत्य कहहु पदमावति सखी परीं सब खोज॥
कहौं सखी आपन सत भाऊ। हौं जो कहति कस रावन राऊ॥
काँपी भौंर पुहुप पर देखे। जनु ससि गहन तैस मोहि लेखे॥
आजु मरम मैं जाना सोई। जस पीयर पिउ और न कोई॥
डर तौ लगि हिय मिला न पीऊ। भानु के दिस्टि छूटि गा सीऊ॥
जत खन भानु कीन्ह परगासू। कवँल कली मन कीन्ह बिगासू॥
हिये छोह उपना औ सीऊ। पिउ न रिसाउ लेउ बरु जीऊ॥
हुत जो अपार बिरह दुख दूखा। जनहुँ अगस्त उदय जल सूखा॥
हौं रंग बहुतै आनति लहरैं जैस समुद।
पै पिउ कै चतुराईं खसेउ न एकौ बुंद॥
करि सिंगार तापहँ का जाऊँ। ओही देखहुँ ठाँवहि ठाऊँ॥
जौ जिउ महँ तौ उहै पियारा। तनमन सौं नहि होइ निनारा॥
नैन माँह है उहै समाना। देखौं तहाँ नाहि कोउ आना॥
आपन रस आपुहि पै लेई। अधर सोइ लागे रस देई॥
हिया थार कुच कंचन लाडू। अगमन भेंट दीन्ह कै चाडू॥
हुलसी लंक लंक सौं लसी। रावन रहसि कसौटी कसी॥
जोबन सबै मिला ओहि जाई। हौं रे बीच हुत गइउ हेराई॥
जस किछु देइ धरै कहँ आपन लेइ सँभारि।
रसहि गारि तस लीन्हेसि कीन्हेसि मोहि ठँढारि॥
अनु रे छबीली तोहि छबि लागी। नैन गुलाल कंत संग जागी॥
चंप सुदर्सन अस भा सोई। सोन जरद जस केसर होई॥
बैठ भौंर कुच नारँग बारी। लागे नख उछरी रँग धारी॥
अधर अधर सौं भीज तमोरा। अलका उर मुरि मुरि गा तोरा॥
रायमुनी तुम औ रतमुहीं। अलिमुख लागि भई फुलचुहीं॥
जैस सिंगार हार सौं मिली। मालति ऐसि सदा रहु खिली॥
पुनि सिंगार करु कला नेवारी। कदम सेवती बैठु पियारी॥
कुंद कली सम बिगसी ऋतु बसंत औ फाग।
फुलहू फरहु सदा सुख औ सुख सुफल सोहाग॥
कहि यह बात सखी सब धाईं। चंपावति पहँ जाइ सुनाईं॥
आजु निरँग पदमावति बारी। जीवन जानहुँ पवन अधारी॥
तरकि तरकि गइ चँदन चोली। धरकि धरकि हिय उठै न बोली॥
अही जो कली कवँल रस पूरी। चूर चूर होइ गई सो चूरी॥

देखहु जाइ जैसि कुँभिलानी । सुनि सोहाग रानी बिहँसानी ॥
लेइ सँग सबही पदमिनि नारी । आईं जहँ पदमावति बारी ॥
आइ रूप सो सबही देखा । सोन बरन होइ रही सो रेखा ॥
कुसुम फूल जस मरदै निरंग देख सब अंग ।
चंपावति भइ वारी चूम केस औ मंग ॥
सब रनिवस बैठ चहुँ पासा । ससि मंडल जनु बैठ अकासा ॥
बोली सबै बारि कुँभिलानी । करहु सँभार देहु खँड़वानी ॥
कवँल कली कोमल रंग भीनी । अति सुकुमारि लंक कै छीनी ॥
चाँद जैस धनि हुत परगासा । सहस करा होइसूर बिगासा ॥
तेहि के झार गहन अस गही । भइ निरंग मुख जोति न रही ॥
दरब बार किछु पुन्न करेहू । औ तेहि लेइ सन्यासिहि देहू ॥
भरि कै थार नखत गज मोती । बारा कीन्ह चंद कै जोती ॥
कीन्ह अरगजा मरदन औ सखि दीन्ह नहानु ।
पुनि भइ चौदसि चाँद सो रूप गएउ छपि भानु ॥
पुनि बहु चीर आन सब छोरी । सारी कंचुकि लहर पटोरी ॥
फुँदिया और कसनिया राती । छायल बँद लाए गुजराती ॥
चिकवा चीर मघौना लोने । मोति लाग औ छापे सोने ॥
सुरँग चीर भल सिंघल दीपी । कीन्ह जो छाया धनि वह छीपी ॥
पेमचा डोरिया औ चौधारी । साम सेत पीयर हरियारी ॥
सात रंग औ चित्र चितेरे । भरि कै दीठि जाहि नहिं हेरे ॥
चँदनौता औ खरदुक भारी । बाँसपूर झिलमिल कै सारी ॥
पुनि अभरन बहु काढ़ा अनबन भाँति जराव ।
हेरि फेरि निति पहिरै जब जैसे मन भाव ॥

षट् ऋतु वर्णन

पदमावति सब सखी बुलाई। चीर पटोर हार पहिराई॥
सीस सबन्ह के सेंदुर पूरा। औ राते सब अंग सेंदूरा॥
चंदन अगर चित्र सब भरीं। नए चार जानहु अवतरीं॥
जनहुँ कवंल सँग फूलीं कूईं। जनहुँ चाँद सँग तरईं ऊईं॥
धनि पदमावति धनि तोर नाहू। जेहिं अभरन पहिरा सब काहू॥
बारह अभरन सोरह सिंगारा। तोहि सौंह नहिं ससि उजियारा॥
ससि सकलंक रहै नहिं पूजा। तू निकलंक न सरि कोइ दूजा॥
काहू बीन गहा कर काहू नाद मृदंग।
सबन्ह अनंद मनावा रहसि कूदि एक संग॥
पदमावति कह सुनहु सहेली। हौं सो कवल कुमुदिनि-बेली॥
कलस मानि हौं तेहि दिन आई। पूजा चलहु चढावहिं जाई॥
मँझ पदमावति कर जो बेवानू। जनु परभात परै लखि भानू॥
आस पास बाजत चौडोला। दुंदुभि, झाँझ, तूर, डफ, ढोला॥
एक संग सब सोंधे-भरी। देव दुवार उतरि भइ खरी॥
अपने हाथ देव नहवावा। कलस सहस इक घिरित भरावा॥
पोता मँडप अगर औ चंदन। देव भरा अरगज औ बंदन॥
कै प्रनाम आगे भई बिनय कीन्हि बहु भाँति।
रानी कहा चलहु घर सखी होति है राति॥
भइ निसि धनि जस ससि परगसी। राजै देखि भूमि फिर बसी॥
भइ कटकई सरद ससि आवा। फेरि गगन रवि चाहै छावा॥
सुनि धनि भौंह धनुक फिर फेरी। काम कटाछन्ह कोरहि हेरा॥
जानहु नाहिं पैज पिय खाँचौ। पिता सपथ हौं आजु न बाँचौ॥
कालिह न होइ रही महि रामा। आजु करहु रावन संग्रामा॥
सेन सिंगार महूँ है साजा। गज गति चाल अचंल गति धजा॥
नैन समुद औ खड़ग नासिका। सरवरि जूझ को मो सहुँ टिका॥
हौं रानी पदमावति मैं जीता रस भोग।
तू सरवरि करु तासौं जो जोगी तोहि जोग॥
हौं अस जोगि जान सब काऊ। बीर सिंगार जीते मैं दोऊ॥
उहाँ सामुहें रिपु दल माहाँ। यहाँ त काम कटक तुम्ह पाहाँ॥
उहाँ न हय चढि कै दल मडौं। इहाँ न अधर अमिय रस खडौं॥
उहाँ न खड़ग नरिंदहि मारौं। इहा त बिरह तुम्हार सघारौं॥

उहाँ त गज पेलौ होइ केहरि। इहवाँ काम कामिनी हिय हरि॥
उहाँ त लूटौं कटक खँधारू। इहाँ त जीतौं तोर सिंगारू॥
उहाँ त कुंभस्थल गज नावौं। इहाँ त कुच कलसहिं कर लावौं॥
परै बीच धरहरिया प्रेम राज को टेक।
मानहिं भोग छवौ ऋतु मिलि दूवौ होइ एक॥
प्रथम बसंत नवल ऋतु आई। सुऋतु चैत बैसाख सोहाई॥
चंदन चीर पहिरि धनि अंगा। सेंदुर दीन्ह बिहँसि भरि मंगा॥
कुसुम हार औ परिमल बासू। मलयागिरि छिरका कैलासू॥
सौंर सुपेती फूलन डासी। धनि औ कंत मिले सुख बासी॥
पिउ सँजोग धनि जोबन बारी। भौंर पुहुप सँग करहि धमारी॥
होइ फाग भलि चाँचरि जोरी। बिरह जराइ दीन्ह जस होरी॥
धनि ससि सरिस तपै पिय सूरू। नखत सिंगार होहिं सब चूरू॥
जिन घर कंता ऋतु भली आव बसंत जो निच्च।
सुख भरि आवहिं देहरै दुःख न जानै किच्च॥
ऋतु ग्रीषम है तपान न तहाँ। जेठ असाढ़ कंत घर जहाँ॥
पहिरि सुरंग चीर धनि झीना। परिमल मेद रहा तन भीना॥
पदमावति तन सिअर सुबासा। नैहर राज कंत घर पासा॥
औ बड़ जूड़ तहा सोवनारा। अगर पोति सुख तनै ओहारा॥
सेज बिछावन सौंर सुपेती। भोग बिलास करहिं सुख सेंती॥
अगर तमोर कपुर भिमसेना। चंदन चरचि लाव तन बेना॥
भा अनंद सिंघल सब कहूँ। भागवंत कहं सुख ऋतु छहूँ॥
दारिउँ दाख लेहि रस आम सदाफर डार।
हरियर तन सुअटा कर जो अस चाखन हार॥
ऋतु पावस बरसै पिउ पावा। सावन भादौं अधिक सोहावा॥
पदमावति चाहति ऋतु पाई। गगन सोहावन भूमि सोहाई॥
कोकिल बैन पाँति बग छूटी। धनि निसरी जनु बीर बहूटी॥
चमक बीजु बरसै जल सोना। दादुर मोर सबद सुठि लोना॥
रँग राती पीतम सँग जागी। गरजे गगन चौंकि गर लागी॥
सीतल बूँद ऊँच चौपारा। हरियर सब देखाइ संसारा॥
हरियर भूमि कुसुंभी चोला। औ धनि पिउ सँग रचा हिंडोला॥
पवन झकोरे होइ हरष लागे सीतल बास।
धनि जानै यह पवन है पवन सो अपने पास॥
आइ सरद ऋतु अधिक पियारी। आसिन कातिक ऋतु उजियारी॥
पदमावति भइ पुनिउँ कला। चौदसि चाँद उई सिंघला॥
सोरह कला सिंगार बनावा। नखत भरा सूरज ससि पावा॥

भा निरमल सब धरति अकासू। सेज सँवारि कीन्ह फुल-बासू॥
सेत बिछावन औ उजियारी। हँसि हँसि मिलहिं पुरुष औ नारी॥
सोन-फूल भइ पुहुमी फूली। पिय धनि सौं, धनि पिय सौं भूली॥
चख अंजन दइ खंजन देखावा। होइ सारस जोरी रस पावा॥

एहि ऋतु कंता पास जेहि, सुख तेहि के हिय माँह।
धनि हँसि लागै पिउ गरै, धनि-गर पिउ कै बाँह॥

ऋतु हेमंत संग पिएउ पियाला। अगहन पूस सीत सुख-काला॥
धनि औ पिउ महँ सीउ सोहागा। दुहुँन्ह अंग एकै मिलि लागा॥
मन सौं मन, तन सौं तन गहा। हिय सौं हिय बिच हार न रहा॥
जानहु चंदन लागेउ अंगा। चंदन रहै न पावै संगा॥
भोग करहिं सुख राजा रानी। उन्ह लेखे सब सिस्टि जुड़ानी॥
जूझ दुवौ जोवन सौं लागा। बिचहुँत सीउ जीउ लेइ भागा॥
दुइ घट मिलि एकै होइ जाहीं। ऐस मिलहिं तबहूँ न अघाहीं॥

हंसा केलि करहिं जिमि, खूँदहिं कुरलहिं दोउ।
सीउ पुकारि कै पार भा, जस चकई क बिछोउ॥

आइ सिसर ऋतु, तहाँ न सीऊ। जहाँ माघ फागुन घर पीऊ॥
सौंर सुपेती मंदिर राती। दगल चीर पहिरहिं बहु भाँती॥
घर घर सिंघल होइ सुख भोजू। रहा न कतहुँ दुःख कर खोजू॥
जहँ धनि पुरुष सीउ नहिं लागा। जानहुँ काग देखि सर भागा॥
जाइ इंद्र सौं कीन्ह पुकारा। हौं पदमावति देस निसारा॥
एहि ऋतु सदा संग महँ सोवा। अब दरसन तें मोर बिछ़ोवा॥
अब हँसि कै ससि सूरहि भेंटा। रहा जो सीउ बीच सो मेटा॥

भएउ इंद्र कर आयसु, बड़ सताव यह सोइ।
कबहुँ काहु के पौर भइ, कबहुँ काहु के होइ॥

गोरा-बादल-युद्ध खंड

मतैं बैठि बादल औ गोरा । सो मत कीज परैं नहिं भोरा ॥
पुरुष न करहिं नारि-मति काँची । जस नौशाबा कीन्ह न बाँची ॥
परा हाथ इसकंदर बैरी । सो कित छोड़ि कै भई बँदेरी ॥
सुबुधि सौं ससा सिंघ कहँ मारा । कुबुधि सिंघ कूआँ परि हारा ॥
देवहि छरा आइ अस आँटी । सज्जन कंचन दुरजन माटी ॥
कंचन जुरै भए दस खंडा । फूटि न मिलै काँच कर भंडा ॥
जस तुरकन्ह राजा छर साजा । तस हम साजि छोड़ावहि राजा ॥

पुरुष तहाँ पै करै छर, जहँ बर किए न आँट ।
जहाँ फूल तह फूल है, जहाँ काँट तहँ काँट ॥

सोरह सौ चंडोल सँवारे । कुँवर सजोइल कै बैठारे ॥
पदमावति कर सजा बिवानू । बैठ लोहार न जानै भानू ॥
रचि बिवान सो साजि सँवारा । चहुँ दिसि चँवर करहि सब ढारा ॥
साजि सबै चंडोल चलाए । सुरँग ओहार, मोति बहु लाए ॥
भए सँग गोरा बादल बली । कहत चले पदमावति चली ॥
हीरा रतन पदारथ झूलहिं । देखि बिवान देवता भूलहि ॥
सोरह सै संग चलीं सहेली । कँवल न रहा, और को बेली ? ॥

राजहि चलीं छोड़ावै, तहँ रानी होइ ओल ।
तीस सहस तुरि खिचीं, सँग सोरह सै चंडोल ॥

राजा बँदि जेहि के सौंपना । गा गोरा तेहि पहँ अगमना ॥
टका लाख दस दीन्ह अँकोरा । बिनती कीन्हि पायँ गहि गोरा ॥
बिनवा बादसाह सौं जाई । अब रानी पदमावति आई ॥
बिनती करै आइ हौं दिल्ली । चितउर कै मोंहि स्यो है किल्ली ॥
बिनती करै जहाँ है पूजी । सब भँडार कै मोहि स्यो कूँजी ॥
एक घरी जौ अज्ञा पावौं । राजहि सौंपि मँदिर महँ आवौं ॥
तब रखवार गए सुलतानी । देखि अँकोर भए जस पानी ॥

लीन्ह अँकोर हाथ जेहि, जीउ दीन्ह तेहि हाथ ।
जहाँ चलावै तहँ चलै, फेरे फिरै न माथ ॥

लोभ पाप कै नदी अँकोरा । सत्त न रहै हाथ जौ बोरा ॥
जहँ अँकोर तहँ नीक न राजू । ठाकुर केर बिनासै काजू ॥
भा जिउ घिउ रखवारन्ह केरा । दरब-लोभ चंडोल न हेरा ॥

जाइ साह आगे सिर नावा। ए जगसूर ! चाँद चलि आवा॥
जावत हैं सब नखत तराईं। सोरह सै चडाल सो आई॥
चितउर जेति राज कै पूँजी। लेइ सो आइ पदमावति कूँजी॥
बिनती करै जोरि कर खरी। लेइ सौंपौं राजा एक घरी॥
इहाँ उहाँ कर स्वामी, दुओ जगत मोहि आस।
पहिले दरस देखावहु, तौ पठवहु कैलास॥
आज्ञा भई, जाय एक घरी। छूँछि जो घरी फेरि विधि भरी॥
चलि बिवान राजा पहँ आवा। सँग चडोल जगत सब छावा॥
पदमावति के भेस लोहारू। निकसि काटि बंदि कीन्ह जोहारू॥
उठा कोपि जस छूटा राजा। चढा तुरग, सिंघ अस गाजा॥
गोरा बादल खाँडै काढे। निकसि कुँवर चढ़ि चढि भए ठाढ़े॥
तीख तुरग गगन सिर लागा। केहुँ जुगुति करि टेकी बागा॥
जो जिउ ऊपर खडग सँभारा। मरनहार सो सहसन्ह मारा॥
भई पुकार साह सौं, ससि औ नखत सो नाहिं।
छर कै गहन गरासा, गहन गरासे जाहिं॥
लेइ राजा चितउर कहँ चले। छूटेउ सिंघ, मिरिग खलभले॥
चढ़ा साहि, चढि लाग गोहारी। कटक असूझ परी जग कारी॥
फिर गोरा बादल सौं कहा। गहन छूटि पुनि चाहै गहा॥
चहुँ दिसि आवै लोपत भानू। अब इहै गोइ, इहै मैदानू॥
तुइ अब राजहि लेइ चलु गोरा। हौं अब उलटि जुरौं भा जोरा॥
वह चौगान तुरुक कस खेला। होइ खेलार रन जुरौं अकेला॥
तौ पावौं बादल अस नाऊँ। जौ मैदान गोइ लेइ जाऊँ॥
आजु खडग चौगान गहि, करौं सीस-रिपु गोइ।
खेलौं सौंह साह सौं, हाल जगत महँ होइ॥
तब अगमन होइ गोरा मिला। तुइ राजहि लेइ चलु, बादला !॥
पिता मरै जो सँकरे साथा। मीचु न देइ पूत के माथा॥
मैं अब आउ भरी औ भूँजी। का पछिताव आउ जौ पूजी ?॥
बहुतन्ह मारि मरौं जौ जूझौं। तुम जिनि रोएहु तौ मन बूझौं॥
कुँवर सहस सँग गोरा लीन्हे। और बीर बादल सँग कीन्हे॥
गोरहि समदि मेघ अस गाजा। चला लिए आगे करि राजा॥
गोरा उलटि खेत भा ठाढ़ा। पुरुष देखि चाव मन बाढ़ा॥
आव कटक सुलतानी, गगन छपा मसि माँझ।
परति आव जग कारी होति आव दिन साँझ॥
होइ मैदान परी अब गोई। खेल हार दहुँ का करि होई॥
जोबन-तुरी चढ़ी जो रानी। चली जीति यह खेल सयानी॥

फटि चौगान, गोइ कुच साजो। हिय मैदान चली लेइ बाजा ॥
हाल सो करै गोइ लेइ बाढा। कूरी दुवौ पैज कै काढा ॥
भइ पहार वै दूनौ कूरा। दिस्टि नियर पहुँचत सुठि दूरा ॥
ठाढ़ बान अस जानहु दोऊ। सालै हिये ग्रन काढै काऊ ॥
सालहिं हिय, न जाहिं सहि ठाढे। सालहिं परै चहै अनवाढे ॥
मुहमद खेल प्रेम कर, कठिन चौगान।
सीस न दीजै गोइ जिमि, हाल न होइ मैदान।

फिरि आगे गोरा तब हाँका। खेलौं करौं आजु रन-साका ॥
हौं कहिए धौलागिरि गोरा। टरौं न टारे अंग न मोरा ॥
सोहिल जैस गगन उपराहीं। मेघ-घटा मोहि देखि बिलाहीं ॥
सहसौ सीस सेस सम लेखौं। सहसौ नैन इन्द्र सम देखौं ॥
चारिउ भुजा चतुरभुज आजू। कस न रहा और को साजू? ॥
हौं होइ भीम आजु रन गाजा। पाछे घालि डुँगवै राजा ॥
होइ हनुवँत जमकातर ढाहौं। आजु स्वामि साँकरे निबाहौं ॥
होइ नल नील आजु हौं, देहुँ हमुद महँ मेंड़।
कटक साह कर टेकौं, होइ सुमेरु रन बेंड ॥
ओनई घटा चहूँ दिसि आई। छूटहिं बान मेघ-झरि लाई ॥
डोलै नाहिं देव जस आदी। पहुँचे आइ तुरुक सब बादी ॥
हाथन्ह गहे खड़ग हरद्वानी। चमकहिं सेल बीजु कै बानी ॥
सोझ बान जस आवहिं गाजा। बासुकि डरै सीस जनु बाजा ॥
नेजा उठे डरै मन इंदू। आइ न बाज जानि कै हिंदू ॥
गोरै साथ लीन्ह सब साथी। जस मैमत सूँड बिनु हाथी ॥
सब मिलि पहिलि उठौनी कीन्ही। आवत आइ हाँक रन दीन्ही ॥
रुंड मुंड अब टूटहिं, स्यो बखतर औ कूँड।
तुरय होहिं बिनु काँधे, हस्ति होहिं बिनु सूँड ॥
ओनवत आइ सेन सुलतानी। जानहुँ परलय आव तुलानी ॥
लोहे सेन सूझ सब कारी। तिल एक कहूँ न सूझ उघारी ॥
खड़ग फोलाद तुरुक सब काढ़े। धरे बीजु अस चमकहिं ठाढ़े ॥
पीलवान गज पेले बाँके। जानहुँ काल करहिं दुइ फाँके ॥
जनु जमकात करहिं सब भवाँ। जिउ लेइ चहहिं सरग अपसवाँ ॥
सेल सरप जनु चाहहिं डसा। लेहिं काढ़ि जिउ मुख बिप-बसा ॥
तिन्ह सामुहँ गोरा रन कोपा। अंगद सरिस पावँ भुइँ रोपा ॥
सुपुरुष भागि न जानै, भुइँ जौ फिरि फिरि लेइ।
सूर गहे दोऊ कर स्वामि काज जिउ देइ ॥

भइ बगमेल, सेल घनघोरा। औ गज-मेल; अकेल सो गोरा ॥
सहस कुँवर सहसौ सत बाँधा। भार-पहार जूझ कर काँधा ॥
लगे मरै गोरा के आगे। बाग न मोर घाव मुख लागे ॥
जैस पतंग आगि धसि लेई। एक मुवै, दूसर जिउ देई ॥
टूटहिं सीस, अधर धर मारै। लोटहिं कबंधहिं कबंध निरारै ॥
कोई परहिं रुहिर होइ राते। कोई घायल घूमहिं माते ॥
कोई खुरखेह गए भरि भोगी। भसम चढ़ाइ परे होइ जोगी ॥

घरी एक भारत भा, भा असवारन्ह मेल।
जूझि कुँवर सब निबरे, गोरा रहा अकेल ॥

गोरै देख साथि सब जूझा। आपन काल नियर भा बूझा ॥
कोपि सिंघ सामुहँ रन मेला। लाखन्ह सौं नहिं मरै अकेला ॥
लेइ हाँकि हस्तिन्ह कै ठटा। जैसे पवन बिदारै घटा ॥
जेहि सिर देइ कोपि करवारू। स्यों घोड़े टूटै असवारू ॥
लोटहिं सीस कबंध निनारे। माठ मजीठ जनहुँ रन ढारे ॥
खेलि फाग सेंदुर छिरकावा। चाँचरि खेलि आगि जनु लावा ॥
हस्ती घोड़ धाइ जो धूका। ताहि कीन्ह सो रुहिर भभूका ॥

भइ अग्या सुलतानी, "बेगि करहु एहि हाथ।
रतन जात है आगे, लिए पदारथ साथ" ॥

सबै कटक मिलि गोरहि छेका। गूँजत सिंघ जाइ नहिं टेका ॥
जेहि दिसि उठै सोइ जनु खावा। पलटि सिंघ तेहि ठावँ न आवा ॥
तुरुक बोलावहिं बोलै बाहाँ। गोरै मीचु धरी जिउ माहाँ ॥
मुए पुनि जूझि जाज जगदेऊ। जियत न रहा जगत महँ केऊ ॥
जिनि जानहु गोरा सो अकेला। सिंघ के मोंछ हाथ को मेला ? ॥
सिंघ जियत नहिं आपु धरावा। मुए पाछ कोई घिसियावा ॥
करै सिंघ मुख-सौंहहिं दीठी। जौ लगि जियै देइ नहिं पीठी ॥

रतनसेन जो बाँधा, मसि गोरा के गात।
जौ लगि रुहिर न धोवौं तौ लगि होइ न रात ॥

गरजा बीर सिंघ चढ़ि गाजा। आइ सौंह गोरा सौं बाजा ॥
पहलवान सो बखाना बली। मदद मीर हमजा औ अली ॥
लँधउर धरा देव जस आदी। और को बर बाँधै को बादी ? ॥
मदद अयूब सीस चढ़ि कोपे। महामाल जेइ नाव अलोपे ॥
औ ताया सालार सो आए। जेइ कौरव पंडव पिंड पाए ॥
पहुँचा आइ सिंघ असवारू। जहाँ सिंघ गोरा बरियारू ॥
मारेसि साँग पेट महँ धसी। काढ़ेसि हुमुकि आँति भुइँ खसी ॥

भाँट कहा धनि गोरा, तू भा रावन राव ।
आँति समेटि बाँधि कै, तुरय देत है पाव ॥
कहेसि अंत भा अब भुइँ परना । अन्त न खसे खेह सिर भरना ॥
कहि न गरजि सिंघ अस धावा । सरजा सारदूल पहँ आवा ॥
सरजै लीन्ह साँग पर, घाऊ । परा खड्ग जनु परा निहाऊ ॥
बज्र न साँग बज्र कै डाँड़ा । उठी आगि तस बाजा खाँड़ा ॥
जानहु बज्र बज्र सौं बाजा । सब ही कहा परी अब गाजा ॥
दूसर खड्ग कंध पर दीन्हा । सरजै ओहि ओड़न पर लीन्हा ॥
तीसर खड्ग कूँड़ पर लावा । काँध गुरुज हुत घाव न आवा ॥
तस मारा हठि गोरै, उठी बज्र कै आगि ।
कोई नियरे नहिं आवै, सिंघ सदूरहि लागि ॥
तब सरजा कोपा बरिबंडा । जानहु सदूर केर भुजदंडा ॥
कोपि गरजि मारेसि तस बाजा । जानहु परी टूटि सिर गाजा ॥
ठाँठर टूट फूट सिर तासू । स्यो सुमेरु जनु टूट अकासू ॥
धमकि उठा सब सरग पतारू । फिरि गइ दीठि फिरा संसारू ॥
भइ परलय अस सबही जाना । काढा खड्ग सरग नियराना ॥
तस मारेसि स्यों घोड़ै काटा । धरतीं फाटि सेस-फन फाटा ॥
जौ अति सिंह बरी होइ आई । सारदूल सौं कौनि बड़ाई ? ॥
गोरा परा खेत महँ, सुर पहुँचावा पान ।
बादल लेइगा राजा, लेइ चितउर नियरान ॥

कवि नूरमहम्मद कृत
इंद्रावती

स्तुति-खंड

धन्य आप जग-सिरजन हारा। जिन बिन खंभ अकास सँवारा ॥
दोऊ जग को आपुहि राजा। राज दोऊ जग को तेहि छाजा ॥
दीन्हा नैन पंथ पहिचानो। दीन्हा रसना ताहि बखानों ॥
बात सुनै कहँ सरवन दीन्हा। दीन्हा बुद्धि ज्ञान तेहि चीन्हा ॥
गगन कि सोभा कीन्हे सितारा। धरती सोभा मनुष सवारा ॥

आप गुपुत औ परगट, आप आद औ अंत।
आप सुनै औ देखै, कीन्ह मनुष बुधवंत ॥

अहइ अकेल सो सिरजन हारा। जानत परगट गुपुत हमारा ॥
कीन्ह गगन रवि ससि महि घेरा। कोउ नाहीं जोरी तेही केरा ॥
कीन्हा राति मिलै सुख तासों। कीन्हा दिन कारज है जासों ॥
घन सो महि पर भेजत नीरा। फलुअत सूखी भूमि सरीरा ॥
सब बिलाय जाइहि एक बारा। रहै तेहिक मुख रवि उँजियारा ॥

है स्त्रोता औ दिस्टा, तोहि सम कोउ न आहिं।
जो कुछ है महि गगन महँ, सब सुमिरत है ताहि ॥

अरे दोऊ जग के करतारा। कित के सकउँ बखान तुम्हारा ॥
रसना होइ रोम सब मोहीं। तबहूँ बरन न पारउँ तोहीं ॥
है अपार सागर भौ केरा। मोहिं करनी को नाव न बेरा ॥
कै किरपा ओहि पार उतारौ। दया दृष्टि मोहि ऊपर डारौ ॥
है हमकहँ आलम्ब तुम्हारी। तोहि दाया सों मुकुत हमारी ॥

है मग बहुत जगत महँ, तिन मग की नहिं चाव ॥
आमन पंथ देखावहु, राखौं तापर पाँव ॥

सुमिरों चेत धरैं मन ठाऊँ। अरबी नबी मुहम्मद नाऊँ ॥
जा कहँ करता दरस देखाएउ। कै किरपा सब भेद बताएउ ॥
जेहिक बखान अहै लौ लाका। ताहि बखानत दोउ जग थाका ॥
चार आर चारिउ जस तारे। दीन गगन ऊपर उजियारे ॥
अबूबकर औ उमर बखानौं। उस्मा बहुरि अली कहँ जानौं ॥

अहदहुत अहमद भएउ, एक जोत दुइ नाउँ।
भएउ जगत के कारने, परेउ मोहम्मद नाउँ ॥

कहौं मोहम्मद साह बखानू। है सूरज दिहली सुलतानू ॥
धरम-पन्थ जग जेइ बीच चलावा। निबरन सबरै सों दुख पावा ॥

पहिरे सलातीनु जग केरे। आए मुहोंस बने हैं चेरे ॥
उहै साह नित धरम बढ़ावै। जेहि पहरौं मानुष सुख पावै ॥
सब काहू पर दाया धरई। धरम सहित सुलतानी करई ॥
धरम भलो सुलतान कहँ, धरम करै जो साह ।
सुख पावै मानुष सवै, सबको होइ निबाह ॥
कवि अस्थान कीन्ह जेहि ठाऊँ। सो वह ठाऊँ सबरहद नाऊँ ॥
पूरब दिस कइलास समान। अहै नसीरुद्दीं कोन थान ॥
है भल जग महँ पथिक रहना। लेहु इहासो आगम लहना ॥
जग औ आपुहिं कस पहिचानौं। तरिवर और बटोहिय जानौं ॥
चला जात जस होइ बटोही। आइ छँहाइ बिरिछ तर वोही ॥
जबा जुडाइ तरिवरतर, धरै पंथ पर पाँव ।
बास हमार जगत महँ, बूझो तेही सुभाव ॥
आज रहन यह चाँद न ऊआ। आनन्द हरन जगत कर हूआ ॥
साह करबला को दुख सोगू। समुझि समुझि रोवै सब लोगू ॥
रोएउ गमन सेंदुरी नाहीं। रकत आँस है मुख उपराहीं ॥
रोवैं बादशाह जग साईं। हम ना रहे करबला ठाईं ॥
देतेउँ सीस दीनपति कारन। करतेउँ जिउ तन मन सब वारन ॥
रोवैं अच्छर सीस धुनि, सल्स सबिल भाखार ।
आज छिपान जगत रवि, जगत भएउ अँधियार ॥
वावैला प्यासा गा मारा। आल रसूल बतूल पियारा ॥
उठा चहूं दिस तें वावैला। महि सिर परेउ सोग को सैला ॥
पहिरेउ गगन मातमी बागा। परेउ चद के हियरे दागा ॥
औ ससि कहूँ दुख राहु गराहा। सूरज कहँ उपनेउ उर दाहा ॥
इनके बीच हसन का प्यारा। सेहरा लीन्ह रकत के धारा ॥
नूर मोहम्मद जीभ तें, कहैं न मातम होइ ।
जिय सों कहूँ मातम कथा, मन आखिन सो रोइ ॥
मन इगसों एक रात मझारा। सूझि परा मोहिं सब ससारा ॥
देखेउँ एक नीक फुलवारी। देखेउँ तहाँ पुरुष अउ नारी ॥
दोउ मुख सोभा बरनि न आई। चद सुरुज उतरेउ भुइँ आई ॥
तपी एक देखेउँ तेहि ठाऊँ। पूछेउँ तासों तिन कर नाऊँ ॥
कहा अहैं राजा अउ रानी। इंद्रवति औ कुंअो गेयानी ॥
आगमपुर इंद्रावती, कुँवर कलिंजर राय ।
प्रेम हुते दोऊ कहँ, दीन्हा अलख मिलाय ॥
सरब कहानी दीन्ह सुनाई। कहा दया सेतीं हो भाई ॥

इंद्रावति औ कुँवर कहानी। कहु भाषा मों हो कवि ज्ञानी ॥
गाढ़ी गांठ परै जहा तोहीं। छुटि जाय सुमिरेहु तुम मोही ॥
आज्ञा दीन्हा तपिय सेयाना। मन जिउ सों आज्ञा मैं माना ॥
होत भोर लिखनी मैं लीन्हा। कहै लिखै ऊपर चित दीन्हा ॥
सन इग्यारह सौ रहेउ, सत्तावन उपराइ।
कहै लगेउ पोथी तबै, पाय तपी कर थाइ ॥

कवि है नूर मोहम्मद नाऊँ। है पछलग सब को जग ठाऊँ ॥
सुनि कविजन खेतन सों बाला। करै चहत खरिहान बिसाला ॥
है कवि समै नई तरुनाई। छूट न अबहीं कवि लरिकाई ॥
जाके हिए लरिक बुधि होई। बहुतै चूक कहत है सोई ॥
बिनवत कविजन कहँ कर जोरी। है थोरी बुधि पूंजिय मेरी ॥
चूका देखि सम्हारि कै, जोरेहु अच्छर टूट।
दाया कर मोहि दीन पर, दोस न लायहु कूट ॥
हौ हीना बिद्या बुधि सेतीं। गरब गुमान करौं केहि नेतीं ॥
हौं मैं लरिकाई को चेला। कहौं न पोथी खेलउं खेला ॥
गुरुजन यह सों बिनतिय मेरी। कोप न मानहिं भौंह सिकोरी ॥
दोस बहुत खेलत महँ होई। दाया करेहु न कोपेहु कोई ॥
दोस करै जो छोटा आही। मया करै गुरजन कहँ चाही ॥
मोहि बिवेक कछु नाहीं, नहिं बिद्या बल आहि।
खेलत हौं यह खेल एक, दिष्टा देइ निबाहि ॥
एक रात सपना मैं देखा। सिंधु तीर वह तपिय सरेखा ॥
अहै ठाढ़ मोहि लीन्ह बुलाई। कहेसि कि सिंधु में बूड़हु भाई ॥
असा छाड़ पोढा के हीया। मोती काढ़हु होइ मरजीया ॥
ससि मोती को हार सवारहु। इंद्रावति की गीउ महँ डारहु ॥
लै मोती दोउ हाथन माहा। भारू रतन तीर उपराहा ॥
अस सपना मैं देखेउँ, जागि उठेउँ अकुलाइ।
बहुत बूझ संचारेउँ, सपन न बूझा जाइ ॥
चित औ चेत बहुत मैं धरा। तब वह सपन बूझि मोहिं परा ॥
सिंधु समा मन को पहिचानेउ। मोती समा बचन कहँ जानेउं ॥
हार गुहन बूझेउँ चउपाई। रतन जीव कहं रतन बड़ाई ॥
मनुष सुबचन कहे सों लहई। बचन सरस मोती सों अहई ॥
बचन एक करतार निसारा। भा तेहि बचन हुते संसारा ॥
बचन हसावै मनुष्य कहं, बचन रोवावै ताहि।
बचनहु तें यह जगत मों, कीरत परगट आहि ॥

है मन फुलवारी हो भाई। फूल समों यह बचन सोहाई॥
बचन अरथ है बास समाना। कवि स्त्रोता है भवर सयाना॥
अचरज ऐस फूल पर अहई। बारी माँह कली नित रहई॥
जब वह फूलें तजत फुलवारी। बिकसत बास देत अधिकारी॥
जुगजुग रहत न तनु कुम्हिलाई। दिन दिन बास बढत अधिकाई॥
मन चाहत सों अस पुहुप, आज चुनौं भरि गोद।
हार गूथि के पहिरेउँ, मनमों बाढै मोद॥
हिया कहा दुइ हार सवारहु। रवि औ कमल गले मह डारहु॥
बुद्धि कहा दुइ हार बनावहु। मालति मधुकर कह पहिरावहु॥
तेहि पल तपसी दरस देखाएउ। मोंहि संग एहि बात सुनाएउ॥
राजकुँअर रानी इंद्रावती। हैं रवि कमल औ भँवर मालती॥
चुनि परसन दुइ हार सवारहु। तिनके ग्रीव बीच लै डारहु॥
अज्ञा मान तपी कर, चलेउँ जहां फुलवार।
खुला न पायउ द्वार को, मालिहि दिएउ पुकार॥
आएउ आली सुनत पुकारा। खोलेउ फुलवारी का द्वारा॥
पैठेउँ फुलवारी महँ जाई। रहसेउँ देखत फूल निकाई॥
तन पलुहा बारी की नाई। मन भा फुलवारी तेहि ठाई॥
माली कहा जएत मन होई। लेहु फूल नहिं बरजत कोई॥
जब आज्ञा मालिहि सों पाएउ। तब मैं फूल चुनै पर आएउ॥
किरपा सों बारी महँ, माली दीन्हा साथ।
आड़े कोउ न आएउ, मैं फुलवारी हाथ॥
रहत न आगर रूप छिपाना। आपुहिं परगट करै निदाना॥
जो रस रूप सों बाधहु द्वारा। जाइ झरोखे चितवै प्यारा॥
सिरजनहार छिपा ना रहा। आपुहि फेर चिन्हावै चहा॥
तब यह जग करतार सवारा। चीन्ह पड़ा वह सिरजनहारा॥
मानुष फूल सुरस सी नाऊँ। धरि धरि भा परगट सब ठाऊँ॥
आपुहि भोगि रूप धरि, जगमों मानत भोग।
आपुहि जोगी भेस होइ, निस दिन साधत जोग॥
अलख प्रेम कारन जग कीन्हा। धन जो सीस प्रेम महँ दीन्हा॥
जाना जेहिक प्रेम महँ हीया। मरै न कबहूं सो मर जीया॥
प्रेम खेत है यह दुनियाई। प्रेमी पुरुष करत बोवाई॥
जीवन जाग प्रेम को कहई। सोवन मीचु वो प्रेमी कहई॥
आग तपन, जल चाल समूझो। पुनि टिकान मॉटी कहँ बूझो॥
हो, प्रेमी है प्रेम को, चचलताइ बाय।
जा मन लागा प्रेम रस, भा दोउ जग को राय॥

स्वप्न खंड कुँवर

एक रात महँ कुर सरेखा। सपच बीच दर्पन एक देखा॥
रहा अमल दरपन उजियारा। जिव मुख को निर्खावन हारा॥
दरपन माँ एक सुदर नारी। देखहु चंदहु ते उजियारी॥
रही तँइस सुंदर जसे चही। दरपन देह बीच जिउ रही॥
रही न तेहि संग सखीय सहेली। रहिउ मुकुर मह आप अकेली॥
ससि वदनी मनु रवि रही, रहा मुकुर जिमि धूप।
तेहिं रूपवन्ती रूप सों, दरपन पाएउ रूप॥
जागी भोर कुँअर कहँ पावा। सपन चित में देवस गँवावा॥
दुसरें रात कस्तूरिय भारा। तासों सुगध कीन्ह ससारा॥
तेहि त्रिजमा राग सरेखा। पहिली रात कि मूरत देखा॥
रहेउ न मूरत दरपन माहीं। दरपन बहुत रहे अगुवाही॥
कालिंजरी निर्प नर नाहाँ। तासो बदन देखा सप माहा॥
जस दर्पन निर्मल रहे, तस देखा अधिकार।
दरसन एकै नारि को, सब आदरस मझार॥
पहिली रात महीप सरेखा। मुख पर लट बिथुरी नहिं देखा॥
दूसर रात महीपति ज्ञानी। देखा मुख पर लट छितरानी॥
देखि बदन लट सुदरताई। सपने बीच रहा मुरछाई॥
मोहि अचरज हिरदय मों आहीं। कैसे मुकुर न देखा ताही॥
यह सपने को को पतिआई। मुकुर सौंह बिनु देखि न जाई॥
यह सपने की बात पर, अचरज करै न कोइ।
सपनें मोंसी होत है, जो सौतुके न होई॥
राजा देखि सपन अस जागा। लागा जीव प्रेम की तागा॥
तागा पाइ प्रेम को राजा। मा प्रेमी छाड़ा सुखु काजा॥
का जाने सुखभोग भुलाना। प्रेम मरम जब लग अनजाना॥
जाना जात प्रेम तब भाई। जब मन भीतर प्रेम समाई॥
कालिंजर को राय सयाना। वह नारी के रूप भुलाना॥
दृग सों बिछुरी मूरत, हिदय आइ समान।
जब हिय बीच समान, हरिगै चिंता आन॥
राजै राज काज तज दीन्हा। चिंता वह मूरत की लीन्हा॥
काहै कहाँ वह चन्द लिलाटी। बरु तेहि आगे है ससि घाटी॥
कहा धनुक भौंहीं वह नारी। बरुनी बान चोख जेइ मारी॥

कहवा मृग नैनी वह बाला। प्रेमद दीन्ह कीन्ह मतवाला ॥
होतेउँ दरपन ता मुख केरा। मो महँ ता मुख लेत बसेरा ॥
राजकुंअर भा बाउर, छाड़ेउ सुख रस भोग।
परे सकल सह मों, कालिजर के लोग ॥
राज कुँअर छाड़ा सुख भोगू। असुखी भए नगर के लोगू ॥
दस सघातिय राजा केरे। रहे सो रहे आठ जस चेरे ॥
परै चिंत मो आठ सँघाती। आठों कहँ दिन भा जस राती ॥
काहु बात सुनवत जी दीन्हा। कोउ कौतुक पर दिष्ट न कीन्हा ॥
रस सुगध कह छाड़ा काहू। आठो परे बहुत दुख माहूँ ॥
राजा के अनमन भए, अनमन भा सब कोइ ॥
माँगहिं सब करतार सों, मोंद कुअर कहं होइ ॥
आठों मों मत्री एक रहा। राजा मानै ताकर कहा ॥
बुद्धसेन रह ताको नाऊँ। जन्म भूमि तेहि मनपुर ठाऊँ ॥
तेहि बिनु सात मित्र अवटाहीं। ताहि मिले सातो सुधराहीं ॥
सुख छाड़ा सब राय सयाना। बुद्ध सेन मन ससै माना ॥
कहा कुअर सो अहो नरेसू। दिवस चार सों कस तोहि मेसू ॥
औरै तन मन देखऊ, औरै चिंता चाव।
सुख अनन्द को छाड़ेऊ, कहौ कुँअर केहि भाव ॥
कहा बुद्ध सों राय सरेखा। रानी एक सपन मैं देखा ॥
पहिल रात अस देखउँ ज्ञानी। दरपन बीच रही वह रानी ॥
दूसर निस बहु दरपन देखेउँ। सब दरपन ता रूप परेखेउँ ॥
सोवत रहिउ नयन के नियरे। जागत आइ समानिउ हियरें ॥
अमल रूप वह नारी केरा। मन हरि लीन्ह कीन्ह मोहिं चेरा ॥
तामुख दुति के आगें, अहे सूर ससि छाँह।
काहु नृप की है सुता, जेहि देखेउँ निस माँह ॥
सुनि बुद्ध राजा कहँ समुझावा। तोहि सपने महँ कौतुक आवा ॥
सपन रूप पर का बिसवासू। तज मन चिन्त बढाव हुलासू ॥
कुअर कहा यह सपन न होई। मोहिं लेखे सैतुक है सोई ॥
दरपन मों दरपन मुख ताको। भा जिउ लाग मुकुर सोभा को ॥
मोहि नृप वह प्रान पियारी। करै चहत है दरस भिखारी ॥
बिछुरी प्यारी नैन सों, हियरें आइ समान।
हिया हाथ मों कीन्हा, भएउ परान परान ॥
मत्री मरम कुंअर को पाएउ। गुनी चितेरा एक बोलाएउ ॥
अस गुनवन्त चितेरा रहा। जल पर चित्र बनावे चहा ॥
बुद्ध कहा लिखि आनु चितेरा। सुघर रूप इस्तिरीन केरा ॥

निर्प सपने एक नारिय देखा। रीझा तापर निर्प सरेखा ॥
होइ अहेर फाद मो आवै। देखे कुंअर बोध मन पावै ॥
अहु नारिन की मूरते, लिखा चितेरा जाइ।
बुद्ध बाइ सो राजही, सकल देखाएउ आइ ॥
देखि सकल राजै मुख फेरा। कहा कहा वह अरे चितेरा ॥
कहा लिखै आवै वह प्यारी। सपने बीच बान जेइँ मारी ॥
ताको मूरत को लिखि पारै। दिर्ग बान बरुनी को मारै ॥
अधर तेहिक जो लिखै चितेरा। मीठ होइ लिखनी नहि फेरा ॥
सुनि अस बात चितेरा हँसा। कहा प्रेम महिपति मन बसा ॥
कहि बुध साथ चितेरा, गएउ सदन कहँ सोइ।
पहिले प्रेम न गाढा, अत गाढ पुनि होइ ॥
आना बुद्ध मनुष दस ज्ञानी। राजा नियरें कहै कहानी ॥
रूप बखान करैं बहुतेरा। होइ फिरै मन राजा केरा ॥
राजा के मन बोध न होई। सपन कहानी कहेउ न कोई ॥
जा हग लागेउ जो रँग नीका। नीको वही आन रँग फीका ॥
जा मन आइ बसै जो कोई। ता कहँ पीन पियार सोई ॥
रचिक ताहि न भावै, कहै कहानी जेत।
परम दवात कहैं जत, दुखद होइ तेहि तेत ॥
राजा की फुलवारिय जहाँ। लीन्ह बसेरा तपी एक तहाँ ॥
मौन रहा गहि तपिय सयाना। सकत तिहिक सब काहुव जाना ॥
रात होत मन मों धरि आसा। गएउ कुँअर तापस के पासा ॥
राजा तपी चरन गहि परा। तापस हाथ पीठ पर धरा ॥
राजहि दाया सहित उठावा। मुख सों बहुत असीस सुनावा ॥
तपी कहा केहि कारन, आवन भएउ तोहार।
राजैं सपन सुनावा, चाहा सपन बिचार ॥
तपी कहा अस पार न मोहीं। सपन बिचार सुनावउ तोही ॥
पै तेहि कारन राजा ज्ञानीं। सत्त लिहैं एक कहउ कहानी ॥
होइ सुनत उपजय तेहि हियरें। सत्त सनेह होसि तेहि नियरें ॥
कुंअर पाय गहि अस्तुति गावा। दरसन पाइ बोध मे पावा ॥
जो बच भाषै अधर तुम्हारा। उहई ओषध होय हमारा ॥
तब ज्ञानी राजा सों, कहा तपी मुसकात।
सुद्ध स्रव के स्रोता, सुनिए बकता बात ॥
है एक देस अगमपुर नाऊं। मानहुं सरग बसेउ महि ठाऊं ॥
देस बड़ो आगमपुर आही। राजदीप पुनि कहिये ताही ॥
है वह देस सिंधु के पारा। होत धरम नित ताहि मझारा ॥

सुभग रूप आगमपुर होई। धरती सरग कहावत सोई॥
जेत फूल फल पत्रिय चाही। तावत आगमपुर मों आही॥
अगम पथ मों सात बन, और समुद्र अथाह।
होत न कैसेहु मग मों, अगुवा बिना निवाह॥
सिंधु पार है आगमपूरू। पारते नियर वारते दूरू॥
है आगमपुर जस फुलवारी। तामें फूल पुरुष अरु नारी॥
नार पदुमिनी कंचन बरनी। होहिं तहाँ सब मन की हरनी॥
हरनि होइ जग को मन हरई। बोलत काज सुधा कों करई॥
है इस्सर कर मडप तहा। पूजा होत रात दिन जहाँ॥
जोगी तपी सन्यासी, बैरागी तेहि ठावँ।
भोर साँझ निस बासर, जपहिं अलख को नावँ॥
ऐसे धरम नगर के ठाउ। अहै महीपति जगपति नाऊँ॥
धरति गगन तेहिक जस मानी॥ इंद्रपुरी सुर कीत बखानी॥
है धीमान महीपति ज्ञानी। दयावत सुसील सुबानी॥
आप धरम देही है राजा। नगर न होत धर्म को काजा॥
है गज कटक अहै अनकूता। ऊच भाग को है तेहि बूता॥
एक हाथ के बल सों, कर समुद्र सों लेत।
एक हाथ सों महीपति, दान जगत को देत॥
राजै गढ नौ खंड बनावा। ऊँच गगन लगि ताहि उठावा॥
पहिल खंड जगमग मनियारा। निस मों दीख चंद उजियारा॥
चौथे खंड दीप है भानू। ज्ञान अमद किमि कहौं बखानू॥
मदिर एक अहै तेहि ठाऊ। तीरथ मंदिर मदिर नाऊ॥
तासों लोग बहुत फल पावैं। सतरु सहस नए नित आवैं॥
मठ के ऊपर ठीक ही, घड़ियाली घड़ियाल।
निस दिन बैठे साधैं, घड़ी मुहूरत काल॥
का बरनो सुख मदिर ठाऊ। आठ सदन आठौ कर नाऊँ॥
तिन भीतर बइठइ जो कोई। ता कह भूख प्यास ना होई॥
सुंदर नारी रहँइ घनेरी। भई जो कामिन काहु अकेरी॥
है आनंद नाम एक ज्ञानी। ताकर सेव मदिर बखानी॥
बिछौ एक अस डार पसारा। सब निकेत पर पहुँचे डारा॥
वह सुख बासे महीप को, है उत्तम कइलास।
सुख जीवन तामो मिलै, पूजत मन की आस॥
बरनो आगमपुर को हाटा। भूलहि मनुष देखि सै बाटा॥
कतहुँ तमोलिय पान भुलाने। कहुँ पटवा पाटहि अरुझाने॥
रूप कनक कहुँ गढेइ सोनारा। कहुँ लोहे कौ ताव लोहारा॥

कहुँ जौहरिये कतहु चितेरा। कतहुं कुँदेरा कतहुँ ठठेरा ॥
सब भूले अपने जग धधा। का डिठियारू का जो अधा ॥
सब तो अहैं नटाऊ, पै पाए सुख भोग।
आपुहि कोइ न जानत, हैं पथिक हमलोग ॥
पुनि बखान सुनु मन तारा को। वसुधा बीच सुधा जल ताको ॥
जो मनताए सम्बर पीओ। सुख जीवन पावै मन जीओ ॥
आवैं नीर भरैं पनिहारी। सुदर आगमपुर की नारी ॥
औउर नदी नीर जस छीरू। मद अस मेद सरोवर नीरू ॥
मधु अस मीठ जीउ सर पानी। यह बखान समझै नर ज्ञानी ॥
जो मानुष अनुरागबल, अचवै चारों नीर।
निर्मल होइ सरीर तेहि, व्याध न रहै सरीर ॥
पुनि बखान सुनु मत के चेरा। आगमपुर के जोगिन केरा ॥
बैरागी सन्यासिय जोगी। साधू सजम तपिय बियोगी ॥
कोउ ठाढा है ध्यान लगाए। कोउ धरती पर सीस नवाए ॥
कोउ महिपर माथा धरि रहा। जोग लाग सुख भोग न चहा ॥
बहुतन कह जगसों सुधि नाही। रीझि रहे करता उपराहीं ॥
रसना एक न कहि सकों, आगमपुर की बात।
धरम धनी है राजा, सुखी छतीसौ जात ॥
रहा महीपति घर उँजियारा। बालक दीपक बिनु अँधियारा ॥
जाइ ईस मडप महँ पूजा। बहुत कीन्ह सँग लीन्ह न दूजा ॥
सिव सपने मों दरस देखावा। दरस दान देइ बात सुनावा ॥
बालक एकौ लिखा न राजा। देइ न बालक अपचित काजा ॥
राजैं कहा पुत्र जो ताहीं। होइ सुता तो मन अनदाहीं ॥
आतमजा जो होत एक, होत सदन उँजियार।
कन्यादान दिहें सों, होतै मुकुत हमार ॥
कहा महेस काज एक करहू। रतन एक मडप मों धरहू ॥
निसमों राखहु भोरे आएहु। धिर्ज धरे जैसो फल पाएहु ॥
जैसो इस्सर अज्ञा दीन्हा। तैसो मानि महीपति कीन्हा ॥
सिव दाता कह बहुत मनावा। तुम करता त्रीलोक बनावा ॥
धरती गगन पवन जल आगी। सिर्जेउ सिर्जत बेर न लागी ॥
होइ रतन सों कन्या, यह मनसा है मोर।
राज सदन अँधियारो, तासो होइ अँधजोरा ॥
सिवा अलखसो बिनती कीया। जस है रतन जोत सों दीया ॥
दीप रतन सम कन्या होई। करइ निकेत अजोरा सोई ॥
भा दयाल दाता तेहि घरी। वोहि रतन कन्या अवतरी ॥

भै महेस मडप उँजियारी। उतरी मनहुँ इद्रपुर नारी॥
भोर होत राजा चलि आएउ। मडप बीच चंद्र सम पाएउ॥
परसद सो मडप मों, पुलकेउ राजा देह।
कन्या कहं अति आदरे, आनेउ अपने गेह॥
पुन सिवरात होत सपनावा। गौरिहु आपहुँ दरस देखावा॥
कहा घरेउ अवतार सुभाऊ। रतन जोत कन्या कर नाऊं॥
मोती एक वटामों कीजे। जलधिम भार डार तेहि दीजे॥
वह मोती काढ़ै जो राजा। सोई वर कन्या कर छाजा॥
मोती काढ न पारै कोई। काढ़े सोई बर जो होई॥
सिव भावित के पाछें, सिवा कहा तेहि ठाउ।
होत भलो इद्रावति, वह कन्या को नाउ॥
राजै दोऊ नाम तेहि राखा। रतन जोत इंद्रावति भाखा॥
रूपम्मा वाई तेहि पाला। लाग चलै महि ऊपर चाला॥
भइ जो सयान भई चित्तगरी। पढ़ि विद्या भई विद्याधरी॥
लागीं साथ अगमपुर बारी। जोरेउ स्थामा राज दुलारी॥
जगपति मरम सुता कर पावा। कीन्हा परन जो ईस बतावा॥
बूड़े बहुत समुद्र मों मोती चढ़ेउ न हाथ।
नहिं जानौ को देइ हैं, सेंदुर ताकी माथ॥
मंडप मों जाते ऊष भागे। बरस देवस पर तीरथ लागे॥
जब आगमपुर कह मैं गयऊ। पूजा नित मडप मह भयऊ॥
तति खन भय चहु ओर पुकारी। आवत है जगपति की वारी॥
पथ देउ कोउ रहइ न आगे। जात मडप कहं पूजा लागे॥
पंथ छाड़ भा सब कोउ ठाढ़ा। सबके हिये प्रेम रस बाढ़ा॥
पथ छाड़ सब ठाढ़ भा, नैन भएउ सब देह।
इद्रावति दरसन नित, सब मन बढ़ेउ सनेह॥
सब मानुष मन प्रीत घनेरी। उपजी इद्रावति मुख केरी॥
मुकुर बने चाहा सब कोई। जामों आइ परै मुख सोई॥
सखिन साथ इंद्रावति आई। बरनि न पारौ सुंदरताई॥
रहि न सखी सुदर जहाँ ताई। जिउ अस लिहें रतन कह आईं॥
देह भई सब आगम वारी। जीउ रही इद्रावति प्यारी॥
सखी रही अतर पट देखा बिरलै कोइ।
मडप बीच गई वह, सब को गति नग खोई॥
रचिक तेहि देखा जो कोई। कीन्ह बखान आप मों सोई॥
कहुव कहा अहै अपछरा। नहि चितएउ ऐसे मन हरा॥
काहुव कहा दिष्ट जो देती। मन औ प्रान दोऊ हर लेती॥

रूप गगन जग काया वारी। है जिउ है जिउ है जिउ प्यारी ॥
वो वहि मुख को परगट देखा। गूँग भएउ भा बाउर भेखा ॥
तेहि अस आपुहि होइ रहा, रहा न ताहि विवेक।
जातें जानैं एक मै, औ इन्द्रावति एक ॥
इन्द्रावति घर कीन्ह बहोरा। ससि होइ लै नछत्र चहुँ ओरा ॥
आप गई मदिर कह प्यारी। बहुतन को कह गई भिखारी ॥
जो रचिक ता दरसन पावा। हाथ मलेउ मानेउ पछतावा ॥
कहां सहेलिन बैरिन भई। वोटै वोट किहैं लै गईं ॥
आज आइ वह परगट भई। मिला न दरस गुपुत होइ गई ॥
सुमिरेउ सिरजनहारहीं, जब देखेउ असरूप।
ऐसो रूप सवारहू धन्य त्रिविष्टपभूप ॥
है पदुमिनि इन्द्रावति प्यारी। ताको बदन रूप फुलवारी ॥
कोमलताइ सुदरताई। से रना सों बरनि न जाई ॥
दिगन हरा मान मृग केरा। मन लजाइ बन लीन्ह बसेरा ॥
ना अति लाब न छोटी आही। है तस इन्द्रावति जस चाही ॥
यह बखान का बरने होई। जो देखा जानहि पाइ सोई ॥
कै बखान जोगी कहा, मोहि जाने होराय।
चन्द्र बदन इन्द्रावती, तोहि सपनाएउ आय ॥
पहिले इन्द्रावति सुकुमारी। रहिल रतन दरपन मों प्यारी ॥
जब जगमों अवतरी नवेली। ताको दरपन भई सहेली ॥
है वह दीप सिखा उँजियारी। आपन जोत सखिन मों डारी ॥
हैं वह रतन खान आभा को। जोत सुरूप रूप है ताको ॥
है आनद बदन वह प्यारी। छबि तापर है लट लटकारी ॥
इन्द्रावति है पद्मिनी, रम्भा तुलै न ताहि।
एक जीभ सों कित मैं, ताको सकों सराहि ॥
सुनत बखान कलिंजर ईसू। तपिय चरन पर डारेउ सीसू ॥
कहा कुवर हो सिद्ध सरीरा। ओषद दे काटेहु मन पीरा ॥
सपन बिचारेहु मोर गोसाईं। पीरा हरेहु रही जह ताईं ॥
जेहि रानी के करहु बखानू। निसचै हरा सोई मन ज्ञानू ॥
तजि कइ राज होब मै जोगी। इन्द्रावति पर होउँ बियोगी ॥
हौ मैं चेला तुम गुरू, बिनै करत हौं तोहि।
आगम पथ देखावहु, लै पहुँचावहु मोहि ॥
तपिय कहा तोहि जोग न छाजा। बैठे राज करीजे काजा ॥
अहै कठिन आगम को बाटा। गहिर समुद्र न थाह न घाटा ॥
औ है गुलिक काढिबो गाढा। मिघु न जानै तट जो ठाढ़ा ॥

है हम कह तीरथ बहु करना। कासिय पथ उपर पग धरना ॥
जाय पयाग करउ अस्नानो। पुनि महेस को देखेउ थानों ॥
तपी भेस मैं मानुष, नाम मोर गुरु नाथ।
तब गुरु नाथ कहावउँ, जब आनउँ तप हाथ ॥
कुंवर कहा गुरुनाथ गुसाईं। राज रहा मीठा अवताईं ॥
अब निसचै मैं होब भिखारी। तहाँ चलि जाउ जहाँ वह प्यारी ॥
जिउ के लोभ कछुहु मोहिं नाहीं। ता नित पैठउं पावक माहीं ॥
अगुवाई जो कीजे नाथा। तो वह मूल होइ मोहि हाथा ॥
ना तो सुमिरत दया तुम्हारी। जाउ तहाँ होइ तपसि भिखारी ॥
राज पाट सब छाड्उ, लेउँ अगम के पथ।
पथिक होऊँ अगम को, पहिर जोग को कथ ॥
जाना तपी तजहि सुख पाटा। हिये सुधान अगम की बाटा ॥
सकल आपनो परगट कीन्हा। देव दिष्टि राजा कह दीन्हा ॥
माया रहित कीन्ह मनुसाईं। उपबन सों कीन्हा अगुवाई ॥
फुलवारी मों राय सरेखा। पथ सहित आगमपुर देखा ॥
देखा देस अगमपुर केरा। रीझि रहा राजा भा चेरा ॥
अगम पथ मन मो बसेउ, भूली दूसर बात।
हिर्दे चिन्त सोउ तरिगा, राज मुकुट औ पाट ॥
तपिय कहा राजा कुछ सूझा। राजा सुनत मरम सब बूझा ॥
कहा भएउ कृपाल गोसाईं। सूझी बाट रही जहाँ ताईं ॥
सूझा इद्रवती कर देसू। होएउ निसचै जोगिय भेसू ॥
सुनि गुरनाथ ऋषेश्वर जाना। पथ अगम राजहिं पहिचाना ॥
गुपुत भएउ पुनि कुवर न देखा। आएउ मदिर राय सरेखा ॥
गुरू जानि गुरुनाथहीं, चेला आपुहि जानि।
आगम जोत धरा चित, मन परान मों मानि ॥
कालिजर सों भएउ उदासा। भएउ नरक मदिर-कविलासा ॥
सुदर कहा कत कस जीऊ। कस उदास तेहि देखेउ पीऊ ॥
परेउ मीस ऊपर कछु भारा। ऊदासे है जीउ तुम्हारा ॥
दीन्हा ऊनर सुदर केरा। सैतुक बीच सपन भा मेरा ॥
सुनेउ आज मैं तेहिक बखानू। सपन देखाइ हरा जेइ ज्ञानू ॥
राजपाट वन भोग सुख, सब तजि साधौ जोग।
जाउँ वोही के देस कहँ, होइ सजोग वियोग ॥
सुनि कै कहा सुदरी राजा। तुम्हें भोग तजि जोग न छाजा ॥
सुख सपन सब दीन्हा दाता। मारु न छीर भात मों लाता ॥

कहा रहेउँ अबलग मैं भोगी। अब मैं होउ अगम को जोगू॥
जोगी होउ अगमपुर केरा। लेउ जाइ तेहि गलिय बसेरा॥
भोगै बीच रहउ जउ भोला। कित मोहिं हाथ चढ़इ वह मूला॥
तुम कामिनी मत हीनी, भोग सुपावहु मोहि।
प्रेम खींच है मो कह, सूझ बूझ नहि तोहि॥
राजैं राजपाट सुख तजा। प्रेम आइ मति सों अरवजा॥
मनमों प्रेम बसेरा लीन्हा। बरबस राजा प्रेमिय कीन्हा॥
प्रेम अगिन मन मों उदगरी। तासो दाव बुद्धि कर जरी॥
भार वोही राजा सिर परा। जो नभ औ महि को बल हरा॥
निबर मनुष को धन मनुसाई। जो अस भारिय भार उठाई॥
प्रेम आग के बाढे, मेघा भयो मलीन।
सूर किरिन के आगे, है मयक दुति हीन॥
रे कलवार आव चलि वेगें। हौं मैं ठाढ़ सिधु जा नेगें॥
है निर्मल मद सदन तुम्हारा। मोहि लेखें सज ठाकुर द्वारा॥
दे मदिरा भर प्याला पीवों। होइ मतवार काथरा सीवों॥
सो काधर कांधे पर डारउँ। जोगी होइ जग चाहत मारउ॥
होइ जोगी तेहि देसहि जाऊ। है जेहि देस सुप्रीतम ठाऊ॥
मोहि यह देस न भावत, छन है बरख समान।
अब तेहि देस सिधारउ, जहाँ रहत वह प्रान॥

मालिन खंड

जब राजा फुलवारिय आयेउ । तजि पर चिन्ता ध्यान लगायेउ ॥
मालिन सुंदर चेता नाऊँ । आइउ मन फुलवारिय ठाऊँ ॥
भइ सोईं राजा के ठाढी । मनु समुद्र सो मोतिय काढी ॥
अहो बियोगी भेस भिखारी । इंद्रावति की यह फुलवारी ॥
इहाँ न कोऊ जोगिय आवै । जो आवैं तो जीउ गँवावै ॥

कबहूँ कबहूँ आवै, इहाँ पियारिय सोई ।
चार दिष्ट होइ जाइही, जाउ जीउ सौं खोइ ॥

है मनोरमा जगत कर सोई । है ससि जौ ससि बोलत होई ॥
कुसुम उसीसा लाइ बईठै । मान समेत जगत दिस दीठै ॥
धन के नैन दिष्टि जेहि डारा । सो आतिथ भा भा मतवारा ॥
मुख है फूल कपोल कली है । है छबि औ सोभा बिमली है ॥
फूल अहै पै कलिय समानू । कलिय अहै पै है बिकसानू ॥

है सुकुवार पियारी, है प्यारी सुकुवार ।
है फुलवारिय रूप को, अहै रूप फुलवार ॥

राजा कुँवर कहा सुनु प्यारी । आयेउँ भलो लाग फुलवारी ॥
जग मे मरन हुतें का डरऊँ । एक दिन मरों छार होइ परऊँ ॥
जो इंद्रावति के दोउ नैना । प्रान लेत हैं करि कै सयना ॥
तो मोहिं सोच जीउ कर नाहीं । होइ सुधा तेहि अधरन माही ॥
बहुर प्रान देईं मोहिं सोई । नित जीवन पुन मरन न होई ॥

दरस देखि जो जिय तजौं, यातें भलो न और ।
एहि कारन मैं लीन्हेंउँ, मन फुलवारी ठौर ॥

अहो यह नित बरजेउँ जोगी । जिय न तजहु पै होहु बियोगू ॥
जोग तोर औ गुरू तुम्हारा । जाइहि भूल जासि ठग मारा ॥
जाकी चितवन भए बेहाथा । नाथ मुछंदर गोरख नाथा ॥
तेहि देखत सुधि भूलै तोही । भूलै जोग बो मन बोही ॥
निदा नौके फेर भुलाहू । सौके देस न बेगहिं जाहू ॥

अबहीं अहसि सरेखा, जहँ चाहसि तहँ जासि ।
ना तो दरसन पाइकै, सुधि गवाइ बौरासि ॥

ससि कारन तुम लायहु फाँदू । फाँदे बीच न आवइ चाँदू ॥
जीउ चलाउ जहाँ लग हाथा । गगन चढावइ चाहसि माथा ॥

पट बाहर जेइ पाव पसारा। जाडा कठिन अत तेहि मारा ॥
जो पखी चित बाहर धावा। नो निदान माहि ऊार आवा ॥
अपने जोग ठाव जेइ लीन्हा। सब कोऊ तेहि आदर कीन्हा ॥
सब काहूँ कहँ ठाउँ है, अपने अपनै मान।
रानी राजा जोग हैं, ससि जोगे है मान ॥
हौं मै ता दरसन नित जोगी। भसम चढाए भेस वियोगी ॥
ताको प्रेम गुरू हूं मेरो। जोग सिखाय कीन्ह मोहि चेरो ॥
जब मन बसी घरेउं तब जोगू तजि कै सकल जगत सुख भोगू ॥
वहि उत्तम दरसन के कारन। आएउ नाघि मेरु ढधि आगन ॥
जा छिन मै दरसन वह पावउ। होइ आर आपुहि हेरवावउं ॥
दरसन देखै कारनहि रोम रोम भवे नैग।
नींद न आवत निस कहँ, वासर परत न चैन ॥
चैन कहाँ चिन्ता जेहि जीऊ। जीउ दुग्ध भा चिंता धींऊ ॥
जब चिंता तब नींद न आवै। आवै तब जब चिंता आवै ॥
प्रेमी पर चिंता कहँ मारै। मारै मन चाहुत जिय वारै ॥
हेरै प्रीतम मुख नहिं फेरै। कोरे भिन्न मित्र कहँ हेरै ॥
रोवै रकत आस नहिं सोवै। दरसन लाग रात दिन रोवै ॥
सत्तर सिर मन तीस सै, पाव एक सै जाहि।
प्रेमी को दुख देत सो, प्रेम अथ यह आहि ॥
हौ जोगी पै उत्तिम भीखा। प्रेम पाइ मागै मै सीखा ॥
जहि मन ऊँच ऊँच भा सोई। जेहि मन नीच नीच सो होई ॥
कहाँ चाँद कहँ रहइ चकोरा। प्रीत लाग चितवत तेहि ओरा ॥
औ अरबिंद रहै जल माहीं। रवि सेवत तेहि जोगे नाहीं ॥
दादुर कवल सनेह न पावै। बनसों मधुकर तेहि नित धावै ॥
दूर देस की दिष्टि सों, है समीप गुन मूर।
बिना नैन औ दिष्ट के, नियरे के है दूर ॥
मालिन कहा बहुत तुम बूझा। प्रेम पथ उजियारा सूझा ॥
कवन जात है का है नाऊ। कहाँ जनम भुम्मी का ठाऊ ॥
कहा रहेउ मै जात चदेला। अब सम जात धूर सिर मेला ॥
जनम भुम्मि कालिंजर ठाऊं। राजकुवर है मेरो नाऊं ॥
प्रेम तेहिक मोहि चेला कीन्हा। राज छोड़ाय जोग गुन दीन्हा ॥
हौ जोगी तेहि पथ कों, नहिं चाहौं कविलास।
चाहउ दरसन भिच्छा, राखत हौं नित आस ॥
हो जागी मुख आभा तेरी। साखि देत है राजा केरी ॥
पै तोहि साथ न सेवक कोई। राजा पर विस्वास न होई ॥

औ मोती का ढब हैं गाढा । बूड़े बहुत न काहुअ काढा ॥
भीख मिलन गाढी है जोगी । भाग जो होइ तो होहु सजोगू ॥
याहू, पर बहुतै तुम कीन्हा । तजि सुख भोग जोग दुख लीन्हा ॥
जेहि दरसन के दीप पर, है पतग ससार ।
प्रेम तेहिक तुम लीन्हा, मरै न नाम तोहार ॥
है इद्रावति विद्याधरी । विद्याधरी आप अवतरी ॥
है पदमिनि मृगसावक नैनी । ज्ञानवत औ कोकिल बैनी ॥
जो काहुअ पर डारै डीठी । सो जन देइ जगत दिस पीठी ॥
अस रूपवती सुदर आहै । बिनु देखे सब ताहि सराहै ॥
खोलै मुख परभात देखावै । खोलै केस साँझ होइ आवै ॥
है तेहि चद्र बदन लखि, जगत नयन उँजियार ।
गगन सहस लोचन सो, निरखैं तेहिक सिगार ॥
धन दृग मतवारे पैरारे । चितवन बीच सिधु जा ढारे ।
अधरन सो मुसुकान सोहाई । बात कहत सो झरत मिठाई ॥
सखी अहैं दरपन तेहि माहीं । डारा सुदर मुख परछाहीं ॥
तासों सखी भई छबि धारी । छबि दाता है प्रान पियारी ॥
सै मन अलक• बीच हैं बाँधे । तेहि सहस जिउ हत्या काँधे ॥
बहुतन तजि जग धधा, तप साधा तेहि लाग ।
अरुझि रहा मन अलकै, जिउ मारा अनुराग ॥
है तेहि अस ताक मो दीया । भा उजियारो मदिर हीया ॥
सीसा बीच दिया है धरा । मनु सीसा तारा निर्मरा ॥
है मदिर सोभित फुलवारी । अहै सुगध मालति वह बारी ॥
तेहि रहैं आखिन पर चेरी । अहैं सखी छाया तेहि केरी ॥
दिष्ट न आवत ताकी छाया । मानहुँ जीव धरे है काया ॥
वोहि डोलै सब डोलैं, थिरै थिरै सब कोइ ।
काया सों जो होत है, सो छाया मों होइ ॥
सात अतर पट भीतर सोई । रहित न देखत अचिन्ह कोई ॥
बारह मदिर मों वह प्यारी । रहत सदा है सेज सवारी ॥
हीरा सात सात जस तारे । हैं मदिर भीतर उजियारे ॥
दुइ सै औ अढतालिस करी । लागे रतन पदारथ भरी ॥
है मदिर मो तेरह द्वारा । नौ द्वारा नित रहत उघारा ॥
बाय तेज जल पृथिवी, मानहुँ कैयक ठाउ ।
बारह मदिर सवारा, जगपत जाको नाउ ॥
आवै जाइ पवन दुइ द्वारें । सगी सोहु न सबद सवारें ॥
दसईं द्वार खोलत कोई । तब खोलै जब मरमी होई ॥
दस चेरी धन की गुन भरीं । सेवा बीच रहैं नित खरीं ॥

पाँच मँदिर के बाहर रहई । पाँच मँदिर भीतर गुन गहई ॥
एक सुध पाँचो सों नित लेई । सुध चारो चेरिन कहँ देई ॥
है सरूप वह रानी, रहै सात पट माँह ।
सखियन सो वह प्रगटै, अहै सखी सब छाँह ॥
सुनि इंद्रावति रूप बखानो । राजकुँवर हिंदै रहसानो ॥
कहा लेहिउ तेहि कारन जोगू । है महिमानस प्रीत बियोगू ॥
भायउ आवत इहाँ अकेला । गुरु न भयउ का राखउ चेला ॥
होउ अग्नि मो होइ मर जीया । तजि जिउ भय पीड़ा कइ हीया ॥
भाग जो होइ जलज निसाराऊँ । तो जिउ जिउ कारन वारऊँ ॥
प्रेम फाँद मो हों परा, नहि छूटै की आस ।
मिलबो चाहों प्रान को, अहै न भूख पियास ॥
जो चाहत संजोग बियोगी । जो मैं कहहुँ सो साधहु जोगी ॥
खोटे काज के नियर न जाहूँ । निरमल कथा होइ जस चाहूँ ॥
पर चिंता तजि सुमिरहुं ताको । होइ सो भरता मन आभा को ॥
ना रहिये आपा गुन साथा । निरमलता आवै जिउ हाथा ॥
मन जिउतें सुमिरहु वह नाऊं । बूझहु प्रान मों ताको ठाऊं ॥
दूसर चिंता छाड़ि कै, तापर लावहु ध्यान ।
मन फुलवारी मो रहै, पावहु दरस निदान ॥
आपन है नाहीं कर जोगी । पुनि है होसिहोसिहै भोगी ॥
नाहीं होइ नाहि तैं हेरा । ना तो मिलत नियर तेहि केरा ॥
नियर मिलें तो दरसन होई । जोग भूल है तीनउं सोई ॥
जो मर जिया सो भामोर जीया । मोती लिया दिया भा दीया ॥
मरिके जिउ पुनि मीचु न आवै । प्रानपियारी बदन दिखावै ॥
छिन अंतरपट होइ रही, फुलवारी के फूल ।
देखु रंग प्यारी कर, दै रगन को मूल ॥
कहि राजा सो भेद कहानी । गइल जहाँ इंद्रावति रानी ॥
मै ब्याकुल प्यारी तब ताईं । जोगी आइ बसा मन ठाईं ॥
बाढ़ेउ प्रीति जोगेश्वर केरी । मन पद परी प्रेम की बेरी ॥
कहै कहाँ वह रावल प्यारा । है दरसन मन हरा हमारा ॥
सोइब रहेउ जाय सो भला । जामो मिला दरस निर्मला ॥
मिला दरस जेहिं सपन मो, तापर वारा जाउ ।
जागब मोहि बैरी भयेउ, कीन्ह दूर दुइ ठाँउ ॥
वोही समै मो मालिनि गई । प्यारी कहँ सुख दाता भई ॥
पूछे लाग परान पियारी । है कस आज काल्ह फुलवारी ॥
बीता फागुन औ पतिझारा । जो निर्पात कीन्ह कुँज डारा ।

जो पच्छिम को जीउ सतावा। पत्र को छारिके छाँह नसावा॥
सो तो अब न रहेउ जग माहीं। फुलवारी पलुही की नाहीं॥
बदन उघारा है पुहुप, अली भँवहि उपराह।
की समुझत पतिझार कों, अहैं छिपी पट माँह॥
चेता नारी उतर निसारी। हो फुलवारी प्यारी फूली॥
मान पाट पर बैठे फूले। फूल बास मधुकर मन भूले॥
देइ के उतर कुसुम को हारा। इद्रावति के गल मों डारा॥
फेरि कहा दिन बहुत न गयऊ। सपन तुम्हारो सैतुक भयऊ॥
फुलवारी मों है एक जोगी। रानी दरसन लाग बियोगी॥
है कालिजर महिपति, राजकुअर है नाउ।
नाम तिहारो जपत हैं, मन फुलवारी ठाउ॥
ए रानी का बरनउ ताही। धूर लपेटा मानिक आही॥
बहुत सरूप अहइ वह तपा। कथा बीच रतन है छपा॥
होइ हग जिय जो देखनहारी। तो मुख ताको लखै पियारी॥
जावत राजा लच्छन चाहीं। है सब हग रतनारी आही॥
अर्द्ध चद सम भाल सोहाई। रेखा तीन दिष्ट मोहिं आई॥
धनुक समा है भ्रिकुटी, बरुना चोखी बान।
कीर समा है नासिका, सबद मोर परमान॥
लबर करन को सीर न आहै। राजा सिद्ध होन कस चाहै॥
कुओ बियोगी उपबन ठाऊ। निस दिन सुमिरत रानी नाऊ॥
अहै प्रेम मदिरा मतवारा। जपत सास मो नाम तुम्हारा॥
लेत न एकउ सूझै सासा। दरसन लाग देह सुख नासा॥
जोगी भेस न सकउ सराही। गोपीचद्र दूसरो आही॥
होत जियत को भरथरी, ताको चेला होत।
आइ बसा फुलवारी, सुनहु खोलि मनस्रोन॥
इन्द्रावति सुनि जोगी नाऊ। जोगिन होइ चहा तेहि ठाऊ॥
कहा सपन को जोगी प्यारा। होई वही मनहरा हमारा॥
सकल आक तुम आइ सुनावा। सपन तमी लच्छन मै पावा॥
एक अचभे आवत हियरें। है न कहूँ कालिंजर नियरें॥
मो गुनरूप कहा ते पावा। जोगी होइ अगमपुर आवा॥
भेंट न होइ न गुन सुनै, प्रेम कहा सो होइ।
कैसे मोशि कारन भयउ, आगम जोगी सोइ॥
अहो पियारी बूझन तोका। तोर बखान गयउ सुर लोका॥
तहा सदा सब निर्जर नारी। चरचा तेरो करइ पियारी॥
धरती पर कालिजर देसू। सुनि बखान भा जोगी भेसू॥

तै धन कली समा पट माहीं । सैकी लालप तोहि उपराही ॥
नहि जानो कस परत पुकारा । जो परगट मुख होत तुम्हारा ॥
तुम धन प्यारी पदुमिनि, सुधा मरे अधरान ।
बहुत अमी अधरन पग, दिहेनि सुन्धु मों प्रान ॥
हो धन जाको नाग सुनायहु । फुलवारी मों दरसनु पायहु ॥
मन औ शान हरा है सोई । होत भलो जो दरसन होई ॥
मैं सकुचाउ जात फुलवारी । भइउ नयन सों मैं हत्यारी ॥
न्वार दिष्टि काहुक सों होई । जात चेत सों मुरछेइ सोई ॥
औ परगट मोहि चलत न भावै । अब मोहि लज्या जिउ सकुचावै ॥
गयेउ सखी वह सामै, आखिन रहो न लाज ।
अब यह नैन हमारो, प्रायेउ लाज समाज ॥
लाज नहीं जेहि आखिन माहीं । है वह पसु है मानुष नाहीं ॥
घुघरू पहिरि लाज यह आही । पगु कहँ धीमे राख अचाही ॥
औ धन ऊँची सबद न बोलै । सुनत बिराने को मन डोलै ॥
औंचे नैन लाज सो कीजै । औ मुख ऊपर घूघट लीजै ॥
हों प्यारी अब पहिरहु गहना । पुरुष बिराने सों छिप रहना ॥
हो बारी अलबेली, बारी कैसे जाउँ ।
भेंट होइ काहुअ सों, खोर और मग ठाउँ ॥
जो जोगी तुम देखै चाहा । जोगहिं मिलै जोग सो लाहा ॥
परगट तुम्है चलै को कहई । तो पट भलो पवन रथ अहई ॥
तेहि पर चढ़ि कै चलिये प्यारी । चारो दिस पट लीजै खड़ारी ॥
जोगी साथ न दूसर कोई । है अकेल बारी मों सोई ॥
है भिच्छुक तेहि दाया कीजै । उत्तम दरसन भिच्छा दीजै ॥
दर निखाइ कै दरसन, आपुहिं लेहु छिपाइ ।
अधिक बढ़ै अभिलाख तेहि, दूसर पथ न जाइ ॥
चलई चलहुँ निसचै फुलवारी । देखउँ जोगी कहँ मन बारी ॥
आज देवस औ रैन बितावउँ । प्रात सबै फुलवारी आवउ ॥
जोगी पास अहै मन मोरा । भयेउ सीस पर प्रान झकोरा ॥
होइ गयें खापन मन पावउँ । मन पाये आनद मनावउँ ॥
पहिले आपन दरस दिखायेउ । पाछे सों मोहि जोग सिखायेउ ॥
रहिउँ अचेत भुलानी, लाग राग को बान ।
प्रेम निबाहीं जो जियउँ, तेहि के मरउँ निदान ॥
ना लै मरन का नाम पियारी । तोहि मरत मरिहैं बहु नारी ॥
जहँ लग हैं नारी रज दीपी । का बिछुरानी काह समीपी ॥
तोहि जिय सों जीयत सब कोई । कहु न मरन तो पर लो होई ॥

हैं जहँ लगरजदीपी नारी । जीउ तिन्है है प्रीत तुम्हारी ॥
भलो भयेउ जो बाढ़ा प्रेमू । मिलि है प्रीतम होइहै खेमू ॥
अति समीप है प्रीतम, अहै न एको बाट ।
एक पाव दे आप पर बैठु, मिलन के पाट ॥
काहे न लेउ मरन के नाऊँ । मरब एक दिन धरती ठाऊँ ॥
केतिको प्रीत जगत महँ होई । देत न साथ मरन महँ कोई ॥
जावत जिया जंतु जग रहई । करता बस सबको जिय अहई ॥
है समीप वह मित्र हमारा । पै जग मध दूर मोहि डारा ॥
काम क्रोध तिस्ना मन माया । है रिपु कछुहु उपाय न पाया ॥
किछु उपाय नहिं आवै, जाते जाहिं नेवारि ।
हैं बैरी मोहि गाढे, सको न यह सब मारि ॥
अहो तुम राजा कर बारी । अरुभि रहिउ सुख बीच पियारी ॥
तुममों काम क्रोध अधिकाई । तिस्ना मया करइ अगुवाई ॥
चारि पखेरू तोहि तन माहीं । चारों चारा नित उड़ि जाहीं ॥
रेत औउ चारों कर प्यारी । मरिकै जियहिं होहिं गुनधारी ॥
मन दरपन ऊपर चित दीजै । नाहीं है सो निर्मल कीजै ॥
माज सजो मन दरपन, रात देवस चित लाइ ।
स्याम रंग अंतरपट, उठि आगे सों जाइ ॥
बोलब सोइब खाइब थोरा । होइ होइ तौ कारज तोरा ॥
औ चिहार प्रीतम की लीजै । जो सिखवैं सो कारज कीजै ॥
औ निसबासर अकसर रहना । सुमिरन जाप बीच दुख सहना ॥
पै यह मन है सत्रु समाना । जात न मारा सुख लुबुधाना ॥
मन बरजे कहँ काको करई । मन न मरै बरु पारा मरई ॥
मालिन हिता उपाय दै, गई आपने ग्रेह ।
इद्रावति कै मान से, भयउ समस्त सनेह ॥
चलु मन तहा जहा फुलवारी । तहाँ बसा है दरस भिखारी ॥
मित्रहि भेंटहु देखहु फूलू । है फुलवारी परमद मूलू ॥
धन सो मानुष धन तेहि मागू । जेहि मधु मिलेउ खेलि कै फागू ॥
जेतो तेहि पतिभार सतावा । तेतो सो बसन्त सुख पावा ॥
धन जग माली सिर्जन हारा । कुल पलुहावत है पतिभारा ॥
भागवत सो मानुष, है तेहि धन धन हाथ ।
मित्र बदन औ फूल मुख, देखै एकै साथ ॥

फुलवारी खंड

इंद्रावति दिन रात बितावा। भोरहिं सखियन कह हकरावा ॥
भै न मिलब सखी सब आईं। तारा समा रही जहं ताईं ॥
आईं ससि बदनी थोर दीनी। सकल राज दीपी पदुमीनी ॥
आईं समुदे कुल की सुता। यहु ब्याहीं बहु अन्याहुता ॥
थोर समय बहु नषत सहेली। धन मयक बेरेन अलबेली ॥

रानी की सब सहचरीं, आइ जुरीं तेहि पास।
सब अपछरा समा रहि , भवन भयउ कबिलास ॥

इंद्रावति सखियन सों कहा। सो दिन गयउ बिछु जो दहा ॥
जग सों पतिझारी रितु गई। पलोहे बिछुं नवल रितु भई ॥
काल्ह जनायेउ चेता नारी। फूल रही है मन फुलवारी ॥
चलहु गवन बारी दिस कीजे। फूल देखि परमद रस लीजे ॥
नहिं जानहिं सिर परिहै कैसो। खेलहु होइ खेलना जैसो ॥

फुलवारी चाहत है, मन बैरागी मोर।
चलहु देखिये उपबनै, है बसत रितु थोर ॥

थोरा है कुसुमाकर बेला। चलि देखिहु औ खेलहु खेला ॥
बीतो बेला छूटा बानू। हाथ न आवै झँखै परानू ॥
सकल समै को भेद लुपाना। है हम लोगन ताको जाना ॥
भेटत आ राखत करतारा। जो चाहै है सिरजनहारा ॥
समय खरग है काटन हारी। जात चलछि तेहि भेटु पियारी ॥

मधु मीठो है मधु समा, मधु दरसन को लेहु।
हार सरीर ग्रीव को, हार कुसुम को देहु ॥

सब काहू धन आशा माना। फुलवारी दिस कीन्ह पयाना ॥
इंद्रावति रथ ऊपर चढ़ी। दूनो बढी रूप को बढ़ी ॥
चली मानसों ब्राम्हन बारी। बनियाइन नाइन पटिहारी ॥
चली सोनारिन कंचन बरनी। रजपूती खतिरिन मनहरनी ॥
लोनी धन हलवाइन भली। अधर मिठाई चाटत चली ॥

चली सहेली सुंदरी, इंद्रावति के संग।
गीत बसंती गावतैं, पहिरे दकुल सुरंग ॥

मन फुलवारी मों सब गईं। देखि सुमन को सुमना भईं ॥
बेता मालिन भेटेउ आई। चंद्रबदन देखै दुति पाई ॥
सुगँध कुसुम को हार सवारा। सब सुंदरि के गीउ मों डारा ॥

देखि भँवर गन गुंजत तहा। एक सखी बोली गन महा॥
धन यह मधुकर धन यह फूलै। किन के ऊपर अलि मन भूलै॥
जगत मझार सराहिये, भँवर फूल के हेत।
भँवरहि चिंता फूल की, फूल बास रस देत॥
सुनि सचेत इन्द्रावति रानी। बोली सुनिए सखी सयानी॥
जग मों प्रीति बखानहु सोई। जीवन मरन एक सँग होई॥
खोटी प्रीति भँवर की आहै। भँवर आपनो कारज चाहै॥
आइ भँवात बास रस आसा। लै रस तजत फूल को पासा॥
लै रस बास भँवर उड़ि जाई। मरत न जब सुमनस कुम्हिलाई॥
प्रेमी ताको जानिये, देइ मित्र पर प्रान।
मित्र पथ पर जिउ दिहैं, जुग जुग जिए निदान॥
धन जो प्रीतम पर जिउ वारा। सिर पर चला प्रेम का आरा॥
धन जो परा हुतासन माहीं। और सहायक चाहा नाहीं॥
दया दिष्ट प्रीतम तब भरा। पावक फूल भयेउ नहि जरा॥
धन जो मित्र आपनौ चीन्हा। पुत्र जीउ आगे कै दीन्हा॥
मुवा न कहो जियत है सोई। अलख पथ जो जूझा होई॥
मित्र जो हैं करतार के, मरत नाहि हैं सोइ।
एक मदिर तजि दूसरें, गवनत हैं वै लोइ॥
गायउ गीत एक धन प्यारी। जग है करता की फुलवारी॥
आपुहि माली आपुहि फूला। आपुहि भँवर फूल पर भूला॥
आपुहि रूपवत सो होई। प्रेमी होइ रिझत है सोई॥
आपुहि परगट गुपुत अकेला। गुरू होइ कहुँ कहुँ होइ चेला॥
आपुहि दाता करता होई। दिष्टा स्रोता बकता सोई॥
सुनि सरवन दै चेत सों, सपन बखाना गीत।
उपजी सब के हिर्दै, चतुर सखी की प्रीति॥
एक कहा हो राजदुलारी। है आनद ठाउ फुलवारी॥
खेल एक खेलहु सब कोई। जासों स्वात बीच मुद होई॥
एक कहा आनद न चहऊ। निस दिन आगम सोचमो रहऊ॥
बहुत अनद न चाहीं प्यारी। ना तो परै आइ दुख भारी॥
एक कहा चिंता भल नाहीं। तरुनी चिंता सोंक बिरमाहीं॥
खेलि लेहु नैहर मो, सब मिलि परमद खेल।
पुनि नैहर के छाडतैं, सासुर होब अकेल॥
हम अज्ञात न सासुर चीन्हा। यह नैहर ऊपर चित दीन्हा॥
है जग जीवन खेल समानू। ऊमर नहीं है मरन निदानू॥
हम कहँ पार मीचु सो नाहीं। निसरि गगन महिं तट ते जाहीं॥

जानत मरम हमारो सोई। जाको सुमिरत है सब कोई॥
मूरत अलख नहीं जग ठाऊ। हम तुम राखा है तेहि नाउ॥
यह मूरत को तजि कै, चित्त अमूरत देहु।
जाहि अमूरत ध्यान सों, स्वर्ग लोक फल लेहु॥
राजकुअर फुलवारी माहीं। घन को आवन बूझा नाहीं॥
चातुर चेता की चतुराई। सब काहू सो बात जनाई॥
है फुलवारी मो एक जोगी। है काहू को प्रेम बियोगी॥
है यह ठौर बहुत दिन सेती। नहि जानउ बाउर केहि नेती॥
सुनि के सखिन कहा चलु रानी। देखें हैं कस जोगिय ध्यानी॥
बात सुघानी सखिन कहं, चली सखिन के संग।
एक एक सब काहु, लीन्हे फूल सुरंग॥
बरजा एक अगम की नारी। तुम सुरूप राजा की बारी॥
अलबेली लागहु भल देखे। तुम तिय जिय अस जिय के लेखें॥
हसितें बारी बिना बियाही। जोगी देखै तोहिं न चाही॥
लागहु तपी नयन मों मीठी। यह जिनि होइ लगै तोहि डीठी॥
नहि जानहि जोगी कस अहई। आपन कथा केहि नित दहई॥
देखहु मन फुलवारी, जाहु न तपी समीप।
होत पतंग तपी वह, देखि बदन को दीप॥
जब यह बात सखी वह कही। सुनि मलीन रानी वह रही॥
औरन कहा चलहु वहि वोरा। जग करता है रच्छक तोरा॥
रच्छक आप अलख है जाको। एकहु बार न बाकै ताकहु॥
पै अबहीं देखहु फुलवारी। फेर चलेहु जेहि ओर भिखारी॥
सुखी भई यह बात सयानी। लीन्ह तुरंग फूल एक रानी॥
देखत रहिगै रानी, लीन्हे फूल को हाथ।
एक सखी हंसि बोली, इंद्रावति के साथ॥
हंसि कै मालिन कै गुन गावा। धन चेता अस फूल लगावा॥
उतर दीन्ह सुनि चेता रानी। मोहि न सराही अहो पियारी॥
सुमिरहु तेहि जो है सुख दाता। जे यह फूल कीन्ह रंग राता॥
जो हमार दोउ हाथ बनावा। जेहि करते मै फूल लगावा॥
जग मों जावत है सब बना। तावत करता का दरपना॥
दीठ होइ तो देखऊ, तन आदरस मझार।
बदन बिराजत है तेहिक, जेहिक सकल ससार॥
है वह एक जगत उपराजा। जो दोइ होत बनत नहि काजा॥
धरती गगन सवारा सोई। तासो जोत अउर तम होई॥
करता तीन अउर दुइ नाहीं। एकै है दोऊ जग माहीं॥

जो किछु करत न पूछा जाई । पूछा जाइ जनम जेइ पाई ॥
कीन्हा निस दिन औ रवि चदा । तेहि सुमिरन मों सबहि अनदा ॥
रात दिवस दुइ चीन्ह है, रात मिटत दिन होत ।
याही सो लेखा बरस, जानत है सब कोइ ॥
इद्रावति घन कमल सुबासा । आइ भवर गूंजे चहुं पासा ॥
कहा सखिन सो डर जिव पावै । भवरन मो तन डक लगावै ॥
कहेन सखिन तुम कमल पियारी । लेत भवर हैं बास तुम्हारी ॥
मोहें बास पाइ कै तेरी । कहा तिन्हें सुधि बिन्धै केरी ॥
फूल भवर होइ आइ भ वाहीं । तोहि ऊपर तो अचरज नाहीं ॥
भवर बास के कारने, चहुं दिस आइ भ वाहि ।
पोढा मजकरू रानिया, बिन्धै की डर नाहि ॥
जहं लग सुदर रहीं सयानी । फुलवारी देखे रइ बानी ॥
कहा एक आगम की बारी । बन नइहर जामो फुलवारी ॥
फुलवारी औ फूल बिलोकैं । बहुत अनद बढी है मोकैं ॥
फेर न देखब अस फुलवारी । जब गवनै जावै ससुरारी ॥
परै सीस पर भारी भारा । कैसे राखिही कन्त हमारा ॥
नइहर अहै पियाइा, चक चूहट जिय होइ ।
सुमिर गवन सासुर को, दूर परै सब कोइ ॥
सुनि इंद्रावति सासुर नाऊ । मन मो सोच कीन्ह तेहि ठाऊ ॥
कहा जाब निश्चय ससुरारी । नइहर तजब तजब फुलवारी ॥
छूटि परैं सब सखी सहेली । जाबै सासुर अन्त अकेली ॥
अहो सखी आगम मोहि सूझा । सासुर गवन आजु मै बूझा ॥
अस फुलवारी पाउब कहाँ । सासुर नगरी होइह जहा ॥
तुम्हें समा कित पाऊ, एक बैस की नार ।
नइहर खेल ना पाइब, जब जावै ससुरार ॥
समुझा सखिन सोच मो रानी । बोली सरब बोध की बानी ॥
अहो पियारी सोच न करहू । जेहि प्रीतम प्यारे सग रहऊ ॥
ठाउ देइ सुख मन्दिर प्यारी । लाइ देखावहि तोहि फुलवारी ॥
देइहै बहुत हमै अस चेरी । करइ रात दिन सेवा तेरी ॥
प्रीतम जिउ सम राखै तोही । तोहि सग खेलै खेलइ वोही ॥
अस दुख देइहै सासुरे, तोहि कामिन कह सोइ ।
वैसो सुख नइहर मो, मिला न कबहूं होइ ॥
इद्रावति फिर बात निसारा । तो सुख देइहै कन्त हमारा ॥
जो नइहर मो जोरब नेहा । होवै एक जीव दुइ देहा ॥
चलब मान तजि सूधी चाला । तो सासुर अचउब सुख हाला ॥

रहबै सत्त सनेह सम्हारे। काम क्रोध त्रिसना कह मारे॥
राखब प्रीत सिखब गुन नीका। सुमिरन करब पियारे पीका॥
तौ पाइब सासुर सुख, प्रीतम होइह साथ।
सुख अनन्द निन मानब पिया पियारे साथ॥
घन की करनी जोखइ पीऊ। एहि समुझ डर मानत जीऊ॥
जाकर भारी होइहै तूला। सुख मंदिर द्वारा तेहि खूला॥
जेहि हलुका होइहै दुख सहई। औ दुख अगिन मंदिर मा रहई॥
करनी सिखा जान सब कोई। दाहिन सो पाये भल होई॥
देहि लिखा बाउ सो जाको। बहुत कलेस परै सिर ताको॥
करनी सेती छोट बड, सब किछु पूछे जाहि।
सतवती गुनवत पर, डर एको कछु नाहि॥
सखी एक आँसू कह ढारा। पूछेन कहा परान तुम्हारा॥
कहा गवन को दिन मैं बूझा। सकट दुख ता दिन को सूझा॥ ८
जब सासुर गवने मैं जाऊ। देहि सकेत मंदिर मोहि ठाऊ॥
गुइ जन पूछहि को पिय तेरा। को है जासो मगु तैं हेरा॥
पूछहि कवन पथ तैं लीन्हा। डरे सो उत्तर जाइ न दीन्हा॥
उत्तर देउँ तो बाचऊ, ना तो मारी जाउ।
यही बूझि मैं रोई, कैसे होइ बह ठाउ॥
रानी कहा रहइ जिउ कहाँ। पूछहि जदिन गवन घर महाँ॥
एक कहा यह जीउ पियारा। तापल रहइ सरीर मझारा॥
एक कहा जिउ पूछा जाइहि। पूछे बीच न काया आइहि॥
एक कहा दुइ बात न अहई। का पर कया बीच जिउ रहई॥
एक कहा कछु लइ तन कहना। कहना सों लहना चुप रहना॥
गवन मदिर मो सुख दुख, डर सो टूटै हाड।
अहै सरग फुलवारी, अहै नरक को गाड॥
बोल उठी एक सुदर नारी। रहत फूल नित भरत न प्यारी।
रग सलोन फूल झरि जाई। चक चूहट उपजत अधिकाई॥
सुमन सुबर्न सुगन्ध सोहाहीं। अत झरे माटिन मिलि जाहीं॥
उतर निसारा बूझन हारी। नित जो एकै रहत पियारी॥
जग माली गुन रहत छिपाना। बहुत बरन गुन जात न जाना॥
यह जग है फुलवारो, माली सिरजन हार।
एक एक सो सुदर, लावत ताहि मझार॥
बीरन यह जगती हम पाई। नितु एक आवै नितु एक जाई॥
केतिक बरन के फूलन फूले। केतिक की लालय मन भूले॥
केतिकन रुपवत अवतरे। केतिक बिरस आग सो जरे॥

केतिकन भइन सलोनी नारी । केतिकन तिन पर भयेन भिखारी ॥
केतिकन विद्यावती भयऊ । केतिकन धनी बली होइ गयऊ ॥
अब हेरे नहिं पाइये, तेन सरीर को चीन्ह ।
केतिक रतन पदारथ, मीचु चोर हरि लीन्ह ॥
हम हूँ चलब अवध के पूजे । फेर न जग मो आइब दुजे ॥
फूल दखि का झँखहु पियारी । हम तुम सबको आइहि पारी ॥
एक कहा वैरागिन होहू । अहै मरन हम कहँ औ तोहू ॥
होइकै बैरागिन तप करहू । जासों सरग सदन मह परहू ॥
कहकी भेस न फेरै चाही । फेरे भेस भलो नहिं आही ॥
पिय की सेवा नित करहु, रहहु सम्हारे नेह ।
याते दाता- देइहै । आगम दिन सुख गेह ॥
कहेन बहुत अब आगम सूझा । परमारथ सब का हुआ बूझा ॥
अब रानी चलि देखहु जोगी । कैसे राखत भेष बियोगी ॥
चद्र नखत सँग पाव उठायउ । जाइच कोरहिं दरस देखायउ ॥
सकल सखिन कह जोगी भेषा । जिउ दरवन पायउ जिउ देखा ॥
इन्द्रावति औ सखिय सयानी । जोगी रूप बिलोकि लोभानी ॥
मन लोचन मों चद दिस, रहिगा चितै चकोर
चद बिलोकत रहि गयउ, निज चकोर की ओर ॥
जब लग नैन चार रहु चारी । राजकुवर कह ठग अस भारी ॥
दामिन चमक चाइ अधिकाई । हुअऊ चितै रहे चित लाई ॥
बहेउ पवन लट पर अनुरागे । लट छितिरान पवन के लागे ॥
परी बदन पर लट सटकारी । तपी देवस भा निस अंधियारी ॥
मोहि परा दरसन कर चेरा । हना बान धन आखिन केरा ॥
प्रेम पथ को पथिक, पहरें जोग दुकूल ।
परी साझ तेहि मगुमों, गएउ बाट सो भूल ॥
हा हा सखिन कहा पछिताई । काहें तपी परा मुरझाई ॥
नहि मुरछा मुख देखि सयाना । लट परतहि मुख पर मुरछाना ॥
एक कहा जठ सो मुख सोभा । होत अधिक लखि मुरछा लोभा ॥
एक कहा लट नागिन कारी । डसा गरल सों गिरा भिखारी ॥
एक कहा लट जामिनि होई । रात जानि जोगीगा सोई ॥
एक कहा निसि जानि के, तपी गयउ जो सोइ ।
का जोगी के जोग सों, तप पुरषारथ होइ ॥
जोगी सो जो जागै रयना । मन पर धरै ध्यान की नयना ॥
ध्यान समेत रयन जो जागै । ताको हाथ मनोरथ लागै ॥
पहरू जागत ध्यान न लावा । यातें तेहि कछु हाथ न आवा ॥

मन जागै तब जागव नीको। चित फिरि आवै धरती जीको ॥
एकै बार न जागै कोई। थोरे दिन कों बाउर होई ॥
जाके मन औ नैन मों, दरसन रहा समाइ।
ताको नींद कहा परै, चिन्ता आवै जाइ ॥
बोली एक सहचरी सयानी। जब मुख ऊपर लट छितिरानी ॥
यह मुख यह तिल यह लटकारी। ये तो कहि कै गिरा भिखारी ॥
नहिं जानहि आगे कस कहते। चेत समेत तपी जो रहते ॥
आवहु आगे अरथ लगावें। सब कोउ अरथ पंथ पर पावै ॥
सुनि सब सखी चेत दउड़ावा। जोगी हु तें समस्या पावा ॥
एक कहा मुख लट तिल, मुकुर फाँद है चार।
जग मनसूबा फँदै कह, है एतो उपकार ॥
आपुहि देखि मुकुर मो भूलैं। दूसर सुवा जानि मन फूलैं ॥
दूसर देखि देखि कै चारा। कहैं तुरत यह फाद मझारा ॥
एक कहा मुख तिल लटकारी। सबुज भवर अहै फुलवारी ॥
एक कहा मुख ससिहि लजावा। लट जोगी को मन अरुझावा ॥
तिल इद्रावति मुख पर सोहै। तिल नाहीं जासो जग मोहै ॥
इद्रावति हग लिखित कै, भा विरच मतवार।
मसि लगाउ लेखनी गिरेउ, सोभा मै अधिकार ॥
एक कहा का कोउ सराहै। रूप गरन्थ रानि मुख आहै ॥
तिल है सुन गरन्थ मझारा। लट स्यामल सोहत मसिधारा ॥
सबन बखाना जो जस बूझा। इन्द्रावति कह आगम सूझा ॥
कहा तपी अस कहते आगे। गरब न करु सुन्दर डर त्यागे ॥
यह मुख यह तिल यह लटकारी। अत होइ एक दिन सब छारी ॥
कहेन सखी सब आपमो, धन इद्रावति बूझ।
धन अधीनता धन वचन, धन धन धन धन सूझ ॥
दाया सखी गुलाब मगायउ। छिरिकि कुअर कहँ बहुल जगायउ ॥
सोइ गये अधि को नहिं जागा। वह गुलाब सीतल तेहि लागा ॥
एक कहा यह भी मतवारा। धन के नैन बारुनी ढारा ॥
सखिन कहा हो प्रान पियारी। मारेहु चखुसर गिरा भिखारी ॥
फिर जिउ जो जोगी यह पावै। तोहि तजि औरहि ध्यान न लावै ॥
सखिन न जानहि जागी, है बाउर तेहि लाग।
तजा राज कालिंजर, लीन्ह जोग बैराग ॥
त्राह त्राह में आपन मारा। काहे बूझहु दोष हमारा ॥
कहेन दोष नाहीं धन तेरा। दोष तुम्हारी आखिन केरा ॥
जेहि चितवें तेहि मारहि बानू। सुमिरि सुमिरि तोहि देइ परानू ॥

फेर सखी सब बात सम्हारा। दोष नैन नहिं दोष तुम्हारा ॥
रूप दरब मुख तोर पियारी। अम्बुक जमल करहिं रखवारी ॥
चाहा लेइ तपी दृग, होइ के चोर समान।
नैन तुम्हारे तस करैं, मारा बरुनी बान ॥
कर तसकर के काटा चाही। जीउ न मार दोष धन आही ॥
हैं हत्यारे नैन यह तेरे। खजन मिर्ग अहैं दोउ चेरे ॥
अहै नयन सो उत्तम कानू। तासो बात सुना यह आनू ॥
यह नित जो दोऊ जग कीन्हा। रसना एक करन दुइ दीन्हा ॥
की कहु एक बात मति सानी। सुनि दुइ बात आन सो रानी ॥
बहुतन को ससार मों, जो सिर्जा दिन रैन।
छाप दिन मन ऊपर, औ सरवन पट नैन ॥
मसि औ पत्र सखी एक आनी। जीउ कहानी लिखा सयानी ॥
बहुरि लिखा हो जोगी भेषा। जोग तोर इन्द्रावति देखा ॥
ताको दरसन पाय भिखारी। मुरछानेउ नहिं सकेउ सम्हारी ॥
अबहीं तेरो जोग न पूजा। जोग छोड़ि करु काज न दूजा ॥
लिखा सोधान सखिन के हियरे। चलीं राखि राजा के नियरे ॥
जीउ कहानी लिख कै, राखि चलीं तेहि पास ॥
छोड़ि तपी को आई, जहाँ सदन सुख बास ॥
जब राजा जागा सुधि पावा। जागि चहूँदिस दिष्ट लगावा ॥
पत्र उठाइ बिलोकेउ ज्ञानी। पढा सॅपूरन जीउ कहानी ॥
जब बाचा इन्द्रावति नाऊ। झखा बहुत अपन मन ठाऊ ॥
उपजी प्रेम भाव डर दाहा। बहुतै पछताना कहि हा हा ॥
सो रानी आई मोहि आगे। पहिरेउँ यह कथा जेहि लागे ॥
मोहिं लेखे एक पल भर, उपबन भएउ बहार।
अब देखेउ फुलवारी आइ बसेउ पतझार ॥
कहा गई वह प्रान पियारी। जेहि कारन मैं भयउ भिखारी ॥
कहा गई वह दीप सिखा सी। जाको मैं रम्भा सी दासी ॥
दिष्ट धरी तनु पुनि का भई। देखिन परी परी सम गई ॥
रे जिउ कमल सुगधित अगू। गयेउ न लागेउ अलि होइ सगू ॥
गोरी वह गोरी सम गोरी। नैन नैन सो स्यामा जोरी ॥
गहा धिर्ज मन भीतर, लिहें मिलन की आस।
भा कालिंजर राजा, बिप्र योग को दास ॥

नहान खंड

इन्द्रावति मन प्रेम पियारा। पहुँचा आइ तीज तेवहारा॥
रहिल जहाँ इन्द्रावति प्यारी। आइन राजदीन की बारी॥
होइ कष्ट मन रहा समाना। पै आनन्द सखी नित माना।
कहेनि सहेलिन है डर मानू। मन तारा चलि करहिं नहानू॥
रतन हितू जन के बस भई। सखिन साथ मन तारा गई॥
केस सुगंधित खोलि कै, राखि चीर सब नीर।
पहिरि नहान दुकुल सकल, कीन्हा सजल सरीर॥
अब जूरा इन्द्रावति छोरा। मयउ घटा मों चाद अंजोरा॥
पैठिहु जब जल भीतर रानी। पानिय पायउ तारा पानी॥
झुलना झूलेहु करत नहानू। लहकि चहेउ चुम्बे अधिरानी॥
लखि नथ मोती की अमलाई। तुक छुपाना आप लजाई॥
मनु तारा भा गगन समानू। भयेउ मयंक समा वह प्रानू॥
सुरज उआ आकासही, चंद्र उआ जल माह।
कुमुद तामरस फूले, दोउ मित्र के पाह॥
कहा रतन सों एक सहेली। बरनि न पारों तोहि अलबेली॥
केस कस्तुरी हिंदें फांदू। अहै लिलाट अजोरा चाँदू॥
अहै भिर्कुटी धनुक समानू। है बरनी जिसलू कै बानी॥
नैन सलोन जगत मन हरा। करन सीप मोतों सों भरा॥
नासिक मनहुँ कीर बैठो है। बरक अकार कला निधि को है॥
चिबुक कूप को पानी, चाहत कीर घरान।
फूल गुलाब कपोल है, तिल है भँवर समान॥
सीरन लाल अधर रतनारा। दसन पाँत मोती को हारा॥
मन मेरो लालहि चित घरा। जाइ चिबुक गाड़ा मों परा॥
रेखा एक भौंउ मों सोहै। का बरनों सोभा मन मोहै॥
निर्मल बदन आरसी छाजै। गल कंचन की डाढ़ी राजै॥
अमल कनक सों भुजा बनावा। सुन्दर हाथ कमल मन भावा।
यह सामै हो रानी, जल औ मुख रवि तोर॥
पाइ होऊ कर वारिज, विकस चलें मुख ओर॥
उरज वीर दुइ मनमथ कोहैं। छवि उपवन दुइ श्रीफल सोहैं॥
नाहीं नाहीं चुप यह जानहु। बंटा जमल जोत के मानहु॥
का बरनो रोमावलि हेरी। सेल्है मदन बाहनी केरी॥

पातर लक केस की नाईं। नाहीं सों सिरजा जग साईं ॥
जघ चरन सो आचम्भो है। रम्भा खम्म कमल पर सोहै ॥
मानहु खम्भा रूप के, जुगल जघ है तोर।
चरन बखान न कै सकों, नित परसै चित मोर ॥
सुदरता को लच्छन जेते। प्यारी चेरे तेरे तेते ॥
लट कुतल अति स्यामल आहै। भौंह स्याम जेहि इद्र सराहै ॥
स्याम अधिक लोचन सॅवराईं। स्यामल बरुनी जिस्नु डेराईं ॥
ललित अधर औ रसना तोरे। अँगुली सीस ललित रग बोरे ॥
ललित कपोल गुलाब लजाहीं। जग मन मधुकर समा लोभाहीं ॥
तरवा और हथोरी, आनन रसना छोट।
गल कुतल दिर्गलाब है, बानन मिलै न बोट ॥
दसन सेत औ नैन सेताई। अधिक सेत कछु बरनि न जाई ॥
गोल सीस औ बदन तुम्हारा। गल एड़ी बिधि गोल सॅवारा ॥
ऊँच नासिका ऊँची भौंहैं। बरुनी ऊँच बात सम सोहैं ॥
करन छिद्र पायउ सकराई। साकर नासिक छिद्र सोहाई ॥
आहै साकरि नाम तुम्हारी। तोहि बिधि सौंपै सानि सवारी ॥
एतो सुघराई पर, रचिक गरब न तोहिं।
सुदर सील तेहारो, लागत नीको मोहिं ॥
निज बखान इद्रावति पाए। रही लजाइ सीस औंधाए ॥
कहा बखान करहु का मेरा। है मनाक जीवन जग केरा ॥
का अभिमान देह पर करहूँ। एक दिन होइ छारे होइ परऊँ ॥
गरब सखी सब ताकहु छाजा। जो त्रैलोक बीच है राजा ॥
जे निधनी को सग न चाहा। भयेउ न तेन्है अगम सों लाहा ॥
परगट रग देह को, देखि न गरबै कोइ।
आवै एक देवस अस, छार कलेवर होइ ॥
बोलिन राजदीप की नारी। आवहु जलमों रचे धमारी ॥
जब लग सीस पिता की छाहा। खेलहिं कोउ करहि जगमाहा ॥
जब चल जाहिं कॅत के देसू। कैसो कैसो सहैं कलेसू ॥
नइहर देस कहा फिर आवन। कहँ यह पथ चलै यह पावन ॥
सो गुन एकउ हाथ न आया। जासों होई प्रीतम दाया ॥
जानों नहि पिय प्यारा, राखे कौनै मान।
एकौ गुन नहिं सीखा, हम बाउर अज्ञान ॥
रानी कहा भेद अब कहना। केहि गुन होइ कत सों लहना ॥
एक कहा सेवा नित कीन्हेउ। चित मूरत सम पिय पर दीन्हेउ ॥
एक कहा लहना तब होई। पिय जो कहै करै घन सोई ॥

एक कहा नित करत सिंगारा । चाहै धन कहँ कंत पियारा ॥
एक कहा जो सूघर होई । पावै लाभ कंत सों होई ॥
इंद्रावति प्यारी कहेउ, ताकहँ चाहै पीउ ।
जो पिय की सेवा किहें, गरब न राखै जीउ ॥
समुझ बन्दमों प्रीतम प्यारा । इंद्रावति अबुक जल ढारा ॥
नहिं जानो केहि माते सोई । दिन औ रात बितावत होई ॥
अरे जीउ दाया तोहि नाहीं । तेरो जीउ परेउ बँद माहीं ॥
जलमा रानी ठाढ तवानी । सखिन सात रसमों पहिचानी ॥
पूँछे आगमपुर की बारी । सजल नयन केहि लाग पियारी ॥
आन अनद देवस है, अहै तीज तेवहार ।
केहि कारन चिन्ता मों, प्यारी जीउ तोहार ॥
सकल सखिन सो मरम छिपावा । आनहिं भाँति कि बात सुनावा ॥
वह दिन समुझ सखी मै रोई । जा दिन नइहर बिछुरन होई ॥
वह दिन समुझ सखी मै रोई । जा दिन नइहर बिछुरन होई ॥
बिछुरहु तुम सब सखी सहेली । सब अलवेलि रूप अलवेली ॥
मिलैं कहाँ तुम समों पियारी । कहाँ अलिवेल कहाँ फुलवारी ॥
रहै न सासुर आदर मोरा । सासुर लोग करै नक तोरा ॥
सो दिन समुझि परै सों, जल महँ ठाढ़ तवाउ ।
नहिं जानों कस होइ है, हम कहँ सासुर ठाउ ॥
रंग न फीको करिये जी को । पी को संग पियारी नीको ॥
तब लग नइहर देस पियारा । जब लग मूरखता को पारा ॥
जब हीं खुलै से मुखी नैना । सासुर सोच बढे दिन रैना ॥
सासुर देस मिलै सब प्यारी । हितू तड़ाग राग फुलवारी ॥
पीउ अनन्द मूल जब पावा । सब सुख राज हाथ मों आवा ॥
तुम का आपुहिं को डरहु, है हमहूँ कहँ त्रास ।
पै सासुर कविलास है, रहैं जो प्रीतम पास ॥
खेलै लागिन तारा माहा । कोउ धरि काध कोऊ धरि बाहा ॥
सुन्दरता सागर वह नारी । मन तारा मों रचा धमारी ॥
लै जल मुख कै ऊपर मारैं । नरम कलोल देहिं जब हारैं ॥
रानी साथ कहा एक नारी । गहिरें पाँव न धरहु पियारी ॥
जो गहिरे पग राखइ कोई । नीर सीस ते ऊपर होई ॥
गहिर बहुत है आगे, डूबि मरै जनि कोई ।
ना तो खेल कोउ मो, महा दन्द दुख होइ ॥
सुनि यह बात सखी एक रोई । आंसु गुलिक जल ऊपर बोई ॥
पूछैं और आसु कस ढारे । खेल के बीच अनन्द नेवारे ॥

उतर दीन्ह सासुर मगु ठाऊँ। है सागर औ सागर नाऊँ॥
होइ है जा दिन गवन हमारा। नहि जानौ किम उतरउँ पारा॥
यह नइहर तारा है जाना। जेहि आगे पगु धरत डेराना॥
वह न जान कस होइ है, गहिर गम्भीर अथाह।
इहै समुझि मैं रोइउँ, केहि बिधि होइ निबाह॥
सुनि सब राज दीप की बारी। तजि आनद समुझा ससुरारी॥
आगम सोच कीन्ह सब कोई। सासुर पथ बीच कम होई॥
बोलिन फेर सोच यह काहे। प्रीतम दाया पथ निबाहे॥
होइ जलधि तो सेवक लेई। घन कहँ जलधि पार कै देही॥
जा सग ब्याह होत जग माहीं। पथ निबाहत सो धरि बाहीं॥
जनम सँघाती होत सो, जाके सग बियाह।
जैम परै तस अगवै, धन को करै निबाह॥
कै नहान सब बाहर आई। निर्मल अग परी की नाई॥
लटकी लट इद्रावति केरी। दोऊ दिस ते मुख कहँ घेरी॥
मुख लट सो सोहै वह रामा। एक चद्रमा दूइ त्रिजामा॥
लट कपोल पर सोहै कैसे। बैठा नाग बित्त पर जैसे॥
सोन बिनावट दुकुल रँगीला। कीन्हा अग सो परगट लीला॥
कै नहान घर कहँ चली, वै सब कनक सरीर।
उनकी निर्मलताइ सों, भा निर्मल मन नीर।
मन तारा केती रहि रानी। दिउरी एक देखि बिथकानी॥
प्रान बाटिका की वह स्यामा। पूछा कवन सती यह ठामा॥
सखियन कहा सती यह ठाऊँ। रानी कहा सती है नाऊँ॥
तब की बात हमै सुनि परी। अपने कत लाग धन जरी॥
जस तोहार तस ता गल नीका। खात तमोल देखावै पीका॥
अब धन जरिकै छार भै, रहे न एकौ चीन्ह।
दिउरी साखी करत है, अगिन छार तेहि कीन्ह॥
इद्रावति करुना मैं रोई। एक दिन छार होइ सब कोई॥
दिउरी के समीप होइ कहेऊ। हहूँ कैसो यह रानी रहेऊ॥
हहुँ कस रही चाल नारी की। दयावन्ति की मानिनि जी की॥
कहाँ गई धन मिलै न हेरैं। है ता जिउ दिउरी के नेरैं॥
हहुँ कस रहा चरन औ हाथा। कैसो रहा गीउ औ माथा॥
मन तेवान के ठाढी, रही घरी भर आप।
हिर्दै सात रस डूबा, बुझि जगत कहँ स्वाप॥
इद्रावति जब ध्यान लगावा। सबद एक एक दिस ते आवा॥
मैं का रहिउ रहीं बहुतेरी। जिनकी रहीं अपछरा चेरी॥

सोऊ जगत छाड़ि कै गई। मिलि धरती मों माटी भई॥
इहा न लहत सिंगारी काया। लहत न गरब लहत है दाया॥
लहत न काया सुन्दरताई। लहत पुन्य मन की निर्मलाई॥
सबद पाइ इंद्रावति, अधिकौ रही तवाइ।
चिन्ता बहुतै कीन्हा, अपने मंदिर आइ॥
हौ मैं पाप भरी जग माही। आस मुकुत की है किछु नाहीं॥
है मोहि बीच दोष जहँ ताईं। डरउँ करै कैसो जग साईं॥
साहस देत परान हमारा। अहै रसूल निबाहन हारा॥
निस दिन सुमिरु मोहम्मद नाऊँ। जासों मिलै सरग मों ठाऊँ॥
करता तोहि मोहमदि कीन्हा। माथ सुभाग अस तोहि दीन्हा॥
ना करु सोच अगम को, राखु हिदै मों आस।
जाके दीन बीच तैं, सो देइ है सुख बास॥
अरे प्रीतम तैं मन हरा। अहौ बियोग बन्दमों परा॥
आइ बंद सों मोहि छुड़ावहु। दोऊ जगत भलो फल पावहु॥
मोहिं पाछे बैरी बहुतेरे। चेरे साथी सेवक मेरे॥
खरग काढ़ि बैरी कहँ मारहु। बद कूप ते मोहि निसारहु॥
अलख सँवारा तुम कहँ बली। चलै जगत मौं कीरत भली॥
दूसर बद न भावत, जहाँ प्रेम को बद।
जगत बद दुखदायक, प्रेम बद आनन्द॥

जुद्ध खंड

बुद्ध सेन क्रीपा कहँ सेवा। जैसे मानुप सेवै देवा॥
राज कुवर को वद सुनावा। सुनि क्रीपा क्रीपा पर आवा॥
तव सहाय जगपति सों माग। सव पायव्र कछु एक न खाग॥
क्रीपा चला कटक लै भारी। गोहन सुभट चले वलधारी॥
पानहु दीन्ह समुद्र हलोरा। लहर मनुज तवेरम घोरा॥
तवेरम दल सोहै, कज्जल गिर के रूप।
रहेउ अचल कज्जल गिर, ताहि चलायउ भूप॥
कहत न पारउँ तुरै वखानू। रहे चलत महँ पवन समानू॥
औ थिराय कै सामै माही। माटी चाह सो अधिक थिराहीं॥
नीचे जल सम पाव उठावैं। अगिन समा ऊपर कहँ धावैं॥
वाजी सकल पवन के जाये। मानहु चेत भेस धर आये॥
वै सवार है पर केहि मानन। मनहुँ पवन ऊपर पउचानन॥
यह समीर तेन आगे, चलत थकित होइ जाइ।
आगे वै पगु राखहीं, पाछे पवन थिराइ॥
क्रीपा आवागढ़ नियराया। आया पति दुर्जन सुधि पावा॥
गढ भारेउ औ कटक बटोरा। धरेनि अलग वीर चहुं ओरा॥
तिस्ना कोप सहायक आयउ। आयेउ गरव अधिक वल पायेउ॥
गढ़ सों छूटन लागेउ गोला। डोला सात अकासहिं डोला॥
क्रीपा दिस छूटत अरि चोटा। भयेउ जगत करता की ओटा॥
वाजहिं वाला संजुगी, चहुँ दिस परेउ पुकार॥
चार मास तहँ वीता, होत सत्रु सो मार॥
जो करतार पथ पर जूझा। ताकहँ चिरञ्जीत हम बूझा॥
करता मगु पर जे रन लायेउ। ताहि सहाय गगन सौं आयेउ॥
आयेउ नभवासी की सैना। दीख न पारा ता कहँ नैना॥
करता की सेवा के वेरा। होइ जहाँ डर दुर्जन केरा॥
सुमिरन सेवा आधे करहीं। आधे लोग सत्रु सँग लडहीं॥
धन जो सिरजनहार मगु, गहि कै राखेउ पाव।
पाव न टारा जुद्ध सो, आय उरद मो घाव॥
गढ सों गरब राय मुख खोला। गरव वचन दुर्जन सों वोला॥
जैसो जगपति तस तुम राजा। गढ सों निमरि जुद्धि तेहि छाजा॥
एकै एक करहिं मिलि जूझा। जाय सुभट जन को गुन बूझा॥

तब दुर्जन गढ सो निसराना। हलकी रज तिमिरार छुपाना॥
चढ़ि मैदान कोप मा ठाढा। छुमा खरग यह दीसौ काढा॥
भयेउ खेत के ऊपर, सौंथे मींच भिड़ाय।
आइ सरीरन सचरेउ, काहे करमों घाव॥
सुमिरि हिये करता कर नाऊँ। मारा छुमा कोप सिर ठाऊँ॥
जब वह कोप गिरा गा मारा। आयउ मदनसिंह वरियारा॥
धरम राय यह दिसते धायेउ। गदन सिंह कहँ बाधि लिआयेउ॥
मदन विमद होइ सेवक भायेउ। आपा सुरा उतरि तेहि गायेउ॥
दुर्जन कटक सहित तब धावा। अजरन रकत समुद्र बहावा॥
एकै भये दोऊ दल, जमल जलधि मैं एक।
कठिन परगटेउ सजुग, मन सों गयेउ बिबेक॥
भयेउ घटा ढालन सो कारी। खरगन भये बीज चमकारी॥
गेंदा सीस खरग चौगानू। खेलहिं बीरहिं चढ़ि मैदानू॥
हाल आपनों आपनो चाहँ। अरि को शस्त्र चलाव सराहँ॥
भाला खरग हनै सब कोई। बोडन खरग ठनाठन होई॥
गगन खरग सों ठनठन गयेउ। हिन हिन औ धुन हन हन भयेउ॥
घोनई घटा धूर सों, दिन मनि रहा छिपाय।
तहा महाभारथ भा, सबद परेउ हू हाय॥
साहस राय गयद सरीरा। औ मन सिंह धरम रन बीरा॥
खरग हनै जाके उपराहीं। बिनु बिलगे सो बाचै नाहीं॥
कोउ भये घायल कोउ मारे। भाला खरग सुरा मतवारे॥
छुछावान सो भयेउ निखगू। भयेउ निखग बान को अगू॥
बढ़ेउ कमठ कहँ दाह कराहू। चकाचाक भा धाधक हाहू॥
जुद्ध करत दोऊ कटक, थाके रहे अघाय।
दुर्जन रिपु मारा परा, ता दल गयेउ पराय॥
झीपा जब दुर्जन कहँ मारा। जाइ के बद सों कुँवर निसारा॥
कुँवर कहा झीपा जस लीजे। जलज सिंधु दिस गवन करीजे॥
झीपा कुँवर सहित गा तहाँ। रहा समुद्र गुलिक को जहाँ॥
कहा बहुत राजा जिउ दीन्हा। काहुअ मोती हाथ न कीन्हा॥
बहुत महीप भये मर जीया। मोती काढे नित जिउ दीया॥
दीन्ह कुँवर कहँ झीपा, मोती ठउर बताइ।
औ सेवक हकरायेउ, राहहिं दीन्ह चिन्हाइ॥
राजा जगपति यह सुधि पावा। मरमी जन सों मरम जनावा॥
एक मनुष राजा सों कहा। ना जानहि जोगी कस अहा॥
राजन ऊपर परन तुम्हारा। नाही सबै निसारन हारा॥

यह मोती तेहि काढ़व छाजा। राजा पुत्र होइ जो राजा॥
बरजि पठावहु बेर न कीजै। जात खोजि कै आशा दीजै॥
भायेउ बात निर्प कहँ, भेजा तुरत बसीठ।
फेलि लियाई कुँवर कहँ, दीन्ह जलज दिस पीठ॥
बैठा विर्छ तरें अनुरागी। चिन्ता कथन हुतासन लागी॥
कहै कवन उपकार बनावउँ। जातें प्रान वल्लभा पावउ॥
जावक होउँ होइ दुख मेटउ। तो वह कमल चरन कहँ भेंटउ॥
कज्जल होउ नयन लगि रहऊ। होउ पवन लट ऊपर बहऊ॥
होइ मोती बेसर महँ परऊँ। होइ प्रतिबिम्बी छाया धरउँ॥
जेहि प्रान प्यारी के, अमी भरे अधरान।
ता पगु रज के ऊपर, वारौं आपन प्रान॥

मधुकर खंड

इंद्रावति चिन्ता महँ परी। रहै न बिनु चिन्ता एक घरी॥
आइ रैन तेहि बहुत सतावै। कल न सुपेती ऊपर पावै॥
कलगै गलगै जलगै काया। तेहि बियोग को पीर सतावा॥
सखिन मता आपुस मों कीन्हा। सब मिलि कै ऐसो मत लीन्हा॥
निस कहँ जहाँ रहै वह रानी। सदा सुनावहु एक कहानी॥
होइ बहोरै जीउ को, सुनत कहानी बात॥
चिन्ता जाय सरीर सों, नींद परे बहि रात॥
एक सखी निस होतहिं आई। मधुरी बचन असीस सुनाई॥
कहा कहत हौं एक कहानी। सरवन दै कै सुनियो रानी।
बहुत बचन करतार पठावा। जेहि सुनि कै बहुतेन मतु पावा॥
कहा बहुत जैन की मति फेरी। अहै कहानी आगेहि केरी॥
अहै कहानी पै सुन रानी। है अमृत सानी रस बानी॥
कहा कहानी कहिये, सुनो कान दे ताहि।
जीउ बिरह सों तन महँ, उठत कराहि कराहि॥
मन रानी को पाय सयानी। मन सों लाग सो कहै कहानी॥
मोहनपूर रहा एक गाऊँ। तहाँ महीपत मधुकर नाऊँ॥
जस मधुकर रस रहै सोभाना। तैसे वह रस महँ लपटाना॥
जग रस बीच परा जो कोई। आगम रस नहिं पावहि सोई॥
रस पावै जो जेहि करतारा। दहय दिष्ट सो हया उघारा॥
मधुकर के मन्दिर मों, रहै बहुत रनिवास॥
संचत करै भँवर सम, लव अम्बुज के पास॥
एक दिन राजा गयेउ अहेरें। देखा एक मिर्ग कहँ नेरें॥
मिर्ग चला मधुकर है हाका। मिर्ग पवन दहुँ रहै कहा का॥
चला मिर्ग के पाछे सोई। छुटा लोग ना पहुँचा कोई॥
जात जात एकै बन महँ परा। देखा निर्छ एक अति हरा॥
भयेउ कुरग कुरंग हेराना। तरिवर तरे आइ पछताना॥
ऊँचा तरिवर देखि कै, और गम्हीरो छाह।
सुख पायेउ दुख भूला, भउ अनद मन माह॥
सीतल छाहा सो सुख पाई। पौढ़ा भुई पर बसन छिपाई॥
ततिखन दुइ सुक आइ बईठे। बोले बचन आप महँ मीठे॥
पूछा एक कुसल हो प्यारे। केहि धरती सुख बास तुम्हारे॥

जब से हम तुम बिछुरे दोऊ। मिला न तुम्हें समों हित कोऊ ॥
जेहि भेटेउ अपकारी पायेउँ। तासो मागेउ प्रीत न लायउँ ॥
सुभ बेला यह सुभ देवस, दरसन मिला तोहार ।
समाचार आपन कहो, जीउ थिराय हमार ॥
दूसर सुआ अधर कहँ खोला। समाचार की बानिय बोला ॥
जा दिन छूटा संग तुम्हारा। जाइ परेउँ एक विपिन मझारा ॥
तरिवर पर निर्चिन्त बईठेउ। छल पहरा को एक न डीठेउँ ॥
सब अनजान न जानत कोई। गुपुत अंतर पट सों का होई ॥
जिनि यह कहौ करौ असि मोरे। दहुँ अस प्रगटे भोर अँजोरे ॥
मै निचित अपने मन, आइ एक चिरिमार ।
खांचा मारि बझायउ, डारेउ बंद मझार ॥
लै मोहि प्रेम नगर के हाटा। बेचेसि चलिगा दूसर बाटा ॥
परेउँ रूप राजा घर माहीं। जहाँ दरब कछु खागा नाहीं ॥
तेहि के घरे सुन्दर एक बारी। तेहि की सुता सुदर सुकुमारी ॥
अति सुगंध मालति की काया। जनुविधि सुगंध मिलाइ बनाया ॥
मोहिं राजा मालति कहँ दीन्हा। बचननसों सेवा मै कीन्हा ॥
कीन्ह पियार बहुत मोहिं, दायावन्ती होइ ।
सेवा किहे पियारा, होइ अंत सब कोइ ॥
मालति रूप न बरनै पारउँ। केतिको अर्थ न चित सँचारहु ॥
अबहीं तेहि संग भँवर न लागा। मिर्ग नयन लखि आनन भागा ॥
मालति बास मालती बासा। मालति पास मालती पासा ॥
जानहुँ ससि भुई पर अवतारा। पुहुमी पर उचरी अपछरा ॥
है सुकुमार बहुत वह रानी। बोलत बानी अमृत सानी ॥
है मालती सुवासित, सुगंध भरे जनु अंग ।
ज्ञान भरी सुदर सखी, रहैं सदा तेहि संग ॥
एक देवस धन रूप निधानू। निर्मल तारा गइल नहानू ॥
सून मँदिर मों पिंजर मोरा। रेवाँ रहा मजारिय तोरा ॥
बाचेउँ रिपु सों हियें डेराना। पिंजर सो मै निसरि पराना ॥
बंद छुटे आनद मैं पावा। अंत परवेरू अहइ परावा ॥
जेहि के छलें छुटा सुखवासू। तेहि बैरी कर का बिसवासू ॥
अब बन बन फेरा करउँ, समुझि पिंजर को बंद ।
काहू कर सेवक नहीं, मन मों रहत अनन्द ॥
सुनि मधुकर मालति कै नाऊँ। भा मालति मधुकर तेहि ठाऊँ ॥
उठि कै कहा बिहंग पियारे। बात न बान प्रेम कर मारे ॥
तुम पंडित बुधवंत गरेवा। उतरहु आइ करउँ मै सेवा ॥

इहु नियरे पै करमो नाहीं। रहेउ सभाइ सकल तन माही ॥
आवहु सीस देउं तेहि ठाऊँ। तेहि लै चलहु अपाने गाऊँ ॥
जिउ अस राख तुम कह , धरउ न पिंजर माह ।
जल चारा आगे कै , रहौ जोरि दोउ बाह ॥
कहा सुवा तुम मानुष होऊ। तुम धरती पर ढारहु लोहू ॥
आगे अब मानुष नहिं आवा। बहुतन औगुनता पर लावा ॥
है मानुष निर्दे हत्यारा। सकै अनुज कहँ जिउ सो मारा ॥
सात देह मानुष कर जारैं। सात नरक द्वारे महँ डारैं ॥
चाम जरै तब दूसर देहीं। मानुष बार बार दुख लेहीं ॥
हौ पंडित औ चातुर , कहाँ चलौ तेहि संग ।
जिउ पखी नहि पालै , पाले अंग भिहंग ॥
तुम मोहि यह सत बात सुनावा। मानुष परसै ऐगुन आवा ॥
पै मानुष बुध कै बउसाऊ। सकलो सिष्ट को जाना नाऊँ ॥
मानुष पर दाता की दाया। सकलो सिष्ट को नाम सिखाया ॥
करता की नेव मानुष अहई। का जो दोष पाप मो रहई ॥
प्रेम नगर औ मालति बाते। फेर सुनाउ चतुर महाते ॥
एक एक कै बरनहु , वह मालति की बात ।
सुनउ जीउ सरवन दै , हो पंडित मुखरात ॥
कहा मोहि प्रान समो जेइ पाला। मन भा तेहि की प्रीत को माला ॥
मरमी भयउँ सदा कह सेवा। तोहि बेरान से भाषउँ भेवा ॥
सरवन सुनै जोग तेहि नाही। भूल न देखेसि देखेसि छाही ॥
नरक बीच बहुतन कहँ भरई। मन राखहि पै बूझि न करई ॥
नैना होइ न देखइ नैना। सरवन रखहि सुनहि नहिं बैना ॥
वे सब पसु के मान हैं , बरू पसु चाह अचेत ।
जेहि के मन नहिं चेत है , तेहि को भेद न देत ॥
कहा कहा तुम मेरो भेटा। नहिं जानो का ऐगुन भेटा ॥
बिनती एक करउँ कर जोरी। मानु दया सो विनतिय मोरी ॥
मोर सदेस कान कै लीजै। प्रेम नगर कहँ गवन करीजे ॥
जायेहु जहँ वह मालति प्यारी। तासो भाखेहु बिथा हमारी ॥
सपत तेहिक जेइ जनमा मोही। प्रेम हमार जनायहु वोही ॥
मोहनपुर मँ मधुकर , कहहुँ निपँ एक आह ।
बहुत बेयाकुल कीन्हा , प्रेम तेहारो ताह ॥
कहा तेहारो बिनती मानेउ। मालति कर मधुकर तेहि जानेउ ॥
एक बार तोहि कारन जाऊँ। धन सो कहऊं तेहारो नाऊँ ॥
आनक सपत दिहा नहिं काही। सपत भलो करता कर आही ॥

बहुत सपत जो मानुष खाहीं। ते जिन रहु तेहि आशा जोही ॥
कहौ नाम सुनि कै तोहि लोभा। बिनु देखै मूरत औ सोभा ॥
यह सब कहि उड़िगा सुवा, मधुकर मन पछतान।
पखी सम चचल है, काया बीच परान ॥
हेरत सकल लोग और दासू। आए सब मधुकर के पासू ॥
लोग समेत निर्प घर पर आए। मन महँ प्रेम बसेरा पाएउ ॥
परगट राज करै औ बोलै। गुपुत दिष्ट मालति पर खोलै ॥
परगट सब के जाने भोगी। गुपुत भएउ मालति कर जोगी ॥
परगट रहइ आपने गाऊ। गुपुत रहै मालति के ठाऊ ॥
परगट सब सो बोलै, गुपुत जपै वह नाम।
मन मह रहै व्याकुल, हरिगा सुख बिसराम ॥
मालति उहाँ बहुत दुख देखा। जा दिन सो गा सुआ सरेखा ॥
कहै कहाँ वह पडित सुवा। कादहु हुआ जियत की मुआ ॥
छूछा पिजर रहिगा रेवा। उड़िगा प्यारा प्रान परेवा ॥
जो पिजर की भीतर बोला। औ जानों यह पिंजर डोला ॥
सो चलिगा केहि बन ठहराना। रहा आपना भयेउ बिराना ॥
सुवा आनि को मेरवे, पिजर देइ जियाइ।
का औगुन दहुँ देखा, तजि के गयउ पराइ ॥
सखिन बुझावहि सुवा पियारा। ठहरा जब लग रहा तुम्हारा ॥
उड़िकै गा रहिगा पछतावा। कहाँ थिरै जब भएउ परावा ॥
जों पछताने आवइ हाथा। हम पछताईं सकल तुम साथा ॥
पिजर देह रहा तेहि भारी। हलुक देह उड़ि लीन्हेसि प्यारी ॥
उड़ि कै पन करि भयेउ अहेरी। तेहि डर छूट मजारिन केरी ॥
पिजर बीच रहा सुवा, चारा चिन्त मझार।
अब ऐसे तब मैं गएउ, सुख सो मिलै अहार ॥
दिन दस बीते सोच मों गयऊ। सुवा जाइ कै परगट भयऊ ॥
मालति देखि जीउ जनु पावा। प्रान मिलै कहँ आगेहँ धावा ॥
कहा प्रान अस नियरे होहू। तोहि नित बहुत पिया मैं लोहू ॥
कहा सुवा बाचा मोहि दीजै। मोहि पिजर के बीच न कीजै ॥
मै बन-बीच रहेउं जब भागा। नरक समा अब पिंजर लागा ॥
बाचा दीन्हा मालती, सुवा नियर भा आइ।
कंठ सुवा कहँ लायेउ, प्रान पियारी धाइ ॥
कहा कुसल कुछु प्यारे सुवा। तोहि नित आसु नैन सो चुवा ॥
कहो कवन औगुन मोहिं लागे। जेहि नित छाड़ हमै तुम भागे ॥
केहि बन भीतर रहेउ बसेरा। कहा कहा तुम कीन्हा फेरा ॥

सुनि कै सुवा असीस सुनावा। देइ असीस सीस पुनि नावा॥
तुम औगुन सो निर्मल प्यारी। औगुन भरी सरीर हमारी॥
तुम तो निर्मल तारा, गहहु करै अस्नान।
पिंजर धरा मंजारी, गा वह टूट निदान॥
पिंजर टूटा मिला दुवारा। बाहर निकसि पंख मै झारा॥
रहत न भावा बैरी राँधे। रिपु नित रहै घात सर साधे॥
परोस जहाँ सत्रु को होई। तहाँ निचिन्त रहै का कोई॥
जाइ परेउँ ऐसे बन माहीं। खाग जहाँ चारा कर नाहीं॥
हम तुम छूटि गये तेहि ठाऊँ। इहाँ अहै हम तुम सब नाऊँ॥
आयेउँ दरसन कारने, औ राखउँ एक बात।
सूनो मंदिर होइ जब, बात कही तब जात॥
सुन मंदिर तब मालति कीन्हा। सुवा सयान भेद तब दीन्हा॥
उड़ि उड़ि सब कानन महँ भयऊँ। औ सब तरिवर ऊपर गयऊँ॥
मिला एक दिन एक परेवा। मित्र रहा कीन्हा मोर सेवा॥
दोऊ एक बिर्छ पो गयऊँ। छाहा पाय सुखी मन भयऊँ॥
सुवा साथ मै तुम्हें बखाना। जस तोहार सब वोनहूँ जाना॥
बिर्छ तरे एक मानुष, सुना सकल गुन तोर।
बिनु आशा अब आगे, कहि न सकै मुख मोर॥
कहा पियारे बात तुम्हारी। जीउ देत हैं कहु बलिहारी॥
तुम पंडित जो पंडित होई। अब सकु बात न भाषै सोई॥
सिद्ध रूप तुम सुवा गेयानी। बात तोहार अमीरस सानी॥
सिद्ध बात लाभा की कहई। का जों उलटी बातैं रहई॥
स्वानौं कोकरा जो मरि जाहीं। सिद्ध कहै भल है भल माहीं॥
आशा का मागत हौ, भाषहु जो मन होय।
मिलबो लूट तुम्हारो, मरम न राखौ गोइ॥
कहत बखान नाम गुन तेरो। सुनि कै वह मानुष भा चेरो॥
बिनती बहुत कीन्ह मोहि साथा। नग संदेस को दीन्हा हाथा॥
कहा जाइ मालति के गाऊँ। प्यारी साथ कहेउ मन भाऊँ॥
मोहनपूर देस है मेरो। मै मधुकर राजा हित तेरो॥
मोहिं राजा कहँ प्रेम तुम्हारा। व्याकुल कीन्ह सोच मे डारा॥
एहि संदेस तेही कहे, कछु बसीठ पर नाहि।
जो संदेस ले आवहीं, पहुँचावै चलि जाहि॥
यह सुनि कै मालति सुकुमारी। चुप होइ रही न बात निसारी॥
बिनती कीन्ह सुवा कहँ राता। दीन्हा ठाव बिर्छ कहँ राखा॥
पिंजर भीतर सुवा न आवा। लाग रहै छूटा सुख पावा॥

रहै सुवा फुलवारी माहा। जहँ फल फूल औ सीतल छाहाँ॥
जस बैकुंठ बीच फल नियरें। तस नियरे अनदाना हियरें॥
उड़ि बैठहि तेहि डार पर, जहाँ चलावै जीउ।
मन काया के छोर महँ, सुख अनद मै घीउ॥
मालति मन पर मधुकर नाऊँ। लिखिगा देखि परै मन ठाऊँ॥
कवल समा मन प्यारी केरी। होइ मधुकर भा मधुकर चेरा॥
प्रेम फाद प्यारी मन परा। मधुकर मन मालति मनहरा॥
मन सो का कहँ सुमिरें कोऊ। सुमिरै ता कहँ मन सो सोऊ॥
कहा अलख सुमिरौं तुम मोहीं। सुमिरे सो सुमिरौ मैं तोही॥
रही सुगंधित मालती, प्रेम भँवर तेहि कीन्ह।
व्याकुल भई जीउ महँ, भेद न काहू दीन्ह॥
दुर्बल भइ जब मालति बारी। धाई धाइ कहा बलिहारी॥
कवन कलेस समान सरीरा। कहत सरीर सो आपन पीरा॥
कहा कलेस न एको मोहीं। कवन कलेस सुनावउ तोही॥
कहा भई दुर्बल तैं बारी। बिनु दुख दुर्बल होत न प्यारी॥
हो री मात समा है तोरी। मोरी मरम न गोवहु गोरी॥
जो दुख होई पिंड महँ, सो मोसे कहि देहु।
धाइ करौं उपकार सै, दुख कर ओषद लेहु॥
कहा सुवा वोही दिन जो आवा। मोसे मधुकर नाँव सुनावा॥
है जो एक देस मोहनपुर। मधुकर राय तहाँ जस सुर॥
सुवा सुनायेउ तेहिक सदेसू। हौ तेहि कारन प्रेमी भेसू॥
हों माता सुनि मधुकर नाऊँ। भा गन मधुकर उड़ि कै जाऊँ॥
मोहि मालति कहँ मधुकर नेहा। कीन्हा मधुकर नेही देहा॥
तुम माता दाया भरो, दाया ऊपर आउ॥
मोहि मालति कहँ मधुकर, कै उपकार मोराउ॥
सुनि धाई दाया पर आई। मालति सो उपकार सुनाई॥
सौंपहु काज आपनो ताको। सिरजनहार नाम है जाकों॥
पुरुब पछुम को पालन हारा। है सो पुरवै काज तुम्हारा॥
सुमिरहु ताहि बिसारहु नाहीं। सुमिरन बड़ो अहै दिन माहीं॥
बहुरि सुवा सो बिनती कीजे। बिनती कै जिउ कर महँ लीजे॥
भेजहु तेहि कोहनपुर, मधुकर आनै आस।
आने प्रेम बढाइ कै, तेहि मालति कै पास॥
एक दिवस मालति मति पागी। बिनती करै सुवा सो लागी॥
कोमल बात जीभ सो खोला। फाँद भलो है कोमल बोला॥
कोमल बात कहै कहँ दाता। कहा अहै भल कोमल बाता॥

धरती ऊपर जाउ परावा। कोमल कहँ हाथ महँ आवा॥
तुम हौ सुवा प्रान जस प्यारा। जैसे प्रेम बान तुम मारा॥
तैसें महि घायल कहँ, औषद फाहा देहु।
लैआवहु मधुकर कहँ, यह पूरा जस लेहु॥
सुवा कहा सुन धारो मोरी। अहै सीस पर आज्ञा तोरी॥
मैं पखी वह मानुष आही। मनुष बसीठ मनुष दिस चाही॥
सो जेईं कीन्हा जगत अजोरा। मानुष भेजा मानुष बोरा॥
मानुष मानुष बचन समूझै। सुवा सुवा की बातें बूझै॥
औ मोहनपुर देखेउँ नाहीं। अकस जाउँ भूल बन माहीं॥
होइ साथ जो मानुप, जाउँ मोहनपुर देस।
दोऊ मिलि समुझावैं, आवै इहा नरेस॥
दुई समुझायें समुझई सोई। दुइ जन मिले चूत भल होई॥
जेहि बसीठ कै जीउ डेराई। लीन्ह सहायक आपन भाई॥
गा तेति दिस जासो डर माना। भाषा साची बात सयाना॥
दुइ मन एक होइ गिर तोरैं। कटक बिदारत बदन न मोरैं॥
जेइ मन तोरा सोगा तोरा। मन तोरा कहि तोरा मोरा॥
प्रेम नाम बन जारा, बसै तुम्हारे गाउ।
ताके संग पठावहु, मोहनपुर कहँ जाउँ॥
माना बान मालती रानी। धाई साथ जनायसि ज्ञानी॥
धाई गई प्रेम दिस धाई। बिनै सुनाई बात जनाई॥
दीन दरब औ आसा दीन्हा। प्रेम सीस पर आज्ञा लीन्हा॥
दरब करै सब कारज पूरा। उद्दित करै दरब जिमि सूरा॥
जो न दरब को निर्मल करई। अगिन होम होइ गल मो परई॥
करता अपने पथ पर, दरब कहा है देइ।
जो नहिं देई सो एक दिन, लाछ्र दरब सो लेइ॥
सग लै सुवा प्रेम बनिजारा। मोहनपूर पथ पगु ढारा॥
अहै बनिज को उद्दम भलो। पै जो करै बनिज निर्मलो॥
सरिजनहार आप को बेला। आवत तजै बनिज को खेला॥
बेचब लेब कहा है भलो। अहै बियाज नहीं निर्मलो॥
सुन्दर रिन करता कहँ देहू। वह जग मूल लाभ संग लेहू॥
बिनु पद दरब जों आन को, जो कोइ अगमों खात।
आनहु अगिन सो खात है, है यह साची बात॥
काटत पथ सुवा बनिजारा। पहुँचे मोहनपूर मझारा॥
मधुकर उहाँ बियनकुल हियें। ध्यान रहै मालति पर दीये॥
बेकल बहुत भा मधुकर राजा। गा सब छूट राज को काजा॥

मरम की कली फूल विकसाना। बास पाय सब काहुश्र जाना ॥
छपि ये प्रेम कस्तूरी दोऊ। अंत बास पावै सब कोऊ ॥
लोगन बहुत बुझावा, फिरा न मधुकर प्रान।
भयेउ प्रेम के बाढ़े, बाउर भेस निदान ॥
सुवा- प्रेम कह मरम सिखावा। बेचहु हम कह जानि परावा ॥
हाट चढ़ाइ मोल करु भारी। लै न सकै बैठै सब हारी ॥
तब राजा मधुकर मोहिं लेई। भारी मोलि वेगि तोहि देई ॥
मित्र जो होई सो मोल बढ़ावै। वैरी जान से औगुन लावै ॥
अति सुंदर कहं बैरी लोगू। बेचा थोरै पर बिनु जोगू ॥
मधुर बचन मैं बोलऊ, मधुकर लेइ निदान।
रहि राजा के सग मह, करों हाथ मों प्रान ॥
प्रेम जबै दूसर दिन पावा। लैकै सुवा हाट महं आवा ॥
हाट नगर मों भयेउ पुकारा। पेम नगर का है बनिजारा ॥
बेचत है एक सुवा सरेखा। वैसों पंडित कीर न देखा ॥
गाहक आये मोल उधारा। भारी मोल सुनत सब हारा ॥
मधुकर प्रेम नगर कर नाऊं। सुनि आनन्दित भा मन ठाऊ ॥
आएउ मधुकर हाट मों, लीन सुवा कहं मोल।
सुवा अधर कहं खोला, बोला कोमल बोल ॥
मनिमय पिंजर बीच परेवा। राखा मधुकर कीन्हा सेवा ॥
भयउ अहार सुवा की बातैं। मधुकर राजा कहं दिन रातैं ॥
एक दिन प्रेमहिं पास हंकारा। सून सदन कै बात निसारा ॥
है मालति रानी वह देसा। रूप बिहाय कला निधि भेसा ॥
वह रानी कर सुनत बखानू। सुरत सनेही भयेउ परानी ॥
तुम आवहु वहि नगर सों, ताकर कहौ बखान।
एक सुवा सो मैं सुना, उडिगा सुवा निदान ॥
सुनि यह बात प्रेम तब हँसा। हँसा फूल मानहुं महि खसा ॥
जो एक मोल निर्प तुम लीन्हा। मोल गुलिक नग मानिक दीन्हा ॥
येही सुवा मालति गुन कहा। अब अनचीन्ह तुम सों होइ रहा ॥
उहइ सुवा है तुम नहिं चीन्हा। पडित जान मोल तुम लीन्हा ॥
सुवा का पिंजर नियरें राखौ। तब रसाल वच को रस चाखौ ॥
सुनि रहसाना मधुकर, पिंजर लीन्ह उतार।
पूछा कुल कहा कुसल है, है जब कुसल तुम्हार ॥
प्रेम सुवा दोऊ गुन गावा। एकै मुख होइ बात सुनावा ॥
हम मालति के भेजे आये। दरसन देखि बहुत सुख पाये ॥
मालति तुम्हें दिन रात संवारा। भा अब मन तोहि उपर भँवारा ॥

तुम कह आने हमैं पठावा। प्रेमहि निर्प को ताहि जनावा ॥
बनिज हमार तुम्हीं हो राजा। अब वह देश गवन तोहि छाजा ॥
रटत चातकी होइ रही, चलि दरसन जल लेहु।
ना तो प्रान लेइ घन, यह अपराध न लेहु ॥
सुनि मधुकर जानहु जिउ पावा। कहा तुम्हैं मोहि लाग पठावा ॥
छाजत सीस अकास लगावउ। सीस चरन कै तेहि दिस धावउ ॥
अबलग रहेउ भरम मदमाहीं। रही पथ की सुधि मों नाहीं ॥
तुम हुइ अगुवा चतुर सयाने। मिलेहु करेउ तेहि ओर पयाने ॥
है धन दिष्ट भाग को सोहीं। सुमिरन मोर चढे चित बांहीं ॥
रोवत दिन मोहिं बीता, अब हसि करेउं अनन्द।
सोइ रोवाइ हसावै, जेइ कीन्हा रवि चंद ॥
तजा राज कह मधुकर राजा। सकल समाज चलै को साजा ॥
पिंजर सों बाहेर भा सूआ। प्रेम आप मिलि अगुवा हूआ ॥
बहुत लोग राजा संग लागे। मानहुं सोवत कै सब जागे ॥
सोअत है जग मह सब कोई। जब मरि जाहिं जाग तब होई ॥
यह जीवन कह छोटा जानहु। जीवन बड़ो अगम पहिचानहु ॥
जस जियहू तैसें मरहू, उठहु मरहु जेहि भात।
जग चाहुत के ऊपर, काह दिहे हौं दात ॥
बहुत देवस को करत पयाना। एक समुद्र आइल नियराना ॥
चढ़े पीत ऊपर सब कोई। गाढ़ी प्रेम नगर मगु होई ॥
बोइय बूड भये सब कोऊ। सुवा उड़ा जनि बिछुड़न होऊ ॥
जाको राखत सिर्जनहारा। जल सुखाई मगु लाइ उतारा ॥
यह जनि जानहु नीर डुबावै। चाहै धरती बीच धसावै ॥
एक बार जल थल भवा, राखा चाहा जाहि।
आगे कहि कै भेजेउ, नाव बनावै ताहि ॥
बड़े गरब कोप औ माया। भरमित और काम की माया ॥
एक दिस बहे बुद्ध औ बूझा। मधुकर प्रेम बहे नहिं सूझा ॥
मन पछिताइ सुवा गा तहा। चितवत पंथ मालती जहा ॥
मिली कहा कहु कुमल पियारे। पथ निहारा नैन हमारे ॥
कहा कुसल का बूड़ी पोता। होत कुसल जो जन मन होता ॥
मधुकर आवत तेहि दिस, बहा सिन्धु के धार।
बूड़े सकल सघाती, कोउ न लाग गोहार ॥
सुनि यह बात मालती रानी। मन पछितानी सोच सयानी ॥
धन लेखैं जनु परलै आई। यह परलै केहि दिसतें धाई ॥
काहें यह परलै परगटे। आयो हाय ब्रम्हा के छूटे ॥

की बिरंच को एक दिन बीता। सोयेउ मैं परलै की रीता ॥
नहि सिसरे वै हुइ बरियारा। जाकर अवध लिखा करतारा ॥
बीचहिं देखउ परलै, धरती भयउ असिष्ट।
की मन मोर फिरा है, उलटि बिलोकन दिष्ट ॥
सुवा बुझावै बूझहु रानी। जीवन हार न बूड़ै पानी ॥
करै जो किछु करता कोई। अन्त काज वह सुदर होई ॥
भेद छिपा तोहि कारन माहीं। सो जानहि हम जानहिं नाहीं ॥
ज्ञानी एक एक बालक मारा। औ एक नाव जलधि मो फारा ॥
साथी ताकर भेद न जाना। भेद रहा तेहि बीच छिपाना ॥
धर धीरज मन भीतरें। होइ जियत वह होइ।
जो मति सों छूछा अहै, छाडै धीरज सोइ ॥
मालति कहा देहु तुम बोधू, मोहि पहरा पर आवत क्रोधू ॥
कहा करत पहरा कछु नाहीं। वह करता नाही जग माही ॥
जेई पहरा को करता जाना। सो मूरख जग बीच भुलाना ॥
सो करता जो सब पर बली। दीन्ह मनुष्य को काया भली ॥
वह पूरब सो सूर निसारै। को पच्छुम सो आनै पारै ॥
कोप न करु पहरा पर, धरु धीरज मन माह।
देखु जगत मों करता, कस बिस्तारा छाह ॥
धीरज बात कहत है सुवा। मोहिं वियोग सो आसू चुवा ॥
अब अस करहु बहोरह ताही। मन औ ध्यान बीच को आही ॥
कहा बहोरन हारा सोई। जेहि आशा जीवै सब कोई ॥
पै तोहि लाग फेर उड़ि जाऊ। हेरों बन परबत सब ठाऊ ॥
जियत होई तो हेरि निसारउ। ना तो बैठ रहउ चुप मारउ ॥
जियत मिलत है एक दिन, मुवा मिलत है नाहिं।
मानुष्य मुवा मिलै तब, जब निर्मल होइ जाहिं ॥
इडा नाउ लै उड़ा परेवा। हेरा इड़ा अड़ाह सेवा ॥
मधुकर वहि तट ऊपर भयऊ। चलि सैरगपूर मों गयऊ ॥
हेरत ताको सुवा सरेखा। तेहि सैरगपूर मह देखा ॥
रोये ऐसे दोउ दुख भरे। तेन रोवत कुज के दिल झरे ॥
जो दिल झरै अलख तेहि जानै। दूसर पत्र विछै मह जानै ॥
रोये मधुकर औ सुवा, बहुत मानि मन हान।
साथी कारन भा बेकल, मधुकर निपट सयान ॥
सुवा भयेउ अगुवा औ चला। पाछें चला बिरह कर जला ॥
मगु मों मिला प्रेम बनिजारा। और लोग जो रहा पियारा ॥
प्रेम नगर मों मधुकर गयऊ। जनु तप साधि सरग मों भयऊ ॥

है तेहि नित बैकुंठ सँवारा। जो भल काज कीन्ह मद जारा ॥
पहिरैं कनक कडा औ बागा। बोटगै पाट उपर मनि लागा ॥
मालनि फुलवारी रही, रहेउ सनेही नाउं।
सुवा कहा मधुकर सों, लेहुँ इहा तुक ठाउ ॥
मधुकर लीन्ह बास फुलवारी। सुआ आप गवा जह प्यारी ॥
पूछा धन कहु कुसल पियारे। देखि जुड़ाने नैन हमारे ॥
कहा कुसल जब कुसल तुम्हारी। नीको भाग तेहारो बारी ॥
मधुकर राजा को मै जाना। फुलवारी मों दीन्हेउ थाना ॥
है दरसन का भूखा राजा। अब तेहि दरस देखाउब छाजा ॥
तुम मालती वह मधुकर, दोऊ एक सजोग।
रहसे देखी निपं को, प्रेम नगर के लोग ॥
दरस देखावै कह तुम कहा। मोहि वहि दरसन पर चित रहा ॥
दरसन जोग कियेहु वहि काजू। राजा रहा तजा सब राजू ॥
जो दरसन दाता को चाहै। काज करै भल सत्त निबाहै ॥
औ करता की सेवा माहीं। दूसर साझें मेरवें नाहीं ॥
वह सुमिरेउ है एकहि मोही। छाजत दरस दोवाहु वोही ॥
पै अबहीं नहीं उचित, परगट देउ देखाय।
देखै मेरो छाया, ऐसो करहु उपाय ॥
कहा बात भाषा तुम भली। अबहीं लाज लिहें रहु लली ॥
है फुलवारी बीच अटारी। जाइ अटारी चढ़िये प्यारी ॥
मधुकर हाथ देउ मै दरपन। छाया डारि देखावहु दरसन ॥
तैं परगट तेहि लखु उरबसी। वह देखै तोहि ससि की ससी ॥
परगट दरसन को दिन औरै। है प्यारी केतो दिगं दवरे ॥
इहइ उपाय भलो है, यह दिन देहु बिताय।
भोर होइ जब दूसर, दरसन दीजै आइ ॥
दुसरे देवस मालती प्यारी। सखियन संग आई फुलवारी ॥
चढिल अटारी सखियन साथा। दुइज चंद सोहा वह माथा ॥
आप दच्छ वह सुवा सयाना। अटा तरे मधुकर कह आना ॥
दरपन दीन्ह हाथ मह लीन्हा। मालति बदन झरोखहिं कीना ॥
झाका दरपन मों परछाहीं। परी बदन की बिछुरी नाहीं ॥
देखि बदन की छाया, मधुकर भये अचेत।
मालति कली भवर, लखि बिकसि रही संकेत ॥
जब सचेत भा मधुकर जानी। मन्दिर गइ तब मालति रानी ॥
दरसन देकै गई पियारी। तेहि दोहाग भई अधिकारी ॥
मीजन लाग दोऊ दुख माहीं। परी हाथ सुख एकौ नाहीं ॥

सुवा संदेश दोऊ कर आनै। दोऊ सग सनेह बखानै॥
कबहुंव पाती कबहुव बाते। आनै सुवा चतुर दिन रातैं॥
प्रेम विरह वैराग मों, बहुत मास गा बीत।
कबहूं दुख कबहुं सुख, कठिन प्रेम की रीति॥
रूप जनि मालति बरजोगू। नेवता राज बंस के लोगू॥
रचा सयम्बर ठौर बनाये। राजकुमार देश के आये॥
एक एक सुन्दर राजकुमारा। कोऊ रवि कोऊ ससि तारा॥
मधुकर बिनु नेवते गा तहां। रहे राज बंसी सब जहां॥
मधुकर देखि रूप सब लोभा। सोभा तहा सभा को सोभा॥
मड़िमाला मालति लिहें, आई सभा मंझार।
बहुत सहेली गोहने, भयेउ सभा उंजियार॥
लगी आस सब के मन साथा। यह चंचला चढै केहि हाथा॥
वह चंचला चॅचला के समा। चहुँ दिसि फिरी लिहे मन छमा॥
ताकर ग्रीव डली वह माला। टारेउ जो मातेउ तेहि हाला॥
गये सकल निर्प अपने घर को। मालति व्याह गई मधुकर को॥
दुख सहि के सुख पायन दोऊ। बस सुख तुम्हें पियारी होऊ॥
सखी कहानी कहि गई, इन्द्रावति के लाग।
कल ना परै प्यारी को, बाढै अधिक दोहाग॥

विरह अवस्था खंड

धन सो धन जेहि विरह बियोगू । प्रीतम लाग तजे सुख भोगू ॥
नेह बीज मन धरनिय बोवै । रैन न सोवै दिन कहँ रोवै ॥
धन जेहि जीउ होइ अनुरागी । वारे प्रान सो प्रीतम लागी ॥
तजै भोग सुख सुमिरन नाहीं । जागै निसि कहँ सोवइ नाहीं ॥

धन सो जन धन मन तेहिक, जागे मन दोहाग ।
परै दोह की आग मो, मानस भोसै दाग ॥

रोइ दीप सुत डारै धोई । अभिलाषिन अनुरागिन होई ॥
इन्द्रावति सुकुवार कुमारी । भार वियोग परा तेहि भारी ॥
प्रेम सरीर वेआध बढाया । दूबर पीत भयेउ धन काया ॥
पान न खाय न पीवै पानी । भूख पियास भुलायेउ रानी ॥
व्याकुल भई रात दिन रोवै । बदन करेज रकत सो धोवै ॥
प्रेम आग तन काढिय जारा । मारै चाहा मन को पारा ॥

भइउ दूबरी रानी, भै बिबरन तन रंग ।
बैरिन होइकै लागेउ, व्याध अंग के संग ॥

दुर्बल भइउ व्याध सो नारी । बल घटि गो भा जीवन भारी ॥
चित ध्यान प्रीतम पर राखा । चाखा प्रेम बढेउ अभिलाखा ॥
बैरागिन कीन्हा बैरागू । अनुरागिन कीन्हा अनुरागू ॥
सुमिरै सोवत बैठी ठाढी । मन असमर्थ अवस्था बाढ़ी ॥
प्रेम झकोर भयऊ तेहि सीसू । बैरी बूझै निस रजनीसू ॥

सुक्ख भयउ दुख दायक, सुध मति रहेउ न साथ ।
परी जगत प्रानेसरी, जड़ता केरी हाथ ॥

सुदर बाक मनाक न भावै । गगन चाक उदबेग सतावै ॥
बिरह आग सो भै उर दाहू । धन ससि कहँ भा मदिर राहू ॥
भावर लाय न सिच्छा मानी । छिन छिन कहै आन की बानी ॥
उन्नमाद सों रोवइ हँसई । आसू भरती मोती खसई ॥
जियत रहइ बेयान के बाहा । ना तो होत मरन पल माहां ॥

धन कहँ अंतरपट भयेउ, गगन ऊँच महि नीच ।
छाडि सकल धंधा कहँ, परि गुन कत्थन बीच ॥

वह रावल जग मित्र नवेला । मन परान कहँ कीन्हा चेला ॥
वह विदग्ध सुकुमार पियारा । रूप गगन सविता उँजियारा ॥
चिंता कथन बीच घन परी । चिंता करै घरी औ घरी ॥
केहि उपकार दरस वहि पावउँ । केहि उपकारे के ढिग धावहुँ ॥
होत भलो होतिउँ जरि छारा । देह चढावत रावलु प्यारा ॥

बड़ो भाग सारंगी, रहती प्रीतम पास ।
मोहि कलेस बिछुड़न को, है प्रछन्न परकास ॥

ब्याह खंड

धन्य ब्याह जासों धन प्यारी। होइ कत सँग खेलन हारी ॥
होइ सुहागिन प्रीतम पाये। पिय ढिग जाइ सीस निहुरायें ॥
माजें वइढि सरीर बनावै। पिउ रस लेइ पीउ रस पावै ॥
निर्मल होइ होइ सुकुवारू। पानो फूल का करइ अहारू ॥
माजें मह पर चिन्त नेवारै। नित प्रीतम को जाप सँवारै ॥
सत्त सहित धन जो धरै, प्रीतम को अनुराग।
प्रीतम अपने हाथ सों, धन कह देइ सोहाग ॥
निर्प सयम्बर लगन धरावा। सब काहू कह नेवत पठावा ॥
भयेउ अनद अगमपुर नगरी। भइ मुद चरचा नगरी सगरी ॥
बाजै लाग बियाहुत बाजा। जन परजन मन परमद बाजा ॥
रचा चित्र सों मदिर द्वारा। लगेउ होन सो मंगल चारा ॥
सुभ मँडव छायन उपराहा। जासों होइ सुबर सिर छाहा ॥
ससि बदनी सब कामिनी, गावैं मगल चार।
लीन्ह अनद बसेरा, जगपत सदन मझार ॥
इंद्रावति माजे मँह भई। चेता मालिन नियरें गई ॥
पूछा हियें लजानिय नाहीं। कैसें रहिये माजेय माहीं ॥
कहा रहो मन निर्मल कीहैं। चित प्रीतक प्यारे पर दीहैं ॥
मन सों दूसर चिन्त नेवारी। पिउ पर ध्यान लगावहु प्यारी ॥
निस दिन मन को खेत बनावहु। पिय की प्रीत को बीरौ लावहु ॥
अलप अहारिहु जीयै, सुमिरहु पिय को नाउ।
रहौं अकेली रात दिन, प्यारी माजे ठाउ ॥
माजे मों इद्रावति रानी। आइ असीसहिं सखिय सयानी ॥
देहिं असीस सखी हित प्यासी। रमा निरंत्र रहै तोहि दासी ॥
हो प्यारी बिलसहु पिय प्यारा। पिय मेरवत है सिर्जन हारा ॥
जो सजोग चहा तुम रानी। मॅट तेहिक अब आइ तुलानी ॥
ब्याहु नसेनी मिलन सदन को। मिलै सिघर अब मिलन सजन को ॥
सुख अनद सों रानी, बेलसहु पिया सजोग।
भयें कत सजोगिनि, आवै कर सुख भोग ॥
सखिन असीस बचन सुनि रानी। कहा पिता घर रहिउ भुलानी ॥
खेलौं कोड़ में देवस बितायेउ। कुछहूँ प्रीतम मरम न पायेउ ॥
खेलहिं बीति गईं लरिकाईं। बाढ़ेउ दरप होत तरुनाईं ॥

भूलिउं खेल सखी के साथा। चढेउ गगुन कर मानिकहाथा॥
गुन नहि एक त्रास मोहि हियरे। कैसे होब कन्त के नियरे॥
हौं अजान औ निर्गुनी, ज्ञान रूप वह पीउ।
हाथ छूछ गुन ज्ञान सों, सखी सोच मह जीउ॥

मोहि गुन बुद्ध सखी है नाहीं। यह नित सोचत हौ मन माहीं॥
जेहि गुन बुद्धि हाथ मह होई। तापर प्यार करै सब कोई॥
रहत न बुद्धि पिये मद हाथा। या नित दोष लाग मन साथा॥
सत्रु चतुर जो जिउ कर होई। है भल मूढ मित्र सो सोई॥
गुन सों मानुष होत पियारा। गुन कर गाहक है ससारा॥
विष कह अमिय करत है, है ज्ञानी जो कोइ।
मूरख जन के हाथ सों, अमृत विष सम होइ॥
मानमती वह सखिय पियारी। बोली सुनिये राज दुलारी॥
यह जग बीच अहो रुपवन्ती। पिय जेहि रीझा सो गुनवन्ती॥
तुम पर अस रीझा पिय सोई। चाहा एक बार एक होई॥
पै यह लट औ आंख तुम्हारी। धरा बियोग बीच तेहि प्यारी॥
गुनि मति कोत सहज औ रूपा। सब तोहि रीझ कत गुन भूपा॥
प्रीतम मै का मै हिये, तोहि नित बाउर पीउ।
तो लट औ अधरन सो, प्रीतम मन औ जीउ॥
रतन जोत पुनि बात निसारा। भयउ रतन सों मम अवतारा॥
एक सोच मोहि आवत सजनी। तासों सोचत हौं दिन रजनी॥
पिय औगुन लावै मोहि रामा। मानुष जन मन तेरो बामा॥
मानव मानुज उदर सों होई। मनुज उदर बिनु मनुज न कोई॥
पितु को बरमद अमु जब आजे। मात उदर तब नर भौ पावै॥
जनम मोर अस नाहीं, सखी सोच मैं लेउ।
पिय ऐगुन जो लावे, कौन उतर मे देउं॥
कहा सखी कछु सोच न कीजे। ध्यान अमूरत ऊपर दीजै॥
तोहि करतार रतन सो कीन्हा। कर मह रतन ज्ञान कर दीन्हा॥
जो करता कह करवेइ होई। हौ तेहि कहै होइ तब सोई॥
बिर्ध पुरुष औ बन्ध्या नारी। तासों सुत पायन सत धारी॥
बाज पिता सों बालक कीन्हा। अमृत बचन जीम मों दीन्हा॥
कीन्ह बिमल माटी सो, बहुर बुद तेहिं कीन्ह।
तासों रकत मास करि, हाड फेर जिउ दीन्ह॥
अलख अमूरत सिर्जन हारा। मूरख जगत अलेख सवारा॥
तेहि छाजत सिर्जै जस चाहै। दोऊ जग आपुहि करता है॥
जनक जननि बिन सिर्जै पारै। जाते नाहै जनम सँवारै॥

आद पिता के पिता न माता। ऐसे सिर्जा वह जिउ दाता ॥
प्रीतम तोहि गुन ऐसा लोभा। लखै न ऐगुन देखै सोभा ॥
मित्र मित्र को ऐगुन पहिचानत गुनमान।
तेरो सकल अवस्था, गुन बूझै पिय प्रान ॥
दायावत है कत तुम्हारा। है अपराध छिपावन हारा ॥
जो गुनवत अहै जग माहीं। सो ऐगुन हेरत है नाहीं ॥
जेहि गुन सो गाहक गुन केरा। जेहि ऐगुन सो ऐगुन हेरा ॥
आपुहिं बीच जो ऐगुन पावा। सो न कहा अपराध परावा ॥
जो अपराध छिपावइ कहा। जोग बसन ताके तन रहा ॥
जो मुख पर ऐगुन कहै, महा मित्र है सोइ।
ताको मित्र न जानिये, ऐगुन राखै गोइ ॥
राजकुवर जब मोतिय पावा। सात सखा कहँ नेवत पठावा ॥
मिर्तक रहे जीउ उन पाये। धाये सकल अगमपुर आए ॥
सात मित्र राजा कह भेटा। दरसन मिलुरन सकट मेटा ॥
राजा के कालिजर ठाऊ। मित्र पराक्रमा प्रेम तेहि नाऊ ॥
रहा बहुत दिन सो परदेसा। आये नगर धनी होइ भेसा ॥
देखि सून कालिजरै, मरम कुवर को पाइ।
रहि न सका राजा बिनु, लीन्ह जोग चित लाइ ॥
सुनि के राजकुवर के जोगू। भा जोगी त्यागा सुख भोगू ॥
प्रेम के साथ लगै बैरागी। रावल भेस लिहें सारगी ॥
आगम सचर राखेन पाऊ। आगमपुर के भयेउ बटाऊ ॥
सीस जटा धरि खप्पर हाथा। आये मिले राज के साथा ॥
भेंटेन प्रेम राय कह राजा। भा मन मुदित मोद उपराजा ॥
भयेउ जोग को राजा, राजा वह गन माह।
जगपत दाया दुर्म को, सब सिर आयेउ छाह ॥
सीतल छाहा पावइ सोई। जो तप किहें जगत मह होई ॥
जेहि मन करता की डर भारी। तेहि नित लागै दुइ फुलवारी ॥
दोऊ बीच दुइ झरना बहई। सब फल फले दोऊ मह रहई ॥
औ सूघर नारी तेहि ठाईं। बनी रतन मोती की नाईं ॥
दूसर फल भल को है नाहीं। भल कोमल फल दोउ जग माहीं ॥
जो आवै करता दिसि, एक भलाई साथ।
वोही भलाई के सम, दस आवै तेहि हाथ ॥
कुवर पास क्रीपा चलि आयेउ। जगपति दुकल समेत पठायेउ ॥
आइ कुवर सग क्रीपा बोला। क्रीपा रस मै भाषित बोला ॥
अहो लला जत साधेउ जोगू। तत अब मानहु परमद भोगू ॥

धरु सारंगी गहु झींपानू। उदित भयेउ मनोरथ भानू ॥
कथा काढ़हु पहिरहु बागा। जोग मुकुट धरि बाधहु पागा ॥
काढ़हु माला जोग को, पहिरहु मानिक हार।
दैव दिष्ट सनमुख भयेउ, होहु तुरग सवार ॥
काढ़त माला कथा राजा। चकचूहत मन मों उपराजा ॥
माला गनि सुमिरेउ वह नाऊ। काढ़त छोह भयेउ तेहि ठाऊ ॥
जोग चिन्ह वह कथा पाया। कढ़त उपेजेउ करुना माया ॥
झींपा बूझि कहा हो राजा। नन कथा मन माला छाजा ॥
जोग न पूजै तजै न जोगू। पूजा जोग लेहु अब भोगू ॥
जल में दूहद आप गा, मारै मोद तरग।
दुख को सागर बीतेऊ, अब सुख दिन को रंग ॥
दुकुल अहै मानुष की सोभा। चीर बाज सोभाघर को भा ॥
बिनु गुन काया अबर घालें। काठ कि खरग अहै परयालें ॥
तत औ जोग के आहसि चेरा। करु पवित्र अबर तन केरा ॥
बस्तर लेहु भोग के जोगू। जोग जोग अब है भल भोगू ॥
सुमिरन पूजा है तब ताईं। जब लग नहिं निश्चै मन ठाईं ॥
है सब वस्तर मनिमय, मन मों करहु अनंद।
पहिरहु लखि के सोभा, लाजै रवि औ चद ॥
पहिरेउ असुक कुवर सयाना। सुना सीर लखि रूप लोभाना ॥
औ सो सुदर असुक सोहा। दूलह देख तजत मन मोहा ॥
जडिता सेहरा से छवि लहई। चौका चमकि चौंधि चखु रहई ॥
ऐसे रूप बिराजा राजा। देखि मयक अरज मा लाजा ॥
चेल पहिर सब चेला सोहै। अस्व सवार भये मन मोहै ॥
सब साथी राजा सॅग, भयेउ तुरग सवार।
तारन मों तारापती, भयेउ कुवर सुकुमार ॥
बाजन बाजै साजन साजैं। लाजन लाजैं काजन गाजैं ॥
सग न सोहैं अंग न मोहैं। अग न गोहैं भग न होहैं ॥
सबै रीझ देखै बर प्यारा। दृष्टि बिछावन मगु पर डारा ॥
बर के अधर बान रॅग राता। लखि मानिक औ लाल लजाता ॥
रहसि कहैं आगमपुर लोगू। धन धन बर इद्रावति जोगू ॥
जो देखा सोइ रीझा, धन धन सब मुख होइ।
बिनु मोहें बिनु रीझे, एको रहा न कोइ ॥
सखी एक चितवन तेहि नाऊ। कहा कुंवरि सों मैं बलि जाउं ॥
देखेउ हरवर बर मैं तेरा। तो बर देइ देव जिउ मेरा ॥
सुनि इद्रावति मन भा चाऊ। धवराहर दिस ढारा पाऊ ॥

सखी सहित वह प्रान पियारी। चढि धवराहर दृष्टि पसारी॥
कन्यापति सब लोगन माही। दृष्टि ताहि दिस आवहि जाहीं॥
राजकुवर मुख ऊपर, रहेउ सकल छवि छाइ।
आगमपुर की दारा, देखि रहीं मुरझाइ॥
चितवन कहेउ कि देखहु रामा। वह तेरो दूलह अभिरामा॥
पूरन रूप सपदा जाको। करन रहे चित चितवन ताको॥
आज निवेसन ते सुख पाया। सोभा अधिक चढी तेहि काया॥
देखत प्रीतम मुख वह रानी। प्रेमा गोद गिरी मुरछानी॥
मान सखी को रहेउ न प्रानू। कन्यापति चखु मारेउ बानू॥
छोड़ेउ धीरज धीरजा, चेत न चेता देह।
आप आप कह बोहीं, मारेउ प्रेम अनेह॥
देखि अचेत भई सब बाला। अँचयन चोखा दरसन हाला॥
सबन कहा यह मानुप नाहीं। अहै महादेवत जग माहीं॥
रहा न चेत पाव औ माया। नीवू काटत काटेन हाथा॥
मानुष रूप देखि अस होई। रहेउ न चेत बीच जब कोई॥
करता जा दिन दरस देखावै। कैसो होइ नहीं कहि आवै॥
कीन्ह रूप मानुप को, अपने रूप समान।
यातें ज्ञान हरत है, मानुष रूप निदान॥
प्रेमा जाप चेत जब पायेउ। इद्रावति कह तुरत जगायेउ॥
पूछा मुरछानी केहि लेखें। कित कुम्हिलाइ कमल रवि देखे॥
आज अनन्द रूप प्रगटाना। छाजै तुम्हैं कहा मुरछाना॥
प्रेम उतरि कुवरी तब दीन्हा। रवि सनेह अबुज मय लीन्हा॥
मित्र बदन सोभा बर सोहै। नहीं अचर इद्री बर मोहै॥
प्रीतम हित यह जग मों, जा धन के मन प्रान।
दरस समै आनन्द सो, मुरछै प्रिया निदान॥
पाय दरस मुदुता मै रानी। तन न समाय चीर हुलसानी॥
हुलसे नैन देखि पिय सोभा। हुलसे स्वात पाय छवि लोभा॥
पिय को बदन जीउ अस पाया। हुलसे रतन जोत सब काया॥
दिनमनि रूप गगन उपराहीं। देखि कमल निकसे जल माहीं॥
पीउ बदन सोभा सो भावा। जिय दरसन इद्रावति पावा॥
इद्रावति मन उपवन, आस कली बिकसान।
मन मो रहेउ न बिसमों, आइ अनन्द समान॥
सखि एक होइ सचेत पुकारा। धरती उवा सुरुज उजियारा॥
एक कहा मानुष नहिं होई। यह सुर भेस धरे है कोई॥
एक कहा रजनीपति आही। मेडर अवहिं न छेका ताही॥

एक कहा यह साभा धारी। जगत कलेवर जिउ है प्यारी ॥
जेहि जस रहेउ दृष्टि औ ग्यानू। तैसा देखा कीन्ह बखानू ॥
कुवर सनेह सकल मन, उपजेउ रूप बिलोकि।
लोचन चितवन मृगु सों, एक न पारै रोकि ॥
सखिन बचन सुनि कै वह रानी। समुझा आगम सोच बिचारी ॥
कहा सखिन सों प्रीतम प्यारा। है मोहि सग लगावन हारा ॥
भये बियाह गवन पुनि होई। नइहर के बिछुरै सब कोई ॥
परदेसी की लालप अहई। कहा एक थल पर थिर रहई ॥
परदेसी हैं कन्त हमारा। देस चलै को राखै पारा ॥
रहनो अन्त न होइ है, नइहर देस मॅझार।
परदेसी है सहचरी, लोना पीउ हमार ॥
कहेन सोच रानी केहि लागे। यहि दिन है हम सब के आगें ॥
हम रोये जनमत सनसारा। जनम देव कित रहन हमारा ॥
नइहर नगर अन्त नहि रहना। मीखु सोइ जेहि सासुर लहना ॥
जनम निबाह भलो पिय पासा। बिनु पीतम न लहै कबिलासा ॥
मिलै नरक जो दरसन पीकों। नरक भलो वैकुठ न नीको ॥
मिलै तहा हो प्यारी, नइहर देस पियार।
जेहि अस्थान बसेरा, चाहै पीउ तोहार ॥
जब बनबास राम कहँ भयउ। सीता सती गोहेन मह गयऊ ॥
सदन नरक भा पिय बहुराते। बन वैकुंठ भयेउ तेहि जाते ॥
पिय बिनु फीका सुबरग जीका। पिय गोहन नीका सुख तीका ॥
जो प्रीतम सॅग प्रीत लगावा। सो दोउ जगत बीच सुख पावा ॥
अज्ञा माथे ऊपर लीन्हा। पिय कर अज्ञा भेट न कीन्हा ॥
पीउ जहा है सुख तहाँ, जहा न प्रीतम होइ।
तहा सुखद को दरसना, कहा बिलोके कोइ ॥
बनि बरात द्वारे जब आयेउ। अमल ठाउ बइठे कह पायेउ ॥
बइठेउ कुवर प्राट उपराहा। ऊपर सीतल साखो छाहा ॥
सुर नर देखि आसिषा देहीं। निरपे रूप रहसि फल लेहीं ॥
जे तो सुख तजि साधा जोगू। वे तो अलख दिहा सुख भोगू ॥
थोरे दिन का कुवर सलोना। लोना अम्बुक कीन्हेउ टोना ॥
रूपवन्त राजा कुवर, सकल बरातिन माह।
सुन्दरता पति होइ रहा, मान पाट उपराह ॥
जेवन बने सहस परकारा। जेवैं नित भा निपै हकारा ॥
बइठे लोग आइ सब तहा। दीन्ह ठउर जेंवै नित तहा ॥
भोजन केतो सुन्दर होई। उदर भरे पर खाय न कोई ॥

त्रिषा छुधा पर अचवै खाई । तब जल जेवन करै भलाई ॥
छुधावन्त कह देहु अहारा । देइ नाक फल सिरजन हारा ॥
कहत न पारै रसना, सब पकवान बखान ।
सै सेवाद एक कवर मों, मिलै खात पकवान ॥
बराबरी सों करइ न पारा । बराबरी सूरज ससि तारा ॥
जत जग बीच भले पकवानू । रहे सकल कित करउ बखानू ॥
बरनत रसना लोनी होई । जानै सो अच्छै जो कोई ॥
बिनै किहेन राजा कै लोगू । है पकवान न तुम सब जोगू ॥
जो-पवित्र भोजन करतारा । दीन्ह तुम्हें सो करहु अहारा ॥
जेवै लागे जेवनहि, ले दाता को नाउ ।
एक कवर मे पावे, सै सेवाद तेहि ठाउ ॥
भा अजा जब बाजन बाजा । राजित चला बियाहै राजा ॥
तूर दमामा बाजै लागे । अम्बर गये सबद सुर जागे ॥
माड़ौ के तर कुवर पहूचा । रहा गगन लग माड़ौ ऊचा ॥
हरषि गीत नारी सब गावे । घर घर सों सब देखै आवे ॥
पर त्रिय दिष्ट परत भल नाहीं । तैसेइ पर पूरुष उपराहीं ॥
रहा उदित होइ रूप सों । दूलह भान समान ।
वोहि समय माड़ौ तर, आयेउ चद्र छिपान ॥
उश्नरसम कह देखत नियरे । रहसा नीरज अपने हियरे ॥
लाज मयक देखि सकुचाना । परगट होइ नाहि विकसाना ॥
तन तन सो तो रहा वियोगू । मन मन सों तो रहा सजोगू ॥
दुइ मन प्रीत रीत सो जानै । अपने नेह जो मन में आनै ॥
रवि दूलह मुख परगट कीन्हा । ससि दुलहिन मुख पर पट लीन्हा ॥
पढेन वेद बाभन सब, बर कन्या के नाउँ ।
रहेउ पर्न नैरित जो, भयेउ सकल तेहि ठाउँ ॥
भा बियाह कन्या बर साथा । आयेउ सुख को मानिक हाथा ॥
भयेउ कुवर जगपत को प्यारा । सब काहू मिलि आइ जोहारा ॥
दाया सों आगमपुर ईसू । डारा छाह कुवर के सीसू ॥
जैसे राज त्याग तप कीन्हा । वैसो अलख भोग सुख दीन्हा ॥
पायेउ बहुत दास औ दासी । सेवक भये अगमपुर वासी ॥
भयेउ नगर वासी कह, कुँवर प्रान को प्रान ।
सबते जोरेउ मित्रता, कुँवर सनेह निधान ॥
रहिन सखी सुन्दर जह ताई । इद्रावति के नियरे आई ॥
सकल सखी मिलि दीन्ह असीसा । प्रीतम छाह रहै तोहि सीसा ॥
इहइ लाभ ब्याह सो होई । तोहि लाभ हरषित सब कोई ॥

जुग जुग रहै सोहाग तुम्हारा। चाहै तुम कहँ कन्त पियारा॥
तोहि गुन ऊपर रीझा रहई। कोमल बात प्रीत की कहई॥
सदा रहै तोहि बस महँ, करता के परताप।
तोहिं पिय को सुमिरन रहै, पियहिं तुम्हारो जाप॥
अधरन मों मुसकानी रानी। होइ अभिमानी बोली रानी॥
है मोहिं रूप बिमल उजियारा। बस मह रहै सो प्रीतम प्यारा॥
ऐगुन भये न रूठै देऊं। तनु मुसुकाय हाथ कै लेऊं॥
अमन होइ करउ असमानू। प्रीतम देइ हाथ महं प्रानू॥
पाहन समा कठोर जो होई। करउ सिंगार होइ जल सोई॥
अब किछु चिन्ता है नहीं, प्रीतम भा मोहिं हाथ।
अमन कबहुं न होइ है, नित रहि है मोहिं साथ॥
सखियन अगुरी दातन दाबा। प्यारी गरब न हम कहं भावा॥
मैं न भली मैं भल जो भाषा। तेहि करतार दूर कै राखा॥
अगिन सीस जो ऊपर करई। देखहु उनत नीच होइ परई॥
माटिय सीस नीच कै परई। तबहिं अनेक लाभ सों भरई॥
नयन आप कहं देखत नाही। सूझि परा तेहि सब जग माहीं॥
सो डूबा जो भाषा, मैं जग सिर्जनहार।
पार भयेउ जेइ जाना, है एकै करतार॥
प्रीतम आपन नाहिय प्यारी। अहै समुद्र लहर सों भारी॥
सेवा नाव चढै जो कोई। पार समुद्र सों उतरै सोई॥
नाव चढ़त सुमिरै एक नाऊ। कहै उतारहु मोहि सुभ ठाऊ॥
करता आयसु बोहित पायेउ। तबहिं समुद्र के ऊपर धायेउ॥
पिय सों गरब न कब हूं न कीजै। आये सुमाथें ऊपर लीजै॥
गरब बात तुमत बोलिउ, करता करै न कोप।
फिरु प्यारी अभिमान सों, ऐगुन होइ न लोप॥
कै घट काज फिरा जो कोई। मनु घट काज न कीन्हा सोई॥
खुला दुवारा है तब ताईं। रवि न उअै पच्छिम जब ताईं॥
आवहीं फिरु मानै करतारा। जब लग खोल फिरै को द्वारा॥
हम मद पियब तियागा प्यारी। पै तुम्हरी अँखिया मतवारी॥
हम कहँ खींच सुरा दिस आनै। आहि कहैं हम नैन न मानै॥
इद्रावति समुझा बचन, धरती लायेउ भाल।
तुम करतार जगत के, दाता दीनदयाल॥
ए प्यारी सुमिरत हौं तोही। दरसन वेग देखावहु मोहीं॥
धन आनन्द राज सुख आही। एकै दाया दरसन चाही॥
बहुत वियोग सुरा में पीया। सजोगी मद चाहत हीया॥

संजोगी प्याला अत्र दीजै। अधर सुधा सतवाला कीजै॥
आज ठौर आखन मो देऊ। होइ निसंक अग भरि लेऊ॥
मोहिं सजोग सलील को, है प्रीतिमा पियास।
अनुकम्पा कै दीजै, पूजै मन की आस॥
भइउ सपूरन आधी कथा। मानहुं ज्ञान सिंधु मै मथा॥
तीन सहस चौपाइय भई। देखु आइ फुलवारिय नई॥
पुनि आगे जो सुख सों रहऊं। तीन सहस चौपाइय कहऊ॥
हौं अबहीं थोरे दिन केरा। बात बहुत दिन- कर मैं हेरा॥
विद्या ज्ञान बहुत जेहि होई। अर्थ छिपाने बूझै सोई॥
नूर महम्मद यह कथा, अहै प्रेम की बात।
जेहि मन होई प्रेम रस, पढ़ैं सोइ दिन रात॥

उसमानकृत
चित्रावली

चित्रदर्शन खंड

वै भूले तेहि कौतुक जाई। इहाँ कुँअर जागा अगिराइ ॥
नैन उघारि देखि चितसारी। रहा अचक उठि बैठ सँभारी ॥
देखा मँदिर एक बहु भाँती। चित्र सँवारे पाँतिन्ह पाँती ॥
कनक खंभ औ कनक केवारा। लागे रतन करहिं उँजियारा ॥
ऊपर छात अनूप सँवारे। करि कटाव सब कञ्चन-ढारे ॥
कीन्ह उरेह सूर ससि जोती। और नषत सब मानिक मोती ॥
हेठ अपूरब सब डासन डासा। जहँ तहँ आउ सुगँध की बासा ॥
भयो कुँअर चित अचक एक, मनहीं माँहि गुनाउ ;
काकर लोन मँदिर यह, औ मोहि को लै आउ ॥
बहुरि कुँअर जो पाछे देखा। अपुरुब रूप चित्र एक पेखा ॥
जानि सजीउ जीउ भरमाना। भयो ठाढ उठि कुँअर सुजाना ॥
देखि रूप मुख परचै खरा। बिधि एह चुरइल कै अपछरा ॥
किए सिंगार संग नहिं कोई। धरे भेष भावन है सोई ॥
जग न होई मानुष अस रूपा। को पावै अस रूप सरूपा ॥
निहचै अहौ सरग पर आवा। सुरकन्या भौ दिष्टि मेरावा ॥
निहचै एह सुरपति अपछरा। देखत मोर चित्त जिन हरा ॥
हौ तो मंडप देव के, सोवत अहा सुभाउँ।
होइ परसन कोउ देवता, लै आवा एहि ठाँउ ॥
भयो भाग्य मम दाहिन आजू। जेहि बिधि दीन्ह आनि यह साजू ॥
कै वहि जन्म पुन्य कछु कीन्हा। तेहि परसाद दरस इन्ह दीन्हा ॥
कै बेनी सिर करवट सारा। कै कासी तन तप महँ जारा।
कै मथुरा बसि हरि जस गावा। ताहिं पुन्य यह दरसन पावा ॥
कै काहू की इछा पूरी। बल औसाउ कीन्ह दुख दूरी ॥
कै सुदिष्ट अपने बिधि देखा। आनि देख वह रूप सुरेखा ॥
सुनत अहा कबिलास होहावा। सो बिधि मोहिं आन देखरावा ॥
मन रहसहि चितो चितहि, रहा मौन होइ भूप।
रसना मरम न बोलई, लाएन भूले रूप ॥
छिन एक गुनि मन महँ बहुभावा। पुनि ठाढस कै आगे आवा ॥
नियरे होइ जो बदन निहारा। रहे निहारि मीन जिम तारा ॥
तब जानेसि यह चित्र अनूपा। हस्यो चित्र लखि बदन सरूपा ॥
नैन लगाय रहेउ मुख बोरा। चित्र चाँद भा कुँअर चकोरा ॥

सुधि बिसरी बुधि रही न हिये। गा बौराइ प्रेम मद पीए ॥
कबहूँ सीस पाइ तर धरही। कबहुँ ढाढ होइ बिनती करई ॥
कबहुँ परै अचेत भुइँ, कबहूँ होइ सचेत।
रूप अपार हिएँ समुझि, मुख जोवै करि हेत ॥
निरखत जोति नैन जो पाई। परी डीठ आला पर जाई ॥
देखा आहि लिखै कर साजू। जाते होइ चित्रकर काजू ॥
साँवर अरुन पीत औ हरा। जो रँग चाहिये सो सब धरा ॥
कहेसि बिचारि बूझि मन माहीं। कालहि आजु अस होइ कि नाहीं ॥
आपन चित्र लिखौं एहि ठाऊँ। मुकुरहिं जोति जोति कछु पाऊँ ॥
अपनि जोति सूर उँजियारा। सूर कि जोति चंद मनियारा ॥
हिएँ बिचारि चित्र तब लिखा। वहि न चरन तर आपन सिखा ॥
साजि सो मूरति आपनी, ले सब रँग वहि केर।
कै सुजान सो जानई, कै सुजान यह फेर ॥
चित्र लिखा पूजी पुनि घरी। निद्रा आइ कुँअर चखु भरी ॥
कुँअरक चाहत पलक न लावा। बरबस बैरिन नींद सो आवा ॥
रहै नीद जासौं धन खोवा। इहै नींद जो करै बिछोवा ॥
इहै नींद मगु चलै न देई। इहै नींद सरबस हरि लेई ॥
इहै नींद जेहि नैन समानी। पलकन्ह भीतर दृष्टि समानी ॥
जो जग माँह नींद बस होई। रहै बीच मग सरबस खोई ॥
जे यहि नींद आपु बस कीन्हें। रहै नीद तोहि नौ निधि दीन्हें ॥
मान गवाए सोइ सब, जो सपति हुति साथ।
अजहूँ जागु न घर बसे, भकुरे है कछु हाथ ॥
देखन्ह कौतुक अति जिय भाया। चित्रिनि दरस अमर भइ काया ॥
होत भोर आदित परगासा। उठी सभा औ नाँच उडासा ॥
चित्रावलि कहँ निद्रा आई। ले पलग पर सखिन सोआई ॥
औ जहँ तहँ सब सोवन लागीं। सगरी रैनि अही सुख जागीं ॥
देवन्ह कहा होत है बारा। चित्रसारि जनु कोऊ उघारा ॥
चलहु कुँअर लै चलहि सवेरा। मगु कोई आइ मढी महँ हेरा ॥
एहि न पाउ औ तुरै जो पावा। जानइ कुअर जन्तु कोउ खावा ॥
जन पुरजन माता पिता, जहँ लहु हित सुनि पाउ।
मरिहहिं छाती फाटि सब, तब कछु हाथ न आउ ॥
पुनि दोउ एक संग चितसारी। आइ उघोरन्हि पौरि के वारी ॥
सोवत कुअर आन तहं पावा। लीन्ह उठाइ बार नहिं लावा ॥
निमिष माँह लै मढी उतारा। गए छाड़ि सोवत दुख मारा ॥

सुरुज किरन जब कुँअरहि लागी । करवट लेत उठा तब जागी ॥
देखै कहाँ चहूँ दिसि हेरी । भई आनि रचना विधि केरी ॥
ना वह मंदिर नहिं कबिलासू । ना वह चित्र न वह सुख बासू ॥
सपन जान चित उठा भरोहू । औटि करेज पानि भा लोहू ॥
पुनि जो निहारे आपु तन , चिन्ह आइ सो संग ।
बस्तर औ कर पर वही , लिखत लाग जो रंग ॥
घन एक कुँअर अचक मन रहा । कौतुक सपना जाइ न कहा ॥
पुनि जो विरह लहरि तन आई । थाँभि न सकेउ गिरेउ मुरझाई ॥
दोउ नैनन जनु समुँद्र अपारा । उमडि चले राखै को पारा ॥
फारै झँगा औ लोटै परा । बधुन कोऊ हाथ को धरा ॥
भरि गै खेह सीस औ देहा । सेवक नाहिं जो झारै खेहा ॥
संग न कोऊ हितू पियारा । को उठाइ बैठाइ सँभारा ॥
खिन चेतै खिन होइ बेसँभारा । घरी घरी सिर भुइँ दइ मारा ॥
विरह दहनि कोउ किमि कहै, रसना कहि जरि जाइ ॥
सोइ हिय माँहिं सँभारै , जेहि तन लागै आइ ॥
कटक जो आइ नगर नियराना । देखिन्ह संग न कुँअर सुजाना ॥
वह औ कहँ वह औ कहँ पूँछा । कटक जानु बिनु जिउ तन छूँछा ॥
सब मिलि कहा कुँअर जो नाहीं । राजा पास काह लै जाहीं ॥
पूछत उतर देब हम काहा । छूँछ लजाइ रहब मुँह चाहा ॥
जोहिं बिनु तब जाइहि मुँह गोवा । कसन अबहिं जो खोजिअ खोवा ॥
सोवत जानु सबै सुनि जागे । आपु आपु कहँ ढूँढ़न लागे ॥
जल जल थल थल मेरु पहारा । एक एक तरु तर सौ सौ बारा ॥
स्याम रैन बिनु पंथ पुनि , अगुवा संग न कोइ ।
दूरि दूरि सब धावाहिं , नियर जाहिं नहिं कोइ ॥
खोजत खोजि कटक सब हारा । बीती रैनि भयो भिनुसारा ॥
सूरज उदै पथ तब सूझा । भयो दिवस पर आपन बूझा ॥
बाजी चरन खोज पुनि पाए । खोजत खोज मढी महँ आए ॥
देखहिं कुँअर परा बिकरारा । हाथ पाँव सिर कछु न सँभारा ॥
ऊभ उसास लेइ औ रोवा । देखत सैन प्रान जनु खोवा ॥
खेह झारि लै बैसे कोहा । रोवै कटक देखि मुख ओरा ॥
पूछे बातन उतर न देई । खिन खिन ऊभ साँस पै लेई ॥
अरुन बदन पिराइगा , रुहिर सूखि गा गात ।
रहा झाँपि लोयन दोऊ , कहै न पूछे बात ॥
कोऊ कहै मृगी एहिं आई । होइ अचेत परा मुरझाई ॥
कोउ कह डसा साप एहि मढ़ी । सूरज उदय लहरि है चढ़ी ॥

कोउ कहे अहा राति का भूखा। तौंवरि आइ रुहिर तन सूखा ॥
कोउ कह रैनि रहा एकसरा। कै दानो कै चुरइलि छरा ॥
इहवाँ घरी विलँब भल नाहीं। बेगहि होहु नगर लै जाहीं ॥
तत्खन राज सुखासन आना। लै पौंढाए कुँअर सुजाना ॥
नाउँ सुखासन लै दुखवाहा। बिरह क जरा दून कै डाहा ॥
जाइ सुखासन आसुभा, बाजु गीत औ नाद।
चला पाछु सब आवै, कटक भरा बिसमाद ॥
केउ कहा जाइ जहँ राजा। कुँअर आव कछु औरै साजा ॥
संगन सुनिय गीत औ दाना। सिगरी कटक देखि बिसमाना ॥
सुनि औगुन राजा उठि धावा। व्याकुल होइ भुँइ पाव न लावा ॥
रानी सुनि सिर परी बिजागी। सुनतहि जरी कोष की आगी ॥
आई धाइ कुँअर जहाँ आवा। रोइ सुखासन लेइ कँठ लावा ॥
देख षीन तन मुख पियराना। राजा रानी तजहि पराना ॥
कठ लगावहिं पूछहिं बाता। उतर न देइ बिरह मद माता ॥
पुनि ते पूछा बोलि कै, जे सँग हुते सयान।
जहँवा कुँअर बिछुरि मिला, तिन्ह सब कीन्ह बखान ॥
राजमंदिर महँ कुँअर उतारा। जानहु आनि अगिन मह डारा ॥
कल न परै पल अति बिकरारा। हाथ पाँव सिर दै दै मारा ॥
राजैं तनखन जन दौराए। बैद सयान गुनी लै आए ॥
गहहिं नाड़िका बूझहिं पीरा। नारि माँह निरदोष सरीरा ॥
ससि सूरज दोऊ निरदोषी। अपुने अपुने घर सतोषी ॥
अब नाडिका माँह नहिं पीरा। प्रगट पियर मुख षीन सरीरा ॥
कहि न आव हम हिए बिचारा। ई जस बिरह घाउ कर मारा ॥
पीर सोई जो नहीं कछु, औषद मूरि उपाय।
एहि कर हितू जो होइ कोइ, सो पूछै फुसिलाय ॥
उठि अकुलाइ मात दुखभरी। कुँअर पास आई एकसरी ॥
सीस लाइ के बैठी कोरा। पूछै बात देखि मुख ओरा ॥
नैन उघारु पूत कहु पीरा। केहि कारन भा षीन सरीरा ॥
काहे पीत भयों मुख राता। कहहु बात बलिहारी माता ॥
तहीं एक दिनमनि कुलकेरा। नैन मूँदि कस करहिं अँधेरा ॥
हम सब घट तुम जीव सनेही। कस कुँभिलाइ देसि दुख देही ॥
पूत परि कहु कस जिउ तोरा। नैन खोलु करु जगत अँजोरा ॥
तोरे पीर कि औषद, जौ एहि जग महँ होइ।
अर्थ द्रव्य जिउ दइ कै, बेगि मँगावों सोइ ॥

कहुँ जो उपजी बिथा सरीरा । करौं सोई जेहि नेवरइ पीरा ॥
जो है मढी देव कर भाऊ । लै पूजा सौं दैव मानऊ ॥
जो काहू के दरसन भूला । मागौ होइ दुनों कर फूला ॥
और जो मन कछु हींछा होई । कहु सो वेगि लै पुरवों सोई ॥
दुहु जग माह तुहीं एक आसा । आस तोरि का करसि निरासा ॥
को काटै इह दुख दिन राती । अबहीं मरव फाटि मैं छाती ॥
सुन कै कुँअर मातु कै बोला । ऊभि साँस लीन मुख खोला ॥
माता पीर सो ऊपजा, ताहि न मूरि उपाइ ।
लोयन अटके तहाँ पै, मन न सकै जहँ जाइ ॥

कहि कै कुँअर मौन भै रहा । लोयन दुहू गिरे जल बहा ॥
बहुत पूँछि रानी जब हारी । कहि न बात नहिं पलक उघारी ॥
एहि मँह बिरह लहरि पुनि आई । थाँभि न सका परा मुरछाइ ॥
धाह मेलि तब रानी रोई । सुनत लोग धावा सब कोई ॥
राजा रोवै डारि सिर पागा । जन परिजन सब रोवइ लागा ॥
राज मँदिर कर सुनत अँदोरा । घर घर परा नँगर मह रोरा ॥
जो जैसहि तैसहि उठि धावा । हाथ हाथ लै कुँअर उठावा ॥
कोई मेलै पानी मुख, कोऊ मूँदै नाँक ।
मेटे कैसेहु नहिं मिटै, माथ लिखा जो आँक ॥

विद्याधर गुरु पंडित महा । तेहिं कुल सुमति पूत एक अहा ॥
नाउ सुबुधि सकल गुन जाना । पढ़ा पाठ सँग कुँअर सुजाना ॥
बिद्या जानुं जहाँ लगि गुनी । नाटकं चेटक आखर धंनीं ॥
मानतं हेत कुँअर तेहि सेती । कहत सुनत जियं बातैं जेती ॥
सुनि कै बिथा कुँअर पहँ आवा । कुँअर अचेत आइ तहँ पावा ॥
नारी देखि बिचारेसि पीरा । दोष न पाइसं कुँअर सरीरा ॥
बदन पियर लोचन न उघारा । निहचै कहेसि बिरह कर मारा ॥
प्रेम मंत्र बोला सुबुधि, श्रवनन लागि पुकारि ।
सोवत जागा कुँअर पुनि, देखिसि पलक उघारि ॥

तब एकसर भै पूछेसि बाता । कहहु कहाँ कासौं मन राता ॥
कौन रूप देखा तुम जाई । देखतं जाहि परे मुरझाई ॥
मैं तोर हितू जान सब कोई । कौन बात तुम मोसों गोई ॥
औ मै गुन आकरषन पढ़ा । स्वँग बसै सोऊ कर चढ़ा ॥
नाउं ठाउ जाकर जो होई । करि उपाउ पुनि आनउं सोई ॥
जो तुम्ह काज आज नहि आवौं । बुधि बिद्या सब कुलहि लजावौं ॥
प्रम पहार स्वर्ग ते ऊचा । बिनु रेघे कोउ तहँ न पहूँचा ॥

कहु सो बात अब जीव की, बेगहि करौं उपाइ।
ना तो बौरे कुँअर निज, सब मरिहैं बौराइ॥
सुनि सुनि मन सब बात बिचारी। रोइ रोइ कहन कथा अनुसारी॥
जेसे खेलै गए अहेरा। आँधि आइ औ भयो अँधेरा॥
औ जैसें सब चले पराई। परयो आपु जस एकसर जाई॥
औ जैसें बीती सो आँधी। सोवा मढ़ी तुरै तरु बाँधी॥
औ जैसें वह सपना देखा। अपुरब रूप चित्र जस पेखा॥
औ जैसें मन गा बउराई। दिष्टि परत चित लीन्ह चोराई॥
आपन चित्र लिखा रँग लागा। सोवत मढी मोंह जस जागा॥
जैसे देखा सपन सब, सौंमुह पाए चीन्ह।
कुँअर कहा सब सुबुधि सों, जस कौतुक बिध कीन्ह॥
कहा कहौं कछु कही न जाई। हिय सौंरत बुधि जाइ हेराई॥
कहत न बनै जो कछु मैं देखा। गूँग क सपन भयो मोर लेखा॥
नाउँ न जानौ पूछौ काही। पटतर नाहिं देखावौं जाही॥
देस न जानौं केहि दिसि आही। पथ न जानौं पूछौं काही॥
मन चहुँ दिसि धावै बैरागा। फिरि आवै बोहित ज्यों कागा॥
करहु उपाय करै जो पारहु। नाहि तो कहा मुए कहँ मारहु॥
गहिरे सिंधु जाइ जिउ खोवा। अब मैं हाथ आपु सो धोवा॥
मोहि जियत नहिं सूझइ, पुनि वह रूप मिलाउ।
मुएँ कबहुँ सुरभौन महँ, हाथ आउ तौ आउ॥
जबहिं कुँवर यह बात सुनाई। सुबुधि-बुद्धि सब गई हेराई॥
परेउ जाइ मन तेहि अवगाही। तीर ने देखि पाव नहि थाहा॥
कछू विचार हिए नहिं आवै। कुँअर पीर जेहि औषद जावै॥
कहेसि कुँअर यह पथ दुहेला। निराधार खेलैं तिन्ह खेला॥
कहेसि उपाइ एक मति मोरी। मूँदिय और बाट चहुँ ओरी॥
जहवाँ सोइ सपन अस दीसा। ओही ठाँव हनहुँ पुनि सीसा॥
मकु बिधि सोवत कर्म लगावै। बहुरि सोई सपना सो पावै॥
लेहु कुँअर उपदेस यह, चेतहु चेत सँभारि।
आन पथ नहि दूसरा, दीख न हिएँ विचार॥

परेवा खंड

कै सिंव साज निपुसक चारी । जिन्ह सों आहिं सों चित्र चिन्हारी ॥
बेगि चलाए चारिहुं ओरा । ढूंढ़न चले सूर ससि जोरा ॥
औ समुझाइ कीन्ह पुनिं बाता । जानत अहौ जाहिं मन राता ॥
ताकर चाह कहै जो आई । जो माँगहिं सो देउँ बँधाई ॥
चारौ चले चारि दिस भए । आपु आपु कहँ ढूँढ़न गए ॥
जल थल सागर मेरु सुमेरा । रन बन पुर पाटन सब हेरा ॥
जहँ तहँ भवहिं गेह बैरागा । दहुइन मह कोइ होइ सुभागा ॥

वन घन गिरि सायर पटन, जहाँ सुनहि नर नाम ।
फिरि फिरि हेरहिं रैनि दिन, छिन न लेहि बिसराम ॥

तिन्ह मँह अहा जो नाम परेवा । हिए सँवरि चित्रावलि सेवा ॥
उत्तर दिसा दीप अति भला । धौलागिरि पर्वत कहं चला ॥
प्रथमहिं नगर कोट कर फेरी । काशमीर पुनि तिब्बत हेरी ॥
हरद्वार गै गग अन्हावा । मोंगी हींछा सिभु मनावा ॥
सिरीनगर गढ़ देखि कुमाऊं । खसिया लोग बसहिं तेहिं गाऊ ॥
पुनि बदरी केदार सिधारा । ढूँढ़ा फिरि फिरि सकल पहारा ॥
दुरगम देखि मगन कर देसा । चला ताकि नैपाल नरेसा ॥

बाक कोट बसगित बहुत । औ चारिहुँ दिसि ताल ॥
अमर पुरी जानहुँ बसी । नाउ धरा नैपाल ॥

अतिहि अपूरब ताल सुहावा । इसिकदर सुलकरन खनावा ॥
घाट बँधाये गच्च चिनकाई । चहुँ दिसि फेर आरसी लाई ॥
तिरहिँ होइ पानी कर धोखा । देखि पिआस पाव संतोखा ॥
पुनि दुइ नदी सुहावनि वहीं । उत्तम बेदव्यास जस कही ॥
नागमती अहिं मुख ते आई । बागमती नाहरमुख पाई ॥
तीरथ जानि जगत चलि आवा । अंग धोई सब पाप नसावा ॥
बारह मास पटन पुनि धिरी । बरहौ मास जातरा भिरी ॥

नर नारी सुदर सबै, ससि मुख अधर रसाल ।
नैन परेवा चकित रह, देखि नगर नैपाल ॥

घर घर नगर लीन्ह तहँ फेरी । राउ रंक देखे तहँ हेरी ॥
रूप सरूप लोग सब आहा । सो न मिलै जा कहँ चित चाहा ॥
जहं न होइ सो प्रान पियारा । बसत देस सब जानु उजारा ॥
चला नगर तजि पर्वत ओटा । परी द्रिष्ट एक कंचन कोटा ॥

हीरा रतन पदारथ मोती। जगमगाइ सब मानिक जोती॥
कहँसि जाइ देखौं एहि ठाऊँ। लागत अतिहि सुहावन गाऊँ॥
हिए चाउ भइ पाव न लावा, जोगी जाइ न नगर नियरावा॥
आइ सींव दिन नयर भो, लीन्ह अतीथ बोलाइ।
धरमसाल जहँ हुत रचा, तह ले गए लिवाइ॥
गै जोगी तइ देखै काहा। अतिथि सहस एक बैठे आहा॥
ठाढे सबै राउ औ राना। सेवा करहिं जैस मन माना॥
भाँति भाँति पकवान जेंवावहिं। औ अपनै कर पान खिवावहिं॥
जो इच्छा मन माँगै कोई। वेगिहि आन पुरावैं सोई॥
देखि अतीथ सबै रहसाए। सेवा कहँ चलि आगे आए॥
आदर सहित आनि बैसारा। पहिलें लै जल पाँव पखारा॥
ता पाछें लाए पकवाना। जेंउ गोसाईं जो मन माना॥
जोगी कछू न जेंवई, पूछें कहै न बैन।
चरचै आनन चहूँ दिस, कीन्हें चचल नैन॥
जोगि न जेंवा रहे जेंवाई। काहू कहा कुअर पहँ जाई॥
धरमसाल एक जोगी आवा। चिंत चचल बैराग जनावा॥
नहिं जानहि दुहुँ का चित जानी। अन्न न खाइ पियै नहिं पानी॥
पूछे कहै न एकौ बाता। पियर बदन जस काहुक राता॥
चचल नैन चहूँ दिस हेरा। चरचै पुर आनन सब केरा॥
पलक न लाउ जानु नहिं सोवा। ढूढत फिरै जानु कछु खोवा॥
धरमसाल की नीत न होई। भूखा जाइ इहा हुत कोई॥
भइ आयसु ऐसी कहा, वेगिहि आनहु सोइ।
मैं चूकयों सेवा कछू, तातें रिसि जिय होइ॥
कुंअर पास तब जोगी आना। जोगी कुँअर देखि पहिचाना॥
चित रहसा जानहुँ निधि पाई। कथा महँ जोगी न समाई॥
पीत बरन जु अहा भा राता। अति हुलास कपेउ सब गाता॥
देखि कुँअर आदर बहु कीन्हा। निकट पाट बैठन कहँ दीन्हा॥
विनती कीन्ह सुनौ हो देवा। कस न धरम कै मानहु सेवा॥
हम सेवक तुम्ह देव गोसाईं। सेवक हुते चूक बहु टाईं॥
रिस तजि जेंवहु जेंवन देवा। होउँ सनाथ आज तुम्ह सेवा॥
कहेसि कुअर सुनु धरम तरु, अस लगेउ तुअ भाग।
जरि पताल पालो सरग, छाँहा फल तेहि लाग॥
जा दिन तें हम गुरु बिछोवा। अन्न न जेंवा नींद न सोवा॥
भूख नाहिँ औ नाहिँ पियासा। नाउँ अधार रहइ घट साँसा॥
दक्खिन देस जान जिन्ह देखा। रूपनगर कबिलास बिसेखा॥

बसे गुरू तेहि नगर सोहावा। चेला देस बिदेस फिरावा ॥
जोग अगिनि जब हिए प्रचारी। पल महँ कीन्ह भसम रिसि जारी ॥
काया जोग अहै रिसि रोगू। जो रिसि करै सो नासै जोगू ॥
कुँअर कहा कस देस तुम्हारा। औ को देस बसावन हारा ॥
मो सौं देस बखान करु, कैस नगर कस भूप।
कौन लोग तहवाँ बसैं, पुनि गुन कौन अनूप ॥
जोगी कथा कहन अनुसारी। सुनहु कुँअर यह बात रसारी ॥
रूपनगर सो उत्तिम देसा। चित्रसेन जहँ राउ नरेसा ॥
ऊँच नीच घर ऊँच उँचाए। चित्र कटाउ अनेक बनाए ॥
घन सो नग्र धन उत्तिम देसा। चित्रसेन जहँ राउ नरेसा ॥
राउ रंक घर जानि न जाईं। एक ते एक चाह अछ्रवाईं ॥
बेल चँबेली कुंद नेवारी। घर घर आँगन फुलि फुलवारी ॥
लीपे चंदन मेद अवासा। भीत बैठि लेहिं अलि बासा ॥
मृगमद चोवा कुमकुमा, खोरि खोरि महकाइ।
सुर नर मुनि गंधरब सब, रहे सुवास लुभाइ ॥
चित्रसेन अति राउ भुवारा। जस रवि तपै तेज मनियारा ॥
जेहि घर विषम दिष्टि परि राई। बैरी तम जिमि जाइ बिलाई ॥
बड़ परताप अखंडित राजू। अगनिन हस्ति घोर दल साजू ॥
गुन बिद्या सरि भोज न पावा। पँडितन्ह हिएँ हेत बहु लावा ॥
दुखी न कोई सब सुख राता। जहँ तहँ चलै धरम की बाता ॥
सब सुखिया कोउ दुःख न जाना। ढूँढत फिरहिं लेइ को दाना ॥
देस देस के राजा आवहिं। ढाढ तँवाहि बार नहिं पावहिं ॥
महथ गरब अति मान तहँ, रहै न एकौ अंक।
रूप नगर की खोरि महँ, राउ होहिं सब रंक ॥
तेहि घर पुनि चित्रावलि बारी। मात पिता की प्रान पियारी ॥
रूप सरूप बरनि नहि जाई। तीनिहुँ लोक न उपमा पाई ॥
दिनकर दिन पावै नहि जोरा। इंद्र लजाइ देखि मुह ओरा ॥
अमर कोष गीता पुनि जाना। चौदह बिद्या करे निधाना ॥
संतति आन न तेहि घर आवा। वाही एक ते सब चित लावा ॥
भौंह चढाइ जो कबहुँ रिसाई। मात पिता कर जिउ निसराई ॥
औ जो चाह करै पुनि सोई। लेत देत कछु बरज न कोई ॥
दखिन दिसा पुनि नगर के, सखर एक खनाइ।
सखिन साथ चित्रावली, तहँ नित जाइ नहाइ ॥
कहा सराहौं सखर तीरा। पानि मोती तहँ काँकर हीरा ॥
अति औगाह थाह नहि पाई। बिमल नीर जहँ पुहुमि देखाई ॥

अति अमोघ औ अति बिस्तारा। सूझ न जाइ वारहु त पारा ॥
घाट बँधाऐ कंचन ईंटा। सरग जाइ जनु लाग्यो भीटा ॥
ऊपर ताल पानि जहँ ताईं। ठाँव ठाँव चौखडि बनाईं ॥
औ जहँ तहँ चौरा कै लीन्हें। निसि दिन रहहिं बिछावन कीन्हें ॥
जहाँ एक छिन करै नवासा। सोई ठाँव होइ कबिलासा ॥
सुख समूह सरवर सोई, जग दूसर कोउ नाहिं।
मानुष कर का पूछिये, देवता देखि लोभाहिं ॥

भीतर सरवर पुरइन पूरी। देखत जाहिं होइ दुख दूरी।
फूले कँवल सेत औ राते। अलिमकरद पियहिं रस माते ॥
बासर पदुम कुमुद रह फूला। सब निसि नखत चाँद रह भूला ॥
तोरिं कँवल केसर झहराहीं। केसरि बास आव जल माहीं ॥
हंस झुंड कुरिलहि चहुँ ओरा। चकइ चकवा पौरहिं जोरा ॥
सवरत ताहि सिरायो हीया। चातक आइ पाने सो पीया ॥
औ जित पछी जल के आए। केलि करत अति लाग सोहाए ॥
रहसहिं क्रीड़ा बृन्द बस, भौंर कँवल फहराहिं ॥
निसि दिन होंहिं अनद तह, देखत नैन सिराहिं ॥

सरवर तीर पछिम दिसि जहाँ। चित्रावलि की बारी तहाँ ॥
सीतल सघन सुहावन छाहीं। सूर किरिन तहँ सँचरै नाहीं ॥
मंजुल डार पात अति हरे। औ तहँ रहहिं सदा कर फरे ॥
तुरँज जँभीरी अति बहुताई। नेबू डारन गलगल जाईं ॥
अमिरित फर औ दाड़िम दाखा। सतति जियै निमिष जो चाखा ॥
नरियर और सोपारी लाईं। कटहर बडहर कोऊ न खाईं ॥
आँब जमुनि लै एक दिसि लाए। बर पीपर तहँ गवन न आए ॥
मूर सजीवन कलपतरु, फल अमिरित मधु पान ॥
देउ दहत तेहि लगि भजहिं, देखत पाइय प्रान ॥

कोकिल निकर अमिरित बोलहिं। कुंज कुंज गुंजत बन डोलहिं ॥
सारी सुआ पढै बहु भाषा। कुरलहिं बैठि बैठि तरु साखा ॥
पवईं आपन आपन जोरी। छकी फिरहि कुरलहि चहुँ ओरी ॥
खंजन जहँ तहँ फरकि देखावैं। दहिअल मधुर वचन अति भावैं ॥
मोर मोहनी निरतहिं बहुताईं। ठौर ठौर छवि बहुत सोहाईं ॥
चलहिं तरहिं तहँ ठमुकि परेवा। पडुक बोलहि मृदु सुख-देवा ॥
बहु करनास रहहिं तेहि पासा। देखि सो सग भाग जेहि बासा ॥
भगराज औ भृंगी, हारिल चात्रिक जूह।
निसि बासर तेहि बारि महँ, कुरलहि पछि समूह ॥

औ पुनि रहे माँझ जहँ बारी। चित्रावलि लाई फुलवारी॥
सोन जरद नागेसर फूले। देखि सुदर्सन दिष्ट जो भूले॥
जाही जूही अति बहुताई। अनबन भाँति सेवती लाई॥
बनबेला सतबर्ग चमेली। रायबेल फूली सुखबेली॥
करना केतलि बास नेवारी। चपकली जनु कुंदि उतारी॥
कदम गुलाब लाग बहु भाँती। औ बसाइ बकुचन की पाँती॥
मौलसिरी फूली औ मूँदी। जनु सिंगार हरावलि गूँदी॥
पौन बसेरा लेहि निसि, तेहि फुलवारी पास।
भोर भए जग प्रगटइ, तिन्ह फूलन्ह की बास॥

ललित लवंग लता जहँ फूली। भौंरा भौंरि कुसुम तेहि भूली॥
नगर नगर तहँ डगरै जूही। गंधराज फूलहिँ संबूही॥
कस्तूरी सुगंध बिगसाहीं। ठौर ठौर सौ अधिक बसाहीं॥
भुइँ चंपा फूली बहु रंगा। मानहु दरसा रूप अनंगा॥
सूरज भाँति भाँति अति राते। देखत बनै बरनि नहिँ जाते॥
उड़हिँ पराग भौंर लपटाहीं। जनु बिभूति जोगिनि लपटाहीं॥
मरकडी भौंरन सँग खेली। जोगिन संग लागि जनु चेली॥
केलि कदम नवमल्लिका, फुल चंपा सुरतान॥
छ ऋतु बारह मास तहँ, ऋतु बसंत अस्थान॥

औ पुनि जहाँ माँझ फुलवारी। तहँ चित्रावलि की चित सारी॥
चंदन मेद कपूर मिलावा। इन्ह तिहुँ मिलि कै कीन्ह गिलावा॥
हीरा ईंट लगाइ उँचाई। देखत बनै बरनि नहिँ जाई॥
चूनी चूरि कै कीन्हो खोहा। मोती चूरि गच्च जगमोहा॥
अति निरमल जस दरपन कीन्हा। तहाँ जाइ पुनि आपु न चीन्हा॥
मँदिर एक तँह चारि दुआरी। नगिन जरी पुनि लागु केवारी॥
कनक खंभ तँह चारि बनाए। हीरा रतन पदारथ लाए॥
ठौर ठौर सब नग जरित, अस होइ रहेउ अँजोर।
जँह न रैनि दिन जानिए, औ न साँझ नहि भोर॥

तेहि मँह चित्रावलि गुन ग्यानी। आपु न चित्र लिखै अस जानी॥
जौ लौं सखी दरस नहिं पावहिँ। भोरहिँ आइ सीस तेहि नावहिँ॥
और जो चित्र अहहिँ तेहि माहीं। सो चित्रावलि की परछाँहीं॥
अस बिचित्र केहि लावों जोरी। अस्तुति जोग जीभ नहिँ मोरी॥
वही रंग अपने रँग माहीं। ओहि के रंग और कोउ नाहीं॥
सौंह न जाइ चित्र मुख हेरा। धन सो चित्र औ धन सो चितेरा॥
मानुष कहा सो देखै पावैं। देवता जाहिँ जो द्वारे आवै॥

कोटि चित्र चितसारि महँ, देखत एकौ नाहिँ।
जौं दिनकर उद्दोत ही, नपत सबै छिपि जाहिँ॥
लखो लिलाट दूजि कर चदा। दूजि छाड़ि जग वो कहँ बदा॥
भौंह धनुष बरुनी बिषबाना। देखि मदन धनु गहत लजाना॥
बरुनी बान गड़े जेहि होये। बहुरि न निकसै जब लहुँ जीये॥
लोचन विमल जानु सम जोवा। निमिख जो देख जनम भर रोवा॥
अधर सुरंग जनु खाए तँबोला। अबहीं जनु चाहै हँसि बोला॥
लक छीन जेहि भृग लजाहीं। कोउ कह आहि कोऊ कह नाहीं॥
फीली चरन सराहौ काहा। अबहीं रहसि चलै जनु चाहा॥
गुपुत रहै चित सारि महँ, जग जानै सब कोइ।
सपने जो कोइ देखई, सौतुक जोगी होइ॥

सुनी कुँअर जो चित्र की बाता। हिए हुलास कँपेउ सब गाता॥
सचक भयौ चित औ मन गुना। सपन जो देखा सौंतुक सुना॥
सोवत भाग अहे सो जागे। श्रवन भए सुनि जाहि सभागे॥
मोहिँ परतीति करम की नाहीं। कहत आहि कोउ सपने माहीं॥
जौ निहचय हौं सोअत अहौं। जनि जगाउ विधि हा हा कहौं॥
कौन घरी यह आह सुभागी। देखेउँ सोइ सुनेउँ सो जागी॥
कौन बार यह आइ सरेखा। सखन सुना नैनन जो देखा॥
यहि अतर जनु बिरह अहि, बधन देई छुड़ाइ।
बिथुरि गयौ विष सकल तन, लहरि चढी जनु आइ॥

गुपत पीर परगट पुनि भई। सुलगत आगि फूकि जनु दई॥
उठी आगि सिर पालहु जरा। धाइ कुँअर जोगी पग परा॥
रहि न सकेउ हिय गह भरि रोआ। नैन नीर जोगी पग धोआ॥
बिरह अनल जल भै चखु ढरा। लोचन नीर जोगि तब जरा॥
दुहूँ हाथ गहि सीस उठावा। पूँछत बात बकुर नहिं आवा॥
साँप डसा जनु बिष छहराना। घूमत रहै सुनै नहिँ काना॥
दिष्टी भुअँग बद जनु कीन्हीं। ते पढ़ि मत्र खोलि जनु दीन्हीं॥
तब जोगी कर नीर लै, मुख छिरकेसि करि हेत॥
पहर एक बीते भयौ, बहुरि कुँअर चित चेत॥

बहुरि जो कुँअरउ सोइ कै जागा। बैरु सँभारि गहेसि सिर पागा॥
तौ पुनि कहिस ऊभ लै साँसा। ए देनिहार निरासहि आसा॥
वोह सो चित्र जो मोहि दुख दीन्हा। बरबस जीउ मोर हरि लीन्हा॥
जीउ लेइ तन दूरइ डारा। हौ तो वही चित्र कर मारा॥
वही चित्र मैं सपने दीठा। चित्त माँहिँ वहि चित्र बईठा॥

वही चित्र बिनु जीउ बिहीना। जिउ हरि लीन्ह कीन्ह तन सूना ॥
वही चित्र जो नैन समाना। सौं टुक स्त्रवन जाइ नहिं जाना ॥
वही चित्र हम हिए महँ, जो तैं कीन्ह बखान।
हौं अब रहा सरीर होइ, वह भौ जीउ समान ॥
जेहि दिन ते नैनन भा लाहा। बहुरि न पायौं कतहूँ चाहा ॥
पंथ न पावउँ केहि दिसि जाऊँ। पूछौं काहि न जानउँ नाऊँ ॥
मैं निरास औ बिनु जिउ आहा। आस दई तैं जिउ घट बाहा ॥
आजु आस तैं पुरएसि मोरी। तन मन धन नेवछावरि तोरी ॥
अब कहु पंथ गवन जेहि पावौं। चलउँ बेगि छिन बिलँब न लावौं ॥
तुम्ह जहँ चहहु सिधारहु तहाँ। मोहि अब कहहु पंथ सो कहाँ ॥
कै अब जाइ चित्र सो पावौं। कै अगान वहि पंथ लगावौं ॥
जिउ चितसारी महँ रहा, देह रही हम साथ।
देहु सोई उपदेस मोहिँ, जेहिँ जिउँ आवै हाथ ॥
जोगी कहा कुँअर सुनु बाता। अबहीं देखि चित्र तूँ राता ॥
वह सो चित्र तैं देखा नाहीं। जा कर ऐस चित्र परछाहीं ॥
चित्र देखि तैं चित्रै जाना। ता महँ अहा सो नहिं पहिचाना ॥
चित्रहि महँ सो आहि चितेरा। निर्मल दिस्टि पाउ सो हेरा ॥
जैसें बूँद माँह दधि होई। गुरु लखाव तौ जानै कोई ॥
जा कहँ गुरू न पंथ देखावा। सो अंधा चारिहुँ दिसि धावा ॥
मूरख सो जो चित्र मन लावै। सेमर सुआ सैंत पछतावै ॥
यह मूरति औ चित्र जग, जो बिधि सरा सुजान।
परगट देखहि नैन यह, गुपुत जो पूजहि आन ॥
अति सरूप चित्रावलि बारी। जनु बिधिनै कर चित्र सँवारी ॥
चित्रहिँ कहाँ जोति छबि ओती। वह सजीव यह बिनु जिउ जोती ॥
चित्र अबोल होइ जनु गूँगा। बोहि क बोल जस मानिक मूँगा ॥
चित्र कटाच्छ भाव बिनु नैना। बोहि क नैन सब मोहन सैना ॥
चित्र अडोल न डोल डोलावा। बोहि गौनत जनु हंस सोहावा ॥
सायक बरुनि भौंह धनु ताना। लौंरत जाहि लागु उर बाना ॥
चंद बदन तन चंपक सारी। अलि सँग फिरहिँ जानि फुलवारी ॥
काहि लगावौं उपम तेहि- अच्छर पूज न छाँहिं।
सुर नर मुनि गन पचि मरहिँ, दरसन पावहिँ नाहिँ ॥
बदन जोति केहि उपमा लावौं। ससिहर पटतर देत लजावौं ॥
ससि कलंक पुनि खंडित होई। है निकलंक सँपून सोई ॥
ससि बंदी जस दूजिक दीसा। ओहि बंदी नित देहिँ असीसा ॥
जो मुख खोलि करै उजियारा। नखत छपाहिँ होइ ससि तारा ॥

नैन कुरंग कहे नहिं पारौं। खंजन मीन ताहि पर वारौं ॥
तीन रंग जा महँ नित लहिए। तेहि कुरंग कहुँ कैसे कहिये ॥
जाकहँ नैन एकौ छन हेरा। सो विष बान क भयौ अहेरा ॥
ऐसन चित्र अहेरिया, मारि न खोज करेइ।
जेहि उर लागे बान सो, रहसि रहसि जिउ देइ ॥
औ तेहि संग अनेग सहेली। सबै सरूप अनूप नवेली ॥
उन्हक रूप बिधि अपुरुब कीन्हा। करि करि चित्र आनु जिउ दीन्हा ॥
कोउ कुमुदिनि कोउ पकंज कली। एकतें एक चाहे अति भली ॥
अबहीं सबै कली मुँह मूँदी। भौंर चरन ते बेलिन खूँदी ॥
सबै चित्रिन औ पदुमिनि जाती। सेवा करत रहत दिन राती ॥
अग्या होहिं करहिँ वै सोई। मेटि न सकैं रजायँसु कोई ॥
औ निहि ठाँव करहिँ बिसरामा। जपत रहहिँ चित्रावलि नामा ॥
निसि बासर ठाढ़ी रहहिँ, लीन्हें आपन साज।
जौ पठवहिं सिष एक कहँ, धाइ करहिँ दस काज ॥
पुनि सो चित्र लिखे भल जाना। उनसौं जगत न कोऊ सयाना ॥
आपन चित्र आपु पै लीखा। और को लिखै जान नहिँ सीखा ॥
जगत चितेर रहे पचि हारी। ओकर चित्र न सकैं सँवारी ॥
जो कोई आपन चित आनै। अँतरजामी तबहीं जानै ॥
आपन चित्र छीन कै लेई। औ तेहिँ देस निकारा देई ॥
आपन चित्र जाहि लिख दीन्हा। ते सो घालि हिये मो लीन्हा ॥
एहि डर कोऊ न बीसरै, आठ निसि आठौ जाम।
लिये रजायसु नित रहहिं, जपत फिरहिं सो नाम ॥
औ तेहिँ संग निपुंसक जाती। पठवै जहाँ जाहिँ लै पाती ॥
गुन बिद्या सब जाना बूझा। निरमल दिष्टि पंथ भल सूझा ॥
अन्न न खाहिँ पानि नहि पीयहिं। नाउँ अधार रैनि दिन जीयहिँ ॥
काम क्रोध तिसना मन माया। पँच भूत सौं तिन्ह की काया ॥
अग्या काज बिलँब न लावा। करहि सोइ जेहिँ दोष न पावा ॥
सब की बात जनावहिँ जाई। अग्या होई कहहिँ सो आई ॥
अग्या बिना पैग जो धरहीं। अनल तेज सिखा लहि जरहीं ॥
दूरि रहहिँ तेहिँ गमत नहिँ, निकट रहहिँ ते चारि
रचना सिरजनहार की, नावै पुरुष न नारि ॥
हौं तेहि माहँ परेवा नाऊ। सेव करौं चित्रावलि ठाऊँ ॥
वह सो गुरू हौं आकर चेला। वहिक नाउ हम मुँदरा मेला ॥
वही पंथ मोहि दीन्ह दिखाई। वेहि के बचन सिद्धि मैं पाई ॥
औ सुमिरन दीन्ही वोहि केरी। वेहि क नाउँ सुमिरौं हरि फेरी ॥

भूख नाहिँ औ नींद पियासा। चित्रिनि सुरति ध्यान घट आसा॥
भा अग्या करि साज महेसू। दिन दस फिरहुँ देस परदेसू॥
जौ लगु फिरत होइ नहिँ रोगी। तौ लगि सिद्ध होइ नहिँ जोगी॥
भसम अंग पग पाँवरी, सीस कलपि करि केस।
कंथ पहिरि लै दंड कर, देखन निसरयौं देस॥
सुनत कुँअर जोगी के बैना। उघरे दोऊ, हिये के नैना॥
मन महँ कहेसि सोंचु यह साजा। वह सो कौन जा कर उपराजा॥
जेहिक चित्र अस जिउ लेनिहारा। दुहुँ कस होइहि सिरजनहारा॥
साजा होई मेटि पुनि जाई। सिंभू सरीर न कोऊ मिटाई॥
जौ न आपु आपहि पहिचाना। आन क पेम कहाँ हुत जाना॥
जैसे कुबुध जानि कै देवा। बहुत करहिँ पाहन कै सेवा॥
पाहन पूजि सिद्धि किन पाई। से मर सेइ मुआ पछिताई॥
कस न बूझि खोजों सोई, जेहिक चित्र सब कीन्ह।
जीउ देई जो चाहई, लेइ जो चाहै लीन्ह॥
कुँअर कहा अब सुनहु परेवा। मैं तोर सीख मोर तैं देवा॥
मैं तजि पंथ जात बौराना। तैं गहि बाँह पथ पर आना॥
बूड़त मोर नाउ मँझ नीरा। तू खेवक होइ लाइसि तीरा॥
सोअत हौं जो अहा सो जागा। मन तजि चित्र चितेरहिँ लागा॥
चित्र देखि न चितेरा जाना। बिनु चितेर अब दिष्टि न आना॥
अब फिरि कहु चित्रावलि बाता। जेहि के रूप आजु मन राता॥
सुनतहि नाम दूरि भइ दाहा। दहुँ मुख देखत होइहै काहा॥
मरत जियाए जोइ कहि, फिरि फिरि कहु सो बात।
सुनिबे कहँ अमिरित कथा, श्रवन भए सब गात॥
जोगी सँवरि कहै पुनि बाता। वह चित्रावलि जेहि रँगराता॥
बदन मयंक मलयगिरि अंगा। चंदन बास फिरहिं अलि संगा॥
जो अलि अंग बास वह पाई। सो तजि आन फूल नहिं जाई॥
बहुतन्ह सिर करवट गहि सारा। हिंछा करि लहुकर औतारा॥
बहुत नाउँ सुनि जोगी भए। मुड़ मुँडाइ देसतर गए॥
ससि सूरज औ नषतन पाँती। बरने होहिं दिवस औ राती॥
भूषन सोभ पाव तेहि अंगा। ताते निसि दिन छाड न संगा॥
चाँद न सरवर पावई, रूप न पूजै भानु।
अब सुनु तन मन कान दै, नख सिख करौं बखानु॥
प्रथमहिँ कहौं केस की सोभा। पन्नग जनौं मलयगिर लोभा॥
दीरघ बिमल पीठि पर परे। लहर लेहिं बिषधर बिष भरे॥
कचे अहिं डसा जनम नहिं जागा। मंत्र न मानै मूरि न लागा॥

बिथुरी अलक भुअंगिनि कारी । कै जनु अलि लुबुधे फुलवारी ॥
कै जनु बदन तरनि जौ तपा । सिमिटि सुमेरु पाछु तन छुपा ॥
किमि कच बरनौं राजकुमारा । मति न समाइ देखि अँधियारा ॥
मृग मदवास आव तेहि केसा । पौन जाइ लइ देस बिदेसा ॥
सिरजी तब विधि स्यामता, जब जग सिरजै लीन्ह ।
ते कच सिरजे सार लै, सेष बाँटि के दीन्ह ॥
सीस सिंगार माँग बिधि कीन्ही । तातें ढाउँ माँग पर दीन्ही ॥
सूर किरन करि बालहि धारा । स्याम रैनि कीन्ही दुइ फारा ॥
पथ अकास विकट जग जाना । को न जाइ वोहि पथ भुलाना ॥
तहाँ देखि अलकावरि फाँसा । पथिन्ह परा जीउ कर साँसा ॥
जिउ परतेजि चलहिं तेहि माही । और बाट नहिं केहि दिसि जाहीं ॥
बेनी सीस मलयगिरि सीसा । माँग मोति मनि माथे दीसा ॥
सूर समान कीन्ह बिधि दीया । देखि तिमिर कर फाट्यो हीया ॥
स्याम रैनि मँह दीप सम, जेहि अँजोर जग होइ ।
अछुज भुअगम माँहि वसि, दिया मलीन न होइ ॥
पुनि लिलाट जस दूजि न चदा । दूजि छाडि जग वह कह बदा ॥
पटतर दूजि होति जौ होती । दूजि माँह पुन्यों कै जोती ॥
भाग भरा अस दिपै लिलारा । तीनहुँ भुवन होइ उजियारा ॥
होइ मयक खीन जेहि रीसा । सो लिलाट कामिनि पहँ दीसा ॥
कुंदन तिलक सोभ कस पावा । मनहुँ दुइज माँ जीउ मिलावा ॥
मुकुता पाँति चहूँ दिसि पाई । मानहुं मिली किरितिका आई ॥
जाहि लिलाट भाग मनि होई । अस सँजोग सुभ देखै सोई ॥
सुभ सँजोग वहि एक छिन, जा कहँ सनमुख होइ ।
जौ जग लागै गरह जिमि, बार न बाँकै कोइ ॥
कुटिल भौंह जानों धनु ताना । इद्रधनुष तेहि देखि लजाना ॥
जानहु काल जगत कहँ कढ़ा । निसि दिन रहै पयच जनु चढ़ा ॥
भौंह फिराइ जाहि तन हेरा । देखत काल होइ तेहि केरा ॥
एही धनुष जुध मनमथ लीता । कै परनाम काम तन जीता ॥
भौंह धनुष लखि इद्र सँकाना । सब जग जीति सरग कहँ ताना ॥
कौन सो बली जो न गै मारा । तिनहुँ लोक एक हुकारा ॥
ऐस धनुष जग और न दूजा । देवतन्ह आइ बाहुबल पूजा ॥
अहिपुर नरपुर जीति कै, सुरपुर जीतो जाइ ।
अब दहु कछू न जानिये, का कहँ धरे चढाइ ॥
बाँके नैन तीष अति दोऊ । जगत जाहि सर पूजि न कोऊ
राते कौंल मधुप तेहि माँहीं । कहत लजाउ तेउ सर नाहीं ॥

कौंल देखि ससिहर कुम्हिलाने । ए ससि संग सदा बिगसाने ॥
स्याम सेत अति दोऊ सोहाए । खंजन जानु सरद रितु आए ॥
कै दुइ मिरिग लरत सिर नीचे । काजर रेख डोर गहि खींचे ॥
दोउ समुद्र जनु उठहि हलोरा । वह महँ चहत जगत सब बोरा ॥
तीछे हेर जाहिँ चषु आछे । चली मीन जनु आगें पाछें ॥
अर कामिनि चषु मीन सम, निमिष हेर तन जाहि ।
बहुरि जनम भरि मीन जिमि, पलक न लागै ताहि ॥
बरुनी बान तीख अरु घने । सोई जानु जाहि उर हने ॥
मद सिराय ते भाल सँवारे । जाके हने सबै मतवारे ॥
तापर बिष काजर सों बाँधा । सोई मरै जाहि तन सोंधा ॥
लाग न बरुने बान जेहि हीया । सो जग माँह अमिरथा जीया ॥
जेते अहैं जीव जग माहीं । साधन जाइ बान सो खाहीं ॥
जगत आइ होइ रहा निसाना । मकु हौं सोंह मारि तेहि बाना ॥
गलि गलि हाड़ रहे जो आई । बैठ जो लागि जाइ तो जाई ॥
एक मूँठ के छाड़ते, लागे बान अलेख ।
जग महँ ऐसन पारधी, दूसर काहु न देख ॥
सुभग सरूप सुरग अमोला । जनु नारँग बरनारि कपोला ॥
ईंगुर केसर जानु पीसाए । दोऊ मिलाइ कपोल बनाए ॥
और सो देखि कपोल लुनाई । मती हीन कछु बरनि न जाई ॥
तेहि पर तिल सो देइ अस सोभा । मधुकर जानु पुहुप पर लोभा ॥
कै बिधि चित्र करत कर धरे । करत उरेह बूँद खसि परे ॥
बदन सिंगार सोभ जो पावा । रहेउ न दिन पुनि सो न उचावा ॥
वह तिल जाहि दिष्टि तल परा । भयो स्याम तस तिल तिल जरा ॥
नहि चीन्हत कोउ काहु कहँ, जो जग माहिं न होति ।
परछाहीं तिल एक की, सब नैनन्ह महँ जोति ॥
किमि बरनौ नासिका सोहाई । नासिक सुनि मति नियर न जाई ॥
खरग धार कहि आवै हाँसी । कौन खरग जेहि उपमा नासी ॥
तिलक फूल कबितन्ह चित धरा । उहौ लजाइ पुहुमि खस परा ॥
इह रुआर पुनि कीर कठोरा । उपम देत मन मान न मोरा ॥
उह सुर मौन जगत उपराई । ससि सूरज जहँ उदै कराई ।
तेहि पर हेरि रही मति मोरी । उपमा नहिं कोंह लावों जोरी ॥
बेसरि जो पहिरै रहसाई । नग कुंदन छवि पाउ सोहाई ॥
मुकुता डोलत निरखि मन, सुर नर इहै गुनाहिं ।
कहत सुहागिनि नासिका, तिहुं पुर पटतर नाहिं ॥
अधर सुधा निधि बरनि न जाई । बरनत मति रसना पनियाई ॥

छुए न काहु अछूते राखे। प्रेम दिष्टि मुख अजहुँ न चाखे ॥
विद्रुम अति कठोर औ फीके। सुरँग मृदुल दुख दायक जीके ॥
बिंब अरुन सो सरि न तुलाना। अति लजान बन जाइ दुराना ॥
बदन मयंक जगत उँजियारा। अमिरित अधर प्रान देनिहारा ॥
का बरनौं का मति भइ मोरी। उत्तम अधम लगाएउँ जोरी ॥
ससि अमिरित देवतन्ह कै जूठा। जगत जान यह अधर अनूठा ॥
लोयन जाहि कटाच्छ सर, मारि प्रान हरि लीन्ह।
अधर बचन तत खिन दोऊ अमिय सींचि जिउ दीन्ह ॥
दसन जानु हीरा निरमरे। बदन आनि मुख सपुट धरे ॥
इक इक नग दुहुँ जग कर मोला। जो जिय देइ कहै सो खोला ॥
पान खात कछु भए उचारे। दिष्टि परे मजुल रतनारे ॥
जनु दुइ लर मुकुता रँग भरे। मंजन लागि आइ मुँह धरे ॥
कै देवतन्ह ससि कीन्ह कियारी। अमिरित सानि बारि अनुसारी ॥
दाडिम बीज तहा लै बोए। रखवारे राखे अहि पोए ॥
निसि बासर तें निकट रहाहीं। मकु सुक पिक खजन चुनि जाहीं ॥
इक दिन बिहँसी रहसि कै, जोति गई जग छाइ।
अबहूँ सौरत वह चमक, चौंधि चौंधि जिय जाइ ॥
तेहि भीतर रसना रस भरी। कौंल पाँखुरी अमिरित भरी ॥
दसन पाँति मँह रही छिपानी। बोलत सो जनु अमिरित बानी ॥
बोलत बैन अमी जनु चूआ। सुनत जिये बरषन कर मूआ ॥
जे मन अहि कुंतल के खाए। बोलि बोलि मन सबै जियाए ॥
जाके स्रवन बचन उन डारा। ताकर बचन जीउ देनिहारा ॥
उकतिन बोलत रतन अमोली। आँबि चढी जनु कोइल बोली ॥
व्याकरनो जानै सगीता। पिंगल अमर पढ़हि पुनि गीता ॥
रहहिं रैनि दिन बाद महँ, चित्रिनि चखु औ बैन।
त्यों त्यों रस न जियावई, ज्यों ज्यों मारहिं नैन ॥
औब सूल सम ठाढ़ी भई। सह आमिल यह अमिरित भई ॥
तेहि तर गाड़ अपूरब जोवा। पाक आँब जनु अँगुरी टोवा ॥
पाका आँब गात पियराना। वह कुमकुम जनु ईगुर साना ॥
चिबुक कूप अति नीर गँभीरा। बिंब अधर सँजीव जेहि नीरा ॥
अमिरित कुड अगम औगाहा। जो तहँ परा निकास न चाहा ॥
ताहि कूप ढिग रहस न जाहीं। बूडन कहँ मुनि लाल कराहीं ॥
परहिं जाइ मन रहइ न देई। कुतल काँट काढि कै लेई ॥
नैन पियासे रूप जल, पावत जेहि न अघाहिं।
कूप चिबुक जो मन परै, बूड़ि बूड़ि रहसाहिं ॥

सिंधुसुता सम सवन अमोला। जलसुत बचन लागि बिधि खोला ॥
जे अमोल नग जगत बखाने। नारि सवन मह सबै समाने ॥
ग्यान बात बिनु आन न सुना। सुनत मोति तबहीँ सिर धुना ॥
निसि दिन मुकता इहै गुनाहीँ। खंजन झाँकि झाँकि जिमि जाहीँ ॥
कचन खुटिला जा न बखाना। गुरु सिख देइ लागि ससिकाना ॥
राहु जुद्ध कहँ सर्पारि निसका। दुहुँ कर लीन्हें सेलि मयका ॥
औ पुनि सोमै खुमी सोहाई। अबही तरिवन चढा न जाई ॥
कलभ दसन खंभिया दोऊ, सोऊ पट तर नाहिँ।
एक छिन देखे जनम भरि, खुभी रहै जिउ माहिँ ॥

अब सुनु बरनौ गींव सुहाई। बिधि कर चाक भँवाइ चढाई ॥
अँगुरिन बीच रही जो रेखा। सोइ चीन्ह रेखा तहाँ जो देखा ॥
केलि समै कौतर की रीसा। तत पिन चलो लाइ भुइँ नीसा ॥
नाचत, मोर गींव लर जोवा। तबहीँ सीस पाइ धरि रोवा ॥
सख न सम भा सौंझ सँकारा। तातें जहँ तहँ करे पुकारा ॥
तब ही छुरन जान अपछरा। भूषन लाग न बाँधे छुरा ॥
वोहीँ कठ जानु जिन्ह दीठी। अमिरित चाहि न पूरै मीठी ॥
सोहत हाँस जराउ गर, बदन हेठ निकलंक।
सर न मयक सूर जनु, दुरत राहु के संक ॥

दीरघ वाहु कलाई लोनी। अति सुन्दर जग भई न होनी ॥
दुहु पौनाल सोऊ सर नाहीं। ताते रंध कलेजे माहीं ॥
सुभ्र भुजन पर टाँड सोहाई। टाँड तहाँ छबि पाव सवाई ॥
देखि धुनहि गन गभव माथा। एक सो इद्र वज्र पुनि हाथा ॥
देखि सो मजुलि सुभ्र कलाई। को न गयो बनफलै सिधाई ॥
वहि संग देखु जो जुरा हथोरी। कौंल पाखुरी ईंगुर बोरी ॥
विद्रुम वेलि सो अँगुरी दीसी। वह कठोर यह मुंगफली सी ॥
अँगुरिन मुँदरी जरित की, सोह छला प्रति पोर।
अमीकरन नग आँखि जनु, गाँठि कनक के जोर ॥

होत उतंग सिहन निरमरे। एक डारि दोइ नारँगि फरे ॥
कनक कटोरा दुइ गुन भरी। संकर पूजि उलटि जनु धरीं ॥
झीने पट महँ झलकत दीसी। जनु भीतर द्वै कँवल कली सी ॥
मुकुताहल विच सोभा कैसी। चकवा छवा विछुरि जनु वैसी ॥
होत उतग दोऊ अति लोने। जनु द्वै वीर छत्रपति होने ॥
अबहीं छत्र सीस नहिं छाजू। छत्रिन जहा तहां कर साजू ॥
दान दुद जोरी गुन भरी। दुई जनु डंका उलटि कै धरी ॥

गढ़पति हयपति दुरदपति, सुनि कुच कथा अकाथ।
होइ भिखारी सब चहहिं, जाइ पसारन हाथ॥

रोमावलि अबहीं उर छीनी। बरनि न सकै दिष्टि मति हीनी॥
सधि सुमेरु लही अहि पोवा। सीतल ठाव पाइ जनु सोवा॥
अमिरित अधर बास सुनि माती। उर जनु चढी पपील क पाँती॥
द्वै नृप सौंव लागि रिस बाढी। रतिपति आनि लीक जनु काढ़ी॥
सौरत रोमावली सोहाई। हेवर जाइ दरलि सी खाई॥
पाहन हिए जोरि वहिं दीसी। होइ लीक वह पाहन कीसी॥
नींद न परी जनम भरि जागा। जिन्ह नैनन्ह होइ रही सरागा॥

खैंची लीक हदीस की, विधिना हिए विचार।
तिहुँपुर रोमावलि सरी, आन न दूजी नार॥

नाभि कुड पुनि अति गहिराई। जब चित चढै बूड़ि जिउ जाई॥
सिधु भौंर जहँ पानि फिरावा। तह परि जनम निकास न पावा॥
बिगसत पकज कली सोहाई। अजहूँ भौंर बास नहि पाई॥
छीर सिधु मथनी जब काढ़ी। नाभि भौर आहो जह ठाढी॥
नैंनू ते कोमल सो ठाऊँ। जीभ कठोर लेउं का नाऊ॥
रोमावलि सोभा तेहि पासा। नैनू ते जनु बारि बिकासा॥
जासौं ग्यान हाथ मा हीना। जनमत धाइ नार किमि छीना॥

नारि पेट जेहि अत नहि, बारिधि गहिर गँभीर।
नाभिकुड मन जो परै, बहुरि न निकसे तीर॥

पातर पेट कहै का कोई। जनु बाधी ईंगुर की लोई॥
मनहु महाउर दूध सौ पागा। सतत रहै पीठि सौ लागा॥
छीर न पियै अतिहि सुकुवारा। कै तबोल कै फूल अधारा॥
बिनु रस पान आन नहि खाई। सोऊ बिकल करै अधिकाई॥
तेहि तर त्रिबली अति सुख देई। गढ़ी बिधातै काम पसेई॥
सोभित तीनौ रेख सोहाई। तीन भुवन नहिं उपमा पाई॥
सिसुता जानि तरुनता मिली। तीनौ रेख खाचि कै चली॥

सिरजत भार नितब के, मिलत न कीन्ह सँबधि।
मनु कटि राखे बाधि के, त्रिवली बधन बाँधि॥

अति सुकुवारि लक पुनि छीनी। दिष्टि न परै बारहु तब खीनी॥
देखत सकुचै देखनहारा। टूटि न परै दिष्टि कै भारा॥
काम कला दुइ साचै भरी। सकत सोहाग जोरि जनु धरी॥
बिधिन तोरि जोरि पुनि लीन्हे। तातें नाउ निगम कटि कीन्हे॥
अपने थल भूखे केहरी। कोऊ कहै कटि तिन्ह की हरी॥

देखि लंक भृंगी कटि टूटी। भँवति फिरै जनु संपति लूटी॥
तहँ सोहै किंकिनि कटि कसी। काछे जनु आहै उरबसी॥
सोभित किंकिन निकट कटि, मान उपम जी आइ।
हस पाति तजि मान सर, परवत बैठे जाइ॥
सुभ्र नितव नितंबनि केरे। गए हेराइ सोई जनु हेरे॥
जनु संगम दुइ परवत अहहीं। एक बार के बाधे रहहीं॥
तेहि पर कटि सोभित निरभरी। जनु सिंहिनि गिरि ऊपर धरी॥
दुइ गिरि सम दोउ मगु जह नाहीं। चित के चरन चढत बिछलाहीं॥
मति नितंब बरनत झिझकाई। मति की दिष्टि न आगे जाई॥
परगट सो कबि कीन्ह बखाना। गुपत सो अंतरजामी जाना॥
जहा जात मन पिंडुरी कापी। तह की बात रहो सब झाँपी॥
गुपत जो रचना बिधि रची, परगट नहिं होनिहार।
ग्यान तहां नहिं संचरै, जानै सिरजनिहार॥
पुनि जंघा अति सुंदर साजी। जुगल जंघ तिहुं लोक बिराजी॥
केरा खंभ कलभ कर हेरी। जंघ निकट वे दोऊ करेरी॥
अति सुंदर सम तूल सुहाए। जनु बिधि अपने कर चिकनाए॥
सुरति करत सुख सपति हरी। मन की दिष्टि थलकि तह परी॥
गौन समै जनु चमकत चूरा। हंस गयद गरब धरि चूरा॥
सीस धुनै गज लज्जित भए। हंस मानसर बूड़न गए॥
छबाछीन भूषन छबि हरी। पायल आइ पाय लै परी॥
चकइ जराऊ जेहरी, जेहरि लिउ लै जाइ।
सुर नर हैं झाँझर भए, देखि सो झाँझरि पाइ॥
चरन कँवल पर मन बलि गये। जेहि मगु चलै तहा रज भए॥
मकु तेहि पंथ गौन पुन करई। भूलि पाव इन्ह नैनन धरई॥
तरवा ऊधरेख सुभ बाची। सुरनर हिये लीक जनु खाची॥
जेहि जेहि पंथ चरन तें चले। तेते हिये पाय तर मले॥
रकत लाग रह पायन संगा। जानहिं लोग महाउर रंगा॥
चलत चरन भुई परै न देहीं। सुर नर मुनि नैनन पर लेहीं॥
अनवट बिछिया अंगुरिन भरे। मैन सोनार रतन नग जरे॥
जेहिं चित्र चित्रावलि चरन, चित्र किये बिधि आनि।
ते चपु मगु बाहर कियो, हियें सरोवर पानि॥
वह चित्रावलि आहै सोई। तीन लोक बंदै सब कोई॥
सुर पुर सबै ध्यान ओहि धरहीं। अहिपुर सबै सेव तेहि करहीं॥
मृतुमंडल जो देखा हेरी। घर घर चलै बात तेहि केरी॥
पंछी वहि लगि फिरहिं उदासा। जल के सुत ओहि नाउं पियासा॥

परवत जपहिं मौन होइ नाऊं। आसन मारि बैठि एक ठाऊं।
पुहुमी दहु जो सरग लहु बढी। सेवा करतहिं एक पग ठाढ़ी॥
जानि बूझिल जो ताहि बिसारा। सो मनु जियतहि मरा अभार॥
अति सुरूप चित्रावली, रवि ससि सर न करेइ।
धन सो पुरुष औ धन हिया, ओहिं कै पंथ जिउ देई॥
भए सुनत चित्रावलि बरना। कुअर नैन परवत के झरना॥
गयो चेत चित रहयो न थ्याना। जनु एहि सागर लच्छ हेराना॥
माथें चढी लहर जनु आई। बिसम्हरि परा पुहुमि मुरझाई॥
गहि जोगी पुनि कुअर उठावा। खेह झारि सन्मुख बैठावा॥
कहेसि कुंअर कस भए अचेता। बैठु सम्हारि हिये करु चेता॥
एकौ बात कहै नहि पूछी। जनु गा जीउ देह भर छूछी॥
मूंदे नैन सास पुनि लेई। सुनै न कछू उतर नहिं देई॥
प्रेम मत्र जोगी कहै, कुंअर स्रवन महं तब्व।
सुनत नाउ चित्रावली, निजन गयौ विष सब्व॥
जबहि कुंअर जागा पुनि सोई। गहिसि पाउ जोगी कर रोई॥
सो तुम रूप बखाना देवा। भइ मनसा होइ उड़उ परेवा॥
पुनि मन मंह अस होइ गियाना। जाउं कहा जो पथ न जाना॥
कहु सो केहि दिसि नगर अनूपा। जहा बसै वह नारि सुरूपा॥
चलौं न करौं बिलँब एक घरी। निहफल जाइ घरी जो टरी॥
और न मोरे हियें बिचारा। सीस मोर औ चरन तुम्हारा॥
किंचित रैनि जाइ तहं ताईं। चरन लाइ लै चलहु गोसाईं॥
लोचन रहै चकोर होइ, हिया सकल उनमाद।
मकु ससि मुख चित्रावली, देखौं तुव परसाद॥
कहेसि कुँअर यह पंथ दुहेला। अस जनि जानु हंसी औ खेला॥
अगम पहार बिषम गढ घाटी। पखि न जाइ चढै नहिं चाँटी॥
खोह बराट जाइ नहिं लाघी। देखि पतार काँपि नर जांघी॥
जाइ सोई जो जिउ पर तेजा। सार पासुली लोह करेजा॥
तैं अबहीं घट आप न बूझा। बार देखि पिछवार न सूझा॥
बैठे देइ न सेंघ पिछवारे। मूसहिं तसकर घर अंधियारे॥
तैं दै बार रहा गहि कुंजी। रही न एकौ घर मह पूंजी॥
निसिबासर सोवहिं परा, जागेसि नहि पल आध।
घर न सभारसि आपना, का लेवे एहि साध॥
एहि पशु केर करै जो साधा। चलत निचिंत न होइ पल आधा॥
चाहै चरन चुभै जो काटा। चलै बराइ मारग नहिं छाटा॥
जो पल एक कोऊ बिलंमावै। साथ जाइ पुनि पथ न पावै॥

एहि मगु माह चारि पुनि देसा। जस जस देस करै तस भेसा॥
चारिहुँ देस नगर है चारी। पथ जाइ तेहि नगर मँझारी॥
चारिहु नगर चारि पुनि कोटा। रहहिं छिपे एक एक के ओटा॥
जो कोऊ जान न चार बिचारा। बीचहि मार लेहिं बटमारा॥
चारि देस बिच पथ सों, अब सुनु राजकुमार।
बेगर बेगर बरन गुन, जस कछु तहँ व्यवहार॥
प्रथम भोगपुर नग्र सोहाया। भोग बिलास पाउ जहँ काया॥
दुइ दुआर कर कोट सवारा। आवागमन यही दुइ बारा॥
पुनि दूनहुं दिसि अपुरुब हाटा। अनवन भाति पटन सब पाटा॥
जो कछु चाहिय सबै बिकाई। मिरतक देखि जीभ ललचाई॥
कहूं पंच अमिरित जेवनारा। कहूं सुगंधि करै महकारा॥
कहूं नाच कहुँ कथा अनूपा। कहुँ मिरदुल अति ससिहर रूपा॥
इंद्रपुरी जनु चहु दिसि छाई। जो आवा सो रहा लुभाई॥
घर घर मोहन जानहीं, पथहिं बस कै लेहिं॥
माया रूप देखाइ कै, आगे चलै न देहिं॥
बसै सोई ओहि नगर मँझारी। लेखा जानि होइ बेपारी॥
सूधैं मारग आवैं जाईं। माटी लेखैं बिषै पराई॥
सौं देखै जेहि दोष न पावा। सुनै सोई जो पँडित सुनावा॥
मिलि कै पाच देहि जेउनारी। भुगतै ताहि सोइ बैपारी॥
आपन अंस मागि कै लेई। राज अस बिनु मागे देई॥
पाच जूनि कै राज जो हारू। करत रहै जस जग व्यवहारू॥
धरै छोह चित नेह सौं, रिस की ठौर रिसाइ।
ऐसी चलन चलावहि, तेहिं भल पाच कहाइ॥
पंथी जेंहि आगे है जाना। सो व्यवहार कहौं कछ आना॥
अंध होइ तस मूदै नैना। बहिर होइ तस सुनै न बैना॥
रसना मौन होइ नहिं भाषा। षट रस अमी न पावै चाषा॥
मूदै नास सास नहिं आवै। काम क्रोध कै छार जरावै॥
दुष्ट कै हनत न पाछे टरई। पगु जो उठाइ आगु मन धरई॥
बिलँब न लावै मन जग मदा। निसरै तोरि मौन जिमि फंदा॥
पथी जो ओहि बार लहु जाई। आपु केवार उघारि कै जाई॥
चित रहसत पट ऊघरत, मिटै नैन अंधियार।
जैसे बीतै स्याम निसि, होइ बिमल भिनुसार॥
आगे गोरखपुर भल देसू। निबहै सोई जो गोरख भेसू॥
जहं तहं मढी गुफा बहु अहहीं। जोगी जती सनासी रहहीं॥
चारिहु ओर जाप नित होई। चरचा आन करै नहिं कोई॥

कोउ दुहुँ दिसि डोलै बिकरारा। कोऊ बैठि रह आसन मारा॥
काहू पचअगिन तप सारा। कोऊ लटकइ रूखन डारा॥
कोऊ बैठि धूम तन डाढ़े। कोऊ बिपरीत रहै होइ ढाढ़े॥
फल उठि खाहिं पियहिं चलि पानी। जाचहि एक बिधाता दानी॥
परम सबद गुरु देइ तह, जेहि चेला सिर भाग।
नित जेहिं ड्योढ़ीं लावई, रहै सो ड्योढी लाग॥
ताहि देस बिच आहि सो पथा। चलै सोई जो पहिरै कथा॥
तेल नाहिं सिर जटा बरावै। रजक नासि जे बसन रगावै॥
भसम देह पग पांवरि होई। एहि मग बिकट चलै पै सोई॥
मेखलि सिगी चक्र अधारी। जो गौटा रुद्राष धँधारी॥
भल मँद बसैं तहा इक मेसा। होइ बिचार न रॉक नरेसा॥
एही भेष सिद्ध बहु अहहीं। एही भेष बहुत ठग रहहीं॥
एही भेष सों बहु ठग आए। एही भेष सों बहुत ठगाए॥
जो भूले एहि भेष जग, खुले न तेहि हिय आछ।
आगे चलैं न तह रहैं, बरु फिरि आवैं पाछ॥
जो कोउ आगे चाहै चला। परगट देह भेष सो भला॥
पै अंतर सब जानै धधा। भेष पत्याइ सोई जग अधा॥
घटही माहि भेष सो लेखै। हिय के लोचन मारग देखै॥
काया कंथा ध्यान अधारी। सींगो सबद जगत धंधारी॥
लोचन चक्र सुमिरनी सासा। माया जारि भस्म कै नासा॥
हिय जो गोट मनसा पावरी। प्रेम बार लै फिरि भावरी॥
परगट भेष तहा दइ डारै। आगे चलै सो पवरि उघारै॥
रहहि नैन जो जोति बिनु, खीपक पहिल मिलानु।
पुनि ससिहर सम दूसरे, होहिं तीसरे भानु॥
आगे नेह नगर भल देसू। राक होइ जंह जाइ नरेसू॥
भूलै देखि देस की सोभा। जह वह देखतही चित लोभा॥
जाइ तहहिं जह कोइ लै जाई। ऊंच खाल सम एक देखाई॥
खाइ सोई जो कोई खियावै। बिष अमिरित एक स्वाद जनावै॥
भल औ मद दोऊ एक लेखा। दुइ न जान सब एक कै देखा॥
मारि मारि जिय राख न कोऊ। रहस न होउ किए कछु छोऊ॥
उतर न देइ जो कोउ कछु कहा। ऐसें रहै तहा सो रहा॥
पथ नाहि पुनि पथ सो, ताहि देस निज पथ॥
बिनु गुरु कोऊ न जानई, औ पुनि पढ़ै गरथ॥
आगे पथ चलै पै सोई। जाके सग कछु भार न होई॥
डारै कथा चक्र धँधारी। करै मया जिय काया सारी॥

ऐसन जिय जेहि लोभ न होई । रूपनगर मगु देखै सोई ॥
हेरत तहा पथ नहि पावा । हेरन चहै जो आपु हेरावा ॥
पथिक तहा जो जाइ भुलाना । बिमल पंथ तेहीं पहिचाना ॥
आवहिं रूपनगर के लोगा । परषत फिरहि कौन तेहि जोगा ॥
जो तेहि जोग लषहि जिय माही । आगे होइ नगर लै जाहीं ॥
रूप भेष उतहिँ क सजहिं, औ सिखवहि सब भाव ।
ऐस न जानहि तेहि कोऊ, आन कहूँ ते आव ॥
रूप नगर अति आह सोहावा ; जेहि सिर भाग सो देखै पावा ॥
अतिहिं डेरावन अतिहि सो ऊँचा । कोटि माह कोउ एक पहूँचा ॥
बहुतक कीन्ह जोगि कर भेसा । चले छांडि घर मन ओहि देसा ॥
तैं सुखिया सुख कौतुक राता । का जानसि दुख पथ कि बाता ॥
भोजन बिनु मुख जाइ सुखाई । पानी बाजु कँवल कुम्हिलाई ॥
छीन बसन जेहि अँग न सोहाई । कथा कैसे सकै उठाई ॥
सौरि माह जिन बनउर टोवा । कुस साथरी सो कैसें सोवा ॥
बसन अपूरब पहिरि तन, लावहु मोद सुबास ।
अहहि नारि अछरी सरस, मानहु भोग बिलास ॥

अजगर खंड

कुअर अँधेरें हा जहं परा। बिधिना कह बिनवै भाखरा ॥
ए गुसाइ जगरच्छ बिधाता। तोहि बिनु और न दुख सघाता
अह निसि जगत कीन्ह सब तोरा। तैं सिरजा अँधियार अँजोरा ॥
तहीं सरग ससि सूर बनावा। तहीं कीन्ह दधि अत न पावा ॥
तहीं सकल गिरि मेरु सँवारा। तैं सब कीन्ह नदी औ नारा ॥
तुहीं पताल कीन्ह ,बलि बासू। तैं पति और सबै तोर दासू ॥
तुहीं सोई जो सब जग पूजा। सुमिरौं काहि और नहिं दूजा ॥
तैं सुख दायक दुहूं जग , दुख भंजन जेहि नाउ।
तहीं बिछोवसि दुइ मिलै , तहीं करसि एक ठाउ ॥
मैं जबहीं जिय सौंरा तोहीं। तहीं मया करि काढ़े मोंही ॥
कूप माहि जे सुमिरन साजा। काढ़ि किये तै देस के राजा ॥
प्रेम बिछोह अध जेहि कीन्हे.। बहुरि मिलाइ जोति तेहि दीन्हे ॥
अगिन जरत जे तहीं सँभारा। किये ताहि फुलवारि अँगारा ॥
मैं अब परा आइ तेहि ठाऊ। अपनी सकति निकास न पाऊं ॥
मकु तैं होइ दयाल बिधाता। तोरे निकट कहा यह बाता ॥
मैं जस हा तस कीन्ह गोसाईं। अब तू कर जस चाहसि साईं ॥
हेरु गोसाईं आप कह , मोरे का जनि हेरु।
आपन नाउं दयाल गुनि , हो दयाल एहि बेरु ॥
जहा कुअर चित सुमिरन ठाना। अजगर आइ एक नियराना ॥
ओदर खोह जाहि नहि अतू। लीलै हस्ति और को जतू ॥
सिखर डाग तस आवै चला। बन बीहर सब का दलमला ॥
औ तह पाइस मानुष बासा। खोह लाइ मुख ऊंचिस सासा ॥
पाहन रूख डार भरमना। सास सग पुनि कुंअर समाना ॥
गयो कुंअरे पुनि साँसहि लाग। उठी खात ओहि ओदर आगी ॥
परयो उलटि भा उदर दुहेला। डारिसि उगिलि जेत हुत लीला ॥
भागा अजगर जीउ लै , परा कुंअर बिसँभार।
जे तापे बिरहा अगिन , तेहिं को निजवै पार ॥
कुअर संभारि बैठु पुनि तहा। नैन न जोति जाइ उठि कहा ॥
टोइ टोइ तह ठाव संवारा। टारे पाहन औ द्रुम डारा ॥
बनमानुष एक तेहि बन अहा। कुअर चरित सब देखत रहा ॥
कहेसि जाहि विधि चहै न मारा। अस अहि ओदरहु ते निसारा ॥

जौ जम सों बिधि जीउ उबारा । रहे न नैन जोति बिप भारा ॥
कौन जिअन जो नैन न जोती । सोत न लहै पानि बिनु मोती ॥
हाथ पाँव वर बुधि सब आही । एक बिनु नैन करै का काही ॥
मान न बातैं इमि करै, जौं लहु घट महँ पौन ॥
बिधिना एतना राखु थिर, नैन बैन औ सौन ॥
बिधि तेहि हिये दया उपजाई । नियरे होइ पुनि देखेसि आई ॥
देखि रूप मन किहिसि बिचारी । यह सुरपुर हुत दियें अँडारी ॥
जग न होइ अस कोई मानवा । निहचै यह गन गध्रव छुवा ॥
अब पूछौं एहि की सब बाता । कौन जाति कस लीन्ह बिधाता ॥
केहि अभाग के दीन्ह सरापा । अस कारन दहु भौ केहि पापा ॥
कहेसि रे अध बिधाताद्रोही । कहु सो सत सत पूछौं तोही ॥
जो सतसग साथ लघ गोती । हियें सत्त लोचन सिर जोती ॥
सती मरै जो सत चढ़ै, सत्त सहस दस आउ ।
तन मन धन वरु जीउ किन, जाउ सत्त जनि जाउ ॥
सत्य सपत दै पूछौं तोका । का तोर जाति जन्म केहि लोका ॥
का तोर सरग देव औतारा । इंद्र सराप लहे महि डारा ॥
कै रे जनम बल बासुकि देसा । कै तपि मही आइ परवेसा ॥
केहि गुन एकति इहां तैं आवा । मानुष इहा न आवै पावा ॥
जो मानुष तौ गुन कहु मोहीं । जेहि तें साँप न निजवै तोहीं ॥
कै तैं जनम अंध चखु पाए । कै अबहीं भौ अहि के खाए ॥
देखौ सब मानुष कै भावा । कहु सत इहा कौंन लै आवा ॥
देखत लोना रूप तोर, छोह उठै जिय मोहिं ।
कहेसि सत्त सत पूछौं, सपथ सिंभु दै तोहिं ॥



हस्ती खंड

बीते चलत पाख दुइ चारी। परा दिष्टि एक कुंजर भारी ॥
ऊँच सीस जनु मेरु देखावा। सूँड़ जानु अजगर लरकावा ॥
तरुवर जनु चबाइ दुइ दाँता। डारत आउ खेह मदमाता।
धावत जाइ पुहुमि जनु धँसी। आवै पीठ सरग सों खसी ॥
भागहिं और हस्ति मद त्रासा। कुँअर देखि जिय भयो तरासा ॥
कहेसि मीचु अब पहुँची आई। एहि आगे कहँ जाब पराई ॥
अस्त्र नाहि जो सम्मुख घाऊँ। मारौं एहि जैपत्र जौ पाऊँ ॥
जनम अकारथ जगत भा, गई अमिरथा आउ।
चित्रावलि के दरस कर, रहा हिएँ पछताउ ॥
अस्त्र न जो सनमुख होइ लरौं। जो निजु मरन भागि का मरौ ॥
कुंजर धाइ कुँअर पर परा। रहा ठाढ़ ही नेक न डरा ॥
धाइ लपेटि सूँड़ सों लीन्हा। चाहेसि मूड़ डाढ़ तर दीन्हा।
कुँअर हिए बिधि सँवरा तहा। जो बिधि केर मीचु तेहि कहा ॥
ततखन राजपंछि एक आवा। परबत डोल जो डैन डोलावा ॥
ओहि हस्ती पर टूटा आई। गहि ले उड़ा सरग कहँ जाई ॥
सूँड़ समेटि जो कुंजर रहा। कुँअर न छूट डरन्ह सुठि गहा ॥
उड़ा जाय अंतरिख महँ, दीखै जैस पहार ॥
घरी चार मँह लै गयो, सात सुमुदर पार ॥
बारिध तीर जहा हुत रेतू। परा तहा छुटि कुँअर अचेतू ॥
भरि गये सीस देह सब खेहा। जेहि तन नेहा गति देहि एहा ॥
जेहि के हिए बस प्रान पियारा। संतत देह चढ़ावै छारा ॥
जिमि जिमि छार देह पर चढ़ा। तिमि तिमि रूप मुकुर जिमि बढा ॥
छार चढावैं बहु गुनि जोगी। छार मरम का जानै भोगी ॥
मानुस देह छार हुत कीन्हा। छार बुद्धि जिन छार न चीन्हा ॥
कवन जनम केहि तप करतारा। मूँठी छार अमित बिस्तारा ॥
देखि बड़ाई छार को, बसेउ आइ करतार।
छारहि ते कीन्हेसि सबै, अन्त कीन्ह पुनि छार ॥
पहर एक गहि उठा जो चेती। देखा परा समुँद की रेती ॥
ना सो हस्ति जेहि के बस अहा। ना सो पंछि जो कुँजर गहा ॥
सौंरिस हिए बिधाता सोई। जेहि के करत खेल सब होई ॥
ऐ गुसाइं तै दुहुँ जुग राजा। ए सब चरित तोहि पै छाजा ॥

जियतेहि मारि मिलावसि छारा। चहसि तो देखि फेरि औतारा ॥
गिरि परवत कै पानि बहावसि। पानिहि साजि सुमेरु देखावसि ॥
छत्रिन अछत रौंक सम करई। चहइ तु छत्र रौंक सिर धरई ॥
भंजन गढन समस्त तू, और न दूजा कोई।
तही अहा अरु है तही, औ पुनि आगे होइ ॥
कुँअर सँवरि चित्रावलि नेहा। उठि के चला झारि तन खेहा ॥
गिरि परवत औ कानन घना। प्रेम प्रसाद न लेखे घना ॥
निडर जाहि तेहि बनखँड माहीं। जम सौं बाच मीच अब नाहीं ॥
बीता चलत मास एक सारा। बन ओरान औ भा उजियारा ॥
रहसा सिये देस जब पावा। दिष्टि परा एक नगर सोहावा ॥
कहेसि जाउं अब नगर मँझारी। मकु मिलि जाय कोऊ बैपारी ॥
पूछि लेहुँ तेहि नगर की बाटा। चित बिकान है जेहि की हाटा ॥
देखेसि पुनि फुलवारि एक, फूले फूल अमोल।
अलि गुंजारहि जहाँ तहँ, करहिँ मजीर कलोल ॥
देखि अपूरब ठाउँ सोहाई। कुँअर तहा छिनु बैठेउ जाई ॥
सपति कुसुम देखि चित लावा। लोचन जरे निहारि सिरावा ॥
जूही फूल दिष्टि भरि हेरा। लखै भाव चित्रावलि केरा ॥
देखि गुलाल अधर चित चढा। दारिम दसन रहसि हिय बढ़ा ॥
चंपक माँहि सरीर की शोभा। नारँगि लखि उरोज मन लोभा ॥
अली माल फूलन पर हेरी। होइ सुरति अलकावलि केरी ॥
गीव मजीरि देखि मन आवा। लोचन खंजन आइ देखावा ॥
जाहि होइ चित की लगनि, मूरख सों सो दूरि।
जान सुजान चहूं दिसि, वोहि रहा भरि पूरि ॥

— — —

चित्रावली बिरह खंड

चित्रावलि चित भएउ उदासा । पिउ न गए दै अवधि की आसा ॥
बिरह समुँद अति अगम अपारा । बाज अधार बूड़ मँझ धारा ॥
चहुँ दिसि हेरहुँ हित कोउ नाहीं । बूडत काह उँचावै बाहीं ॥
निसि दिन बरै अगिन की ज्वाला । दुरगा मँदिल भयो है बाला ॥
बुझै न लूम सगर लहु बाढा । पथी गयो लाइ हिय डाढ़ा ॥
जोगी सुरति रहै चखु माहीं । ज्यों जल महँ दीपक परछाहीं ॥
झलझल जोति होइ उजियारा । पानी पौन बुझाव न पारा ॥
विरह अगिन उर महँ बरै, एहि तन जानै सोइ ।
सुलगै काठ विलूत ज्यों, धुआँ न परगट होइ ॥
एक दिन कहिसि कि ऐ रँगमाती । करिया भयो रूप रँगराती ॥
रूप रग सब लै गा जोगी । लोग कुटुँब जानै यह रोगी ॥
जोगी गयो छाड़ि तजि माया । भोर कि धुई भई मम काया ॥
जोगी करत कहा दहुँ फेरी । आसन परी छार की ढेरी ॥
बिरह पवन जो करै झँकोरा । बिथुरै छार न कोऊ बटोरा ॥
जोबन गज अपसर मद कीन्हें । अब न रहै अँधियारी दीन्हें ॥
निसि बासर तन कानन गाहा । जाकी साल हिये तेहि चाहा ॥
जोबन सखी मतग गज, तौ लहुँ लाग गुहार ।
जौलहुँ अपसर होइ कै, सीस न डारेसि छार ॥
सुनि रँगमती कहा सुनु बारी । जोबन मैगल मद दिन चारी ॥
अपसर होइ देइ नहि कोई । जौ तिय आपु महाउत होई ॥
अंकुस सकुच गहे कर नारी । दै आँखिन्ह घूँघुट अँधियारी ॥
औ कुलकानि महादिढ अदू । निसि दिन राखै मेलि के फदू ॥
जौ हठि कै अरि पाँव निकारा । हटक बुद्धि चरचा गडदारा ॥
एह ससार रीति अस अहई । जो जेहि लाग दुःख जिय सहई ॥
जो तजि ठाउँ सकै नहिं जाई । आपुहिं तहाँ मिलै सो जाई ॥
आजु बदन तोर कौल सम, औरै रँग सुभाउ ।
सब तन लागै मधुप पुनि, मकु कोउ चाह सुनाउ ॥
एहि महँ सखी एक हितकारी । आई हँसति भई रतनारी ॥
कहिसि कुँअरि सुनु बचन सुहाये । गये बिदेस नपुसक आये ॥
बदन अरुन हिय हुलसत अहहीं । जानहुँ बचन कछुक सुभ कहहीं ॥
सुनतहिं चलि धाई बरनारी । गिरी रही पै सखिन्ह सँभारी ॥

जोगी आइ मनावत नाया। दरस पाइ भुइँ लायउ माथा॥
कहिन कि हम पुहमी सब धाए। चित्र सरूप चीन्हि अब आए॥
सुनि रहसी चित्रावलि हीया। चित्रहिं जानु फेरि रंग दीया॥
हिय हुलास बिहँसे अधर, औ कपोल रँग होइ।
पुनि उपजै उर धक धकी, होइ न औरै कोइ॥
पूछिसि कौन रूप सो देखा। केहि दिन कौन भाँति केहि लेखा॥
जोगिनि रहसि रहँसि- जस जानी। आदि अन्त लहुँ कथा बखानी॥
सुनि चित्रावलि हिय संतोखा। निहचै जानि गयो जिय धोखा॥
कहिसि कि हौ तुम्ह ऊपर वारी। मोरै दुख बहु भए दुखारी॥
अब सुख करहु बैठि एहि ठाऊं। करिहौं सेव जगत जब ताई॥
मैं सब इच्छ तुम्हार पुराई। तुम जग इच्छा पुरवहु जाई॥
सेवक सेव तजो जिन कोई। सेवा ठाकुर आपन होई॥
मान सेव सोइ कीजिये, जासों पति पहिचानु।
ठाकुर आपन जो भयो, सब जग आपन जानु॥



कौलावती गवन खंड

देखि कटक जिमि बादल छाहां । परी हूल सागर गढ़ माहा ॥
यह अब को जस सोहिल राऊ । कटक साजि भुइँ चापे आऊ ॥
वह हुत कौलावति अनुरागी । एह अब दहुँ आवै केहि लागी ॥
औ कहँ हुत सुजान संघारा । अब कहँ पाउब तस बरिआरा ॥
सागर मन पुनि चिंता भई । साहस बाँधि मीचु पुनि भई ॥
जहँ तहँ सजग बीर हित बासे । सूर बदन जनु कोल बिगासे ॥
एहि महँ हस पहूँचा आई । कहिसि करहु अब अनँद बधाई ॥
जो जोगी सोहिल हना, औ राखा तुम प्रान ।
आयो बहुरि नरेस होइ, चलहु करहु सनमान ॥
हंस बचन जब सागर सुना । भा जिअ सोच हिआ महँ गुना ॥
अब लहु कौंल आस जल अहा । अब जो राखिय कारन कहा ॥
लोग कुटुम मिलि कै मत ठाना । कौंल न काज आउ बिनु भाना ॥
जस बर कै ओहि दीन्ह बिआही । अब बर कै पुनि सौंपहु ताही ॥
दुहिता केर कठिन है भारा । तबहीं पति जो जाइ ससुरारा ॥
जनम पिता माता घर लेई । दुख सुख माथे बिधि लिखि देई ॥
यह बिचारि कै डोंडी फोंदी । गौन जान कौलावति सोंदी ॥
समदी गगा गोद गहि, औ कुमुदिनि कँठ लाइ ।
पुनि समदेउ परिवार सब, लोगन आँगन आइ ॥
कौलावति चढ़ि चली बिमाना । जेहि अँबराउ सुरेस सुजाना ॥
सागर साजि कटक पुनि चला । कौंल गौन दुख जग कलमला ॥
औ जहँ लहु हुत दायज दीन्हा । सो सब लाइ पुरोहित लीन्हा ॥
सागर आइ सुजानहिं भेंटा । मुख देखत सब दुख गा मेंटा ॥
कठ लाय हिय सीतल कीन्हा । भुजा जोरि अँकवारी दीन्हा ॥
औ जहँ लहु पर आपन अहे । छुइ छुइ पाँउ दूरि तकि रहे ॥
सागर तब बिनती औधारी । कस घर तजि के उतरेउ बारी ॥
जो राखहु नीरज चरन, सोम पाउ हम माथ ।
चलउ आप घर जानि कै, कीजै हमहिं सनाथ ॥
तब सुजान बोला सुनु राऊ । एहि मारग हम लोग बटाऊ ॥
पथिक पथ जौ छाड़ै कोई । भूलै अत महा दुख होई ॥
सूध पंथ तजि उत्तर केरा । कौल बचा आएउ एहि फेरा ॥
कौलावति कर बिदा करीजै । अगुआ एक सग पुनि दीजै ॥

तुम परसाद जाउ अब देसा । मकु मेटउ के जियत नरेसा ॥
राय कहा कछु आहि न खोंगा । को राखै जो आपन माँगा ॥
सूख पंथ बहु दुख जग जाना । पानी पानी बहुत मिलाना ॥
अशा देहु तो जाइ घर, साजों बोहित साज ।
लीजै सभै लदाय जो, आउ तुम्हारे काज ॥
कुँअर गहे सागर के चरना । कहिसि बेगि कीजै जो करना ॥
सागर राउ पलटि घर आवा । चित्रावलि पहँ कुँअर सिधावा ॥
कहिसि कि सुंदरि प्रान पियारी । तोहि बिनु प्रान होइ घट भारी ॥
एही नगर जहवा हौं कहा । पाँच मास पग साँकर रहा ॥
एही नगर हम कहँ दुख बीता । इहा होंकि सोहिल रन जीता ॥
मों कहँ तुम्ह बिनु आन न भावा । वै मोंहि बिरह बहुत दुख पावा ॥
ओहि के दूसर आन नहिं, मोहिं बिनु एहि संसार ।
तजि आपन घर बार सब, आई कै अभिसार ॥
अब लहुँ रही इहा ओंडेरी । आजु अवधि पूजी ओहि केरी ॥
जो जेहि कारन तन मन जरई । सो पुनि ताकर चिंता करई ॥
सौति जानि जनि होहु दुखारी । वह तुम्हारि जस आज्ञाकारी ॥
सुनि चित्रावलि हिए सताई । नैन दुराइ कहिसि बिलखाई ॥
तुम साईं अपने सुख राजा । तिरियहि नाउं सौति सिर गाजा ॥
जो विधि ससो करावत देई । सहै न तौ अब काह करेई ॥
निसि आयो तहँ कुँअर सुजाना । कौला जहा कीन्ह अस्थाना ॥
कंत बचा परतीति पर, सोरह साजि सिंगार ।
बासक-सेजा होइ रही, लाइ नैन दुइ बार ॥
पदुम कोस अलि लीन्ह बसेरा । हिये सोच भइ मालति केरा ।
नीरज लोयन रूप अतिसाए । दिन कर देखि नीर भरि आए ॥
बिहँसि कंत कामिनि कँठ लाई । बिरह दगधि उर लाइ बुझाई ॥
मनमथ दाब जाब पुनि काँपी । रावन बार लंक गहि चाँपी ॥
दीन्हीं चार नखच्छत छाती । फूट सिंधोर सेज भइ राती ॥
होइगा अंग भंग नव साता । अति परसेद सिथल भइ गाता ॥
भयो प्रभात गयो उठि साईं । कौंल पास कुई चलि आई ॥
हँसि हँसि पूछहि रैनिसुख, रहसि करहिं परिहास ।
लाजन गोवै कौल मुख, सखियन अधर बिगास ॥
चित्रावलि कहँ बिनु ससि साईं । गई रैनि सब गनत तराई ॥
सौति संग सालै जनु काँटा । अंग अंग लागै जनु चाँटा ॥
सुलगी उरध आगि सन सेजा । औटि होइ जल रकत करेजा ॥
करम करम कै सो निसि गई । पिअ देखत तिअ खंडित भई ॥

रही सोइ मिसि बदन छिपाई। नायक सकुचत आनि जगाई ॥
परी चौंकि लागै कर सीरा। दच्छिन नाहिँ नायका धीरा ॥
कहिसि अहिउँ सुद सपने माहीं। कहा जगाइ लीन्ह गहि बाहीं ॥
अहिउँ महा सुखसपन महँ, तुम कर लागे अंग।
गए नैन पट उघरि कै, भयो सकल सुख भंग ॥
जानहुँ तुम एक सुंदरि संगा। मानत अहै केलि रति रंगा ॥
मोहिँ देखि नौ सात बनाए। तजि सो नारि आनि कंठ लाए ॥
हिये लागि हिय मोर सिराना। पाएउँ अधर अमिय कै पाना ॥
और सकल सुख कहे न जाहीं। उठै आगि संवरत मन माहीं ॥
भई दोहागिन बिकल सरीरा। जनु गिरि गयो हाथ ते हीरा ॥
वह रोवै परि सेज अकेली। हौं हँसि हंसि मानों रस केलो ॥
मोरे छुरै कुसुम जनु गाथा। वह लगि रहे हाथ सों माथा ॥
सेज अकेली रैन सब, सहेउ सकल उतपात।
चतुर नारि चित्रावली, रस काढै रस बात ॥

सिद्धसमागम खंड

भयो सोर सब नगर मँझारी। करहिं बखान सकल नर नारी ॥
सागर गाँव सिद्ध एक आवा। मुख देखत मन इच्छ पुरावा ॥
कुष्टी कया बाँझ सुत पावै। अँधहि चखु दै जग देखरावै ॥
कहै चाह परदेसी केरी। बिछुरेहि आनि मिलावै फेरी ॥
सुनि के धाए सब नर नारी। बार बूढ तरुनी औ बारी ॥
जेहि निहचै ते निधि लै आए। निहचै बिना बादि सब धाए ॥
निहचै नग जनि डारो कोई। निहचै सिद्धि परापति होई ॥

निहचै इच्छा सरग हुत, आनि मिटावै दुद।
जैसे नैन चकोर कहँ, अमी पियावै चंद ॥

सुना कुँअर पुनि सिद्ध बखाना। अकसमात चित रहस समाना ॥
कहिसि कि भाग जोर समुहाई। तब अस सिद्ध मिलै कोउ आई ॥
करूँ जाइ मन बच कै सेवा। मकु तो नहिं होइ जाइ परेवा ॥
चित्रावलि करि कुसल सुनावै। रूप नगर कर पंथ दिखावै ॥
चला कुँअर निहचै यक हाथा। सेवक पाँचन न छोड़हिं साथा ॥
महल गरब दोऊ तहँ त्यागे। मन बच कर्म तिनो सँग लागे ॥
सनमुख आइ दरस जब कीन्हा। वै ओकहँ वै ओकहँ चीन्हाँ ॥

देखत दुहूं आनन्द भा, रहसत आगें आय ॥
परेउ परेवा कुँअर पग, कुँअर परेवा पाय ॥

कहै कुँअर सुनु हनिवँत बीरा। लागु कंठु ज्यों सीत समीरा ॥
कहु कुसलात बेगि सिय केरी। निसरत प्रान राखु घट फेरी ॥
हौं जिमि राम भयो बैरागी। नख सिख परी बिरह की आगी ॥
राम सग हुत लछिमन भाई। हौं अकेल दुख पुनि अधिकाई ॥
हनिवँत कहा सीय कुसलाता। राघव बदन सुनत भा राता ॥
औ पुनि बिथा कहिसि ओहि केरी। जेहि दिन ते तुम ओहि औडेरी ॥
तहँहीं दिवस देखि अकसरी। रावन बिरह नारि से हरी ॥

सीता रावन बस परी, करौ न कोटि उपाइ।
तौ लहुँ नाहिं उधार निजु, जो लहुँ राम न आइ ॥

पुनि दीन्हेसि चित्रावलि पाती। खोलि कुँअर लाई लै छाती ॥
सुलगत काठ लागु जनु लूका। दुहूं आगि मिलि उठा भभूका ॥
हिया जरत जो लिहिसि उसासा। धूम बरन होइ गयो अकासा ॥
अमिरित बचन भरी हुत छाती। ता सों अगिन मुख बाँची पाती ॥

पाती पावस सलिता भई। दूनहुँ कँवल दुःख जल भई ॥
आखर मगर गोह परिआरा। अरथ भँवर परि कठिन निसारा ॥
भँवर अनेक पैठि मन तरा। एक तें निकसि ऐक मँह परा ॥
पाती जनु पावस नदी, मन तकि पार तराइ।
चित्रावलि दुख अगम जल, बूडि बूडि तह जाइ ॥
पाती पढ़ी समापति भई। बिरह झकोर कुँअर सुधि गई ॥
हीवर जिमि ग्रीषम रवि जरा। जिउ जनु पात बवडर परा ॥
बर कै उठा चला लै चाहा। पाइ फिरा जैसे उतसाहा ॥
पुनि जो चेत होइ देखा हेरी। पायन परी बचा की बेरी ॥
कहिसि कहौ का दुःख बखानी। जनम सिराइ न कहत कहानी ॥
हौ पंछी भूला हुत आवा। जाल मेलि एहि गाँव फँदावा ॥
चार लोभ बैसेउ एहि आडा। अचक आइ खोंचा उर गड़ा ॥
पाँखन लासा प्रेम का, बाचा बधन पाइ।
दै दै मारौ मूंड बहु, निकस न केहु उपाइ ॥
अब तोहि मिले भयो संतोखा। आसा मिली गयो जिउ धोखा ॥
करहु उपाइ गवन जेहि होई। मै आपन बुधि मति सब खोई ॥
चोरी चलै धरम की हानी। परगट चहुं दिसि रोकहिं रानी ॥
सुनि कै बिथा परेवैं कहा। अब दुख सब बीता जित अहा ॥
परगट जाइ सँवारहु कथा। अजन लाइ गुपत चलु पथा ॥
रहसि कुंअर मदिर महँ आए। कौलावति कहँ निअर बुलाए ॥
कहेसि सुनहु अब राजदुलारी। हौं परदेसी आदि भिखारी ॥
आउ न हमरे काज यह, राज पाट सुख भोग।
चित्रावलि हियरे बसी, जाकर बिरह बियोग ॥
अब लहु मिला न अगुआ कोई। जेहि परचय ओहि दिस कै होई ॥
अगुआ मिला चल्यों उठि सगा। तुम जनि करहु कौल मन भंगा ॥
जौ बिधि आस पुरावै मोरी। तौ मैं चेत करब पुनि तोरी ॥
सुनतहिं गवन धसकि उर गयऊ। कचन अग राग पुनि भयऊ ॥
कहिसि कि ऐ जग जीवन साई। मोर जिअन तुअ दरसन ताईं ॥
जो तुम होब बिदेसी राजा। इहवा मोर कौन अब काजा ॥
पाछें महा दुःख पुनि कीता। जहवाँ राम तहाँ पुनि सीता ॥
जैसे पनही पाव की, तैसे तिया सुभाउ।
पुरुष पथ चलु आपने, पनहीं तजै न पाउ ॥
कहै सुजान सुनहु बर नारी। तुम सयानि औ बूझनिहारी ॥
मेहरिहिं कहैं लोग सब देहरी। धरै असन अस्थिर सोइ मेहरी ॥
औ पुनि घरनि कहै सब कोई। घरहिँ सँभारै घरनी सोई ॥

राघव जौ लाई सँग सीता । बिछुरें जनम दुःख सब बीता ॥
तुम कछु चित चिंता जनि करहू । जो हम कहा सोई चित धरहू ॥
इतना कहि कथा गिवँ डारा । औ पुनि अंग चढ़ाएउ छारा ॥
लुकअंजन लै आँखिन दीन्हा । गा छिपाइ चटेक जनु कीन्हा ॥
कौंला देखि अचक रही, जनु ठग लाव देखाए ।
पुनि लागें बिरहा धका, गिरी पुहुमि मुरछाए ॥
देखि सखी सब कीन्ह अदोरा । गहि उठाइ बैठीं लै कोरा ॥
सुनि कौंलावति मंदिर कूका । परी अंचल गगा जिय हूका ॥
राजा पुनि बिसंभर होइ धावा । नगे पाँव तहाँ चलि आवा ॥
देखि अवस्था धिय कर रोवा । दूनहुँ बदन नैन जल धोवा ॥
पूछहिं बिथा सुनावहिं ईंटा । गुर गूँगा कर तीत न मीठा ॥
रानी पूछि हारि जब रही । कौंल बिथा तब फूलन कही ॥
प्रति उत्तर जस दूनहुं बीता । औ सुजान चेटक पुनि कीता ॥
आदि अंत बहु सखिन सब, एक एक कीन्ह बखान ।
सुनत आगि दुहुँ उर परी, औ ओहि पारा प्रान ॥
राजकुँअर कर सुनत बिछोहा । धाह मेलि पुनि राजा रोआ ॥
कौंलावति दुख दीरघ जानी । उमड़ि चली गंगा चखु पानी ॥
सखो सहेली पुनि सब रोईं । ससि अथई जानहुं सर कोईं ॥
पर आपन जन परिजन लोगा । सगरे नगर परा सुनि सोगा ॥
नर नारी जुबती औ जरा । सब के सीस गाज जनु परा ॥
मलि मलि हाथ कहैं सब कोई । अस परजापति आन न होई ॥
पहर एक बीता होइ रोरा । कोऊ साँच कोउ भूँठ नीहोरा ॥
छमा कराए सब जना, पंडितन्ह ज्ञान बुझाइ ।
मारे बिरह बयारि के, कौंल रही कुम्हिलाइ ॥
जोगी खेल जो चेटक खेला । छाड़ि मँदिल होइ चला अकेला ॥
आवा बार जहाँ जग रोका । भार लागि पै काहु न टोका ॥
देखि भीर जिय कौतुक होई । सब संगी पै चीन्ह न कोई ॥
आदि पंथ सो आगे कीता । यह कौतुक जनु सपना बीता ॥
बेगिहिं आइ परेवहिं मिला । संगिहि देखि कौंल जनु मिला ॥
पंथ चले तजि सागर गाऊ । जपत चले चित्रावलि नाऊ ॥
सूध पंथ अगुवा लै आवा । बेगहिं रूपनगर निअरावा ॥
कहिसि कि एही ठाँव तुम, बैठि रहहु लौ लाइ ।
हौ चित्रावलि निअर होइ, चाह सुनावौं जाइ ॥

परेवा बंधन खंड

चेरी एक अहित जो आही। ते छिपाइ हीरा सों कही ॥
एक दिन देखत अहेउ छिपानी। चित्रावलि निकसी कुम्हिलानी ॥
रोइ परेवा सों कछु कहा। पाती दीन्ह पाँव पुनि गहा ॥
गयो परेवा लै कहुँ चीठी। तेहि दिन सों पुनि परा न डीठी ॥
पेम बाउ जो बाउर करही। सेवक पाय तबहिं पति धरही ॥
देखा अहा कहा मैं सोई। अब तुम करो वो करबै होई ॥
सुनि के हीरा हिएं सँकानी। धसकि गयो हिय अजुगुति जानी ॥

केहि अधरम केहिं पाप विधि, हस कोखि भा काग।
अपने जान न बिसतुरेउ, चित्र परेउ कहँ दाग ॥

पुनि मन कछु गियान उपराजा। जाँघ उघारे मरिये लाजा ॥
अधिक उदगरी काठी भूरी। राखौं आगि मेलि सिर धूरी ॥
बाट बाट सब लाई भूता। रोकहिं राह परेवा दूता ॥
आवइ कहुं पूछे बिनु नाहीं। आनि बाँधि राखहु बँद माँहीं ॥
जो जहं तहाँ रोकि मगु रहा। आवत पथ परेवा गहा ॥
बाँधि आनिके बंद मँह राखा। अचक रहा कछु आव न भाखा ॥
मन मँह कहिसि रहा पछतावा। कुंअर न आवन कहन न पावा ॥

वह पुनि रहिहं रैनि दिन, मारग लाए आखि।
वह परदेसी बापुरा, मरिहि अकेला झाँखि ॥

रहा सुजान नैन मगु लाई। का दहुं कहै परेवा आई ॥
सो पुनि अज्ञा काह करेई। कौन भाँति दरसन पुनि देई ॥
सगर दिवस एहि सोच गँवावा। साँझ परी न परेवा आवा ॥
ज्यों ज्यों छिन छिन रैनि बिहाई। त्यों त्यों बिरह आगि अधिकाई ॥
लोयन दोऊ रहें मगु लागे। आहट कह सरवन पुनि जागे ॥
सकल रैनि पुनि ऐसेहिं बीती। जानु कँवल जिय मानु कि पीती ॥
दिनकर उठत उठे हिय आगी। बिरह बयारि सरग गै लागी ॥

कहिसि कि प्रीतम हिया सिर, सूखि गयो जल नेह।
फाट न हिया तडाक जेउ, हंस चलेउ तजि देह ॥

जौ वै मो सौं निज मुख फेरा। तौ काया परान केहि केरा ॥
जीउ लेइ जो जम बरिआरा। छुटै प्रान यह दुःख अपारा ॥
जो अब मारौं होइ अपघाती। जगत नसाइ जनम औ जाती ॥
मैं बिरही मोहिं नाँच नचावा। अंत सो यह कौतुक देखरावा ॥

अब नाचौं किन परगट होई। ओहि कै पथ लै मारौ कोई ॥
निसरा कुँअर डारि सिर छारा। चित्रावलि चितरवलि पुकारा ॥
कोऊ आहि अस पर उपकारी। आनि देखावै राजकुँआरी ॥
खनक देखाउ सरूप भुप, लिहिसि चोर जिय मोर।
यह राजा हत्यार बड़, घर मह राखै चोर ॥
सुनि कै लोग अचभौ रहा। जोई सुना सोई मुख गहा ॥
बिरह उसास अगिन कर ज्वाला। लागत परै हाथ महँ छाला ॥
दूरहि हटकि रहे सब कोई। कोउ मुख मूदे नियरे होई ॥
होइ गा सगरे नगर चबावा। रूपनगर एक बाउर आवा ॥
कहै सोई जो कहा न जाई। मरै लागि यह बुद्धि उपाई ॥
राजसभा सब काहू सुना। सुनतहि चित्रसेन सिर धुना ॥
बदन सुखान अग दुति छाड़ी। लाजन सीस पुहुमि गा गाडी ॥
कहिसि कि जा कह जिय डरत, सवरि सुहात न राज।
सोई आनि हम सिर परी, अचक कहूँ हुत गाज ॥

दलगंजन खंड

पुनि सँभारि कै बैसेउ राजा । कहिसि कि भल नाहीं यह काजा ॥
किन भिखारि पर कीन्ह अगासा । जिन अस बचन असुभ परगासा ॥
काढि जिभि जिय मारहु सोई । जो अस सुनै कहै नहिं कोई ॥
राजनीति एक मन्त्री अहा । तिन उठि सीस नाइ के कहा ॥
यहि संसार वेद अनुमाना । बाउर बचन न कोऊ माना ॥
जाकर बचन नाहिं परतीता । ताके मारे होइ अनीता ॥
लाज लाग जो मारै कोई । अस मारे भल कहै न कोई ॥

गहि जो भिखारी मारई, दुइ घट यहि जग होइ ।
एक हत्या काधे चढै, पुनि भल कहै न कोइ ॥

यह चरचा पुनि मंदिर भई । रानी सुनत सुखि जिय गई ॥
कहिसि कि मुई न ऐसन बारी । जे अपने कुल लाइसि गारी ॥
आपनि जानि बिसारेउ नाहीं । पौन न पाउ छुवै परछाहीं ॥
एहि क रूप कहँ काहु न तेखा । मिटी न सीस करम की रेखा ॥
कुमुद यह भेद परेवा जाना । पूछहुँ बोलि कहै अनुमाना ॥
बहुरि कहिसि यह पावक जरई । ज्यों ज्यों खुदी त्यों उदगरई ॥
बाहर नगर परा जन कूका । कहुँ घर लागि जाइ जनु लूका ॥

तब कुछ हाथ न आवई, होइ आन की आन ।
तातें बरजे सकल जन, परे न चित्रिनि कान

राजें मते महाउत लावा । पान दीन औ कहि समुझावा ॥
जहा कहूँ वह बाउर होई । अस जस दूसर जान न कोई ॥
अपसर गज दलगजन नाऊ । छलि मकुलाइ देहि तेहि ठाऊं ॥
मकु गज धाइ हनै सो जोगी । बिनु औषधि जिय होइ निरोगी ॥
लै सो पान महाउत लावा । मूरी दइ गज अतिहि मतावा ॥
खोलि गयद ओहि दिसु लावा । कोऊ न जानत गुप्त की कला ॥
जइ बाउर सिर डारत छारा । उतरि महाउत भयो निसीरा ॥

छूटि चला मैमत गज, चहुँ दिसि परी पुकार ।
जग लै भाजो जीउ सब कूटा जम बरिआर ॥

भा अँदोर मैगल मकुलाना । सुनि चारिहुँ दिसि पारा बसाना ॥
देखि देखि लोग हीय सब कूटा । भा अजुगुत दलगजन छूटा ॥
एहि सों जिअत बँचा जो आजू । ताकर नवा जनम कर साजू ॥
आपु आपु कहं परजा रा । अहँइ सुना सोजू जिउ लै भाजा ॥

पूँतहिं बाप सँभारे नाहीं । कुटुम्ब लोग केहि लेखें माहीं ॥
जेहि सग अहा चटम हय हाथी । अकसर जाइ न कोई साथी ॥
जाकर अंग न छुअत समीरा । गहे आनि अनचीन्ह शरीरा ॥
जेहि तन लाग रैनि दिन, चोआ चन्दन सार ।
तिन्ह तन बन मह सग बिनु, निभरम लागै छार ॥
चले छाड़ि बनिया बैपारी । रही जहा तहा हाट पसारी ॥
छाड़ि चले जित मदिर लोना । जहवा लाग रूप औ सोना ॥
छाडि तिया जासों रँग कीन्हा । चले जोंहि जानहुँ अनचीन्हा ॥
छाड़हिं अन धन धोर धोरसारा । छाड़हि दरब झूठ ससारा ॥
छाड़हिं अगर कुमकुमा चोवा । छाडहिं रतन जो माल परोवा ॥
छाडहिं कस्तूरी घन सारा । अत आइ तन लागी छारा ॥
सगरे जनम सैंति दुःख पावा । छिन एक मह सब भयेउ परवा ॥
यहि बिचार कै मान कवि, महापुरुष जग माहि ।
तासों जोउ न लवहीं अत जो साथी नाहिं ॥
कुँवर देखि हस्ती मतवारा । मरन जानि जित कीन्ह बिचारा ॥
जा कह अत मरन जित य माहीं । मीचु देखि सो भागै नाहीं ॥
मोंहि एहि मारग निजुजो मरना । भागि रहौं लै का की सरना ॥
बिनु साहस जो तजउ सरीरा । कोउ कहै यह छत्री बीरा ॥
बाजौं आजु भीम की नाई । मारौं जो जय देइ गोसाईं ॥
मारौं तौ लोग कहै यहि देसा । छत्री कहा जोगि के भेसा ॥
पुनि चित्रावलि सुनि यह बाता । जूझि मुवा जोगी रँगराता ॥
बाँधि काछ दृढ होइ रहा, मन महँ मरन बिचारि ।
जेहि जिय डाड प्रेम कर सब जग जीतनि हार ॥
आवत हस्ति चुवत मदगधा । तोरत तरुवर धावत कधा ॥
गज बाजी कहँ फरलो कोपा । अगद पाव पुहुमि जस रोपा ॥
कुँअरहि देखि धाइ अस परा । बीर पँवार न पाछे टरा ॥
कधा डारि गयद झुकावा । आपु सजग होइ पाछू आवा ॥
गहि कै पूँछि गयद घुमाइसि । येही भाँति घरी एक लाइसि ॥
जनु चकई गहिं डोर फिराइसि । पुहुमि परा गज ताँवरि खाई ॥
मस्तक आइ मूँक तब मारा । सीस फोरि गजमोति निकारा ॥
पुहुमी परा गयद ढहि, जानहुँ परा पहार ।
देखि अचभित जग भयो, चहुँदिस परी पुकार ॥
कहैं लोग यह को बरिआरा । जिन गयद दलगजन मारा ॥
यह राजा कर हस्ती सोई । जेहि ते बली आनि नहिं होई ॥
यह जोगी भल कीन्ह न काजा । परलै करहि आजु सुनि राजा ॥

राज दुआरे भई पुकारा । जोगि बली दलगजन मारा ॥
एहि जोगी कह सिव परसना । नाहिं तो अस परबल को हना ॥
मानुष अस बल करै न पारा । निज यह पुहुमि भौम औतारा ॥
औरो हस्ति सभारहु नाहीं । मति कहँ भटकी सिर कहँ जाहीं ॥
सुनिकै राजा थकि रहा, रुधिर सूखि गा गात ।
हियें थरथरी पै टडर, मुख नहिं आवै बात ॥

सुजान बंधन खंड

पुनि सँभारि के बोला राजा। साजहु बेगि जूझि कर साजा॥
हनुमत जस लंका हुत आवा। तस छलि कै यहि काहु पठावा॥
काहु केर पठावन होई। जिअत न जाइ करहु अस सोई॥
बाजन बार जूझि कर बाजा। जानहु सरग मेघ दल गाजा॥
साजे हस्ती सिंघलदीपी। चीता माथ छींट जनु छोपी॥
साजे तुरै समुद जलगाहा। पखरै राउत पहिरि सिनाहा॥
राजा सपरि भयो असवारा। चलै बीर चढि तुरी तुखारा॥
बाजे बाजन जूझि के, घुका दमामा भेरि।
छेका जोगी कटक लै, मंडल चहुँ दिस फेर॥
जुझि साज जौ कुँअरहिं सूझा। कै बिचार अपने मन बूझा॥
जाकर दोष करै जो कोई। का बसाइ जो मारै सोई॥
मोहिं नहिं इहा जूझि सों काजा। मारौ लै पुहमीपति राजा॥
एह गुन, बैस्यो आसन मारी। जैसे निरगुन जोगि भिखारी॥
सीस नाइ पुहमी तिन हेरा। कटक आउ सब करत करेरा॥
मन्त्री राज-बाग तब गही। सीस नाइ के बिनती कही॥
जूझि केर जग अस बेवहारा। मारिय सोइ जो गहै हथियारा॥
जोगी बाँधिय जिअत गहि, मारि न करौ अनीत।
पूछि भेद पुनि लीजिये, को बैरी को मीत॥
घेरत बेरत आए राँधा। पाँच जने मिलि जोगी बाँधा॥
अस कै ढील दीन्ह दुइ बाँही। जानहुँ एक रती बल नाही॥
राजा सनमुख जोगी आना। देखि रूप सब कटक भुलाना॥
पूछै को हसि कह तें आवा। केहि कारन केहि केर पठावा॥
कुँअर न बोल मौन मुख गहा। सीस नवाइ आँधि चखु रहा॥
एहि अंतर एक चतुर चितेरा। सागर नगर कीन्ह जे फेरा॥
कुँअर चित्रलिखि अति मतिमाना। सोहिल जूझि भेद पुनि जाना॥
आइ पहूँचा राज ढिग, देखि नवाइसि माथ।
लान्हे चित्र अनेक जे, देस देस के नाथ॥
मै कुँअरहिं देखा पहिचाना। कहिसि कि यह जस कुँअर सुजाना॥
यह उहवा पुहुमी पति भारी। राज छाडि कत होत भिखारी॥
पुनि वह अस कुकरम कत करई। जेहि कोइ बाँधि चोर कै धरई॥
चित्र काढ़ि जो पटतर देखा। सोई कुँअर सुजान सरेखा॥

कहिसि कि यह पुहुमीपति राजा। पुहुमी रहो सदा ओहि साजा॥
यह पँवार छत्री बरिआरा। यही हाँकि रन सोहिल मारा॥
यह पुहुमी पति देस क राजा। अचरज मोहिं देखि यह साजा॥
कुँअर चित्र लैकर दिहिसि, कहिसि कि अचरज होय।
बाँधा सिंह सियार ज्यों, का कौतुक विधि कीय॥
इहाँ नरेस जूझि कहँ आवा। रानी उहाँ अँदोर अढावा॥
जे मारा दलगजन सोई। तेहि के जूझि आजु कस होई॥
हिये सोच करि हीरा रानी। पूँछो बोलि परे वा ज्ञानी॥
वह पंडित औ चतुर परेवा। आमग न चलै जानि पति सेवा॥
जिन मारा दलगजन हाथी। मकु वह होइ परेवा साथी॥
खोलि मँगावा सीध परेवा। आइ देखाइसि कन्तहिं सेवा॥
होइ अकसर लै मत बईठी। कहिसि कहाँ लै गवनेहु चीठी॥
बिनु पूँछे किछु ना कहै, तै पंडित सहदेव।
को जन यह हस्ती हना, कछु जानसि यह भेव॥
कहिसि कि सदा सोहागिनि रानी। तुम सयान पंडित औ ज्ञानी॥
मैं यह सुफल सुआ सो खोजा। चीन्हहु होइ सो राजा भोजा॥
जो कहँ भोर सदा सिर नाई। चहै मारि तो कहा बसाई॥
कथा कहत लागिहि बड़ि बारा। उहाँ न होइ जाइ सधारा॥
थोर कहौ जौ बिलँब न होई। सोहिल जिन मारा वह सोई॥
धरनीधर नैपाल भुआरा। एह सुबस औ बीर पँवारा॥
चित्र माँह चित्रावलि जानी। भा जोगी सुनि रूप कहानी॥
एहि सो रतन जेहि कीजिये, कुन्दन घालि जराउ।
जनि गहि डारहु समुँद महँ, नतु रहिहै पछताउ॥
रानी कहा बेगि चलि जाहू। लगै न पाउ मयंकहि राहू॥
जाइ जनाउ नरेस रिसाना। जौ लहुँ छुटै पाव नहिं बाना॥
दसरथ धोखे सरवन मारा। पाइ सराप भयो हत्यारा॥
अज्ञा मिली परेवा धावा। निमखि माँह राजा पँह आवा॥
देखिसि राजहि रिसि मन नाहीं। हाथ चित्र चित चिंता माहीं॥
औ पुनि कुँअर बाँधि कै आना। कीन्ही जल चखु जानि सुजाना॥
आइ नवाइस पति कहँ माथा। कहिसि हे पुहुमीपति नाथा॥
एह सोई जिन बैरी हना, सोहिल अस बारि आर।
जबूदीप नरेस सोई, निरमल जाति पँवार॥
एह जस विक्रम राजा भोजा। मैं चित्रावलि कहँ बर खोजा॥
चित्रावलि कर रूप सुनाई। कै जोगी आनेउँ बौराई॥
मैं राजा सों कहै न पावा। बीचहिं बैरी मोहिं बँधावा॥

तौ एह कौतुक सब बिधि कीन्हा । रतन खेह महँ काहु न चीन्हा ॥
राजा हिय सुनि कुँअर बखाना । तजि चिंता चित रहस समाना ॥
जो जहँ चित्र मूँदि कै राखी । तब भा आनि परेवा साखी ॥
एह पंडित औ बिधि सो डरई । पंडित काज बूझि कै करई ॥
छोरे बधन दुःख के, महाबीर पहिचानि ।
राजा उतरि तुखार सों, अंक मिलायो आनि ॥
ततखन तहाँ कुँअर अन्हवावा । राज साज सब आनि पन्हावा ॥
औ पुनि लीन्ह चढाइ अँबारी । दूलह जानि बरात सँवारी ॥
रहसत चला तुरै चढि राजा । बाजत अनँद बधावा बाजा ॥
एकै बाजन जेहि जग जाना । आवत आन जात भा आना ॥
गह गह बाजन बाजत आवा । नगर लोग सब देखै धावा ॥
जिन देखा तिन धनि धनि कहा । रूप निहारि चित्र होइ रहा ॥
धनि सो चित्र धनि सोई चतेरा । कहहिं जोर चित्रावलि केरा ॥
निकसा हाट मझार होइ, चहुँ दिसि रहस अनंद ।
देखै आई उतरि जनु, सूर तराई चंद ॥
चढि अँटारि देखहिं रनवाँसा । जनु ससि नखत सरग परगासा ॥
देखि कुँअर मुख हर्षाहिं रानी । हिए अनंद अधर बिहसानी ॥
कहिसि कि जानु आहि एह सोई । जेहिक चित्र चितसारी धोई ॥
पुनि तिन्ह साथिन्ह आनि देखावा । जे अपने कर चित्र नसावा ॥
जिन देखा तिन मुख अनुसारा । यह सोई गँधरब औतारा ॥
जब तें हम वह चित्र नसाई । नैन हिए जानहुँ लिखि लाई ॥
धनि यह दिन धनि घरी सरेखा । हिया इछ इन्ह नैनन्ह देखा ॥
मान न मन्त निसारहिँ, सिह पुरुख मुख बैन ।
जो मूरति हिअरै बसी, सो निजु देखी नैन ॥
रानिहिँ यह सुनि भयो अनंदा । सीस पुहुमि धरि बिधना बंदा ॥
जिन्ह काहू यह भेद न जाना । सो बिधि कौतुक देखि भुलाना ॥
कहै कि मह कस बैरी होई । आदर चाह करै सब कोई ॥
सखी एक चित्रावलि केरी । चढि मंदिर पुनि देखिसि हेरी ॥
कौतुक लखि चित कीन्ह हुलासा । गई धाइ चित्रावलि पासा ॥
कहिसि कि ऐ कुल मनि मनिआरी । तोरी जोति पुहुमि उजिआरी ॥
फिरेउ जीति संग्राम भुआरा । गहि आना बैरी बरिआरा ॥
देखौं सोइ हस्ती चढा, नहिँ जानौं केहि काज ।
पुहुमी आवै इंद्र जनु, तजि इन्द्रासन राज ॥
मेहरिन्ह मह पुनि चरचा होई । चित्र जो मेटा जनु यह सोई ॥
सुनतहि चित्र चाउ चित बाढी । होइ व्याकुल धौराहर ठाढी ॥

देखत मुख सुधि बुधि सब हरी। होय अचेत पुहुमी खसि परी ॥
सखी सो हाथन हाथ उतारी। सेज सुवाइ ओढ़ाइन्ह सारी ॥
डरहिं कहहि बिधि का भा आई। गीर माँह काहू डिठि लाई ॥
सुनै पाउ जनि राजा रानी। हम जिय करहिं घरी महँ हानी ॥
ततखन मँदिर परेवा आवा। सखियन्ह कहं सब भेद सुनावा ॥
कहिन्हि कि ऐ पति कलप जुग, हम माथे तुम छाँह ॥
अब किमि जरिए धूप दुख, छत्र आउ घर माँह।
सुनत बैन चित्रावलि जागी। देखि परेवा के पाँ लागी ॥
कहिसि कि ऐ हीरामन सुआ। रतन लागि कस कौतुक हूआ ॥
कैसे जाइ भोराएहु साईं। कैसे आनेहु इहवा ताईं ॥
का कहि चित्रसेन समुझावा। काहि लागि मँदिर लैआवा ॥
जैसि परेवा प्रेम कहानी। आदि अंत लौं कहिसि बखानी ॥
चित्रावलि चित भयो सँतोषा। गा सो सोच अहा जो धोखा ॥
बर बिआह सुनि मनहि लजानी। घूँघट ओट दिये मुसुकानी ॥
कहिसि परेवा सुमति तैं, पूरन सेवा कीय।
जो चित भावै सोइ करु, मैं तुअ अग्या दीय ॥

बोहित खंड

उहवा सागर बोहित साजा इहवा दुद गौन कर बाजा ॥
पखरे घोर पलाने हाथी। सँभरि चले पुनि अत के साथी ॥
चली दोऊ धनि करत कलोला। अपने अपने चढि चडोला ॥
एक बाएं एक दहिने जाई। एकहिं एक न पास सुहाई ॥
कुँअर साजि पुनि कटक सुहावा। रहसत जाइ समुँद लहु आवा ॥
बोहित साज देखि मन भावा। चित्रिनि कर चंडोल चढावा ॥
पुनि कौंलावति समदि भुआरा। चढ़ी जाइ तजि सब परिवारा ॥

अगिनित दायज दरब जेहि, देखि हिया हरखंत
एक एक सबै चढाइ के, कुँअर चढ़ा पुनि अत ॥

बोहिते चढेउ कुँअर लै भारा। समदि चले पहुंचावनहारा ॥
समदे लोग कुटुंब हय हाथी। सोई साथ अंत जो साथी ॥
लोकाचार तीर लहुँ आए। नाव चढे सब भए पराए ॥
पीठ देत ही मिंत बिसारा। सब काहू घर बार सँभारा ॥
कुँअर पेलि बोहित लै चला। भार देखि केवट कलमला ॥
कहिसि कीन्ह तुम दूर पयाना। बोहित नाहिं भार अनुमाना ॥
बोहित चढ़े बहुत उतपाथा। ऊँचे भौंर ऊठहिं पुनि साथा ॥

भौंर फेर जलजंतु डर, तेहि पर आँधी आउ।
जिउ आवै तब पेट मँह, तीर लाग जब नाउ ॥

सोन रूप तुम कहा बटोरा। भार बहुत देखत पुनि थोरा ॥
गाढ परे पुनि होइहि भारी। अबहीं कस नहिं देहु अडारी ॥
कुँअर कहा सुनु बोहित पती। दरब न डारि जाय एक रती ॥
बोहित साजा दरब हि लागी। का लै जाब संग यहि त्यागी ॥
जो मानै जिय अस डर भारी। चढ़ै न कोऊ नाव नवारी ॥
तुम खेवहु जनि मानहु संका। मेटि न जाइ सीस कर अंका ॥
हँसि कै बोहित केवट पेला। चला जाइ जल माँह अकेला ॥

देखत बारिध अगम जल, प्रान न धीर धराइ।
सोई चलै निचिंत होइ, जो कोउ आवै जाइ ॥

रैनि एक बादर जुरि आये। दुहुं दिसि होइ रिखि सात छपाये ॥
मारग भूला केवट डरा। बोहित जाइ भौंर बिच परा ॥
भँवै लाग तहँ बोहित भारी। कुँअर कहा कछु देहु अडारी ॥
जाके अहा संग कछु भारा। पलिहिं तैं सब रूप अडारा ॥

इरुआ होइ बोहित अगुसरा। दूजे भौंर जाइ कै परा ॥
जह लहु अहा सोन कर नाऊं। सो उब डारि दीन्ह तेहि ठाऊ ॥
तीजे भौर जहा नग हीरा। चौथे अन जा कर नर कीरा ॥
पचए भौंर भयो सेस नर, अंत जानि पुनि मीच।
कुअर जिअन जिअ सौंरिकै, परे कुदि जल बीच ॥
छठए भौंर मरन निज हेरी। साहस बाँधि गिरीं सब चेरी ॥
सतएं भौंर जो आइ तुलाना। कौंलावति कर जिउ अकुलाना ॥
कहिसि कि हौं बलि देउ सरीरा। मकु ए दोउ लगि लागैं तीरा ॥
पुनि मन कहिसि रहा पछितावा। चित्रिन रूप न देखै पावा ॥
मरन बेरि मुख देखौं जाई। मकु अजहूं तजि कोह छोहाई ॥
चित्रिनि पहं आई गुन भरी। बदन बिलोकि पाउं लै परी ॥
कहिसि कि हौ अपराधिनि तोरी। करहु छोह सुनि बिनती मोरी ॥
रहै सदा तुअ सीस पर, सेंदूर भाग सुहाग।
हौं समदति हौं चरन गहि, इहै मोर अनुराग ॥
चित्रावलि सुनि हिए छोहाई। कौंलावति कह कंठ लगाई ॥
कहिसि कि तजहु सौति कर नाता। मोरि तोरि एकै जनु माता ॥
हौं जिउ देउ रहउ तुम्ह दोऊ। मोरे मुए होउ सो होऊ ॥
मरन लागि दुहुं बाद पसारा। सुनि सुजान बायो बिकरारा ॥
कहिसि कि मेहरिन्ह बुद्धि न रती। हौं अब मरौं होहु तुम्ह सती ॥
तीनिहु गही मरन की टेका। मरन न पाउ एक तें एका ॥
देवता सरग जो देखत अहे। इन्ह कर प्रेम देखि थकि रहे ॥
ससि सूरज कुज दोउ गुरु, राहु बुद्ध सनि केतु।
कहहिं कि अब लहु भूमि महं, अस न कीन्ह कोउ हेतु ॥

आलमकृत

माधवानल-कामकंदला

आलमकृत

माधवानल-कामकंदला

प्रथमहि पारब्रह्म के सरनै । पुनि कछु रीति जगतरस बरनै ॥
पारब्रह्म परमेस्वर स्वामी । घट घट रहै सो अंतरजामी ॥
घट घट रहै लखै नहिं कोई । जल थल रह्यौ सर्व मय सोई ॥
जाकौ आदि अंत नहीं जानौ । पंडित कथैं ग्यान सोई मानौं ॥
ग्यानी होइ सो गुर-मुख पावै । खोजी होइ सो खोज लगावै ॥

मन वच क्रम सोवत चलत, जागत चितवन चित्त ।
संग लागि डोलत फिरौं, सो करता धरु चित्त ॥

जग पति राज कोटि जुग कीजै । सहज लाल छाजे थिति कीजै ॥
दिल्लिय पति अकब्बर सुरताना । सप्त दीप मैं जाकी आना ॥
सिहंन पति जगन्नाथ सुहेला । आपनु गुरू जगत सब चेला ॥
जब धर भूमि पयानौ करई । वासुकि इन्द्र आसन थरथरई ॥
गहि त्रिन दंत सरन सो आवै । थापहि फेरि भूमि सो पावै ॥

दंड भरै सेवा करै, वासुक इन्द्र कुबेर ।
गनु गध्रव किन्नर सबै, जच्छ रहै होई चेर ॥

देस देस के भूपति आवै । द्वारे भीर वार नहिं पावैं ॥
कंपै बहुत त्रास जी लैहीं । लै अकोर पर द्वार न दैहीं ॥
इक छत राजु बिधाता कीनौं । कहुं दुर्जन कोउ रह्यो न चीन्हौं ॥
धर्म राजु सब देस चलावा । हिंदू तुरक पथ सबु लावा ॥
आगैरेंबु महामति मडनु । नृप राजा टोडरमल डडनु ॥

जो मति विक्रम कीन, मत्रु करत मनु चैन ।
सुनत वेद सुमिरत सदा, पुन्य करत दिन रैन ॥

सन नौ सै इक्यावन्नुवै आइ । करौं कथा अब बोलौं गाहि ॥
कहौ वात सुनो अब लोग । कथा कथा सिंगार वियोग ॥
कछु अपनी कछु परकृति चोरौं । जथा सकति करि अच्छर जोरौं ॥
सकल सिंगार विरह की रीती । माधौ कामकदला प्रीती ॥
कथा ससकृत सुनि कछु थोरी । भाषा बाँधि चौपही जोरी ॥

माधौनल सब गुन चतुर, कामकदला जोगु ।
करौं कथा आलम सुकवि, उतपति विरह वियोगु ॥

पद्मावति नग्र इक सुनौ । गोपीचंद राज वह गुनौ ॥

धर्मपथु दिन प्रति पगु धरई। पहुमी पवित्र पापु नहिं करई॥
तिहिपुर बसै सदा सुख त्यागी। माधौ विप्र नाम वैरागी॥
राजा पास प्रात उठि जावै। लै तुलसी दल देव पुजावै॥
देव पुजाइ विप्र फिरि आवै। प्रात भयें पुनि दरस दिखावै॥
बाचै वेद पुरान, नौ व्याकरन बखानई।
जोतिक आगम जानि, सामुद्रिक सँगीत सब॥
विद्या सोइ बृहस्पति जानौ। रूपु सोइ मकरध्वज मानौ॥
ताकौ रूप नारि जो देखै। पलक ओट जुग जुग भरि लेखै॥
जे सब नारि बसैं पुर माहीं। तिहि के निरखि गर्भ गिरि जाहीं॥
गावै सरस बजावैं वीना। नर नारी मोहे भ्रम वैना॥
मनु लागै जिहि धाइ, सो पुनि मन ही मो बसै।
जागत सोवत नित्त, देखहु आँखिन मै लसैं॥
बिन देखें अकुलाइ, प्रान नहीं धीरज रहहि।
निसु दिन भीजहि चीर, नैना ही के नीर ही॥
दिन एक प्रात भयो उजियारा। माधौनल अस्नान सिधारा॥
करि मंजन पुनि तिलक सँवारै। नाद मधुर धुनि मुख उच्चारैं॥
सुनत नाद मोहीं पनिहारी। सीसहु ते गागर भुमि डारी॥
सुनत नाद तिहि दीनैं काना। रीझि रहैं सब चतुर सुजाना॥
करैं राग मोहन के वेसा। ज्यौ ठग मूर करै वर वेसा॥
थके कुरगन जूथ, सुनत नाद सुर्ग्यीन के।
तब धाईं करिहूय, काम कमान चढ़ाइ के॥
इक त्रिय मोहि मुर्छित धर परही। इक त्रिय धरत सुद्धि नहिं रहहीं॥
इक नैनन सों नैन मिलावै। तजि सर एक निकट चलि आवै॥
एकन परत न चीर सँभारा। व्याकुल भई छूटि गये बारा॥
एकनि भूषन दए उतारी। एकनि तजी कंचुकी सारी॥
एकै नारि चली उठि संगा। जैसे धुनि सुनि चले कुरंगा॥
काम धनुष सरपञ्च लै, मारौ तिया सुनाइ।
वे मृगगति मोहीं सकल, द्विज पारधी की नाइ॥
एक नारि हँसि हँसि मुख जोवै। नैन नीर इक भरि भरि रोवै॥
डोलै एक पवन ज्यों दिया। छुटे केस उघरि गये हिया॥
करै राग माधौनल रागी। ज्यौं तन माँहि ठगौरी लागी॥
माधौनल देख्यौ पनिहारी। व्याकुल भई नगर की नारी॥
तब उठि चल्यो नग्र कहँ सोइ। कहत चरित्र सप्र दिन सोइ॥
गयौ मदन सर मारि, नारि डारियत हार सब।
बिरह अनल तन जारि, तन मन द्वद उदेग दैं॥

नगर खांरि माधौनल आवै। त्रिया पुरिख गृह अन्न जिंवावै।
सुनत नाद कर छीन सँमारी। भूमि अहार दीन सब डारी॥
पूछै पुरिष नारि सुनु मोंही। ऐसे नैन दिये विधि तोही।
कत तैं भाजन दियौ सो डारी। वेगि कहौ नहिं डारौं मारी॥
बोली बचन कन सुनि लीजै। स्वामी दोनु मोहि नहिं दीजै।
माधौनल कियौ रागु, सुनि धुनि हौं विस्मै भई।
तहा जाइ मनु लागु, ताते गिर्‌यौ अहार भुइ॥
तब सुनि कैं उठि चल्यौ रिसाई। नगर लोग मकुवै बुलाई।
चलहु राइ के सनमुख होही। कहौ विप्र त्रिया सब मोंहीं॥
नग्र लोग बूढे अरु बारे। राजा आगें जाइ पुकारे।
सुनौ राइ इक बचन हमारा। माधौनल मोंहीं सब दारा॥
पूछै राइ कौन गुन करही। कैसें विप्र त्रिया मनुहरही।
करै नाद सब त्रिया लुभाईं। मृग गति मोहि थकित ह्वै जाहीं॥
कहै प्रजा राजा सुनौ, हम न रहैं इहि गांउ।
कै यह वेगि निकारिए, जिहि माधौनल नाउ॥
सुनि राजा जिय चिंता करही। कहा करौं जो परजा जाहीं।
पहिले पूछि लउ वेउहारा। तब माधौ को देउ निकारा॥
तब राजा पठवा इक वारी। माधौनल को ल्याउ हकारी।
गयौ पौरिया माधौ जहँ रहही। सीस नाइ विनती इक करही॥
चलौ वेगि तुम राज बुलाए। परजा पवन कहन कछु आए॥
माधौनल चिंता करी, मन मैं भयौ उदास।
माधौ धारि बीना चल्यौ, आयौ राजा पास॥
अधिक मधुर धुनि बीनु बजावै। सरस राग रागिनि उपजावै।
चेरी बीस कराइ हकारी। सब पहिराइ कुसुंभी सारी॥
तब राजा परतिज्ञा लेही। कमल पत्र पर बैठक देही।
माधौनल बीना कर गह्यो। खस्यौ काम धीरज नहिं रह्यौ॥
माधौ विप्र नाद अस कहा। भीजे चीर मदन तब बहा।
तब राजा आइसु दयौ, चेरी दई उठाइ।
सब ही के पीछे रहे, कमल पत्र लपटाइ॥
अचरज देखि राजा तब रहा। मिली प्रत्यग्या जो गुन कहा।
उठि राजा गयौ पौरि पगारैं। तुम को ठौर न विप्र हमारैं॥
तीनि पान कौ बीरा लयौ। राइ हाथ माधौ के दयौ।
तब उठि बरन अठारह पती। चल्यौ छाँडि ‿ पुहुपावती॥
बीना गहै बजावै रागा। छिन छिन उपजावै वैरागा।
दिन दस मारग रह्यौ सुजाना। कामावति नगरी नियराना॥

कामवती नगरी भली, कामसैनि नृप नाम।
मन मैं माधौनल कहै, इहाँ करौं विश्राम॥
नगर लोग सब बसै सुकर्मी। ब्राह्मन छत्री बैस सुधर्मी॥
तिहिं पुर मद गयद सो रहै। मदिरा नाम औरन सों कहै॥
मार सोइ सतरंज मैं होही। पुष्प पत्र लै बाधै कोही॥
दंड सोही जो जोगी लेही। और दंड काहू नहिं देही॥
चचल चोर कटाछ त्रिया के। जो नित चारै चित्त पिया के।
दीपक बधिक बसै जहा, जो निसि बसै पतग।
ऐसो नगर रच्यौ बली, काम सैनि चतुरग॥
तिहि पुर बसै चन्द्र की कला। पातुर सुनी कामकदला।
ताको रूप बरनि को पारा। बरनत सहसजीभ पुनि हारा॥
कुंतल चिहुर चुवहिं ज्यों घाला। अबुधार कैधों अलिमाला॥
मध्य मांग चंदनु घसि भरै। दूध धार विषधर मुख परै॥
कहुं कहु पुष्प कहूं कहुं मोती। जनु घन मैं तारागन जोती।
मांग अग्र मानिक दिए, औ मुक्ता गन संग।
छिन छिन जोति धरैं मनौं, मनि उछली जु भुजग॥
करनन करन फूल छवि भारी। मन्द मयक की कोटिन नारी॥
मनि मुक्ता लागै बैडूरज। मानो घन मह दिए दोइ सूरज॥
कर कुंकुम लै तिलक सँवारे। चैन मैन जनु बान सुधारै॥
भृकुटी चाप चचल जब मोरै। चितवन चारु चतुर चित चोरै॥
मीन मधुर पजर मृग हारै। निरखत लोचन जुगम डरारै॥
पलक ओट अकुलाइ, चलच नैकु न थिर रहै।
श्रवन कोर लौ जाइ, निरखौं त्रिया कटाछ जब॥
नासा अग्र बेसर कौ मोती। घट वीच रोहिन की जोती॥
तिल प्रसहि बीच तुषारा। छिनु छिनु दारिज नु माछिनि हारा॥
नासा अग्र मोती इमि रहहीं। दीपक पुष्प करन कौं चहहीं॥
मृगमद तिलक रहै अति मानौ। निरखत अलिबिंदु नीयर जानौ॥
रस बिनोद लागैं अहिछौना। लालच लुवुध लोभ जनु गौना॥
आलम अलकैं छुटि रहीं, बेसरि सौं अरुझाइ।
मानहु चारा चोंच तें, अहि सुत लेत छुड़ाइ॥
पल्लव बिंब बँधूक लजाहीं। आस्वास रस भौंर लुभाहीं॥
दामिन दत दिए जनु हीरा। सेत असेत अरुन के धीरा॥
सखि स्यौं हास करहि जब कामिनी। कमल पत्र कैधौं जनु दामिनी॥
सरस्यौं बचन जु बोलि सुनावै। सहज मनहुं बाँसुरी बजावै॥
लोग कहैं कोकिल कल नींकी। ताकी धुनि सुनि लागति फीकी॥

अचला बचन अमोल, प्रान धरन चिंता हरन ॥
श्रवन सुनत वे बोल, मुनि मनसा नहि थिर रहैं ॥
हरे पीत मनि लाल बिसाला। रतन जटित सोहति कँठमाला ॥
मुकताहल दोउ कुच बिच रहहीं। दुहुँ सुर मध्य जु सुरसरि बहहीं ॥
कुच कचन भरि सा सवाँरे। सुर सरि घरि जुग ससी दुधारे ॥
चक्रवाक सरिता की धारा। मानहुं मुनि मन वारहि पारा ॥
कनक वेलि श्रीफल जुग लागे। किधौं पुष्प गुथि अति अनुरागे ॥
अति कठोर कुच तन उठे, सबलैं समेत सुभाइ।
मनुहु मैन को भस्म करि, बैठै ईस चढ़ाइ ॥
कनक बरन दुइ बाँह सुहाहीं। देखे नीत सँगीत सुहाईं ॥
कनक टाड कर ककन चलिया। फुद जू चामहि मुद्रिक पलिया ॥
भुज सतूल श्ररु सीन कटाही। लगी फूली सुघरी जु सुहाही ॥
सहज हस तज्यौ कमल दिखावे। नखन अग्र किन्नरी बजावै ॥
पलव पल्ल सोभी नख भारे। विद्रुम बिय कटक मनौ दारे ॥
भुज चदे की मजुरी, मिलति एक के रूप।
मानहु कचन खभ तें, द्वादस लता अनूप ॥
उदर छीन रोमावलि देखा। कनक खभ मृगमद की रेखा ॥
नाभि निकट स्यों नागिनि चली। जनु कुच कमल नलिन इक भली ॥
नाभि पात सौं उठी सुहाही। कँवलहु तैं अति अवली आई ॥
हृद कर सख ब्रह्म दै काढी। खभ वेलि कचन मनौ बाढी ॥
कै उलटी कालिंद्री बहही। गिरि गगा परसन कौं चहही ॥
इत तें गगा सुर चल्यौ, उत तैं जमुना अभु।
कुकुम चग तुरग भरि, मिलि परसै इक सभु ॥
मृग अरु ससा सिंघ बन भागे। देखि मध्य उदि उपमा लागे ॥
मध्य भीन बोलैं ज्यौ आवे। कसनी कसी कुच नीके बाँवे ॥
जंघ जुगल कदली के खभा। तिहि छवि को पूजै नहि रभा ॥
नूपुर चूरा जे हरि वाजैं। छुद्रावलि घटिका बिराजैं ॥
घसि चदन इक चोली कीनी। कंचुकि पहिरि पटोरी लीनी ॥
कुसुंभी सारी पहिरि कैं, बेनी गुही सँवारि।
राजा के मदिर चली, कामकदला नारि ॥
औसर चली कामकदला। नगर लोग सब देखन चला ॥
माघौ विप्र वात या सुनी। कहियतु कामकदला गुनी ॥
तब उठि माधौनल सँग लागा। काँधे बीन धरे बैरागा ॥
मंदिर मध्य गयौ सब लोगा। माधौ विप्र पवरियन रोका ॥
माधौ कहै जानदे मोही। हौ नहि जाने दैं द्विज तोही ॥

राजमँदिर कैलास सम, जान देउँ नहिं तोहिं।
तुहि बाम्हन देखत कछू, कहँ राज बुलावे मोहिं॥
पूछि राय उत्तर कह ऐसी। जब तुहि पहिचानै परदेसी॥
उहिठा माधौ पँवरि दुवारा। राजा मंदिर होइ अरवारा॥
तव गिरा गाइन बहु गाँवहि। द्वादस तहां मृदँग बजावहि॥
द्वादस माझ इक तुरिया दीना। दहिनै हाथ अँगुरिया हीना॥
टूटै तार भंग सुर होई। मूरख सभा न जानै कोई॥
ऐसो को सुर आनि, राज सभा मूरिख सकल।
ताल भंग को जानि, द्वादस तहां मृदग धुनि॥
ताल भंग माधवनल सुनहीं। द्वारे बैठि सीस बहु धुनही॥
ताल कुताल सत सुर जानै। सब पुरान संगीत बखानै॥
माधव कहै पौरिया आवहु। राजा आगैं जाइ सुनावहु॥
द्वारे बैठि विप्र इक आही। सकल सभा सौ मूरखि कहही॥
द्वादस माहिं तूरिया अनारी। दहिनैं हाथ अँगुरिया चारी॥
सात चारि के मद्धि है. उठिकै देखौं ताहि।
चूकै तार जो पाव मिसि, पातुर दोस न आहि॥
सुनत पँवरिया उठि किन धावँही। राजा आगैं जाइ सुनावहिं॥
विप्र एक है पँवरि दुवारा। निर्त ताल सब कहै विचारा॥
कर मीजै सिर धुनि धुनि रहई। सकल सभा सौं मूरिष कहई॥
कहै जु तुरिया द्वादस माही। दच्छिन हाथ अँगुरिया नाहीं॥
सात चारि के अंतर रहै। ऐसी बात विप्र इकु कहै॥
ताही ठौर को तुरिया, राजा लियौ हकारि।
हतौ अगूठा मैन को, तरस अंगूरिया चारि॥
मिली बात माधौ जो कही। सभा सकल चकत ह्वै रही॥
कहै राज सुनि रे दरबारी। वेगि जाइ कैं ल्याउ हँकारी॥
अयौ पौरिया माधव ठाँई। पाउ धारिये विप्र गुसाई॥
राजा मदिर माधौ चला। सुदर विप्र मदन की कला॥
कँठ सोहै मौतिन की माला। कानन कुंडिल मैंन विसाला॥
झीने पट की धोवती, उपर उपरनी झीन।
सीस पाग बैना धरे, राज-मँदिर पगु दीन॥
सभा मध्य माधौनल गयौ वेगि लोगु सब ठाढ़ो भयौ॥
आवत माधौनलहि निहारा। सिंहासन तजि भयें नियारा॥
माधौ विप्र चिरंजी कीन्हों। आसिर्वाद नृपति कहँ दीन्हों॥
राजा दियौ सिंघासन टारी। ता पर बैठे रूप मुरारी॥
बैठ्यौ विप्र सिंहासन जाई। देखि लोग सब रहे भुलाई॥

कै रे इंद्र कै चद्र है, कै कान्हर कैं काम।
कै कुवेर कै जच्छ हैं, कै किन्नर कै राम॥
कनिक मुकुट मुद्रिक मनि माला। माधौनल कौं दीन सुवाला॥
मुद्रिक टोडर दये उतारी। पहिराये भूषन सब भारी॥
टका कोटि द्वै दछिना दीनी। स्वस्ति वोलि माधौनल लीनी॥
चंदन खौरि तिलक लरखावें। पोथी काँख उपरना कांधें॥
बैठि सिंघासन बहुत सुखु पायो। दुख संताप लै गग बहायौ॥
गुन देखें गुनिजन सुखी, निर्गुन होइ जनु कोइ।
राय रक सब बीच लै, जो रँपेट गुन होइ॥
ऊंच नीच पूछहि नहि कोई। बैठहि सभा जौर गुनु होइ॥
गुनी पुरिष जो परभुमि जाई। त्यों त्यों मेंहग मोल बिकाई॥
जैसे पुत्रहि पालै माई। त्यों गुनु रहै सदा सुख दाई॥
गुन बिन पुरिष पख बिन पखी। गुन बिन पुरिष अंध ज्यो अखी॥
गुन बिन पुरिष पत्र ज्यो ... ... ॥
सगति गति उठत, तत कुनी तिहिं काल।
बहुरि अलापै राग पट, पच पच सँग बाल॥
एक राग सँग पाच रागिनी। सग अलापै आठौ नंदनि॥
प्रथम राग भैरव उच्चरही। पाचौ कामिनि सग सुहाहीं॥
प्रथम भैरवी पुनि बिलावली। पुनि जाकी गावै बगाली॥
पुनि असावरी औ बैरारी। ये भैरो की पाचौ नारी॥
पचम हर्ष दे साथ सुनावै। पींगाली मधु माधौ गावै॥
ललित बिलावलि गावहीं, अपनी अपनी भाँति।
अस्ट पुत्र भैरों कहैं, गाइनि गावै पाँति॥
दुतीं मालकौंस आलापै, पच कामिनी सगति थापै॥
गौंडी काटी औ देवगंधारी। गधारी सी दुती उचारी॥
धनासिरी ये पाँचौ कामिनि। मालकौस के सग सुभामिनि॥
मारू मस्तक अंग मेवारा। प्रवल चंद्र कौसिक औ भारा॥
घूघट्ट और मौरन हग गाए। मालकौस आठौ सुत भाए॥
पुनि आयो हिंडोल, पच कामिनी अस्ट सुत।
उठै सो तान कलोल, गाइन ताल मिलावही॥
तेलंगी पुनि देव गिराइ। वासंती सिंधुरी सुहाई॥
सा अहेरि लै आया राजा। संग अलापहि पंच भारजा॥
सुर मा नंद भरम करि आई। चंद्र बिंब मंगली सुहाई॥
सरसवान औ आहि विनोदा। गावैं सरस बसंतक मोदा॥
अस्ट पुत्र मैं कहे सवारी। पुनि आई दीपक की वारी॥

काछाली पट मजरी, टोडी कही अलापि।
कामोदी औ गूजरी, सँग दीपकैं थापि॥
काल काल औ कुंतल रामा। कमल कुसम चपक के नामा॥
गौड़ी कान्हरिय कल्याना। अस्ट पुत्र दीपक के जाना॥
सब मिलि वहि श्री रागहि गावैं। पचौ सग बरग अलापै॥
बैराटी करनाटी भरी। गौरी गावैं आसावरी॥
पुनि पाछैं सिधवी अलापी। सिरी राग संग पाचौ थापी॥
सावा सारँग सागरा, औ गधारी मीर।
अस्ट पुत्र श्री राग के, गोल बुड गमीर॥
अष्ट मेघ राज वै गावैं। पाचौ सग बरगनि ल्यावैं॥
सौर गौड़मल्लारी धुनी। पुनि गावै आसा गुन गुनी॥
ऊचे सुर सों सूहौ कीनी। मेघ राग सँग पचौ चीन्ही॥
बीरा धर गज अरु केदारा। चडोली घर नित उजियारा॥
पुनि गावै बासकर औ स्यामा। मेघराग पुनि तिन के नामा॥
अस्ट राग ये सकल सँग, रागिनीय गनि तीस।
सब सुत राग न के कहे, अठारह दस बीस॥
गयौ राग रागनि सगीता। अब बरनौं सभा सगीता॥
रगभूमि बहु भाँति सँवारी। ताल मिलाइ करैं पतिहारी॥
दीपक दीवती चले चहुँ भाँती। बहुत मसाल मैन की बाती॥
अंतर बोट पिछौरी दीन्हीं। पहुप अँजुली दुहुँ कर लीन्हीं॥
सब मिलि श्री राग वै गावैं। सकर गौरि गनेस मनावैं॥
षरज रिषभ गधार, मध्यम पचम धैवतो।
औ निषाद उच्चार, ये कवि गाये सप्त सुर॥
पनु मिलि संग एक सुर कीन्हा। रग भूमि पातुर पग दीन्हा॥
सुर सुर मध मध धिपि धिपि बोलहिं। तार धार सँग लागे डोलहि॥
तथेइ ताथेइ ताता थेइ करहीं। तनु थकत न थक मुख उच्चरहीं॥
जभकत भभकत लाल तरगहि। . .. ...
झंक झंझकत उठत तरंग रंग, अरी उच्चारहि दद दद मिरदग॥
प्रथम ताल औहै झप ताला। सकल ताल डोलैं इक ताला॥
राग दाव नरपतिहि प्रधाना। प्रगटे सप्त भेद सुर ज्ञाना॥
दुदुर छंद धुरपद सचारहिं। ढही रीत जनु इद्र अखारहिं॥
धुनि देसी कदला दिखावै। अच्छर अर्थ हस्त पल्यावै॥
थिरकी लीन तार जब तोरहिं। नैन कोर माधो सो जोरहि॥
सुर सुदर दोहा षटपदा, और बिस्मै पद गाइ॥
बूझै चतुर बिलच्छन, माधौनल सब भाइ॥

पुनि गुन काम कदला करई । जल भरि सीस कटोरा धरई ॥
भृकुटी चाप चलल मुख मोवहि । कर अँगुरी सों चक्र फिरावहि ॥
दीप जोति इक भँवर उडाई । कुच के अग्र सो बैठो जाई ॥
जब लागै तब दे दुख डारहिं । मनहु भवग ममै सरमावहि ॥
चदन बास लीन है रहा । बैठो भाँवर प्रेम रस भरा ॥

छिन छिन काटहि मधुकरा, अस्तन वेदन होइ ।
माधौ नल सब बूझई और न बूझै कोइ ॥

भेटैं पवन सुख वासुन आवइ । अस्तन श्रोन समीर चलावहि ॥
ज्यों कर छुहा चक्र गिरि परई । कामकदला चौगुन धरहीं ॥
पवन तेज मधुकर उड़ि चला । माधौनल बूझी यह कला ॥
तब राजा के नैन निहारै । मूरखराज न कला विचारै ॥
रीझ्यौ माधव कला विचारी । मुद्रिक तोडर दए उतारी ॥
कनक मुकुत मनि माल सब, टोडर दए उतारि ।
टका कोटि दै दच्छिना, माधौ दिए सुकारि ॥
चतुर चतुर सो नैन मिलावहि । दुहुतन मदन उमगि बहु आवहि ॥
दुरि दुरि देखैं मुरि
जब पारखी नाद सुख गावैं । सुनतहि मृग हिय मोहित है आवैं ॥
हरिनी कहै हरिन का कीजै । रीझि पारखी कौं का दीजै ॥
हमरैं कहा दैन कौ दाना । कहैं कुरग सो दीजै प्राना ॥
तब पारखो धनुष संघाना । मृग हियरा आगे कै दीन्हा ॥
धनि कुरंग जिनि राग सुनि, रीझि न राखे प्रान ।
वैन करत वलि विक्रमा, दियौ न ऐसो दान ॥

धारा भोज लच्छ जिनि दीनौ । करन वैन वलि विक्रम कीने ॥
ये सब मुए मीचु के मारे । रीझि प्रान नहिं दिए पियारे ।
लच्छ लच्छ जे त्यागहिं दाना । तौ नहिं पूजहि हिरन समाना ॥
कह राजा सुनु विप्र उदासी । कौन रीझ तै त्यागी रासी ॥
कहै विप्र हौं कला विचारी । औ मुग्धा सब सभा तुम्हारी ॥
नाचत त्रिय कुच अग्र पर, मधुकर बैठ्यो आइ ।
अस्तन स्रोत समीर सों, दीनौ भँवर उडाइ ॥

तू राजा अविवेकी आई । गुन औगुन बूझौ नहिं ताही ॥
मै विद्या परवीन सुजाना । रीझि कला नहिं राखौ प्राना ॥
क्रोधवत राजा उठि कहै । ढीठ विप्र चुप क्यों नहिं रहै ॥
मारौं खड्ग टूक द्वै करौं । विप्रघात अपजस सों डरौं ॥
ना राजा तू मारै मोही । कला रूप है व्यापौं तोही ॥

पतित करौं तुहि लोक महँ, स्वर्न लोक हरिद्वार।
जग मै अपजसु पावही, सकल कहै हत्यार॥
राजा ब्रह्म हत्या जो करै। कलि मैं कुस्टी ह्वै अवतरै॥
तीरथ कोटि जग्य जो करै। तबहुँ न ब्रह्म दोष तैं तरै॥
सुनि राजा कछु कहन न पारै। कोधवत मनही मै विचारैं॥
कह राजा जहँ लग मोर राजू। छाँडि जाहु तहँ लगि तुम आजू॥
जो तोहि इहा बहुरि सुनि पाऊ। खाल खैचिकर भूस भराऊं॥
बोलहिं क्रोध न बाल, बेगि निकारहु नग्र तें।
भूस भराऊ खाल, जो कोउ राखै देस मैं॥
तब सो वचन माधवनल कहै। तारे नग्र राइ को रहै॥
मै गुनिवत भूमि पर बेसा। चरन धोई करि पियें नरेसा॥
यह सुनि नृप मदिर मैं जाई। नीच सीस करि सासैं लेही॥
राजा मन मै चिता करही। फिरि फिरि दोस कर्म को देई॥
मैं दिन राति सभा सचारौं। त्यागहुं लच्छ लोभ नहि करौं॥
जो दच्छिन ध्रुव अस्तवै, तस अग्नि सिवराइ।
पश्चिम भान उदै करै, तऊ न कर्म गति जाइ॥
सम दुग भीर होइ जौ थाहा। गगा पश्चिम करैं प्रवाहा॥
पख लागि कै सिला उडाँही। पाहन फोरि कमल विहसाही॥
जौ इतनी विपरीत चलावै। तऊन कर्म सौ छूटन पावैं॥
कर्म हेत हरिचँद जलु भरा। कर्म हेत वलि सर्वसु हारा॥
कर्म हेत पाडव फल खाये। कर्म रेख रघुपति बन आये॥
सोई कर्म मनुष्य मैं, कोटि करावहि भेख।
सो कवि आलम ना मिटै, कठिन कर्म की रेख॥
चित चिता माधव गहि रहा। तब उठि कामकदला कहा॥
कवन सोच सोचहु सग्याना। विद्याधर तुम चतुर सुजाना॥
तुम सुजान जाना गुन मेरा। मै कुछ गुन पहिचानहुं तोरा॥
मधुकर अहि कमलन गुन जानैं। दादुर कहा पीउ पहिचानैं॥
नाच कूद कछु अँध न देखै। रूप कुरूप एक सम लेखैं॥
बहिरौ आगे जो कोऊ, सख बजावै आइ।
वह अपने मन जानहीं, कछु अमृत फल खाइ॥
चलहु विप्र घर बैठहु मेरे। चरन धाई सेवहुं कर जोरै॥
प्रेम कथा कछु मोहि सुनावहु। काम अग्नि की तपनि बुझावहु॥
मैं रोगी तुम वैद गुनानी। सोहि सजीवनि देहु सो आनी॥
काहे गोरिख फिरहि अकेला। अब सँग लाइ करहु मोहि चेला॥
मैं भई धूधल तू सूरज मेरा। तू चदा हौं भई चकोरा॥

तू मधुकर हौं कमलिनी, वैस वास रसलेहि।
मरै बूंदते स्वाति जल, ऐस बूंद भरि देहि।
सुनहु वारि माधौनल कहई। इहि जग नेहुं नहीं थिर रहई॥
जो थिर रहै तो कीजै नेहू। बिछुरि सँताप देह को देही॥
नेह लगाइ जो बिछुरै कोई। निस दिन रोम रोम दुख होई॥
× ऐसो खड्ग की धारा × × ×
× सेज पर बैठहु जाई × × ×
उठि माधौनल बैठे सेजा। देखत काम तजै तन तेजा॥
कुसुम मुकट सिर केसर सोहै निरखत- मकरध्वज मन मोहै॥
उठि फूलन की माल, रतनजतित कुंडल दियै,
मृगमद तिलक सो भाल, कर बीना माधौ गहै॥
कामकंदला कर्‌यो सिंगारा। अरून फूल के पहिरे हारा॥
तापर पहिरि कंचुकी झीनो। सोंधै छिरकि वेल सौ भीनी॥
पुष्प गूंथे वैनी बनवाई। चंचल गात प्रवीन सुहाई॥
दियो लिलाट चंदन को टीका। मध्य बिंदु बिंदुन को नीका॥
दये न लेइ हग ओर करि अंजन। पलौ ओट जनु फरकहि खंजन॥
कुसुंमी सारी पहिरि सुजान, अंग अंग भूषन किये।
सुख भरि खाये पान, दाड़िम दसन बिराजं ही॥
कहै कंदला सुनौ सहेली। मोहि सिखावहु प्रेम पहेली॥
अब लौं मुग्धाहति अलबेली। सिखवहु रसकी रीत सहेली॥
पुरुष संग रचि सेज न जानहुं। प्रथम समागम जिय पहिचानहुं॥
वह सुजान माधवनल आही। सब अँग कोक बखानहु ताही॥
चौदह विद्या कोक बखानै। अंग बास मनमथ की जानै॥
कोक कला हौं ही कहौं, सब विधि अरथ बखानि।
और सिखायहु मोंहि कछु, पूंछहु गुन जन मान॥
कहै सखी सुन हो कँदला। तो तै रस जानै को भला॥
जहां वासु मनमथ को जानौ। तिहि ठौहरि सु निकट जनि आनौ॥
जहा अंग मनमथ रह तहा। छिपन कियौ रहियों पै तहा॥
कोक रीति कंदला सिखाई। माधौनल पै सखी पठाई॥
माधौ निरखि रीझि कै रहा। तिहि छिन आइ मदन तन दहा॥
मदन धनुष सरपंच लै, माधौ सनमुख आइ।
कामकंदला निरखि कै, सरन सरन गुहिराइ॥
मिलि प्रजंक पर जुगल किलोलहिं। वचन चातुरी दोऊ बोलहिं॥
सखी सिखाइ कंदला गई। आवर मंदिर ठाढ़ी भई॥
बैठि कंदला माधव पासा। सूर संग जनु चन्द प्रकासा॥

जोई कछु कोकिल की रीती। तैसिय रीत रची बिपरीती ॥
दोउ कामवत भरि जोबन। सुदर सुघर सुजान बिलच्छन ॥
परसन लालन वै पतन, त्रिया पुरुष सुख लीन।
फुटक बदन उमगे रहैं। भये पचसर हीन ॥
किलकत बोलत लोक कहानी। भयौ भोर प्रगट्यो जु बिहानी ॥
कामकदला परिहरि सेजा। भइ बिहाल तन रह्यौ न तेजा ॥
झलकै पलक उनीदे नैना। अति जम्हुआई आवहिं नहि बैना
कवल प्रवेस भवर जो किया। कोस झकोर सकल रस लिया ॥
सिथिल गात कचुकि पहिरि, बिछुरि माँग लट छूटि।
अधर निरखि औ नख निरखि, गये कचुकि बँध फूटि ॥
पून्यो जोति ज्यों कामकदला। ह्वै प्रगटी परिवा की कला ॥
डोलति चलति मनहुँ मतवारी। पीत वसन मुख भयौ सवारी ॥
सखी आनि छिरकहिं मुख पानी। सुरति रीति औ सब पहिचानी ॥
उरझे बार हारनि न निवारहिं। सब अँग भूषन सखी सुधारहिं ॥
मुख पखारि पुनि पान खवावहि। नखछत मह कुमकुमा लगावहिं ॥
भवँर बास रस लेइ कै, मौंर रहे लपटाइ।
सूर तेज तैं कुमुदनी, रही अतिहिं कुम्हिलाई ॥
बोलहिं सखी चलहु मगु रजन। सरवर जाइ करहिं हम मज्जन ॥
माधव विप्र धाम करि धीरा। गईं सकल सरवर के तीरा ॥
गईं कदला सरवर पासा। चकही जान्यौ चंद्र प्रकासा ॥
चकही बिछुरि गईं भुमि भूली। बाघे कमल कुमुदनी फूली ॥
चक्रवाक उड़ि चले अकासा। अथवा चद सूर परगासा ॥
सखी तरायन सग, कामकदला बिधुवदन।
चकई मन भयो भग। कमल देखि सपुत गह्यौ ॥
तेल सुगन्ध अरगजा कीन्हा। अग उबटना मज्जन कीन्हा ॥
करि मज्जन सब बाहिर आई। चपक बदन सुदेस सुहाई ॥
कहुं कहुं बूँद एक छबि बनी। चपक लता ओस की कनी ॥
सजल ओस अलकै घुँघराली। ऊपर दलति कँदला डारी ॥
अगन बूँद चुवहिं धर जोती। जनहु सुवराम उगिलहिं मोती ॥
कुटिल स्याम चिहुरा घुँघरारे। डालै मधुप जनहु मतवारे ॥
नीर चुवहिं चिहुरा सजल, बदन निरखि छबि माल ॥
मनहु पान मकरद पर, पवन करत अलि जाल ॥
डोलहिं कामकदला बाला। चिहुर चुवहिं मोतिन की माला ॥
निरखत अलक उलटि घुँघरारी। अमृत लगी नागिन ज्यों कारी ॥
कै सावक अलिरस अब डोलहिं। सखी सबहिं उपमा कौं बोलहिं ॥

कुटिल कुटिल दोउ छवि लीन्हें। कहूं रसिक मन प्यासे दीन्हें ॥
सो जेहि फँद्यो सो निकस नहि पारै। जो जिय सकल जन्म पचि हारे ॥
मूलन चिहुर चुवाहि, सखी कहैं कदल सुनहु।
बधन सुरत डराहि, उचे छुट्यौ चिहुरा मजल ॥
सुनि कदला धाम कह चली। नखसिख बरन चंपे की कली ॥
कहैं सखी सो चलै अवासा। माधौनल जनि होइ उदासा ॥
गवनम राज मद की नाईं। छिन एक मॉझ मॅदिर मैं आईं ॥
सखी गईं सब अपने धामा। माधौनल मैं आई बामा ॥
कहै कदला माधौ ठाऊँ। अब सरवर मज्जन नहिं जाउँ ॥
कॅवल देखि सपटु गह्यौ, चकही सग बिछोह।
मो मुख पुरन चद सम, निरखत दुख अति होइ ॥
वह कलक की कला दिखावहि। पून्यो चन्दस सवानहि आवहिं ॥
तू गभीर सहज रस काला। उमता लै ऊपर कै पाला ॥
तव मुख रूप रैन दिन नीको। सूरज होइ देखि कै फीको ॥
रोस बचन जब माधव कहई। भुज भरि कामकदला गहई ॥
बैठि सेज पुनि करहु बिलासा। महकत जेहि ठा सकल सुवासा ॥
मधु कुरल त्रिध्यौ मदनरस, को यै पवन मदनेमु।
नैन प्रान तन मन फस्यौ, छिन न प्रेम कै प्रेम ॥
ऐसे बचन जौ राजा कहई। माधव सुर चेत जिय धरई ॥
पुंछहु कामकदला तोही। अब मैं चलहुँ बिदा दै मोही ॥
राजा बात सुनै मग पावहि। मोहि तोहि लै मार झुकावहि ॥
कहै कदला बूझै नहिं तोही। ऐसे बचन सुनावहु मोही ॥
तोहि चलत मोरे प्रान चलाहीं। पलक ओंठ आँखिनि अकुलाहीं ॥
चलन कहत . है मित्र, सवन सुनत प्रानदि चलहिं।
अति व्याकुल मन चित्त, सजल नैन भरि भरि ढरहिं ॥
तुम सुजान माधव सब जानहु। राज कहे कर बिलग न मानहु ॥
राज सिद्ध धनमद जिहि होई। सकल बीच बस करै जु कोई ॥
कहि माघो सुनि तेरी चिन्ता। राज अपनो होइ न मिता ॥
राजा त्रिया सुनारि, बिटिया रोकष आगि जल।
पाँसा साँपिनि हारि, ए दस होइ न आपने ॥
यह जिय जानि सोचि करि कहौं। दिन दस जाइ और पुर रहौं ॥
यह जग में बिधि कियो सँजोगु। जिहि मिलना तिहि होइ बियोगु ॥
कर्म रेख सों कछु न बसाइ। जो बिधि लिख्यो सो मेटिन जाइ ॥
मिलन बिछोह बिधाता कीन्हा। दमदंती नल को दुख दीन्हा ॥
मिलि बिछुरै जानहिं दुख सोई। बिछुरि मिलन दुहु तन सुख होई ॥

आलम मिलन विछोह, तीछ्ण सकल सँताप ते।
तपत अग जनु लोह, विरह अग्नि इमि पर जरहि॥
बोलहि नारि बचन अन चैनी। माधव रहहु आजु की रैनी॥
ललित कुसुम भरि सेज बिछावहुं। भुज भरि अकम भरि लपटावहु॥
परी साँझ भइ निसि अँधियारी। सखी पहुप भरि सेज सँवारी॥
बहुरि सिंगार कदला कीन्हें। अग अग लै भूखन दीन्हें॥
करि सिँगार माधौ पै आई। जुगल सेज पर बैठे जाई॥
आगम बिरह वियोग, विछुरन मूल जु रहत जिय।
मिलत मैन सजोग, बचन वियोगिनि उच्चरै॥
... ... न कदला कहई। रजनी बीति अल्प है रहई॥
ऐसा कछु कीजै .. ... । बाढै रैनि न होइ सकारा॥
तब माधौ बीना कर लीन्हा। . ... नयननि सुचिलीन्हा॥
सरस बजावहि बीन सुरगा। टिक्यौ चद थकि रहे तुरगा॥
.. . कुलानै। बाढ़ी रैनि न होइ बिहानै॥
स ... , राहुजाइ सूरज गिलहु।
चलन कहत पिय प्रात, रैनि व्है निधि॥
बढी रैनि नहि होइ उँजियारा। तब माधव धरि बीन बिहारा॥
थक्यौ नाद मृग चल्यौ उदासा। अथयों चद सूरज परकासा॥
बीती रजनी पृथ्वी जागी। माधवनल उठि भयौ बिरागी॥
पुनि कामा सो अग्या लेई। आग्या लै मारग पगु देई॥
कहै नारि हौं ही तुम थाहूं। हौं न कहौ माधौनल जाहू॥
रसना पाकौ सोइ, चलन कहत जो मित्र को।
मद द्रिस्टि मति होइ, जो निरखै बिछुरन सजन॥
करि धोती पोथी करि बाँधै। उठ्यो विप्र बीना धरि काँधै॥
गहि रही कामकदला बाही। हौ तोहि जान देउ जो नाहीं॥
कहति काम ये मीत बताउ। कै जु चले मन मोर लुभाउ॥
अहो मीत सज्जन परदेसी। विद्याधर मनमोहन वेसी॥
मारि कहा रिनि मेटौं दाहू। ता पाछे तुम पर भुमि जाहू॥
नैन झरत जिमि मेह, गरव देह भीजत सकल।
बिछुरत नयौ सनेह, मन ब्याकुल तन थकित भय॥
कहै त्रिया पूजै आस तिहारी। कर अजुल सुदि दीजौ वारी॥
प्राननाथ अब क्यो इच्छा आवै। ताके आसू भरि भरि आवै॥
रति गति मति लै गवनहु मोरी। लै सुखु दै दुखु सबहु जोरी॥
नेहु नाव तवगुन करि लीना। छाँडि वियोग समुद महँ दीना॥
बिन गुन नाउ लगहि नहिं तीरा। करि हा हीन झकोरहि नीरा॥

नैन समुद तारंग, प्रीतम विनु उमगे फिरहिं।
बिनु गुन वोहित अग, बूडहि सो त्रिय कंत बिन ॥
तजि समीप जिनि करहु बियोगिनि। तुम बिछुरत ह्वैहौं हम जोगिन ॥
कथा पहिरि जटा सिर केसा। घर घर फिरहु तपस्विनि भेसा ॥
मुद्रा पहिरि भस्म सिर लाऊ। मुख माधौ माधौ गुहिराऊं ॥
किंगरिय गहि दिन रैन बजैहौं। जोगिनि ह्वै माधौ गुन गैहौं ॥
घर घर वन वन ढूढौं तोही। सो कछु करौ मिलौ जो मोही ॥
खंड खंड तीरथ करौं, कासी करवत लेहुं।
मन रच्छ्या करि मरि जियौं, ढूढि मित्र को लेउ ॥
जिन दै जाहु बिरह के हाथा। पाइन परहु लेहु मुहि साथा ॥
ये हो मीत पडित पइडोही। बाट मॅझ जिनि छाड़हु मोही ॥
मोहिं मारि जाहु पिय नाहा। छोंड़हु मान न छाडहु बाँहा ॥
चद विलोकत सकल चकोरा। चकवी सती होई जो भोरा ॥
नैन सकल निरखत भावता। जिय दूखत सुनि बिछुरि भवता ॥
आलम प्रीतम के मिले, अग अंग सुख होइ।
पलक ओट जग लाज तैं, रहौं सकल सुख होइ ॥
कहै नारि सुनि विप्र उदासी। मेरे गृह जो करहु निवासी ॥
जिहि मुख सुखद बचन सुनावहु। तेहि मुख काहे चलन कहावहु ॥
माधो नैन नीर भरि आये। कामकदला बचन सुनाये ॥
बोलै विप्र नैन बरसाहीं। सुनहुं नारिय छॉडहु बाहीं ॥
तव मुख निरखि नैन सुख पाऊं। बिछुरि जानि कै वहि मरि जाहुं ॥
भावता के बिछुरनै, नैन उमगि जल धार।
मन अधीर तन पीर अति, बिरह उदेग अपार ॥

माधव-कामकंदलावियोग

सखी आइ कर बाह छुड़ाई। चल्यो विप्र त्रिय गई मुरझाई ॥
काम मूर्छित धरनि मह परी। सखी आइ करि अकन भरी ॥
लै करि सखी सेज पर धाई। तन व्याकुल जनु मिरगी आई ॥
अधर सूक जिय रहे निरासा। सखि जीवन की छाड़ी आसा ॥
मूदि नासिका छिरकहिं पानी। पुहुप मूरि औषध बहु आनी ॥
करि उपचार सखी थकी, रहीं बिसूरि बिसूरि।
बिरह भुवगम वा डॅसी, ताकौ मत्र न मूरि ॥
पुनि इकु मत्र सखी मिलि थापहिं। कान लागि माधवनल जापहि ॥
माधौ माधौ उहिं गुहिरावौ। जागि नारि विप्र जनु आयौ ॥
सुनत नाउ जब नैन उघारे। श्रवन नैन जल मानहु नारे ॥
सूनौं भवन देखि बिनु मित्रा। भई पीत तन व्यापी चिंता ॥
बिन कॉदव जिमि कमल सुखाई। बिना सूर्ज ज्यों तेज मुरझाई ॥
जैसे जल स्यौं मीन, घरी एक ज्यों बिछुरई ॥
सदा रहै तन छीन, छिन ही छिन दुख संचरै ॥
यह हिय वज्र वज तैं गाढा। पाल्यौ वज्र वज्र मैं बाढ़ा ॥
जा दिन मीत बिछोहा भयऊ। तॅवकि निखड खड है गयऊ ॥
बिछुरन जस भा ताल तरकै। पापी हियौ नेक नहिं फरकै ॥
ऐसे निलज रहत नहि प्राना। मीत बिछोह सुनत किमि काना ॥
गये न प्रान मीत के सगा। ऐसे निलज रहत गहि अगा ॥
आलम मीत विदेसिया, लै गयो सपति सुष्ष।
नैन प्रान तन बिरह बसि, रहे सहन को दुष्ष ॥
गयो विप्र चित्त उचाटउ। अब कह पाऊ मीत बतावउ ॥
तीन्या अपने होई न कोई। छिन इक बिछुरै नैन दुख होई ॥
चदन जान नहिं पीर, तादिन भरहिं चकोर दुख।
व्याकुल रहै सरीर, निसि ॲधियारी सीस धुनि ॥
तजि सनेह हम धौन लगायौ। कामकदला बहु दुख भयौं ॥
दिन बीतै रजनी ज्यों आवै। भरै नैन जल पलु न लगावै ॥
खिन माधौ माधौ गुहिरावै। खिन भीतर खिन बाहिर आवै ॥
बिरह ताप निसि सेजन सावै। कर मीजै सिर धुनि धुनि रोवै ॥
ऐसे दुख करि रैन बिहावै। कोटि जतन बासर नहि पावै ॥

जो दिन होइ तो निसि रटै, जो निसि होइ तो प्रात ॥
भा दिन सातिन रैनि सुख, बिरह सतावत गात ॥
कामवत बिरहा बसि भई। बिद्याबुद्धि सकल नसि गई ॥
नृत्य गीत गुन की चतुराई। गति मति आनि बिरह चौराई ॥
जिहि तन मन बिरहा सचरै। सो जिउ जीवै नहि पुनि मरै ॥
बिरह अनल सोइ लै सुख जारइ। रोम रोम वेदनि सचरई ॥
पाउ हर्ष सुख रहै न कोइ। जिहि सरीर बिरहानल होइ ॥

बुधि बिद्या गुन ग्यान, प्रेम चाव धुनि हर्ष वल।
सब तजि होइ अयान जा घट बिरहा सचरै ॥

कामकदला भई बियोगिनि। दुर्बल जनू बर्स की रोगिनि ॥
अजन मजन भोग बिसारे। सजल नैन बहैं जल के नारे ॥
बस्त्र मलीन सीस नहिं धोवे। लक टेक माधौ मग जोवै ॥
नींद न भूख न भावै पानी। काया छीन दीन मुख बानी ॥
हा हा आह स्वास के गाढ़े। छिन छिन बिरह अनल तन बाढ़ै ॥

हा हा प्रान न संग गय, जब बिछुरे भावत।
कर मीजै बस्तर धुनै, गहै अँगुरिया दत ॥

पलक वाह नहि रहहि नियारे। मगन भये नैन के तारे ॥
माधौ पीर कदलहि ब्यापी। मनमथ अग तपति त्रिय तापी॥
तोरै तनु मनु डारै रहही। हृदै पीर नहिं का है कहही ॥
छिन अचेत छिन चेतहि आवहि। पुनि पुनि बिरह बिथा तन तावहि ॥
स्वास लेत पिंजर ज्यों डोलहि। हाहा सजनी मुख नहि खोलहि ॥

रकत न रहै सरीर, पीत पत्र के बरन तन।
डोलत अतिहि अधीर, पवन तेज नहिं सहि सकत ॥

सखी आनि मुख नीर चुवाहीं। हिदै तपत घसि चदन लगावहिं.
कुसुम सेज पर जो पगु धरई। तिहि छिन काम अग्नि पर जरई ॥
त्रिविध पवन त्रिय सहै न पारै। चदन चंद अधिक तन जारैं ॥
पीक मधुर धुनि बोल सुनावै। मदन घाउ पर जनु बिष लावै ॥
गीत नाद रस कवित कहानी। श्रवन सुनत ये बिष सम बानी ॥

अकुलाई तन बिरह के, रस सँजोग रसलीन।
ते सब काम बियोगि, निसि बासर दुख दीन ॥

माधव विरह वर्णन

बिछुरे कामकदला नारी। माधौनल मन भय दुख भारी ॥
विरह के साँस जु हिरदैं बाढ़ैं। गहि गहि आहि आहि कै काढ़ैं ॥
बन बन फिरै नैन जल धोवै। विरह सँताप नींद नहिं सोवै ॥
छिन बैरागी बीनु बजावै। सूखे गात अगिनि जनु लावै ॥
मन चिंता करि त्रिया वियोगी। गोरख ध्यान रहे जिमि जोगी ॥
अगम अथाह अलेख अति, विरह समुद्र अगाध।
प्रीति हिरानी बुद्धि जनु, भूले ब्रह्म समाध ॥
विरह समुद्र अगम अति आही। बूड़ि मरै नहिं पावै थाही ॥
बुधि बल स्यै कोउ पार न पावै। जौ नर सप्रेंग गुन चाढ़ धावै ॥
विरह डसत नर जिऐ न कोई। जो जीवहिं तौ बौरा होई ॥
विरह चिनग जिहि तन पर जारैं। छिन छिन विरह अगिनि विस्तारैं ॥
सोइ अगिनि माधौनल लागी। बीनु बजाइ रहे बैरागी ॥
हिऐं हूक भरि नैनजल, विरह अनल अति हूम।
अंतर घर सवर बरै, स्वास प्रगट भइ धूम ॥
जिय बिनु सूक पत्र ज्यौं डोलै। सूल सहित माधौनल बोलैं ॥
निसि दिन विप्र पीर करि रोवहि। बन पछी निसि नींद न सोवहि ॥
बाघ सिंह कोइ निकट न आवहिं। चहुं दिस विरह अग्नि अति धावहिं ॥
विरहो नैन सजल मुख भरे। सीतल होत तपत जिहि हरे ॥
स्वासा वेग नैन भरि पानी। सानल गत विरहा की जानी ॥
वस्त्र मलीन उदास तन, उभय स्वास बहु लेइ।
नींदं भूख लज्जा तजै, विरही लच्छन एइ ॥
माधौ नैन रहे भरि आँसू। सूखो चर्म रुधिर अरु माँसू ॥
तब माधौ मन माहिं विचारहि। विरह बासु मन आपु सँभारहि ॥
अहो बन विरह जोर मरि जाँहू। कामकंदलहि हौं न मिलाऊ ॥
अब खोजहु कोउ जग उपकारी। मिलवहि मोहि कंदला नारी ॥
ढूँढौ पर वेदनि जिहि होई। दुखखडन नर जो कहूं होई ॥
लच्छ दैन सकट हरन, जीवन प्रन मति धीर।
तिहि के कलि उत्तम करम, ते खडहिं पर पीर ॥

विक्रम सहायता खंड

यहै मत्र माधवनल लागा। बल सँभारि कन तजि मग लागा ॥
कोइ न भयउ कलि त्रिया वियोगी। माधौनल जो भरथरि जोगी ॥
जग्य विचारि माधौनल कहै। चल्यौ जहाँ नृप विक्रम रहै ॥
पर दुख हरन दसौ दिसि दैनी। सुनियतु विक्रम नग्र उजैनी ॥

सुख सगति बहु करत है, जो मन उत्तम होइ।
पर दुख खडन तौ गनै, नेह दान सुहि देइ ॥

काम के बस माधौनल चला। किहि विधि मिलै कामकदला ॥
बीना विरह साथ जो लीन्हे। नींद भूख प्यास बस कीन्हें ॥
मारग चलें सकल दुख लैनै। पहुँच्यौ जाइ नगर उज्जैनै ॥
धर्मपुरी सब नगर सुहावा। हाट पटन बहु देखि बनावा ॥
चहुँ दिसि नगर बाग फुलवारी। ताल कूप सलिता बहु भारी ॥

कनक खचित मनि मदिरनि, कलस धुजा फुहराति।
राव रक नहिं चीन्हिए, पूरन पुर जिहि भाँति ॥

अति वियोग माधौ कौ भयऊ। ततखिन चलि मदिर में गयऊ ॥
पुनि पुनि हाट पटन फिरि देखै। आनद पुरी बराबरि लेखै ॥
छत्तिस पुरी नगर बैपारी। बैठे हाट महाजन भारी ॥
कहूँ नाच कहुँ पेखन होई। कहूँ पवारा गावत कोई ॥
कहुँ रामायन भारथ होई। कहुँ गीता कहुँ भागवत होई ॥

कहुँ पंडित द्वै सहस हैं, कहूं करहिं कवि बाद।
कहूँ मल्ल विह्वल भिरहिं, कहूँ गीत कहुँ नाद ॥

अति उदास माधौनल भयऊ। तब राजा के मदिल गयऊ ॥
राजमँदिर मनिगन उँजियारा। कै विधना कैलास सुधारा ॥
द्वारैं पडित तापस ज्ञानी। देस देस के भूपति जानी ॥
द्वार भीर नरपति कैं होई। नैकु जुहारु न पावहि कोई ॥
देखि विप्र मन भयउ उदासा। राज भैंट की तजि जिय आसा ॥

दिन उदास दहुं दिसि फिरहि, नैन दृगन के नीर।
ऐक न काहू सौं कहै, अतर गति की पीर ॥

दिवस व्याधि माधौ कौं लागी। मन महँ कामकदला जागी ॥
विप्र एक सग करि लीन्हा। करि अहार माधौ मो दीन्हा ॥
करि अहारु माधौनल गयौ। नदी तीरक उदक जो भयौ ॥

हाटक यह धारे सकल, भरहि वारि पनिहारि।
येक नारि मज्जन करहि, अग मलाइ सुधारि॥
कनक कलस भरि सबरी नारी। घरि घरि सीस चलहि ते वारी॥
मारग छाँडि चलहि ते नारी। तोरहि फल औ फूल उपहारी॥
येकै चलैं घूँघट पट डारैं। चदन वदन तप अगारै॥
लखि चरित्र माधौ मुख फेरा। दुख व्यापौ तहँ कामा केरा॥
निसु दिन रहै तहा चितु लाई। पाहन रेख न मेटी जाई॥
द्रग पूरन की तारिका, मूरति रही समाइ।
जित देखौ तित सो त्रिया, पलक न इत उत जाइ॥
दिन इक माधौ गयौ सुजाना। मडप महादेव कौ जाना॥
मडप देखि भेख मन भावै। तहा राइ विक्रम नित आवै॥
तिहि मडप माधौनल गयौ। विरह ताप व्याकुल मनु भयौ॥
जामैं विरह व्यापै सोइ जानै। अन जानत मुख कहा वखानै॥
मन उदास माधौनल भयऊ। दोहा लिखि मदिर महँ गयऊ॥
कहा करौं कित जाऊँ हौं, राजा रामु न आहि।
सिय वियोग सताप बस, राघौ जानत ताहि॥
रामचद्र नहिं जग महँ आहीं। सिया वियोग किधौं दुख जाहीं॥
राजा नल पृथिवी सौं गयऊ। जिहि बिछोह दमयती भयऊ॥
वनवासी अरु भेद सँजोगी। राजा फूहर वाचर भोगी॥
बिछुरत त्रिया भयउ सो जोगी। भरत राज पिंगला वियोगी॥
राजा रतनसेनि नहि भयऊ। पदमावति लगि सिंघल गयऊ॥
मधुकर कमलहि आहि, कोजि मालती वियोगु।
ये सब गये जगत्र मैं, विरही करि करि जोगु॥
दोहा लिखि माधौ वैरागी। गयौ नगर कामा अनुरागी॥
तिहि मडप राजा पगु धरई। महादेव की पूजा करई॥
पूजा करि प्रदच्छिना देई। राज द्दष्टि दोहा पर गई॥
दोहा बाँचि राज यह कहई। विरह अग्नि किहि व्यापति अहई॥
मोरैं पुर विरही कोउ आवा। विरह वियोग सताप सतावा॥
आलम ते नर तुच्छ मति। जे पर हँथ मनु देहिं।
सुख संपति लज्या तजैं, दुख विरहा सोइ लैंहि॥
राजा कहै सुनौ सब कोई। देखहु नर विरही सो होई॥
मोरे नग्र दुखी जो रहई। सकवसी मोसौं को कहई॥
अन्न जो सों विरही नर पाउ। सुनि वेदनि सब तुरत नसाउ॥
कोइ वह पुरुष ढूँढ़ि सो ल्यावइ। राजा कहै बच्छि सो पावइ॥

दुख खडन नृप दयानिधि, तन पीरे पर पीर ।
पुनि पुनि चितचिता करहि, यह विक्रम मति धीर ॥
राजा अन्न पान नहि भावहि । मन वच जब लग जो नहिं आवहि ॥
नर नारी सब ढूँढ़न धाई । विरही लच्छिन सकल बुझाई ॥
ढूँढ़हि हाट पटन फुलवारी । ढूँढ़त बन महँ झूलत बारी ॥
ज्ञानवती दूती इक आई । विरह वियोग खेल सब रहई ॥
सो चलि जिहि मंडप मह जाई । माधौनल ता छन गया आई ॥
तन दुर्बल अखियाँ सजल, भरि भरि लेत उसास ।
चित उचात मन चटपटी विरह उदोग उदास ॥
मन उचाट छिन बीन बजावहि । जोरे सुनहिं तिहिं विरह सतावहि ॥
खिन खिन कामकदला रटई । स्वाति बूद को चातक चहई ॥
ज्ञानवती त्रिय सुनि मुख बानी । मन मह कही यहै सुग्यानी ॥
विरही पुरुष आइ यह सोई । जाकर दुखु राजा कों होई ॥
कामकदला त्रिया वियोगी । तन मन छीन भयो सो जोगी ॥
मन मारे बस्तर मलिन, द्रग भरि ऊँचे साँस ।
तन दुर्बल पिजर झलक, रचक रकत न मास ॥
ज्ञानवती छिन इक कहि बानी । सखी बीन दस आनि तुलानी ॥
कहै सखी सौ सो यह वह आही । नरनारी ढूँढत सब जाही ॥
अब लै चलहु बेगि गहि बाहीं । सखु पावइ विक्रम नर नाही ॥
पूछहि बात न नल मुख बोलहि । दुर्बल गात पवन ज्यौं डोलहिं ॥
जो कछु बोलहि उत्तर नहि देई । नीचे नैन स्वास भरि लेई ॥
रहै ताहि को ध्यानु, मन माला हित मत्र जपि ।
ज्यों जोगी करि ज्ञान, स्रवन सुनत नवगति मुखहि ॥
बोलहि सखी सुनहु बैरागी । विरह ताप सुख सपति त्यागी ।
बोलहु बचन पीर सब कहहू । काहे दीन छीन तन रहहू ॥
ताकी सप्ति मानि मन बोलौ । जिहि वियोग विरहा बस डोलौ ॥
छिन एक बचन कहै छिन रोवहि । नीरज नैन कमल मुख धोवहि ॥
दुख को बात दुखिया कहै, दुख बेदनि सुख त्यागि ।
दुख समुद्र सोइ परयो जो, रहयो अग दुख लागि ॥
विछुरत कामकदला नारी । माधौनलहि भयौ दुख भारी ॥
पुनि मुख कहै विरह की रीती । अपनी कामकदला प्रीती ॥
अति उचाट मुख विरह बखानै । जिहि यह व्याप्यौ सोई जानै ॥
माधौ पीर सखी कौ व्यापी । विरही बात सखी सब थापी ॥
सुनत बचन त्रिय अग पसीज्यौ । नैननीर कचुकि तन भीज्यौ ॥

हौं बलि बलि जिहिं जीव, पर बेदनि जिहि बेधियौ ॥
धृक ते पाहन हीय, नीदन भिदहिं पषान मैं ॥
बोलहि ज्ञानवती गुन नारी। चलहु विप्र अब नगर मँझारी ॥
हम राजा विक्रम की दासी। तुम बेदनि मन माहिं उदासी ॥
हम पठई राजा तुम पासा। चलहु वेगि मन पूजै आसा ॥
चल्यौ विप्र माधौ उहि संगा। त्रिय वियोग तनु रह्यौ न अंगा ॥
जहं चक्कवी हतौ नरेसा। राजा मंदिर कियौ प्रवेसा ॥
ज्ञानवती इमि उच्चरहि, सो विरही है आइ।
विप्र देखि राजा उठ्यौ, कीन्हौं आदर भाउ ॥
राजा बरन देखि कै कहै। नख सिख विरह अनल तनु दहै ॥
मूरति नयन रोइ जल धारै। कुंदन देह नेह बस मारैं ॥
पूछहिं राइ सुनहु द्विज देवा। अज्ञा होइ करहुँ सो सेवा ॥
कवन देस जासौं पग धारे। दरसन देख्यौ भाग हमारे ॥
अपनो नाँउ कहौ वैरागी। किहि के नेह फिरहु सुख त्यागी ॥
किहि कारन भये विरह बस, दुख सँग फिरहु उदास।
कहौ बिथा हिय पीर सम, विधि पुजहिं सब आस ॥
राजा मो माधवनल नामा। उत्तम संग करहुं बिस्रामा ॥
विद्या पढ़ेउं करन संगीता। समुद्रिक जोतिक गुन गीता ॥
काव्य कोक आगमहि बखानहुं। पिंगल पढ़ेउं सकल गुन जानहुं ॥
कर मृदंग गति बीन बजाऊँ। षट रस राग रागिनि सँग गाऊं ॥
नृत्य चतुर्गन भेद बिनानी। केलि चातुरी उकति कहानी ॥
पसु भाषा औ जल्ल तरन, धातु रसाइन जानु।
रतन परख औ चातुरी, सकल अंग सग्यानु ॥
पुहुपावति नगरी मों ठाऊं। गोविंद चंद राज को नाऊ ॥
कर्म रेख सन विर्गहु भयऊ। तिहिं मोहिं देस निकारौ दयऊ ॥
तब मैं आन उदास मनु कीन्हा। कामावति नगरी पगु दीन्हा ॥
कामसैनि राजा तहँ आही। सुरनर सकल सराहैं ताहीं ॥
तिहि पुर कामकदला नारी। रूप राग विद्या दस चारी ॥
नैन लगे तिहि रूप, तनि सुनबुधि बल चातुरी।
ज्यौं दादुर बस कूप, निकसत परहि जु विरह बस ॥
जा दिन मोर जन्म जग भयऊ। चित परि जहां ब्रह्म लिखि गयऊ ॥
सो त्रिय निरख न बिसरहिं काहू। चित कर ध्यान रहैं द्रिग वाहू ॥
अंपन रही ते अंपन लागीं। जिहि निरखत सुख सँपति त्यागी ॥
अनुपम रूप विधाता दीन्हा। आँखिनि निरखि जीउ हरि लीन्हा ॥
जिय बिनु सदा रहैं नहि आसा। हिरदै नाहिं जु कियौ निवासा ॥

माधवंता के मिलन कौं, हा हा पंख न कीन।
नैन तपत हैं दरस कौं, तन परसन कौ जीय॥
पंडित गुनी सकल बुधि ग्यानी। देखि विप्र मुख रह्यौ बिनानी॥
राजा देखि अचंभौ रहई। कुछनक उतर माधव कहं देई॥
हौं पंडित तुम जग्त गुसांई। सद गुन पूरन काम की नाहीं॥
तुम देखत त्रिभुवन बस होई। तुम ही वश्य करहि जो कोई॥
यह मन मानिक बस करन, वाति अंत लै देहु।
बिरह बस्त सुख त्यागि कै, दुख वियोग सब लेहु॥
सुनि राजा माधौनल कहई। यह मनु जौ अपनै बस रहई॥
नैन बसीठ डीठ अति आँहीं। आपहि मनु दै फिर अकुलाहीं॥
निरखत नैन कंदला नारी। लाग्यो मनु दीन्हौं तनु डारी॥
तिहि बिछुरत ष्पन अंबु न भावहि। छिन छिन प्रेम अधिक मन आवहि॥
मिश्र वियोग बिरह दुख होई। जिहि दुख रहै जानै पै सोई॥
बिछुरत ऐस वियोगु, स्वास उर्द्धसी लैं रहै।
अब विधि करत संजोगु, नातर प्रान विमुक्त है॥
राजा कहै सुनहु गुनरासी। गनिका सौं नहिं प्रीति गनासी॥
राजा पूछहि विप्र सुजाना। कहियौ उदासी पुनि ग्याना॥
जब लगि माडो की नहिं रंती। तब लौहौं गनिका सौं प्रीति॥
गनिका प्रीति न सदा चलाई। धन सौं प्रीत बिन धन चलि जाई॥
केलि फूल दासी कौ हेतू। रूप रंग अतरगति सेतू॥
नैन अनन नैना अनत, अनतै चित्र निवास।
जनि पातर परतीत करि, बिस्वा बिनु बिस्वास॥
बालहिं विप्र सुनहु नर भारी। आँखिन बीच सुदेखेहु नारी॥
जो जेहि राता सो तिहि भावहि। तेहि बिनु सून द्रिस्टि जगु आवहि॥
जो जाके मन माह बसाई। तजि चंदन कालहि गज पाई॥
सत समुद्र सलिता जलु बहई। चातक स्वाति बूंद कौं चहई॥
तारा गगन भरे दुति मंदा। दुखित चकोर रहै बिनु चंदा॥
जो जिहि राता होइ, निसि बासर सो मन बसहि।
ता बिनु जियै न कोइ, बिछुरत इर जल मीन ज्यौं॥
जो चाहौ सो हम पर लेहू। तजौ विप्र गनिका सौं नेहू॥
हौं तो तजौं नेह कर घरई। यह मन जौं अपनै बस होई॥
गुन धन जीव कंदला लीन्हां। दुदं उदेग मोहि कर दीन्हां॥
रकत मांस कछु रह्यो न चीन्हां। आँसू रुधिर हिर्दै करि लीन्हा॥
जब लगि जीवहुं मरि जियहुँ, सुर्ग नर्क बिस्राम।
तब लगि रटौं विहंग ज्यौं, काम कंदला नाम॥

सो मतिहीन वज्र तनु होई। सम्रह नेहु न जीवै कोई॥
पूरब जन्म कोटि जौ करई। तब सो नैकु पथ पगु धरई॥
मानुस पसु अतरु यह अहई। मानव सोइ नेहु जो वहई॥
ब्रह्म ग्यान पावै पुनि सोई। जिहि तन तेज नेह कौ होई॥
अध कूप बरि देहु, गुप्त प्रगट कोइ नहि लखहि॥
जानै दीपक नेहु, तब सब देखैं रूप गुन॥
माधौ बचन सुनै जो कोई। सकल सभा को आवै रोई॥
जो रे सुनै सो देखन धावै। जो देखै तेहि विरह सतावै॥
नारि बैठहीं है इक सगा। करैं बात तब दहैं अनगा॥
नगर एक आयौ बैरागी। अति सुदर रस जान सुखत्यागी॥
प्रेम नैम करि रैन दिन, अग चढायौ राखि।
सुनि धुनि सोई सीत कौं, दुदं बिरह अस भाव॥
एक समै विक्रम नर नाहा। गहि लीनी माधव नल बाहा॥
विप्र सग लै धाम सिधारा। दीप मसाल मनिगन उजियारा॥
मदिर जोति मानौ कविलासा। चदन मिली अनूपम बासा॥
कनक भूमि पाटवर बासी। कुकुम छिरकत केसरिरासी॥
तिहिं मदिर सिंहासन छाजा। तिहि पर बैठि विप्र अरु राजा॥
कवित नाद गुन चातुरी, अर्थ ज्ञान सिंगार।
जो राजा मुखउच्चरहि, सो माधौ करै विचार॥
जो बूझै विद्या नर नाहा। सो सपूरन माधौ माहा॥
तब राजा उठि चरन पखारे। अहो विप्र तुम ईस हमारे॥
माँगहु मन इच्छा जो होई। अर्थ द्रव्य हम पुजवहिं सोई॥
मागो यहई बात सुनि लीजै। मो कह कामकदला दीजै॥
जिहि कारन हम तन मन खोदब। रकत धार निसि बासर रोयब॥
वेगि देहु करतार, बिव अँखियन पुनि पख वलु।
उड़ि देखौं इक बार, भावता के दरस कौ॥
राजा कहै सुनु विप्र गुसाईं। दिन दस रहौ नलन की नाहीं॥
दल पैदल सैना सँग लेऊ। लै तुहि कामकंदला देऊ॥
बर बर बूझि जीति मुह मागैं। राजा बाधि देउ तुहि आग॥
दिवस दिवस राजा बौरावहि। माँगि विप्र इहिंठा चित लावहि॥
यह मन दियौ प्रेम चित मोहा। रह्यो लागि चुबक जनु लोहा॥
मोहन मूरति चित्र लखि, चित पर धरी सुधारि।
सो पलु भूलै महि कहू, जो बीतैं जुग चारि॥
विप्र सग विक्रम नल भारी। गयौ सग लै भूमि सँवारी॥
अभव गुनी आये बहुभारी। राजा करहिं विप्र मनुहारी॥

ताल पखावज बोलि मँगाये। गाइन गुनी कपरिया आये॥
कमल बदन मृग नैन सुहाई। पातुर बीच काछिके आई॥
मध्य छीन औ भूखन सोहैं। नैन निकट करि सब मन मोहैं॥
एक भूमि बैहारिये, दामिनि ज्यों छिपि जाइ।
पुष्प लता जिमि पायन, धुनि अति चंचल फहराइ॥
नर बिक्रम औ विप्र उदासा। देखहु नैन करहु मन हासा॥
करन कपोल विषै धरि हाथा। नैना भरि नीचै करिमाथा॥
बोला राउ नैन कत भरहू। देखौ नाचर हस जिय करहू॥
मैं माग्यौ कित साबक साजू। देखौ विप्र नृत्य तुम आजू॥
माधौनल आगु करि लीन्हा। जिहि जहँ नेह पसारा कीन्हा॥
धनि विक्रम सक बधिया, पर दुख हरन नरेस।
विप्र काज कौ उठि चल्यौ, छाँडि धाम धन देस॥



कंदलाप्रेम-परीक्षा खंड

जोजन दस नगरी जब रही । राजा सींव आनि पुनि गही ॥
राजा मन्त्र एक जिय धरैं । इक रन बीच सैन दुइ करैं ॥
सँग खवास राजा असवारा । आयो नग्र लगी नहि बारा ॥
जाके नग्र विप्र हैं दुखी । सो त्रिय देखहु सुखी कि दुखी ॥

राजा पूछैं नग्र मैं, कामकदला नाम ।
कहियत गुनी विचित्र हैं, सो किहि दिसि ताको धाम ॥

मदिर पूछि सो लियौ नरेसा । उत्तर पौरि महँ कियौ प्रवेसा ॥
भीतर मदिर पौरिया जाई । कामकदला बात जनाई ॥
उत्तम पुरिष पौरि इक आया । राजबस कोइ रूप दिखावा ॥
सुनि कै दासी पौरहि आई । राइ मँदिर लै गई लिवाई ॥
चित्रसार राजा बैसारा । बहुत दीप दीपक उजियारा ॥

कामकदला बिरहवसि, वस्तर गात मलीन ।
मुख माधौ माधौ रटै, होइ सो छिन छिन छीन ॥

नृत्य गीत विद्या चतुराइ । गई बिसरि गुन की अतुराई ॥
बदन मलीन पीत रँग भयऊ । रकत माँस सूखि सब गयऊ ॥
राजा बोलहि मीठे बैना । बिरहिनि नारि न जोरहि नैना ॥
राजा बोलहि उत्तर नहि देई । बरुनी छूटि नैन भरि लेई ॥

गनिका गृध सौं काज, ऊँच नीच चीन्हैं नहीं ।
बोलहिं बचन जे लाज, बस करि राखैं पर पुरिष ॥

ऐसे बचन ना कहौं भुवाला । बिरह बसी जनु खाई काला ॥
सुनु विप्रहिं दषिन करि दीन्हा । देषत ताहि नैन हरि लीन्हा ॥
देखौं ताहि जौरे मन माई । तिहिं देखत दोउ नैन सिराई ॥
मन धन जीउ विप्र लै गयऊ । तिहि बिनु सून द्रिस्टि जग भयऊ ॥
सो प्रीतम दै गयौ ठगौरी । तजि गुन रूप भई हौं बौरी ॥

जेहि मारग प्रीतम गये, नैन गये तेहि मग्ग ।
दै दूनौ दुखु बिरकौ, करि सूनौ सब जग्ग ॥

तब बल पग परसै बरनारी । रोसवत कीन्हौं सुख वारी ॥
कहै कदला सुनु नृप भारी । जक्त पूज्य तुहि लाज हमारी ॥
ज्यों हिय माँझ गुप्त जिउ रहई । त्यों द्विज रहै सदा सुख दाई ॥
दुज मन माहि निवास जो कीन्हा । बोलनि तजि रसना हरि लीन्हा ॥

आलम प्रान पयान अब, करत हिए अन आस।
निसि वासर द्रग तारका, प्रीतम कियो निवास॥
राजा बूझि देखु इमि बाता। यह वेहि राती वह एहि राता॥
इहि के विरह विप्र दुख लीना। विप्र के विरह त्रिया तन छीना॥
दुहुं की प्रीत रहीं दुहु छाई। दोऊ मन तन रहे भुलाई॥
इन मैं अधिक विरह कौ टीका। जिमि आखिनि कौ मारग नीका॥
ज्यौं सरवर मह कमल रहाई। बिछुरत नींद रहै कुम्हिलाई॥
मालति लुवधी अलिरसहि, अलि मालति मकरद।
विछुरन विरहा सूल सम, दही विरह के द्वद॥
नर के प्रान नारि के सगहिं। नारि के प्रान पुरिष के सगहिं॥
राजा निरखि रीझि मन माहीं। इन महँ प्रीति कपट कछु नाहीं॥
इहि जिय प्रीति रीति कौ गहई। त्रिया विरह लगि अति दुख दहई॥
चाहौं नैन नींद नहि आवहि। दुहु तन अन्न पान नहिं खावहिं॥
ब्रह्म लोक अमीरस जानहु। गुन गधर्वहि प्रीति वखानहु॥
आलम ऐसी प्रीत, परतन मन दीजे धाई।
गुप्त प्रगट अंखिया मिलैं, दियौ कपट पट जाइ॥
राजा निरखि वियोगिनि नारी। पूछहि गुरुजन सखी हँकारी॥
किहि लगि इहि की सुधि बुधि गई। किहि के हेत नेह बस भई॥
कहै सखी सब कामिनि पीरा। सुनत नैन भरि आवहि नीरा॥
विप्र एक माधौनल नामा। तिहि के विरह यहि यह कामा॥
सो प्रीतम दै गयउ ठगौरी। तन मन लाइ प्रेम की डौरी॥
यह पपीह पिउ पिउ करै, छिनु अचेत छिनु चेत।
औरन सुख विरहा अनल, भयौ बरन तन सेत॥
रूपवंत अति काम के भेसा। सो दुज छाडि गयौ परदेसा॥
कैधो चहइ इंदु ठगि गयऊ। कैधौं बरस मदन कौं भयऊ॥
मोहन रूप विप्र वह आवा। नैन लगाइ तिहि मन बौरावा॥
ताकि चाह कोइ नहि कहई। तिहि बिनु त्रिया विरह बस भई॥
अन्न नीर एहि नींदन आवहि। दिन उदेग निसि रोइ गवावहि॥
मित्र वियोगिनि नारि, धारावरि सहि नैन जल।
रही रोइ पचि हारि, तन तन दुद उदेग करि॥
कपट बचन राजा उचरई। दुहुं की प्रीति रीझि कैं रहई॥
मैं देख्यौ माधौनल जोगी। पुर उजैन रह त्रिया वियोगी॥
नारि वियोगु ताहि दुख भयऊ। विरह के सूल विप्र मरि गयऊ॥
ऐसे बचन जब राज सुनाए। त्रिया बचन कहँ जम उठि धाए॥
सुनत कदला विस भरि गयऊ। धरनि पछार खाइ मरि गयऊ॥

आलम मीत वियोग को, सबद परयौ जब कान।
लोभ न कीनो स्वास कौ, गए आहि सँग प्रान॥
सुनत पिंगला जैसो कीन्हा। ऐसे जीउ कदला दीन्हा॥
सखी आनि करि नारी रिखाई। मानहु काल बासुकी खाई॥
बैठे दसन जीभ भइकारी। किलकै नहि छुटि गइ जब नारी॥
रोवै सखी छोरि कै केसा। राजा जिय मह करहि अँदेसा॥
जिहि लगि विप्र इतो दुख लीना। सो त्रिय बचन कहत जिय दीना॥
अति वियोग मालति सुनत, सूखे पल्लव मूल।
दुखित साल भये कलित बल, कलह सकत त्रिय सूल॥
गये प्रान छिन में मरि गई। राजा के मन चिंता भई॥
सीस धुनै राजा पछिताई। कइ अपराध कियों मैं आई॥
प्रथमै तिरिया बध मैं कीन्हा। घोलि हलाहल देखत दीन्हा॥
जौ जनतेउँ त्रिय देइ पराना। कत हौं बचन सुनाएउँ काना॥
उत्तर कवनु विप्र कौं देऊँ। वह मरि जाइ दोष हूँ लेऊँ॥
गात सरोवर पंच बग, प्रान हंस उहिं वारि।
पिसुन बचन किये व्याधि विधि, दीनौ सकल बिडारि॥
राजा कहै सखी सुनु बैना। विरह दुखित भइ मूँदे नैना॥
विरह तेज मुर्छित तन नारी। लै आयउ गर रूधि हकारी॥
यह के प्रान स्वर्ग नहि गयऊ। पंच भूत आत्मा मूर्छित भयऊ॥
यह त्रिय करे काल नहिं आयउ। आहि के सग प्रान उठि धायउ॥
जा तन मैं विरहा नल रहई। सो तनु आइ कालु नहिं दहई॥
गये प्रान तन फिरयौ न जिहि, इहा गगन जिमि दूरि।
हौं पारस जिहि कर छुवौं, सीतल जीवन मूरि॥
इहि विधि विक्रम भयौ उदासा। नारि उठि चल्यौ निरासा॥
कर मीजै पछिताइ नरेसा। नीच माथ कै करै अदेसा॥
गृंथ गँवाइ ज्यौं चलै जुवारी। तैसे चल्यौ राजा मनु मारी॥
जाम तीन जामिन के भयऊ। राजा उतरि कटक मैं गयऊ॥
जहँ तँबुआ साजै सै वारा। तिहिं तँबुआ राजा पगुधारा॥
राजा नैननि नींद नहि, अन्न न भावहि पान।
मन महँ भींतय जुरत ही, सोचत भयौ विहान॥

माधव-प्रेमपरीक्षा

भयौ प्रात बैठ्यौ दरबारा। राजा माधौनलहिं हँकारा॥
सभा माँझ नल बैठे आई। राजा विप्रहिं बात सुनाई॥
जब लगि विप्र कथा यह भई। सो त्रिय विरह ताप मरि गई॥
सुनि बात माधौनल काना। तुम पर दिये कदला प्राना॥
सुनत बात दिल विस भरि गयऊ। धरनि पछार खाइ मरि गयऊ॥
दॅव दाधी मालति सुनत, अति दाध्यौ तिहिं ठईं।
अलि मालति विनु नहिं जिए, अलि विनु मालति नाहिं॥
राजा वचन सुनत द्विज काना। इहिं के संग दिये मुहि प्राना॥
माधौ सकल सभा उठि धाई। स्वास नासिका मूदैं जाई॥
पंडित गुनी बैद उठि धाए। जोगी मंत्र गारहू आए॥
ओषधि मूर मंत्र करि थाके। फरे न एक जियहि गुन ताके॥
सीतल गात विप्र कौं भयऊ। मन धन जीउ स्वास संग गयऊ॥
आलम ऐसी प्रीति करु, ज्यों वारिज अरु वारि।
वह सूखे वह ना रहै, रहै मूल दल जारि॥

विक्रमचितारोहन खंड

करि उपचार लोग सब हारे। राजहि देखि आँसु भरि ढारे ॥
प्रथमहि तिरिया वध मैं कीन्हा। पुनहि विप्रहि जानत विष दीन्हा ॥
नर मारत कोइ मोखु न पावै। ब्रह्मन वधे नर्क उठि धावै ॥
दोनों वध कीने मैं आई। चिहुरसि अग्नि जरौं मैं जाई ॥
मैं विस्वास गुप्त जिय धारा। छलु करि जीउ दोउ कर हारा ॥

प्रेम नैम निरखत रहत, यह नर नाहिन दोष।
भगत करत जिहि प्रीतमहि, तिहि नर नाहिन मोष ॥

सकल कटक मैं पर्‌यौ हिरोरा। छूटें फिरैं हाँथि औ घोरा ॥
रिध्या नाजु कोइ नहिं खाई। सैना उठी सकल अकुलाई ॥
जिहि कै कारन इतनौ कीन्हो। तिहि द्विज वचन सुनत जिउ दीन्हौं ॥
उठि राजा विक्रम बल बीरा। बैठ्यौ जाइ नदी के तीरा ॥
मलयागिरि के काठ उठाए। चदन अगर बहुत लै आए ॥

कियौ हेम सकल्प लै राजा, कर लैं वारि।
धीउ कलस जहँ डारि कै, साजी चिता संवारि ॥

लोग बैठि राजा समुझावैं। नेगी नेइ लोग सब आवैं ॥
कहैं लोग राजा तुम जरहू। थोरी बात लागि तुम मरहू ॥
राजा येतौ दुख जिनि करही। कोतिक नारि पुरुष जो मरही ॥
उठि कै चलहु कटक को जाही। नातर जरै सैना सग याहीं ॥
घर भर लोग कटक मै मरई। उठि किन चलहु साति जब परही ॥

जग समुद्र सुख दुख करम, नातिहि मेटन पार।
राज मरन व्यापहि सकल, जिहिं प्रथिवी को भार।

राजा कहै सुनहु सब कोई। जिहि विधि हानि धर्म की होई ॥
इहि जग माँह मरन सब आये। राजा रंक काल सब खाये ॥
जाको सब जग अपजस करई। जीवत मुयौ पाछै का मरई ॥
शिक्षा दई सब ही गहि रहे। आप आप को चित गहि रहे ॥
उठि राजा कीन्हें अस्नाना। धोती पहिरि दिये बहु दाना ॥

गगा जल अस्नान करि, द्वादस तिलक बनाइ।
नमस्कार करि भानु को, बैठि चिता मै जाइ ॥

बैताल खंड

स्वर्ग लोक महँ बात चलाई। जीवत जरत है विक्रमराई ॥
देवी देवता सब उठि धाये। चढ़ि बिवान सब देखन आये ॥
गन गंधर्व किन्नर सब गुनी। तब बेताल बात यह सुनी ॥
जाकों मित्र बीर बेताला। सुनत वचन आयौ ततकाला ॥
राजा अग्नि दैन कौ चहई। तिहि छिन आइ बाहँ पुनि गहई ॥

तू सकबधी चक्कवै, सिह सुरपति सेस।
किहि कारन तू जरत है, पर दुख हरन नरेस ॥

राजा कहै सुनहु बेताला। मैं बड पाप आय कौ घाला ॥
पहिले तिरिया वध मैं कीन्हा। पुनि मैं जीउ विप्र को लीन्हा ॥
जिहि कारन पावक मैं जरहूँ। जम के त्रास नर्क तैं डरहू ॥
कह बेताल राजा जनि जरहू। ऐसी बात लागि जनि मरहू ॥
खिन मै अमृत ल्याऊँ जाही। विप्र नारि तुम देहु जियाही ॥

आलम उत्तम सोइ, अपजस तैंकर का करहि।
रहत न लज्जा होइ, आपु बुराई कान सुनि ॥

कहि बैताल सुनहुँ बलबीरा। मैं लाऊँ जीवन कौ नीरा ॥
बेगहि गयो बीर बेताला। सुधाकुँड तहँ होते ब्याला ॥
परकत नयन निलब न लावा। तुरत बीर अमृत लै आवा ॥
पहिले लै माधौ कौ दीन्हा। तिहि यह प्रेम पसारा कीन्हा ॥
सुधा पियत माधौनल जागा। आये प्रात सुन भ्रम जागा ॥

नैन उघरि स्वासा चली, कियौ प्रान बिस्राम।
'कामकदला कदला, लेत उठ्यो मुख नाम ॥

उठ्यो विप्र राजा सुखु पावा। तिहि छिन उतरि चिता स्यौं आवा ॥
तब बैताल के चरन पखारे। प्रान जात तुम रखे हमारे ॥
कियो अनद बाजा बहु बाजहि। अर्ब खर्ब अति द्रव्य लुटावहि ॥
सुनि सुख सकल कलक महँ होई। नर नारी की चिंता जाई ॥
राज कहै हौ तब सुख पाऊँ। लै अमृत कदला जियाऊँ ॥

भूसुर दीन असीस, जुग जुग जीउ नरेस बहु।
लोभ न करयौ सरीर, प्रेम काल यौं चाहिये ॥

राजा-वैद खंड

कनक कलस अमृत भरि लीन्हा। राजा भेप वैद को कीन्हा ॥
काम कदला के घर आवा। पौरि दार सों बात जनावा ॥
सुनि कै वैदु पौरिया जाई। सखियन आगें बात जनाई ॥
सुनि कै वैदु सखी इक आई। मदिर मैं लै गई बुलाई ॥
सुदर वैद सुमूरति कामा। यह की मूरि जियहि यह बामा ॥
पडित मीत विदेसिया, सुदर गुनी सु आहि।
सनमुख आवत देखि कें, सखी रही सब चाहि ॥
सखी बहुत कै आदर कीन्हा। पातवर बैठन को दीन्हा ॥
जहा कदला मृतक पराई। वैदहि जाइ सो नारि गहाई ॥
सीतल गात देखि कै नारी। तब कछु वैद करहि उपचारी ॥
बैठि सखी सौं बोलहि गाता। नाहिन स्वास झूँठि सनिपाता ॥
नहिन रोग वेदन जिहि हरई। मितक परा वैद कह करई ॥
स्वर्ग गये तेऊ फिरैं, प्रान जिये जम जाल।
ताको मत्र न मूरि कछु, डसी विरह कै ब्याल ॥
सुनहु वैद जौ नारि जिवावहु। मुख मागो सोई तुम पावहु ॥
मृतक परयौ जौ वैद जियावहि। सो आपन को ब्रह्म कहावहि ॥
वैद रोग कों औषध करई। ताको कहा अचर्ज नर करई ॥
वचन निरास जब वैद सुनाये। सब के नैन नीर भरि आये ॥
साचहु मरी कदला नारी। परी खेह महँ खाइ पछारी ॥
गुन सुदरता चातुरी, जब लगि तब लगि प्रान।
स्वास गई इहि अग तें, सब कोइ कहै समान ॥
निरखि वैद जिय आस कराई। जिन कोउ सखी और मरिजाई ॥
कहै वैद जिनि तोरौ बारा। देखौं कछू करौं उपचारा ॥
सकल सखिनु कौ बीरजु दीन्हा। अमत वैद हाथ करि लीन्हा ॥
जहा हती कदला नारी। सींच्यौ अमृत बदन उघारी ॥
अमृत बूद जब मुख परयौ, आयौ चलि घर स्वास।
बोली नारी कदला, भई सखी मन आस ॥
प्रगटे प्रान कदला जागी। उघरि नैन चिता सब भागी ॥
लेत उठी मुख माधौ नामा। पचभूत मै किय विश्रामा ॥
कहै सखिन सों सखी सुहाई। केती बार नींद मुहि आई ॥
तब यह उतरु दीन्हौं वाला। तू तौ मुई विरह के काला ॥
यह विषहर धन्वतरि आयौ। मूर मत्र पढ़ि तोहि जियायौ ॥

यह हनुमंत महाबली, पर स्वारथ चल्यो दूरि ।
लछमण को संकट पर्यौ, आनि सजीवन मूरि ॥
जब सुख काम कदला भई । सबरी सखिनि की चिंता गई ॥
तब उठि वैद के चरन पखारे । गये प्रान तुम दये हमारे ॥
कहै वैद हौं दान न लेऊँ । मागै औरु सुमागै देऊँ ॥
जौ जिय लोभ तौ गुनी न कहिये । गुन सकर वैगुन तै रहिये ॥
जौ जिय लोभ तौ गुन कहा, जौ गुन लोभ तौ काइ ।
गुन बिन रूपहि ना गुनौ, गुन बिन पुरिष अपाइ ॥
कहै कदला वैद सुनु मोही । वैद रूप नहिं देखौं तोही ॥
कै तुम देउ रूप चलि आये । मुख अमृत दै मोहि जिवाये ॥
मन बच बोलहु अपनी बाता । कहिये साँचु सप्त मै साता ॥
हौं सकबधी विक्रम राजा । पर की पीर हरहुँ करि काजा ॥
नगर उजैन राज तहँ करऊँ । दुखिया देखि सकल दुख हरऊँ ॥
माधौनल द्विज कारनै, चलि आयौ इहि देस ।
तुम तन मिर्तक देखि कै, कियौं वैद कर वेस ॥
तोहिं मरन जब माधव सुनिऊँ । वह मरि गयउ सीस मै धुनिऊँ ॥
मैं छल रूप दाइ सिर लीन्हा । तब उपचार जरन का कीन्हा ॥
जरतैं सुनि कैं वीर वेताला । सो अमृत लायउ ततकाला ॥
प्रथमहि माधौनलहि जियायौं । तिहि पाछें हम तुम घर आयौं ॥
अब सब साजि सैनि लै अऊँ । युद्ध जीति तोहि विप्र मिलाऊँ ॥
उपकारन दुख हरन जे, अगीकरन अभार ।
सुरपुर तिहि कीरति करैं, जग मैं जस विस्तार ॥
ऐसे बचन जब राजा कहई । उठि चरन कदला गहई ॥
दया निधान तुम रूप मुरारी । राजनि के राजा बुधि भारी ॥
यह संसार समुद्र अथाई । तहँ तुम तारन तरन गुसाईं ॥
बिरह घाव जे वोषधि करई । ते नर दुहूं लोक जसु लहई ॥
बूड़त नाव जे पार लगावहि । ते नर दुहूं लोक जस पावहि ॥
बिरला नर पंडित गुनी, बिरला बूझन हार ।
दुख खंडन बिरला पुरिष, ते उत्तम संसार ॥
ऐसे चरित तुमहिं पर आवहि । यह बुधि लोक वैद कहँ पावहिं ॥
पर उपकार करहु बलबीरा । बूड़त नाव लगावहु तीरा ॥
कीरति कहिय न जाइ तुम्हारी । धर्म कर्म बलि वीर मुरारी ॥
तुम समर्थ करि हौ सब काजा । हम संसार नरनि के राजा ॥
जो बुधिवंत महाबली, नरसिर जे करतार ।
पर उपकार नर दुख हरन, जे अगवत पर भार ॥

कंदला-संदेस खंड

पायन लागौं सुनहु नरेसा। माधौनल सो कहउ सँदेसा॥
गये प्रान लैगये उपाऊ। अब के गये न बहुरै आऊ॥
तुम सन भई विपति की पीरा। जोगी भेष न कीन्हौं फेरा॥
अब विधि मोहि आनि दिखरावो। निरखि विरह की पीर बुझावो॥
पख होइ जो नैनन माहीं। छिन एक देखन को उड़ि जाहीं॥
दृग पुतरिन की तारिका, निरखि मूरती मैन।
तब गुन माला कर लियैं, जपौं सु बासर रैन॥
बिति की बात कही सब मेरी। नृपति कह कहहु बिनती कर जोरी॥
निसि दिन बहै विरह दव देवा। हीयो तरकत सुनि जिय नेहा॥
करि भर सेज नीद भरि होई। रजनी सकल सिराऊ रोई॥
निसि दिन अग्नि गात ज्यों जरई। रोम रोम वेदनि सचरई॥
सोचति रहौं निसि बासर जागी। नैम रहै तब मारग लागी॥
कर कपोल औ करन ये, सदा रहत इक सग।
रोइ रकत ये नयन मग, सेत बरन भयो अग॥
रितु बसत मोहि कोकिल दहई। मलय समीर आगि जिमि बहई॥
पावस रितु बरसै जब मेहा। झुकति मरौं हौं सुमिरि सनेहा॥
चातक मोदनि परिय सताई। दामिनि दमकि प्रान लै जाई॥
सूर चद्र सीतल सब कहई। मिलि समीर आगि जिमि बहई॥
जे जे सीतल सुखद सहायक। ते सब मोहि भये दुख दायक॥
चदन चद कँवलन कली, पिक चातक जु समीर।
ये सब वैरी मोहि तन, हौं क्यों राखौं धीर॥
विरह बनावल सीतल रहई। उठत अगिनि नख सिख तन दहई॥
मंजन अजन कौन सिंगारा। सुनत न भावे नाद बिस्तारा॥
माधौनल सो कहौं बुझाई। जौ आपनी विपत्ति जनाई॥
विनवति हौं सकवंधी राई। बिरह द्रिस्टि सौं लेउ बुझाई॥
सो उपकार करो जिय माई। दमवती ज्यों नलहि मिलाई॥
मालति अस सपति मिलै, पूरन ससिहि चकोर।
चकवी कौ चकवा मिलै, कँवल बिगसि भये भोर॥
त्रिया विरह दुख राजा सुनिहू। देखत सुनत सीस कर धुनिहू॥
काम कदलहि धीरज दीन्हा। राजा जीव कटक पर कीन्हा॥
सखी सकल मिलि देई असीसा। चिरजीव राजा जुग बीसा॥

तुरिय सिंगारि भये असवारा। आये कटक न लागी बारा॥
सिंघासन पर बैठे जाई। लोक सभा सब लई बुलाई॥
विरह कथा राजा कहै, निरखत बुधिजन लोग।
सुनत सकल सब थकित भे, प्रगट्यो विरह वियोग॥
राजा कहै सुनौ सब लोई। यह जग ऐसो और न होई॥
इहि की प्रीति इही जग जानी। जग मैं जुग जुग चलै कहानी॥
कलि मैं अमर भयौ यह नेहा। विरह की अग्नि देहैं जिय देहा॥
पुनि राजा मंत्री सौं कहई। सो कछु कहौं कथा निरवहई॥
काम सैनि पहँ पठ्यौ बसीठा। बुधिजन चतुर सभा मह डीठा॥
उत्तम बंस स्वरूप, गुनन बुद्धि परवीन।
बरि धरि बंजन चतुर सो, पठ्यौ दै कर पान॥

दूत-खंड

येहिलैं राजा पात जनाई। कामकंदला माँगि पठाई॥
जो कछु माँगै दर्वि सु देऊ। नातर जुद्ध जीति कर लेऊ॥
रघुवसी इकु श्री पति नाऊ। पठ्यौ काम सैनि के ठाऊं॥
चतुर दूत श्री पति चलि गयऊ। राजा द्वार सु ठाढ़ो भयऊ॥
दूत सुनत आगे भएँ, लेउ वेगि हँकारि।
आदर सो तिहि लैन को, उठि धाये जन चारि॥
आयौ सभा बैठि तिहि ठाऊं। राजा कीन्हौ आदर भाऊ॥
राजा दूतहि मुखै लगायौ। कहौ वचन तुम कौन पठायौ॥
बोल्यो दूत सुनौ वलवीरा। हौं पठ्यौ नृप विक्रम धीरा॥
सकबधी बल विक्रम राई। सो तुम देस पहुँच्यौ आई॥
माँगत देउ कंदलानारी। विप्र काज आयौ बुधि भोरी॥
माधौनल के कारनै, नृप आयौ इहि देस।
कामकंदला विप्र को, माँगै देउ नरेस॥
काम सैनि राजा तब कहई। रिस करि रूखे वचन न सहई॥
निठुर बचन कस कहै बसीठा। बोलैं और सभा की दीठा॥
जो तुम कामकंदला देऊं। सब दानिन मैं अपजस लेऊं॥
देस देस के कहैं नरेसा। दीन्हौं दंड बचायौ देसा॥
जब लग स्वास जीउ भरि लेउं। तब लग दंड न माँगे देउ॥
बल करि आयौ राज अब, सूरवीर सँग लाइ।
मद गयंद दल साजि कै, उठि रन मंडौ जाइ॥
कहै बसीठ राजा सुनि लीजै। येते लघु विग्रह नहिं कीजै॥
देस गुरू राजा चलि आयौ। जाको सीस नरेस नवायौ॥
आयौ विक्रमचंद नरेसा। जा कहं कंपै सुरपति सेसा॥
हय दल गज दल गवत न, आवै ही औसरः विचारि॥
दुर्जन हू हँसि उठि मिलह, बोलहिं रोस निवारि॥
रानी कहै बसीठ सुनु बैना। मौंह चढ़ाइ रोस करि नैना॥
काम सैनि नै पठ्यौ नेगी। कहौ राइ सौं आवै वेगी॥
लै संदेस बसीठ उठि चलई। गयौ जहा नृप विक्रम रहई॥
कहै बसीठ माँगे नहिं देई। क्रोधवत मनु लै मनुलेई॥
कहै बसीठ राजा सुनहु, उठि रन मडंहु जाई।
सिहं रूप गाजैं सुभट, वे मृग चलैं पराइ॥

युद्ध-खंड

सुनि राजा तब बोलहि बैना। गयद पैदल साजौ सैना ॥
साजौ मेघबरन गज कारे। चुवहि गयद घुमैं मतवारे ॥
पर्वत से आगै दै चलिऊ। धरनी धँसी दिकपति सब हलेऊ ॥
धूमर धूलि आन रथ जोती। छूटे सिंह रूप जिव होती ॥
जबर जग गोला जब भारे। अस्टघात साचै सों ढारे ॥
हयदल पयदल गज दल, जोतिहि जोति सुरग।
सूरबीर बानै बनै, चली चूम चतुरग।
दुहू दिसि ते उमगे असवारा। लोह लपेटैं अगम अपारा ॥
कूदहिं बाजी नाना रगा। नाचैं यों ज्यों डह डहहिं कुरगा ॥
उतिम जाति पछिम के ताजी। तिहि पर चढ़े सुभट सब साजी ॥
बाधे बिध करि धनुक कर लीन्हे। लाँकहि कूटि सीस पर लीन्हें ॥
साँग सेल फरसा चमकारा। चमकत लोह अगिनि की भारा ॥
रन मंडन खंडन दवन, आनदै सब सूर।
चलेति चचल चाउ करी, डरै ढकाइर कूर ॥
मेघ सबद जिमि बजै निसाना। उठै अकूट अँबर बहराना ॥
भरे भाभ धुनि सुनै अडारू। सूर समूह अरु बाजहि मारू ॥
मारू सब्द सुनहिं जिमि बीरा। पुलकत रोम रोम अरु बीरा ॥
इक दिसि तैं रथ जोरि चलाये। इक दिसि गज ढाढ़े सत भाये ॥
बीचहि लैकर पैदल भारा। तिहिं पाछे आवै असवारा ॥
सेल सोध कर रंग बिनु, पाये भडन जूद।
बहुरि सुभट जे सुभट सौं, सिंहं रूप है कूद ॥
बिच बिक्रम हस्ती असवारा। रन अभरन सब पहिरै सारा ॥
जामन चलत सेत सिर दती। स्याम घटा मानहु बगपती ॥
घटक धुनि दिगपति थरहरइ। कर तजारत इद्रासन डरई ॥
चहुं दिसि बीर परवरिया चले। दोनौं जूझ इहूं बिधि भले ॥
मुड कूट सूरन के सीनै। गज सिपाह ओंरी करि लीने ॥
सिंहनि ऐसो पूत जनि, पर रन मडहि जाइ।
कुभ पिदारन गज दलन, अव रन मडै जाइ ॥
जुद्ध राग प्रगटी सुनि काना। कामावति पुर सुन्यौ निसाना ॥
परी रोइ नगरी उकताइ। प्रजा पवन सब चले पराइ ॥
कामसैनि राजा तब बोला। चहुं दिसि देहु जुद्ध कह ढोला ॥

ततखन सूर समिटि सब आये। करि सकूट चहूं दिसि धाये ॥
अब राजा आग्या जौ देई। सब रन जाइ आगे है लेई ॥
जौ जगपतिहूं को सुनिय, मृग गन छुटि सब जाई।
सो हरजन की धाक सुनि, रहे न मंदिर माँहि ॥
थके साज साजै रजपूता। दुर्जन को लागैं है भूता ॥
तूं वर चढ़े बाँधि कै बानै। मिलि औ चले राव सब रानै ॥
काम सैनि राजा दल साजा। चले लरन मारू जब बाजा ॥
चले बजाइ राव औ रानी। चढ़ी धौरहर देखति रानी ॥
अचरज सूरमा देखि कै, बली अनद करेइ।
दुहुं बिधि माँग सिंदुर भरि, हाथ नारियर लेइ ॥
इत तैं कामसैनि चढ़ि गयौ। राजा बिक्रम सनमुख भयौ ॥
एक खेत जब दो दल भये। एक एक सों सनमुख भये ॥
हिंसहिं तुरग चिकारैं हाथी। सोभै हक हंक मिलि साथी ॥
दुहु दिसि युद्ध राज भल बाजा। कायर डरैं सूरमा गाजा ॥
बान बाधिजु बिरद सुनावहिं। सुनि सुनि सुभट उमगि करि आवहिं ॥
सुनि मारू कौ रागु, भुज फरकै रन बीर के।
युद्ध जाइ मन लाइ, 'मारु' 'मारु' मुख उच्चरैं ॥
अगिन बान छुटैं दुहु ओरा। चकित बिजुकित हाथी घोड़ा ॥
धुनुषहिं धनुष वीर जो नाहा। अटकै पच्च बान सौं काहा ॥
चलै चक्र जो लै हथि नाला। पसरहिं धूम होइ अँधकाला ॥
छिन इक धनुष बान सौ लरई। हमकत बाहिर पग मेंह परई ॥
भीर बान तें सहैं न पारैं। दुहुं दिसि तुरी भीरन को मारैं ॥
सूर गरजि काइर डरहि, सुनि गज सिंह सदूर।
षड्ग खोल तै जानियै, कोइ कायर कोइ सूर ॥
रावत पर रावत चढ़ि धाये। धानष पर धानष चढ़ि आये ॥
पाइक सौं पाइक भये जोरा। लरत बार थौ मुष नहिं मोरा ॥
गज सौं गज कीन्हे चौ दता। चिकरैं कुंजर मैमत मता ॥
बाजै लोह उठै टकारा। तापर फिरैं खड्ग की धारा ॥
फूटैं फूट मुड कटि जाहीं। बाजैं सार सार छन जाहीं ॥
सेज खड्ग नेजै सहैं, खाँय खड्ग की मार।
सूर वीर पैते गनौ, सहैं लोह की मार ॥
रावत सों रावत जो भिरइ। एकहि मारि एक पग धरई ॥
हांकै सूर सूर सौं भिरहीं। घायल भूमि एक गिरि परहीं ॥
मारै खड्ग उतरि गये मुडा। फिरैं राति धरती पर रुंडा ॥
सूर जूझि धर तेजे परही। रडौ मार मार उच्चरहीं।

कर न करैं बिस्राम, घाव जे सन्मुख सहि सकहि।
जे जूझैं संग्राम, ते अपछुर बर ह्वै रहहि॥
सकर मुड बीनि करि लीन्हें। गूथि गूथि कर माला कीन्हें॥
सन्मुख होइ जो देइ पराना। तिन कहं स्वर्ग ते आवैं बिमाना॥
सग निसगनि करैं उवारा। दुहु दिसि चलैं रुधिर की धारा॥
परहि खड्ग टूटैं तरवारा। तब कर काढ़ी कमर कटारा॥
सुभट वीर खोलि कै लरहीं। दोनो आनि भूमि महं परही॥
गमि मारैं सनमुख लरैं, जे मारहि तजि छोह।
लोभी सूर लहरि मरें, जो अपछुर बरनै मोहि॥
कंपै सूर बीर ते भारी। गज कंपै सहि सकैं कटारी॥
लागै खड्ग गिरहि ते दंता। टूटे सुँड रोवै मैमंता॥
टूटें मुड होइ मुख भगा। पर्वत से जनु परे भुवगा॥
गन गयद रन जहं तहं परे। जनु धरनी महं पर्वत ढरे॥
लरि लरि सकल थमित ह्वै दरें। इक जूझैं रन कानि न करैं॥
सिहनि ऐसो पूत जनि, सिंह बिदारन जोग।
घर सूरा रन भागना, जिन न हँसैये लोग॥
बोलै धाव 'मारू' उचरहीं। जहं तहं रकत के नारे ढरहीं॥
फूटैं मुड चलैं रन लोहुव। सुभटै सुभय फिरै जन कुहुरव॥
जोगिनी फिरैं भूतनी साना। बैठि करैं लोहुअ कर पाना॥
भिरहिं धाइ लोथि लै जाहीं। लोहू पियें मासु मिलि खाहीं॥
जोवन जाल कराले करोलें। लोथहि काटि सरो महि बोलैं॥
जोगनि फोरैं खोपरी, जंबुक भखै जु मास।
सूरन की गति देखि कै, सूरज होइ उदास॥
लोहू भरे छूटै सिर बारा। सूते सूर बीर बिकरारा॥
सुन्यौ सरन उमडे ते भलें। दहनै चुवहि रुधिर के चलैं॥
बिहुरो हाथ आव नहि मेरें। गुन ज्यों सिंह देखि डहि मरैं॥
कहू कहूं गावैं बरछा लै कोऊ। कहूं दौर रागन गुन दोऊ॥
पर दल खडहिं लरि मरैं, खाय जु सन्मुख घाव।
स्वामी सँग ते ना तजें, छत्री कुलहि सुभाव॥
पहर चारि लौं बिग्रह भयऊ। दुहुँ दिसि लोग जूझि सब गयऊ॥
सुभट सूर बिक्रम के बाचे। जूझे सुभट सूरमा साँचे॥
कामसैनि सब सैनि जुझाई। जूझि गिरे सब रावत राई॥
जूझे सुभट जे चढ़े बिवाना। गेये सकल रवि के अस्थाना॥
स्वामि काज जे कटि कटि मरहीं। ते सब सूर अप्सरा बरहीं॥
जूझता सूरा भलै, घाव जै सन्मुख खाँहि।
जीवत मै मुख भागहीं, मरै त सुरपुर जाँहि॥

माधव-कंदला मिलन खंड

कामसैनि राजा जो हारा । जाइ मिल्यो तजि के हथियारा ।।
हाथ जोरि के सनमुख आयो । विक्रम आगे सीस नवायो ।।
सुनहु राज मैं दीन्ह्यौ देसा । सकवधी पर हरौ कलेसा
चढ़तै थहराई सिर सेसा । विक्रम जा दिन करै प्रवेसा ।।
कामसैनि जब मिल्यौ जु जाई । फिरि पछितानौ सैन जुझाई ।।
मिलकरि राज नगर महँ चला । दीनी आनि कामकदला ।।
मिली कदला बहु सुख पावा । राजा माधौनलहि बुलावा ।।
कलि मह विरह वियोगिनी, भरि भरि लेहि उसास ।
सीसु ढगौरी भोर भय, कीनौ सूर प्रकास ।।
माधौनल औ कदला मिलेउ । मिलि विरही दोनौ दुख दलिऊ ।।
मिलि कैं अधिक सुक्ख तिनि पावा । दुउ सँताप लै गग बहावा ।।
मिल्यौ सोइ भावत भावती । राजा नल रानी दमयती ।।
मिले भ्रथरी अरु पिगला । माधौनल औ कामकदला ।।
पूरन ससि जिमि दुखित चकोरा । कुमुदिन चक्रवाक जिमि मोरा ।।
नित प्रति केलि करहि सुख रहहीं । दिन दिन प्रीत अधिक मन करहीं ।।
भावता जा दिन मिलै, ता दिन होइ अनद ।
सपति हिएं हुलास अति, काटि विरहा दुख फद ।।
माधौकाम कदला मिलाई । पुनि राजा उज्जैनै जाई ।।
सग विप्र माधौनल लीन्हा । जिहि कारन इतनौ जस कीन्हा ।।
राजा नगर उज्जैनै गयऊ । तबही अत कथा कर भयऊ ।।
माधौ कामकदला नारी । जानौ विधि रचि दई सँवारी ।।
अपनौ सुख तजि दुख लहैं, पर दुख खडन जाइ ।
वार निबाहै एक सम, धनि सकवधी राइ ।।
कथा चौपही आलम कीन्हीं । पहिले कथा स्रवन सुनि लीन्हीं ।।
कहु कहु बीच दोहरा परै । कहू आनि सोरठा धरैं ।।
सुनत स्रवन यह कथा सुहाई । अति रसाल पडित मन भाई ।।
प्रीतिवंत है सुनै सो कोई । बाढै प्रीति हिएं सुख होई ।।
कामी पुरिष रसिक जे सुनही । ते या कथा रैनि दिन सुनहीं ।।
पडित बुधिवता गुनी, कविजन अच्छर टेक ।
नाम नमित गुन उच्चरहि, कहि कहि कथा अनेक ।।

कवि निसार-कृत

यूसुफ़-ज़ुलेखा

आदि खंड

सुमिरौं प्रथम स्वरूप सुहावा। आदि प्रेम निज तन उपजावा ॥
उतपति प्रेम अगिन उपजावा। बहुरि पवन अबुअ उपजावा ॥
आगिन तें पवन पवन ते पानी। पुनि पानी ते खेह उड़ानी ॥
यहि सब में उपज्यो ससारा। धरती सरग सूर ससि तारा ॥
चारि तत में सब कुछ साजा। पँचवे सन आकास बिराजा ॥
मुनि रिष गँधरब दूत बिठाये। जगम अस्थावर उपजाए ॥
प्रेम अगिन तेहि काहुँ सँभारा। रचा मनुष बहु बिधि बिस्तारा ॥
तेंहि सौंपा वह प्रेमक थानी। दीपक माँह धरा जस बाती ॥
तेहि बाती मँह आय छिपाए। होय परछिन पुन देह जराए ॥

प्रभुताई के बीच तें, को गत लीखन पार।
कहा स उत्तम अस वह, कहँ निकसत तेहि भार ॥

रचा मनुष तेहि रूप सोहावा। प्रेम अस तेहि हिए छिपावा ॥
अस गुनवत दयाल सयाना। तेहि निरगुन नर सब अग्याना ॥
जाके रूप न रंग न रेखा। ताकिय रचना आव न लेखा ॥
वहै रूप वपु प्रेम क साना। दीन्ह भार कहि अलख सुजाना ॥
यहि बिधि सब जग परगट कीन्हा। एक ते एक उदित कर दीन्हा ॥
जब वह नेस्त करै पुनि सोई। एक ते एक अलोपित होई ॥
पानी खाइ खेह का लेई। पुन पानी कँह अगिन हेरेई ॥
पवन अगिन कहँ करे सँघारा। मिले आन तेहि अंस अपारा ॥
वह के सग जगत कर लेखा। नेस्त हेस्त सभ करे सरेखा ॥

अलख अमर अबिनासी, घट घट व्यापक होय।
सरब मई सुखदायक, दुख भजन है सोय ॥

वह पूरन चौदह खँड माही। वह बिन जिया जतु कोउ नाहीं ॥
सब मँह आप सु खेले खेला। नट नाटक चाटक जस मेला ॥
ना वह मरे न मिटे न होई। अपरम मरम न जाने कोई ॥
जाकी रति से सुख नित साजा। तन तिरिया मँह आय बिराजा ॥
कहँ रसना तेहि अस्तुति जोगू। रचा ताहि जो चीन्हे भोगू ॥
गुजत ज्ञान ओ भेद अपारा। अगम आव घट तिन दहुं सारा ॥
कबहूँ आय अकेला रहई। कबहूँ यह रचना चित चहई ॥
नाटक खेल रच्यो संसारा। जा कहँ देख ग्यान बल हारा ॥
एक रूप चारिहुं दिस देखा। दूसर अवर न जाय बिसेषा ॥

अगनित बार सँवारा, तेहि जग अगम अपार।
जहा अलख संसार सब, जह जग तिन्ह करतार॥
वहि कर दरस दुओ जग पूरा। नर बाउर सो गिनहि अधूरा॥
वह निर्गुन सौगुन सोउ रूपा। परघट गुपत सो दुओ अनूपा॥
जो निर्गुन कहँ चाहिय देखा। अलख अमूरत जाय न देखा॥
चौसर गगन तो रूप बिसेषे। रूप अपार हिये जग देखे॥
पै जब आप देखावै चाहिय। दिव्य दिष्ट निरभावै ताहिय॥
पूरन चहुँ दिस जोत अपारा। बिना दिष्ट कोउ लिखे न पारा॥
जो यह जग वह रूप न लेखा। वह जग केहि बिध जाय बिसेखा॥
अनहद सब्द सुने सब कोई। का नहि दरस दिये तिन्ह सोई॥
कत सरवन सुन बचन हुलासा। काहेँ ते नयन सो रहैं निरासा॥
सुने सब्द सब कोऊ, अनहद दस परकार।
ताकर रूप देखें, कारन कवन बिचार॥
तैं दयाल सुखदायक राजा। जिन अस मोहिं गरीब निवाजा॥
इतेउ नेस्ति आधीन मिले ना। तैं करतार रहे मोहि कीन्हा॥
मूरख इतेउ कीन्ह सज्ञाना। गुन बिद्या सब कीन्ह निधाना॥
गौरी सहन बंस अतवारा। दीन्ह स्वरूप भाउ उँजियारा॥
तिन मोहिं दीन्ह सदा सुख भोगू। तिन्ह का देहुँ अहहुँ केहि जोगू॥
संकट गाढ बड़े जब सहहीं। तिन पल मँह हर लेहि गुसाईं॥
मैं तो अधम पातकी आहा। तैं निरभान कीन्ह जस चाहा॥
गुजत ज्ञान गिरा अनेक, दीरघ दया अपार।
तोरे गुन केहि लेहि कहे, तैं दाता करतार॥
बरनौं ताहि आदि बेहि साजा। तेहि के जोति जगत उपराजा॥
आदि साज तेहि अनत पठावा। बोहित साज सो पार लगावा॥
तेहि के जोति सब सिष्ट सँवारा। जिया जंतु जोहि वार न पारा॥
जो अस पुरुष न जग मँह आवत। ऊँच नीच को पार नप ावत॥
जग बोहित वह सेवक देवा। केहि गुन पार उतारे खेवा॥
जिन अवतार सो सबहिं सरेखा। कोउ निर्गुन कोउ सर्गुन देखा॥
अस अवतार काहु नहिं लीन्हा। जिन निर्गुन सरगुन दोउ चीन्हा॥
कोट कलाँत करे जो भावे। बिन वह नाम मुगत नहिं पावे॥
वह कर नाम लिए एक बारा। पावे मोख मुगति निस्तारा॥
आदि जोति जाके रचे, तेहि तें सब कुछ कीन्ह।
मोख मुगत गुन पावे, जब नाम मोहम्मद लीन्ह॥
चार मीत जस चार गरथा, चारिउ सभा चारि सो पंथा॥
पहिलें अबूबकर मग चीन्हा। नबी परापत राज जेहि कीन्हा॥

दूजे उमर खितान सोहाये। लिख सपथ इबलीस पुराए॥
तीजे उसमान पूरन लाजू। आदि करी चढि कीन्हेउ राजू॥
अली बली गुन कीरत भारी। आद इमाम जो पर उपकारी॥
खड खड जेहि खड अखडा। लीन्हा दड मह भुज दडा॥
दीन नबी कर प्रोहित कीन्हा। मारि सत्रु कहँ सब जग कीन्हा॥
तिन इमाम जग सेवक आये। पाप हरे गुन पाप लगाये॥
हसन हुसेन महा जग तारन। दीन्ह सीस उम्मत के कारन॥

होय असहाब सो करि चढ़े, वहि दीन सो प्रोहित कीन्ह।
आद अत लहि जगत सब, अगम निगम करि दीन्ह॥

आलम शाह हिन्दू सुलताना। तेहि के राज यह कथा बखाना॥
देहली राज करे औ नीता। उमरावन तेहि कीन्ह अनीता॥
कादिर खान सो अधम रुहेला। सो अपराध कीन्ह बद फैला॥
पादशाह कहँ आँधर कीन्हा। सुत उतारि सब दुख तेहि दीन्हा॥
कीन्ह अपत तैमूर घराना। राज प्रताप अधम तेहि माना॥
वह चडाल अधम अन्याई। पातशाह तैं कीन्ह बुराई॥
जस वै कीन्ह नेक फल पावा। देइय चरित खेल दिखरावा॥
नेह विटप पुन जहर मिलाये। पातशाह सर छत्र भराए॥
अघधुध सभ जग करि दीन्हा। तस आपुन देहलीपति कीन्हा॥

कीन्हीं राज प्रताप जुत, रहिअ उतै कछु नाहँ।
तब सेवक साईं भये, साईं दुखित जग माँह॥

चहुं दिस अघधुध सब छावा। अवध देस का दियो बहावा॥
येहिया खा आसफुद्दौला। जासु सहाय अहइ नित मौला॥
हिन्दू सचिव वह बाली नरेसा। तेहि के धरम सुखी सब देसा॥
दुऔ गुन ताह सो धर्म विधाना। धरम नीत जग इदु समाना॥
करै नीत कुछ और न भावे। धरम दान को सरवर पावे॥
तेहि के राज नीत जग छाये। सूर सुजान न सके सताये॥
करै न नीत धरम सुन्हि होई। मनुष समान सो परगट होई॥

धरम नीत सब जग करे, परजा सुखी सरीर।
जुग जेग रहे सुदेस भी, यहि नव्वाब उज़ीर॥

सेख पुरा उत गाव सुहावा। सेख निसार जनम तहँ पावा॥
चारिउ ओर सुघन अमराई। अगम अथाह चहूँ दिस खाँई॥
सेख हबीबुल्लाह सोहाये। सेख पूर जिन आन बसाये॥
बादशाह अकबर सुलताना। तेहि के राज कर जगत बखाना॥
अवध देस सूबा होय आये। बीस बरस लहि रहे सुहाये॥
तेहि के शेख मुहम्मद नाऊँ। सो हम पिता सो ताकर गाऊ॥

तेहि घर हौं त्रिधने अवतारा। चारि दीप जस चौमुख बारा ॥
सभै बलो सुपुरुप सुजाना। रूपवत औ विद्यामाना ॥
बस मौलवी रूम कै, सेख हबीबुल्लाह ।
जेहि के मसनवी जगत मह, अगम निगम अवगाह ॥

अब आपन गुन करौं बखाना। हौं निरगुन कुछ भेद न जाना ॥
सबहे गुरू कर गुरू सुहावा। सो हम गुरू वह जग महँ आवा ॥
जेहि सो गुरू कि दोउ जग आसा। अवर गुरू की भूख न प्यासा ॥
चहे गुरू वह पार लगावैं। चहै तो बार बार भटकावैं ॥
वह कर प्रेम हिएँ महँ गोवा। अवर प्रेम सभ चित तन खोवा ॥
अच्छर एक पठावा सोई। बहुर गुरू वह कियो बिछोई ॥
भयो हिया जस समुद अपारा। किये गरथ अनूप सँवारा ॥
झूँठ कथक कहि रैन बिहाये। अब यह समै मौर कै आये ॥
बस मौलवी रूम कै, मौलँ लावा पथ ।
होय सिद्ध बुध मसनवी, निरगम अगम गरथ ॥

सात गरथ अनूप सोहाये। हिंदी और पारसी सोहाये ॥
ससकिरत तुरकी मन भाये। अरबी और फारसी सोहाये ॥
हीर निकारि के गेहूं खाने। रस मनोज रस गीत बखाने ॥
औ दिवान मसनवी भाखा। कर दोइ नसर पारसी राखा ॥
चार बेस महँ कथा बनाये। हीर निकारि अनूप सोहाये ॥
रस मनोज रस गीत सोहावा। सभै बात कार भेद बतावा ॥
हंस जवाहिर प्रेम कहानी। कहा मसनवी अमृत बानी ॥
इशा कहे जहाँ लह भेदू। औ सब कथा जहाँ लह बेदू ॥
झूँठि जानि सब ते मन भागा। अब यह साँच कथा चित लागा ॥
तीन नसर एक मसनवी, औ निसाब दीवान ।
सर दुई हीर निकार तिन, रस मनोज रस खान ॥

हिजरी सन बारह से पाँचा। बरनेउ प्रेम कथा यह साँचा ॥
अठारह सै सताईसा। संवत विकरम सेन नरेसा ॥
सतरह सै बारह पुनि साका। सतरह सै नब्वे ईसा का ॥
सत्तावन बरख बीते आयू। तब उपज्यो यह कथा बँचाऊ ॥
सात दिवस महँ कथा समापत। दुरमति नाम रहे सो सम्मत ॥
गयो तरुन को तेज उमंगा। साथी गये छाँड़ि सब संगा ॥
थाएँ अँस उठि के जग माहीं। विरिध दिवस अब कुछ रस नाहीं ॥
बना जनम को गोरख धंधा। अबहुं न समझे यह मन अंधा ॥
बार बस औ बरुन सोहावा। गयो बीत तीसर पन आवा ॥

बजे नगारा कूच का, करहु सुचेत सँभार।
अगम पंथ साथी नही, केहि विधि उतरब पार॥
बिरिध बैस महँ कीन्ह बिचारा। केहि विधि होय मोर उद्धारा॥
कहथों तो तब कथा उत साँचा। जो कुरान मा सुना औ बाँचा॥
सभ भाषा महँ कथा सोहाई। बरनन भाँति भाँति करवाई॥
इबरी औ अरबी सुर बानी। पारस औ तुरकी मिसरानी॥
भाषा मा काहू ना भाखा। मंरै अस दइब लिखि राखा॥
सो अब कथा कहौं चित लाई। जेहि तन मोख मुगति होइ जाई॥
यूसुफ नबी विदित जग आवा। तारा गन्ह महँ चंद सोहावा॥
जहँ लहि महा सिद्ध अवतारा। सब महँ रूप दीन्ह उँजियारा॥
कथा अनूप जगत महँ सोई। प्रेम भगति सत धरम समोई॥
यूसुफ नबी अनूप जग, प्रगट भये संसार।
जाकी कथा तत अब, बरनऊँ भजि करतार॥
जो यह कथा सुनै चित लाई। नासै पाप पुन्न अधिकाई॥
बाँझिन सुनै सो संतति पावे। अकट तरुनि माँझहि फरिआवे॥
निरधन होय, होय धन आकर। निरगुन सुने होय गुन सागर॥
दुःखी सुने सुक्ख अधिकाई। बदी सुने तो मोख होइ जाई॥
बिछुरे परे सो देय मिलाई। रोगी सुने रोग हरि जाई॥
निरदायी कहँ दाया आवे। जोगी सुने जोग अधिकावे॥
कैसेउ बिपति गाढ जो होई। सुनै कथा बुध डारै खोई॥
सुने सती दिन दिन सत बाढ़ै। बिरही बिरह दीन दुख दाढ़ै॥
प्रेमी सुने प्रेम अधिकावे। पंडित सुने महा रस पावे॥
जो कोइ सुनै पढ़ै लिखै, होय सिद्ध संसार।
बस सुनत सुख पावे, देइ असीस निसार॥
कथा अनूप अहै जग माहीं। दूसर कथा सो यह सँघ नाहीं॥
नबी लागि यह कथा सुहाई। सरग लोक तिन दैव पठाई॥
एक दिवस जबरैल जो आये। हसन हुसेन को दुःख सुनाये॥
मारिन्ह तिन बैरिन निरदाई। पानी बूँद न दीन्ह कसाई॥
सुनि के मरन नबी दुख माना। रोवै लाग दुखित होइ प्राना॥
तब जबरैल कथा यह लाये। आन अरथ यह बाँच सुनाये॥
जो इमाम कहँ उम्मत मारिन्ह। यूसुफ बधु कूप महँ डारिन्ह॥
कथा सत्त अन कहौ सुहाई। जेहि विधि सरग लोक तेहि आई॥
चूक होय तो लेहु सँभारी। सुद्ध असुद्ध सो लिखहुँ बिचारी॥
बरनौ कथा अनूप अब, प्रेम भरी औ साँच।
मोख मुगति गति पावहिं, जो रे सुनावै पाँच॥

किर्नां नगर जो 'नूह' बसावा। तहाँ नबी याकूब सोहावा ॥
जग महँ महा सिद्ध अवतारा। पूजै ताहिं सकल ससारा ॥
लूत नबी की सुता सुहाई। सो बियाहि इसहाक के आई ॥
भय इसहाक के दुइ सुत सगा। एक उदर दुइ रवि ससि रगा ॥
एक ईस याकूब सो दूजा। तप जप विद्या कोउ न पूजा ॥
महा सिद्ध ता कहँ विधि कीन्हा। इसराईल नाम तिन्ह कीन्हा ॥
उपजे श्याम देस दोउ भाई। रहे किर्नां याकूब सोहाई ॥
भेजै ताह अलख सदेसा। लावै निगम पथ सब देसा ॥
नीच ऊच कहिं मारग लावै। औ गुरु मुख सब भेद बतावै ॥
करे तपस्या रैन दिन, जप तप बरत औ नेम।
जबराइल आवहि तहाँ, आन बढावैं प्रेम ॥
सात इस्तरी सुखद सोहाई। बारह पुत्र दई अधिकाई ॥
रुबिया औ राहेल सुहाये। दोउ दुहिता सुत लूत के जाये ॥
दौहित विधनै नारि कुलीना। पाँच सहेली सुघर नगीना ॥
दुइ दुइ पुत्र दुहूँ के भये। आठ पुत्र दासी सन कहे ॥
बहुत गरथ मोंह अस हेरी। दोइ नागर तेहि के दुइ चेरी ॥
धरम दीन्ह राहेल स्वरूपा। महा सती औ ज्ञान अनूपा ॥
तेहि के कोख कीन्ह अवतारा। यूसुफ इबन अमीन दोइ बारा ॥
प्रथम दुहिता दुनियाँ नाऊँ। पुनि यूसुफ मानै तेहि ठाऊँ ॥
यूसुफ नबी जनम जब लीन्हा। परगट जोग जगत महँ कीन्हा ॥
दुइ अंसा यूसुफ नबी, पायो रूप अपार।
एक अस विधि रूप मह, दीन्ह सबै ससार ॥
बुधि सरूप जब उतपति कीन्हा। दोइ अंसा यूसुफ कहँ दीन्हा ॥
एक अस महँ सब जग पावा। धन वह रूप जो दइय बनावा ॥
यूसुफ नबी लीन्ह अवतारा। घर बाहर होइगा उँजियारा ॥
जो उपमा कबि दीन्ह बखानी। रूपवन्त जस यूसुफ सानी ॥
तेहि स्वरूप कर कहौ बखाना। जेहि कर रूप सो कीन्ह बखाना ॥
जब तिन जन्म सो यूसुफ लीन्हा। अलख सबहि सुख तिन्ह सो दीन्हा ॥
सत्रु अनेक भयो जरि छारा। जो इमलाक यहूदा मारा ॥
बड़े बस सब बली सोहाये। एक ते एक सरिस अधिकाये ॥
सैन धनी गहि गदा पवारहि। बन महँ सौह सिह कई मारहिं ॥
दस दिग्गज दस बधुवै, दल गजन बलवान।
सेवा करै सु तात कै, जगत काज सुजान।
दस भाई जो तरुन जुझारा। दुइ भाई लखि बालक बारा ॥
इब्न अमीन जब लीन्ह अवतारा। माता मुई छाँड़ि दुइ बारा ॥

निस दिन रखै नबी निज पासा। छिन बिछुड़े जब होय उदासा ॥
बहु विद्या औ ज्ञान सोहावा। पितैं पुत्र का समै पठावा ॥
और पुत्र जो एक छिन आवैं। वेद पढ़ाय सोकाज बढ़ावैं ॥
यूसुफ कहँ दिन रात पढ़ावैं। छिन नैनन नहिं ओट करावै ॥
जबराईल प्रान तजि दीन्हा। तब यूसुफ कहँ फूफहि लीन्हा ॥
प्रान ते अधिक रखै दिन राती। निम दिन रखै लगाये छाती ॥
औ याकूब चहै मन माहीं। फूफिहिं एक छिन छाँड़हिं नाहीं ॥
बहुत समय यूसुफ लिए, जायँ भूलि तप जोग।
तेहि कारन विधि कोप कै, दीन्हा पुत्र वियोग ॥
भगिनी बधु रहै अस रीती। दोउ बाउर सम यूसुफ प्रीती ॥
बसन एक इसहाक सोहावा। बाँधहि फाँट सो लीन्ह कढ़ावा ॥
एक दिन सोवत मौंह छिपाये। यूसुफ फाँट सो फेट बँधाये ॥
ऊपर और दुकूल पिन्हावा। औ याकूब के पास बिठावा ॥
लाय सो भूलि फेट कै चोरी। बसन बधु ते बरबस छोरी ॥
भूलहिं तेहि बहु सुख ते पाला। नैन ओट छिन होय बेहाला ॥
एक दिन यूसुफ बैठ्यौ पाटा। रूप तेज मनु बरै लिलाटा ॥
काहू केर मुकुरनी लीन्हा। तब अभिमान हिये महँ कीन्हा ॥
जो मोहिं का बेचै लै जाई। को लै सकै दरब कह पाई ॥
उदय अस्त लहि दरब पटोरा। मोरै मोल जोग सब थोरा ॥
यूसुफ कहँ निस दिन पिता, राखै प्रान समान।
आन ते अधिक सपूत सुत, सुंदर सुघर सुजान ॥
नीक न लाग दइअ कहँ बाता। काहुक गरब न रखै बिधाता ॥
एक दिन यूसुफ रिस अधिकारा। कोपित भयौ दास कह मारा ॥
औ मातहिं मारा तिन दासा। भयौ हिये वह दास निरासा ॥
औ याकूब मियाँ के मारे। बोध न कीन्ह सो दास पुकारे ॥
करता कोप हिएँ महँ आने। दास होय तब यूसुफ जाने ॥
आयो एक सुरेख भिखारी। आन बार याकूब पुकारी ॥
कहा नबी तुम्ह आसन करहू। पावहु भोग छुधा कहँ हरहू ॥
कहि यह बात सो गयौ भुलाई। यूसुफ प्यार मतैं बिसराई ॥
ताके भूख रहै सुध नाहीं। दीन्ह सराप तपा हिय माँहीं ॥
बरस चारि महँ भूलहि, जब कीन्हा सरग पयान।
तब पावा याकूब तेहि, हिया अधिक हुलसान।
वह मन भावन रूप सोहावा। औ जेहि दीन्ह रूप जग पावा ॥
आन स्वरूप हेत जो लाये। वह मन भावन ताहि सुहाये ॥
औ याकूब सिद्ध अवतारा। निस दिन यूसुफ रूप निहारा ॥

अलख सहाय क्रोध तब कीन्हा। यूसुफ बिरह सोग तेहि दीन्हा ॥
आँखी ओट पिता नहिं करई। छुधा त्रिषा मुख देखत रहई ॥
निस दिन रखै प्रान सम पासा। और पुत्र मन रहैं उदासा ॥
आवहिं पुत्र करहिं सब सेवा। काहु के ओर न देखै देवा ॥
चालिस सहस मेष चुन लीन्हा। तिर तिर सहस सबृहन कहँ दीन्हा ॥
सात सहस यूसुफ कहँ दीन्हा। सौ दुबे सब महँ चुनि लीन्हा ॥

सबृहन हिये लखि क्रोध भा, देखि पिता कर प्यार।
लघु बालक कहँ दून तिन, दीन्ह अस अधिकार ॥

नबी के अँगन एक द्रुम्म सुहावा। कलपवृक्ष सम ताकर छाया ॥
जब याकूब नबी सुत पावे। सुंदर सुता वृक्ष उपजावे ॥
ज्यों ज्यों पुत्र होय वहि बारा। त्यो त्यों बढ़े वृक्ष के डारा ॥
बालक तरुन होय सुख पावैं। काट डार वह छड़ी बनावैं ॥
यहि बिधि तेहि निकसे दस साखा। दसौ पुत्र पायो बैसाखा ॥
यूसुफ जन्म लीन्ह जग माहीं। लोना द्रुम महँ निकसे नाहीं ॥
कह्यो तात तिन पुत्र सोहाये। सबहि बधु कहँ छड़ी सोहाये ॥
कस न दइब मोहिं आसा दीन्हा। तब अरदास दई ते कीन्हा ॥
आये जबराइल कै आसा। हरिहर रतन शाख कैलासा ॥

सो आसा यूसुफ नबी, पावा अभय हुलास।
लखि भाइन्ह कहँ क्रोध भा, जरैं हिये आभास ॥

हत्यो जो बधु यहूदा नाऊँ। गये बधु सब तेहि के ठाऊँ ॥
हम सब पितैं करहिं बड काजू। दिन दिन बढे सो ओकर राजू ॥
दिन भर रहैं सघन बन माहीं। भूख प्यास कुछ जानहि नाहीं ॥
यह बालक कुछ करे न काजू। इन्हे दीन्ह दून कर साजू ॥
कछु दिन महँ सौपे घर बारा। हमहिं रहहि सेवक तिन्ह हारा ॥
बालक कुटिल पितैं बौरावा। तेहिं ते करन्ह सो बैग उपाया ॥
अबहिं बिरिछ ना मूल सँभारे। डारहिं उत्पत ताहि उखारे ॥
जब वह मूल करै बिस्तारा। कैसेउँ कहै न चूक कुल्हारा ॥
देख अनुज कहँ कोपित ताता। बोला मरद यहूदा बाता ॥

वह बालक वै बिरिध मै, वै सौं पिता वह भाय।
दोऊ कै दुख हिये महँ, दोऊ जगत नसाय ॥

यूसुफ रैन सपन एक देखा। बहुर पिता तिन कहा मरेखा ॥
जानहु गरह एकादस आए। रबि ससि मिल मोहि सीस नवाये ॥
सुन याकूब सु कीन्ह हुलासा। राज पाट सुख भोग बिलासा ॥
जग महँ होहु महीधर राजा। सुद्ध बुद्ध नित आगर साजा ॥
पै यह सपन सुनै नहि भाई। नाहिन होहि शत्रु दुखदाई ॥

मुख तिन बात निसारे बोई । अनत भेद वह परगट होई ॥
का होनार अनुज सों कहा । करहु विचार सगन कस अहा ॥
बधुन कहा खोट यह बारा । पितै ताह मुहँ लाय बिगारा ।
रवि ससि मात पिता निरमाई । नखत एग्यारह हम सब भाई ॥

कीन्ह मता दस बधु मिल, डारहि ना वह मार ।
नाहि तो हम सब दास सम, वह ठाकुर घर बार ॥

पिता आदि हम सब सिर नावहि । नमन झूँठ कहि नेह बढावहि ॥
हत्यो निरिप हमलाक हठीला । देव कहावे सुघर नवीला ॥
पिता सदा मो तामें लडहीं । औ कबहू सरबर ना करहीं ॥
ताहि बहूदे छिन महँ मारा । घर कोपहि महँ सिला पवारा ॥
जो अस बज्र न टारे टरई । नाहि मारि निज्चिन्त सो करई ॥
ताहि सो पुन कर आदर नाहीं । यूसुफ हित राखै हिय माहीं ॥
धमीकरन जो विनहिं पढावा । सोइ पिता पर मन चलावा ॥
जो वह झूँठ कहत है बाता । जानहिं साँच सो ताकहँ ताता ॥
हम कोटिन जो बात सुनावैं । उनहीं कु परतीत न आवै ॥

तेहिं यूसुफ कहँ मारिये, जहा न पावै नीर ।
रक्त निए मिट जाय रिस, जो कुछ क्रोध सरीर ॥

करिकै मत आपस महँ सारा । पिता पास आए भिनसारा ॥
जो राउर हम आशा पावहिँ । लै यूसुफ कहँ बने सिधावहिँ ॥
जेहि बन मॅह नित भेर चरावे । यूसुफ देखि हिये सुख पावहिं ॥
बालक देख सो मन हुलसाहीं । वे खेलहिँ हम भेष चरावहिँ ॥
कहा जाउ हम मेड चरावे । यूसुफ का कहुँ यिक लै जावै ॥
मोर हिये उपजै यह ससा । जिन लैहि जाहु सग यह मसा ।
तब सबहू मिलि यूसुफ पहँ आए । खेल कूद कै बात सुनाये ॥
यूसुफ जाय पिता तिन कहा । हम हिय बहुत लालसा अहा ॥
सब भाइन्ह सँग बनहि सिधावैं । दिन भर खेल कूद घर आवैं ॥

औ यूसुफ याकूब सन, बालक सम हठ कीन्ह ।
हलो बधु दस ओर नित, उत अँदोर करि लीन्ह ॥

हम यक यक अस बल बरवडा । हैं गयंद बली भुज दडा ॥
भागै सिंह हाँक एक मारैं । दसो बधु दस दिग्गज टारैं ॥
मैंमत गयद न आनहि लेखै । काँपहि गैंडा सिंह बिसेखै ॥
का हम सौंहँ जो करै सु आना । बृथा सोच तुम हिये समाना ॥
यूसुफ तात सों बहुत हठ कीन्हा । होय व्याकुल तब आज्ञा दीन्हा ॥
अपने हाथ सो वेस बनाए, औरु पितै बागा पहिराए ॥
बार बार लै हिये लगावा । माया ते चख जल भरि आवा ॥

चले तात यूसुफ के संगा। जस दीपक सँग फिरै पतिंगा ॥
करै बिदा तेहि हिये लगावै। बिछुडे प्रान महा दुख पावै ॥

केहि बन महँ लै जाहि तोहिं, मन न धरै अब धीर।
कोमल गात गुलाब सम, सहै सो घाम सरीर ॥

लागहि छुधा जो बन के माहीं। तिरखा तें तुम अधर सुखावहिं ॥
तुम बालक वह बन अँधियारा। बिक जंबुक हैं भूत बैतारा ॥
पवन तेज ते तन कुम्हिलाई। धूप देख काया मुरझाई ॥
लागहिं प्यास जो बारम्बारा। होय घाम देखि बिकरारा ॥
खडे खड़े मुहँ दूभर मारी। होय कठ सो प्रान दुखारी ॥
आयहु बेग न लावहु बारा। होइहि तात सो दुखित तुम्हारा ॥
चारि याम होय जुग चारी। साँझ परै सुठ होब दुखारी ॥
कहा पुत्र उपदेस हमारे। गाढ़ परे जिन दिहेऊ बिसारे ॥
मन सु सतै कछु होय जु ताता। सँवरहु एक निरजन दाता ॥

कहा पिता रुबैल तें, सौपहुँ तुम्हैं परान।
दिन आछत लै आयहु, कियहु न साँझ निदान ॥

जो विधि लिखा आन सो पुजा। करि न सकै कोऊ अब दूजा ॥
महा सिद्ध अब भए अधीरा। भूला अलख दयाल गँभीरा ॥
नीर छीर दुओ भा जनु भरा। सभउँ कहँ दीन्हों चित हरा ॥
जब वह प्यास लगे तब दीन्हो। औ आरत बहु भाँति सो कीन्हो ॥
बाहर नगर बिरिछ एक आहा। द्रुम बिछोह नाम तेहि काहा ॥
परदेसी जो कहूँ सिधारे। कुटुँब हितू तेहि लग पग धारे ॥
रोय रोय समधे तेहि लोगू। चख जल सींचहि बिरिछ बियोगू ॥
तह याकूब जो रोदन कीन्हा। औ यूसुफ जल मारग लीन्हा ॥
बहुत बेर लगि ठाढे रहै। तरवर बिरह बात जस कहै ॥

आगम बिरह बिछोह का, दीन्हा बिरिछ जनाय।
रोम रोम दुख व्याप्यो, लाग हिये पछताय ॥

डारहिं डार औ पातहिं पाता। सुना वृच्छ तिन बिरहक बाता ॥
जब लहिं पिता दिष्टि भर हेरे। आरत कीन्ह झूँठ बहुतेरे ॥
काहू अनुज सीस पर लीन्हा। काहू आप कहँ पाहन कीन्हा ॥
कोउ चूमै कोउ हिये लगावै। कोउ चूमै कोउ काँध लगावै ॥
काहुन पीठ पर ताह चढावा। जस तुरग लै चहुँ दिस छावा ॥
कोई कहै सिरताज हमारा। कोउ कहै सम प्रान अधारा ॥
जब लै गये दिष्ट के ओटा। सिर से डार दीन्ह जस मोटा ॥
कोउ मारै कोउ बाँधै हाथा। कोउ साँसै बहु कोप कै साँसा ॥

तुम्ह बालक अस निडर भए, रचि रचि बचन अनेक।
हम ते पिता विमुख रहैं, यह तुम कीन्ह न नेक॥
रचि रचि बचन पिते बौरावा। तुम बालक अस विख बिखरावा॥
मै मै मरहि करहिं सब काजू। औ बैठे तुम बिलसहु राजू॥
अब सु कहौ का करौ उपाई। टूक टूक करि दै हियँ भाई॥
जब मारहिं चहुँ दिसि निरदाइय। रोय रोय एक एक पहँ जाइय॥
मरतहिं लात परहि तेहि दूरी। धावहिं लै निकासि कै छूरी॥
लै पॉवरि उन काटि बहावा। नागे पाँव नबिय दौडावा॥
कँवल चरन महँ परै फफोला। प्यास ते जीभ भई जस ओला॥
यूसुफ नबी बधु के आगे। सॉसत देख मो रोवन लागे॥
बधु तुम्हार अहैं लघु भ्राता। तुम्ह सो तात सन्ह सौंपेहु ताता॥
मोंहि मारे तुम दुख है, पिता मरहि तेहि रोय।
तेहिं से अब दाया करहु, धरहु छमा रिसि खोय॥
चहुँ दिसि तिन भाइन्ह तेहि मारा। भयो पियास ते बहु बिकरारा॥
यूसुफ तबहि पाय के आसा। गया भागि रोहेल के पासा॥
मोंहिं पिते सौंपि तुम्ह दीन्हा। कौने दोख क्रोध तुम कीन्हा॥
मारि लात उठि दूर पवारा। कहा बोलावहु एकादस तारा॥
चंद सूरज जिन तोंहि सिर नाए। तेहि सँवरहु जो होंहि सहाए॥
तब समयू ते मागा पानी। रोय दिखावा जीभ सुखानी॥
भाजन दीन्ह भूमि मँह डारे। क्रोधवत हाय मुख महँ मारे॥
गात गुलाब सछत करि डारा। क्रोधवत होइ मुख महँ मारा॥
छुरा काढि सिर काटन लागा। तब यूसुफ लादे पहँ भागा॥
होय तरास लाग्यो कहै, जिन काटहु तुम सीस।
देहु डारि मोंहि कूप मह, करै जो कछु जगदीस॥
लातैं मारि जो दीन्ह पवारी। गयो पान कह ठाढ पुकारी॥
तुम्ह पानी कर अहौ पियासा। हम प्यासे तुम खून के आसा॥
वे निरदाइ न दाया करहीं। जीना सबै सपन करि देहीं॥
गुफतालून जाद के पासा। कहै बधु मै अहौ पियासा॥
कहे बधु मोंहि पानी देहू। मरौ पियाउ से धरम सो लेहू॥
चाहा देहि यहूदा पानी। ढरकावा समयू रिस मानी॥
सबहि बधु बोलहिँ विख बानी। चंद्र सूरज ते मॉगहु पानी॥
गरह एकादस लेहु बोलाई। जो तोंहि पानी देहिं पिलाई॥
नौ भाई कोपित भये, कहै बधु सन बात।
बैरी छोट न जानिये, ना छोटे दिन रात॥
कोउ कहै यहि डारहु मारी। पियहिँ रकत रिस मिटै हमारी॥

कोउ कहै बिष घोरि पिलावहिं । कोउ कहै बन छाडि सिधावहिं ॥
कहा यहूदा बंधु के मारे । होय बिनास नरसहिं कुल सारे ॥
पुनि मता कीन्ह सो होइ इकठाईं । डारहिं कूप माहँ बरियाईं ॥
बन मा कूप अहै अँधियारा । चला जाय जो परै पतारा ॥
कुरता काढि रक्त महँ भरहीं । पिता पास चलि रोदन करहीं ॥
कहहिं कि बिक यूसुफ कहँ खावा । कहा तुम्हार सो आगेहि आवा ॥
यह कुरता लोहू कर भरा । हेरा बहुत सो पावा परा ॥
दिन दस पिता करहि दुख सोचू । पुनि मिटि जाय पुत्र कर सोचू ॥
बन जारा कोउ आइहि, लेइहै ताहि निसार ।
लेइ जाइहि परदेस कहँ, मिटै अँदेस हमार ॥
यही मता आपुस महँ कीन्हा । कुरता काढि अंग तिन लीन्हा ॥
यूसुफ नबी जो रोदन करहीं । निरदाई कुछ दया न करहीं ॥
मोंहि कहँ नगन करहु जिन भाई । बसन समेत मोंहि देहु बहाई ॥
मृतक देइ बसन सब कोई । मोहि नगन मारे का होई ॥
रस्सी तासु गले महँ पिरुई । बहु मिनती माना नहिं कोई ॥
आधे कूप जो पहुँचा बारा । समयू काट गुनी वहि डारा ॥
भाई सत्रु कूप महँ डारी । चलै सुचित होय काज बिगारी ॥
दीन्ह काटि जब गुन निरदाई । तब जबरैल सँभारेहु आई ॥
लै सो कूप महँ ताहि उतारा । भये जबरैल पिता अनुहारा ॥
कहा कि जिन चिंता करहु, धरहु हिये संतोष ।
सिद्ध कीन्ह करतार तोहिं, करिय स ।हि बिधि पोष ॥
किये प्रबोध भोग फल धरै । बसन पिन्हाय सोच सब हरै ॥
यूसुफ नबी पिता कहँ देखै । रूदन कीन्ह औ पिता बिसेखै ॥
करुना कीन्ह पिता हिय लाये । तब जबरैल सो उठ्यो छोहाये ॥
जो निस दिन तुम्ह जोयहु गाता । सो अब कीन्ह रक्त रँग राता ॥
अधर पीत जामुन सम किये । गात लोग बदमेल सो भये ॥
नाँगे चरन धरमि दौरावा । रस्सी बाँध कूप लटकावा ॥
जेहि भाई पहँ रोवै जाई । मारि लात वह दूर पराई ॥
आधे कूप जो पहुँच्यो जाई । दीन्हा काट गुनी निरदाई ॥
जस दुख दीन्ह सो बंधु मोहि, बैरिहु नाहीं देय ।
गात सछत गये डारि, प्यास प्रान हरि लेय ॥
सुनि जबरैल न कियो सँभारा । लागे बहै नैन जल धारा ॥
मै न होहुँ याकूब सोहावा । हौं जबरैल सरग तें आवा ॥
बाँधहु सत्त हिएँ औ धीरा । एक दिन दैत्र लगावहि तीरा ॥
दुख बैराग बीत सब जाई । औं याकूब तें देइ मिलाई ॥

करहिं बधु तोरिय सेवकाई। होहु नबी जग राज कराई॥
सब दुख हरै करै तोहि राजा। बधु दास होय करिहैं काजा॥
जो करतार करहि निज दाया। का तो करै बैरिय निरमाया॥
कोटि सत्रु जो कीन्ह उपाइय। इब्राहिम कहँ लीन्ह बचाइय॥
बैरी मरहि किये सहारा। भयहु ताह फुलवर्गी अँगारा॥

दिये बहुत दुख मन कह, करैं बहुत उद्धार।
जैसे कचन कीजियै, खरा अगिन महँ डार॥

करिकै नगन अगिन महँ तावा। इब्राहिम कहँ कुरता आवा॥
सो कुरता न याकूब सुहावा। चित समान सो बसन बनावा॥
जंत्र समान भुजा महँ बाँधा। भूत बयारि न आवै राँधा॥
तब जबरैल नगन तेहिं देखा। भये दुखित लखि नगन सरेखा॥
तब कुरता बाजू तन खोला। पहिरायो सो बसन अमोला॥
चौकी एक अनूर लै आवा। तेहि पर यूसुफ कहँ बैठावा॥
जो अमरित ना सुना न देखा। सो यूसुफ कहँ दीन्ह नरेखा॥
कहहु भोग सँवरहु करतारा। हरै दुख सो बेग तुम्हारा॥
करि परबोध सो सरग सिधारा। यूसुफ तिन सो कह्यो कै बारा॥

महा सिद्ध तुम होहु कै महाराज जग माँह।
माँत पिता इत बधु कुल करहु तो सब पर छाँह॥

अबया मार रकत रँग धारे। कुरता लै सो चले हत्यारे॥
बिरह बिछोह जो नगर निमारा। तहाँ ठाढ़ याकूब दुखारा॥
औ यूसुफ कै भगिनी दीना। पिता सग वहि हती मलीना॥
भइय साँझ नहि यूसुफ आये। केहि कारन तेहि बिलँब लगाये॥
बार बार वहि बाट निहारी। औ यूसुफ कहँ पिता पुकारी॥
यही समय आये हत्यारे। रोदन करत झूठ बै सारे॥
सुनि रोदन यह भा बिकरारा। हिरदै मनहुँ बान अस मारा॥
दुनिया कहै कुसल है नाहीं। बिरन मोर नाहीं उन्ह माहीं॥

बिन बीरन यह नगर सब, भयो सून अँधियार।
पिता मुए घर ऊजरा, काह कीन्ह करतार॥

लखि दुनिया सो छार चढ़ाई। कहा छाँड़ि आयो मोर भाई॥
रोय रोय दुनियाँ गोहरावा। आवहु यहा पिता दुख पावा॥
रोवै लाग देखि कै ताहा। सबहू आयो मोर बीरन काहाँ॥
रोवत गये पिता के पासा। बहु बिलाप बै किय परगासा॥
काह कहै कछु कहा न जाई। हम सब गये सो छाँडि चराइय॥
पसुन पास यह खेलत अहा। तहा सो आन भेडहि वह गहा॥
ढूँढत फिरै सभै वन झारा। तब लहि बिक तेहिं कीन्ह अहारा॥

रकत भरा कुरता वह पावा। देख हिये करुना होइ आवा॥
तेहि ते पिता करो सतोखू। हम काहू कर आह न दोखू॥
बात तुम्हारे जीभ के, कैसे अविर्था जाय।
विधि कर लिखा को मेटे, यूसुफ कहँ बिक खाय॥
सुनि याकूब सो मुरछित भयऊ। मानहु प्रान काल लै गयऊ॥
जबराइल धरयो मुख हाथा। हरे साँस लखि धूमिल माथा॥
खाय पछाड़ यहूदा रोवा। वृथा प्रान पिता कर खोवा॥
का अस मरम बंधु तुम कीन्हा। पिता सिद्ध कै हत्या लीन्हा॥
रोय रोय दुनियन सिर फोरा। भयो कठिन दुख रोज अँदोरा॥
दिन भर बाट विलोकत हारे। गये बार खिज बार सिधारे॥
व्याकुल पिता पुत्र कै काजा। सिर पर पडे अचानक गाजा॥
दिन भर रहै विलोकत बाटा। साँझ भये तेहि आयो घाटा॥
भये साँझ यह दुख कै कारी। को मेटै यह निस अँधियारी॥
बीरन मोर कहा पहँ गयऊ। जेहि बिन घर अँधेर सब भयऊ॥
वह बीरन जेहि बिन भयो, घर बाहर अँधियार।
दहुँ आये तजि सुघन बन, कै दहुँ कुप महँ डार॥
अस अज्ञान न कुरता मारा। लहू लाय ते आये सारा॥
ज्ञानी लोग जो कुरता देखैं। करहिं विचार औ झूठ बिसेखहिं॥
जो बिक खात रहत कत सारा। टूक टूक होय जात नियारा॥
निस भर रहै बिकल बिसँभारा। आयो प्रान होत भिनसारा॥
जब जागै तब यूसुफ कहा। कहँ लोग कत यूसुफ कहा॥
तब रोवहि अस छोंड डफारा। सरग दूत रोवहिं एक बारा॥
तब जबरैल भूमि पै आये। तो याकूब नबी समझाये॥
अब सतोष किये बनि आवै। रोदन किहें कोऊ न पावै॥
तुम्ह अवतार सिद्ध कर लीन्हा। सहो दुख जो साई दीन्हा॥
पुत्र गये सतोष करि, प्रान देहु जिन रोय।
रोदन करहु सदा हिए, पुत्र जो कियो बिछोह॥
तब याकूब सु चित्त सँभारा। रोवै लाग सँवर करतारा॥
कहा कि कहो पुत्र का भयऊ। प्रान न गयो प्रान कत गयऊ॥
तुम्ह कछु मरम दुखी कर जाना। करहु बोध कर सिस्ट बखाना॥
जीयत अहै कि मिरतक भयऊ। जेहि बिन घर अँधियर होय गयऊ॥
कहा कि मैं कछु भेद न जाना। बिन अज्ञा का करहुँ बखाना॥
मरन जियन जानै जमराजू। कै जानै जिन जग उपराजू॥
तब याकूब कहा सिर नाई। पूँछहु तुम यमराज ते जाई॥
कहो जाय याकूब सँदेसा। जहा होय यमराज नरेसा॥

बोला जम यूसुफ कर आना। मोरे पास न दूतन आना॥
तब जबरैल सुनावा, वै सदेस अपार।
जेहि सौंपा तुम्ह पुत्र कहँ, तेहि सौं माँगहु बार॥
सुनि याकूब डरै मन माहीं। अलख नाम ते सुठि बिलखाहीं॥
डरै हिएँ सिर दै मुह मारा। मोंहि ते चूक भई करतारा॥
मै बाउर बड अवगुन कीन्हा। चहौ दुःख जो उत दुख दीन्हा॥
कहा कि अब कीजे सतोषा। समरहु ताह करहि जो मोषा॥
तब याकूब सो कुटी बनावा। बाहर नगर तहाँ चलि आवा॥
घर औ बार छाँड़ि सब लोगू। निस दिन करै कुटी महि जोगू॥
काहू दरस ना देय सोहावा। औ कोऊ तहँ जाय न पावा॥
रोदन भवन नाम तेहि राखा। यूसुफ नाम करै नित भाखा॥
जो सोए तो यूसुफ कहै। जो जागै यूसुफ मुख छहै॥
यूसुफ कहै भूख जब लागै। यूसफ कहै प्यास तन भागै॥
नींद भूख औ प्यास महँ, यूसुफ नाम अधार।
सँवर सँवर मुख पुत्र का, रोदन करै अपार॥
नींद भूख तज साधहि जोगू। करहिं तपस्या बिरह बियोगू॥
नित कुरता वह नैन लगावै। औ यूसुफ कहि कहि गोहरावै॥
रोवत नयन भये दोउ अंधा। फाट न हिया सँवर चित बधा॥
गये नैन दोउ पुत्र वियोगू। जोगउ तें साधा तब जोगू॥
यह बिध देख पिता कर हाला। भयै पुत्र सब हिए बेहाला॥
रोदन जब याकूब करेई। सरग दूत कर जाय हरेई॥
जब याकूब रोय जिव खोवहि। जाय भुलाय दूत सब रोवहि॥
कहाँ प्रान तोहि भाइन्ह डारे। कहाँ छाँड़ि आये हत्यारे॥
केहि दिस जाउँ कहाँ तेहि हेरौं। कौने बाट नाम कहि टेरौं॥
निस दिन हिये लगाये, मै तोहि सोवत पास।
सब निस जाग भयावन, रहौं बिचारत माँस॥
मुख तुम्हार अब देखत नाहीं। ताते प्रान रखै घट माहीं॥
एक घडी जो दरस न पाऊँ। रोवत फिरौं चहूं दिस धावहुँ॥
जब लहि नाव लिये ना कोई। तब लहि जीवन दूभर होई॥
अब तोर कौन सुनाइय नाऊ। तोहि बिन सून भयौ सब ठाऊ॥
भयो भवन तोहि बिन अँधियारा। काटेव खाय सबहिं घर बारा॥
केहि बन महँ तुम्ह कों परदेले। तुम्ह बालक कत फिरहु अकेले॥
मोरे साथ रहे मन माहीं। सुख तुम्हार कुछ देख्यो नाहीं॥
केहि बस करौं सो खोज तुम्हारी। कवन देस होय जाऊँ भिखारी॥
अब केहि बिधि दिन बीतहि मोरा। केहि बिधि रैन बिहायहि मोरा॥

यूसुफ नाम रैन दिन, लेत रहै याकूब।
दिन भर पलक न लावे, पुत्र बिछोह अनूप॥
केहि सो साँझ लै हिये लगाउब। भोर होत केहि लाल जगाउब॥
केहि के सुनब मधुर रस बाता। केहि कर हिये लगाउब गाता॥
केहि के देखब चाल सोहाई। जेहि को देखि हस मुरझाई॥
केहि तें भेंट करब दिन राती। केहिं कां देखि सिराइह छाती॥
जब याकूब सो होंहि अधीरा। आवहि जबराइल तिन्ह तीरा॥
कहहिं कि तुम रोउब जिय खोवहिं। काँपे मरग दूत सब रोवहिं॥
तुम अवतार कि सिद्ध सरीरा। ऐसे दुख जनि होहु अधीरा॥
तब याकूब सो छाँडि डफारा। कहा कि काह करूँ करतारा॥
ऐसे पुत्र काहे कहँ दीन्हा। मनहरिया फिर कस हर लीन्हा॥
दाया कीन्ह अनेक बिधि, दीन्ह पुत्र अस मोंहि।
देखि रूप गुन बिसुध भयो, तब मोहि दीन्ह बिछोह॥
तब काहें का अस चित लावा। जो अब हाथ रहा पछतावा॥
अलख ठाढ चित उन सो लावे। ताकर फल मानुस अस पावे॥
दीन दयाल करै अस दाया। दिये अनूप सुखी करि साया॥
तेहि दयाल कँह दइय बिसारे। देखें निस दिन नस्ट बिचारे॥
फुलवारी बहु फूल बनाये। एक तें एक सुरग बनाये॥
जो मन पुहुप एक तिन लावे। जाय सूख कुछ हाथ न आवे॥
चित्र अनेक जो रच्यो चितेरे। मोहित होय रूप रँग हेरे॥
आवे चित्र काज कुछ नाही। चित्र काज सँवरहु मन माहीं॥
काहे न मित्र चितेरे लावहु। चित्र विचित्र रूप निरमावहु॥
जो कुछ रहे न हाथ मँह, तेहि चित दीजिय काउ।
जो न मरे नहि बीछुड़े, तेहि ते प्रीत लगाउ॥
भोर होत फिर बन कहँ गये। अनुज सँधार सुचित मन भये॥
यूसुफ मया मीत मन भयऊ। चोरिय एक यहूदा गयऊ॥
जाय कूप मँह ताहि पुकारा। कहूयो बीर का हाल तुम्हारा॥
यूसुफ नबी कहा बिकरारी। कहा यहूदा रोय पुकारी॥
का पूँछो अब हाल हमारा। परे अकेल कूप अँधियारा॥
बिच्छू साँप भरे तिन गोंही। दिन एक जियन भरोसा नाहीं॥
जब लग सुदिन न दीपक बारा। जाय न देइ पिता तिन बारा॥
का अवगुन अस कीन्ह तुम्हारा। जो अस कूप अध महँ डारा
कूप अध दुख भयो सँघाता। का पूछो दुखिया कर बाता॥
परे अँधेरे कूप महँ, कोऊ न संघी भाय।
बिच्छू साँप भरे तहा, केहि बिधि कुसल कराय॥

मात पिता केहि सुख ते पाला। भाई अध कूप महँ डाला॥
कह्यौ पिता तें जाय सँदेसा। पुत्र तुम्हार गयो परदेसा॥
मरत नाम जिन कह्यौ सुनाई। मरैं पिता निज प्रान नसाई॥
कियो पिता की बहु विधि सेवा। जेहि ते पार लगे तुम खेवा॥
छुधा तृखा जब लागे भाई। भूख हमार न दिह्यो भुलाई॥
जब दुख पड़े विपत अवगाहा। सँवरहु बधु मोर दुख दाहा॥
बसन हीन तन नगन हमारा। सँवरहु बधु औ किह्यो विचारा॥
सेवा किहेउ पिता कै भाई। जेहिते हम दुख जाइ भुलाई॥
जब मिरतक कोई देख्यो भाई। सँवरेहु मूरत मोर सुहाई॥

सुन यूसुफ उपदेस यहु, रोय बहूटा भाय।
कहा कि सँवरहु अलख कँह, जो दुख माँह सहाय॥

समयू बहुरि पकरि बिक लावा। करि मुख बिकते रकत लगावा॥
लैके ठाड पिता पहँ कीन्हा। यूसुफ खाइ यही बिक लीन्हा॥
आयो आज फेरि वहि ठाऊँ। लायो ताहि पकरि कै पाऊँ॥
तब याकूब सु छाँडि ढकारा। कहैं लाग का तोर बिगारा॥
यूसुफ मुख लखि दया न आई। केहि विधि लीन्ह सो तेहिं कहँ खाई॥
कैसे मन पतिआयौ तोरा। लीन्हसु खाय परान तुम्ह मोरा॥
औ याकूब सीस भुइ लावा। अय दयाल सुखदायक रावा॥
अज्ञा होय कहै बिक बाता। यूसुफ रकत अहै मुख राता॥
पूँछि लेहुँ सम अरिन्ह अयारा। तिन्ह यूसुफ कहँ कीन्ह अहारा॥

भय आज्ञा जगदीस कै, बोला बिक धरि सीस।
कह्यो अरथ यूसुफ कर, लेहु हमार असीस॥

यूसुफ कहँ खायौं केहि ठाऊं। देहु बतायै तहाँ चलि जाऊँ॥
यूसुफ केम तहाँ एक पाऊं। लेउँ सुदान बैन महँ लाऊँ॥
लाखन अजा मेख हमारे। का तोहि मिला प्रान के मारे॥
वह मुख देख दया नहि लागे। उठे न घात मया के आगे॥
कहै लाग सुन बिक नरनाहा। दोस न लाग कछू हम माँहा॥
जहँ लै सिद्ध औ साधु सरीरा। तेहि मानुस दुःखित हम पीरा॥
तुम अजौं तिन सब न देखै। वहै पुत्र परान बिसेखै॥
यूसुफ रूप देख सर नावहिँ। तेहि कैंसे हम खाय उड़ावहिं॥
हम ते घाट भये कछु नाहीं। देहु असीस घरहु अब जाहीं॥

सावक मोर बिछुड गयो, ढूढत फिरौ बेहाल।
पुत्र तुम्हार पकरि कै, लाय कीन्ह मुख लाल॥

तब याकूब सँवरन लागे। बिक ते पूँछन लाग सुभागे॥
तुम यूसुफ कर खोज बतावहु। कहौ सत्त सन्देह मिटावहु॥

लाल हमार कहाँ लै डारा। जीयत अहै कि मारि सँघारा॥
सावक तोर दई तोंहि दिये। यूसुफ सुधि कहै जस लिये॥
तब बोला बिक भुँई धरि माथा। का हम से पूछहु नरनाहा॥
पिसुन सरूप धरे मुख रहहीं। हम काहू कर दोख न करहीं॥
दोस होय आवगुन के लाये। पाप परावा परें सुनाए॥
आन उपाय कहै जो कोई। पातक तासु ताहि सिर होई॥
औ हम का जाने फिर भेदा। जानै सोइ रच्यो जिन भेदा॥

तुम्ह सुअस करतार के, आवहिं दूत तोंहि पास।
का पूँछहु हम से बिथा, पूछों दइय जो आस॥

बिक टीले चढि जाय पुकारा। किन यूसुफ कहँ कीन्ह अहारा॥
यूसुफ बधु सो हत्या लावा। कहहिं कि बिक यूसुफ कहँ खावा॥
है याकूब नबी रिस मोंहा। रोदन करै मरै नरनाहा॥
जो वह सराप देइ करतारा। सब बिक मरहिं होहिं जरि छारा॥
मै करिया देइ भयौं अदोखा। अब ढूंढहु तुम आपन मोखा॥
सुनि सारे बिक आरन केरे। आन बार याकूब सुघेरे॥
कहा कि तुम नाहिंय कछु दोखा। करै अलख तुम सब कर मोखा॥
कुटिय के आस पास चहुं ओरा। मारहि कूक औ करहिं अँदोरा॥
सुनि अँदोर याकूब दुखारा। आयो निकसि बिरह कै मारा॥

चहुँ दिस बिक रोवत चले, देखि नबी कर रोज।
कहै चलहु अब कीजिये, यूसुफ नबी कर खोज॥

बिक अजया याकूब पहिँ आई। रोवै लाग सीस भुँई लाई॥
सहस जंगम बन महँ आहे। हमे दोख केहि कारन कहे॥
पुत्र तुम्हार हमें दुख दीन्हा। रकत हमार सुदोखित कीन्हा॥
सो कुरता लोहूकर भरा। तुम्ह आपने नैयनन्ह पर धरा॥
राउर नैन ज्योति हरि गई। यहि हत्या हम्ह सिर पर भई॥
जनम जनम मैं औगुन दोखा। केहि बिधि करै दैव हम मोखा॥
तब याकूब बोध तेहि कीन्हा। तुम्ह कहँ दोष दइय नहिं दीन्हा॥
दोष तोंह जो तुमका मरा। यूसुफ बसन रकत रँग धारा॥
कत कुरता यूसुफ कर सारा। अजया मार रकत सों भारा॥

तुम्हें दोख कछु नाहिन, वै दोषी हत्यार।
जिन्ह यूसुफ तें मोहि कहँ, कीन्ह बिछोह निसार॥

सात दिवस दुख भयो अपारा। उतरे तेहि बन माँ बन जारा॥
मालिक नाम महा अस नायक। जात मिसर कहँ वहि सुखदायक॥
आगे वै सपना महँ देखा। होय लाभ यह बन उन देखा॥
सदा आप नायक यह बासा। करै सो वही बनै महँ बासा॥

तोहि महँ आये एक बनजारा। जल हित डोल कूप महँ डारा ॥
यूसुफ नबी डोल गहि लीन्हा। रोवत ताहि हाँक पुनि दीन्हा ॥
डारि डोल भागा डर खावा। ओ नायक तें जाइ जनावा ॥
जन्तु एक है कूप के माहीं। डोल अडोल है डोलत नाहीं ॥
तब नायक महँ आपसि धावा। तेहि के सब मानुस बहु आवा ॥
अध कूप तें ताह निसारा। होयगा बन सगरो उँजियारा ॥
पानी खोज जो कूप मँह, डारा डोल 'निसार'।
तँह यूसुफ कहँ पावा, धन नायक ब्योपार ॥
नायक देख परान अस पावा। होय मोहित लै चला सोहावा ॥
लै यूसुफ कहँ चल्यौ चलाई। तब लहि पहुँचे वै दस भाई ॥
धाय आन सब कीन्ह पुकारा। कहाँ जाँव लै दास हमारा ॥
दिन पाँचक तें भाग परावा। खोजत फिरौं कहूं नहिं पावा ॥
यूसुफ चहा कहै निज बाता। नायक ते बरनै दुख भ्राता ॥
तब समयूँ इबरी महँ कहा। बोल न बचन जो जीवन चहा ॥
यूसुफ नबी मौन तब साधा। लाग्यौ कहै बँधु दुख बाधा ॥
भागे सदा दाम बिन मारे। करे न काज भये हम कारे ॥
भोग न करै रहै नित रूसा। कब लहि रखें सो घाल मँजूसा ॥
दास हमार वो चोर हैं, सुन नायक निज बात।
मोल देहु लै जाहु तुम, मिटै कोप दिन रात ॥
मन महँ कहै लाख लहि देहू। यह बालक कहँ पुत्र करेऊँ ॥
मालिक कहा कहो सो देहीं। यह सुदास दोखी कहँ लेहीं ॥
वह यूसुफ कर मोल न जाना। थोर दाम माँगा अज्ञाना ॥
तीन दोख यह मँह बड़ मारे। भाये चोर रोय बद कारे ॥
कहा लेउं मैं दोषी दासा। जाय तो जाय रहे तो पासा ॥
मोरे पास रोकट है थोरा। बिसहौं मोल हस्ति औ घोरा ॥
बसन अतर ओ पाट पटम्बर। मृग कस्तूरी केसर अंबर ॥
कहा कि रोकर होय सो देऊ। यह सु दास दोषी कहँ लेहू ॥
तीन दरभ रोकर हम पासा। सो तुम लेहु देहु यह दासा ॥
अस कोरे हम दास तें, भय नायक दिन रात।
जो तुम देउ सो लेब हम, अवर न अब कछु बात ॥
कहा कि जो कुछ देहु सो लेहीं। का दोषित कर मोल करेहीं ॥
तुरतेहि दीन्ह न लायसि बारा। तब यूसुफ पुनि कीन्ह जोहारा ॥
मालिक कहा दाम भर लेहू। लै मोहि कहँ कागद लिखि देहू ॥
तब समयू कागद लिख दीन्हा। मालिक मोल यूसुफ कहँ लीन्हा ॥
हम सब मोल दाम पर पावा। दास चोर कहँ बेंचि अढावा ॥

लै कागद यूसुफ कहँ चला। कहा कि करम हत्यो मोर भला ॥
लागे कहै कि भागे दासा। राखियो बंद मँह निसि दिन प्यासा ॥
जो यह भागि जाय कहुँ नायक। हमें न दोख दियो सुख दायक ॥
तेहिं ते डारि देहु पग बेरी। ऊँट चढाय फिरहुँ चहुँ फेरी ॥
गयऊ सँकर पग बेरी, हाथ हथकडी नाथ।
टाट झूल पहिराय कै, फिरहु सो ऊँट चढ़ाय ॥
कँवल चरन महँ बेरी नवावा। कुसुम्ह बाँह हतकरी पिन्हावा ॥
टाट झूल यूसुफ कहँ दीन्हा। बसन अनूप काट तिन्ह लीन्हा ॥
जब वह बेंचि चले निर्दाई। यूसुफ रोय उठा अकुलाई ॥
आज्ञा देहु जाउँ उन्ह पासा। आवै समुद सो अस सो आसा ॥
नायक कहा मया तोहिं आई। वे जस सत्रु अहैं निरदाई ॥
कहा कि करत कोटि अनरीती। मोरे हियते जाय न प्रीती ॥
पहने टाट झोल अस भारी। बेरी पकरि चला बनवारी ॥
यूसुफ बिदा रोय तहँ कीन्हा। एक एक कहँ अकम दीन्हा ॥
वह रोवै वे हँसे निर्दाये। टाट झूल लखि मन रहसाए ॥
भूँख प्यास दुख मृत्यु मँह, भूलि न जायहु मोह।
सँवरेहु सदा हिये मोंहि, हम दुख बिरह बिछोह ॥
अनुज दास कहँ सँवरेहु भाई। तुमहि सपथ जनि दिहेहु भुलाई ॥
अब हम जाहि कहाँ किन देसा। कते रे मिलन कत जियन अँदेसा ॥
दास चोर बँधुआन बनावा। दहुँ आगे का चहिय दिखावा ॥
अब हम कहाँ, कहाँ तुम्ह भाई। जनम सब देइ विधि बिलगाई ॥
तात चरन सिर लायहु भाई। मोरे ओर ते कहेउ सुनाई ॥
पिता न दिहेउ प्रान तुम्ह रोई। देहु असीस भेट जेहि होई ॥
मोर मृत्यु जिन्ह ताह सुनायहु। फिर फिर सिर चरनन्ह लै लायहु ॥
मरहिँ न पिता करेउ अस काजू। नाहित होय दुओ जग लाजू ॥
रोय रोय सब बरन सुनावा। तब नायक तेहि बोलि भेजावा ॥
मात पिता जन परिजन, लोक कुटुंब परिवार।
यूसुफ चला विदेसु कहँ, किनआ नगर जोहार ॥
रोवत चला ऊभ लै साँसा। रहे न पिता मिलन की आसा ॥
चलै फेर देखहि उन ओरा। मकु भाई पूछहि दुख मोरा ॥
भाइन्ह कहा बिलम्ब जिन लावहु। नायक संघ बिदेस सिधावहु ॥
यूसुफ नैन मघा झर लाये। नायक पास गयो बिलखाये ॥
यूसुफ हिये सँवर यह बाता। मुकुर देख मुख आपन राता ॥
ऐस रतन संपत उन्ह पावा। चला बेगि नहिं बार लगावा ॥
मन महँ जस कीन्हे अभिमाना। तस सुमोल आपन हम जाना ॥

तेहि अवगुन यह दुरगत भयऊ। दास चोर बँधुवा होय गयऊ॥
चला सँगहि लै नायक, यूसुफ ऊँट चढाय।
फिरि फिरि करै जुहार वह, किनऔं देय सिर नाय॥
नायक पथ मिसर का लीन्हों। चहै दास यूसुफ सँग कीन्हों॥
लियै जात सँग वै निरदाई। मात गोर पर पहुँचा जाई॥
यूसुफ नवी नैन भरि हेरा। रोय रोय माता कहँ टेरा॥
लखि माता की कबर सुहाई। होय बिकरार गिरा मुरझाई॥
पुत्र तुम्हार जात परदेसा। भएहुँ दास देख्यो नहिँ मेसा॥
वै चरनन महँ देखहु बेरी। टाट झूल जो कबहुँ न हेरी॥
लोटै पड़ा कबर पर रोई। खाय पछार जीव कत खोई॥
देखि कबर पर दास अभागा। क्रोधवत होइ मारन्ह लागा॥
यहि अवगुन यह मोल बिकाने। अवहूँ त्रास हिये नहिँ माने॥
बेचनहारन्ह सत कहा, भागि जाय यह दास।
मस्तक मारि सो लैचला, पकरि सो नायक पास॥
जब सो दास यूसुफ कहँ मारा। मता कबर काँपै एक वारा॥
प्रान हमार भयो तुम दासा। मारि तुम्हेँ करि दास निरासा॥
पदुम बरन जो चरन तुम्हारा। तेहि चरनन महँ बेरी डारा॥
कौन देस तोहिँ कहँ लै जाहीँ। जहाँ सुमात पिता कोउ नाहीँ॥
काँपै कबर औ यूसुफ रोवा। दास पुत्र तेँ मात बिछोहा॥
आँधी उठी भयौ अँधियारा। सूझि परै नहिँ हाथ पसारा॥
घन गरजै बादर चढि आए। दामिनि कौँध चमक दिखराए॥
आवै चमक जो नायक पासा। लखि मालिक मन भयो तरासा॥
मैं तो दोष कीन्ह कुछ नाहीँ। केहि कारन दामिनि डरपाहीँ॥
बार बार जो आवै जाई। मलिक देखि हिए डर खाई॥
कौन पाप मोहि परगट्यो, कीन्ह दइय अस कोप।
जानि परै अँधकार महँ, सब मिलि होय अलोप॥
तब एक दास आगे चलि आवा। औ मालिक तेँ भेद जतावा॥
दास जो मोल लीन्ह तुम आजू। भयो कोप बिधि तेहि के काजू॥
जैसे तेहि मारा बिन दोखू। तेहि सुदास तेँ माँगहु मोखू॥
हत्यो कबर पर रोवत दासा। तेहि मारत अँधेर चहुँ पासा॥
तब मालिक यूसुफ पहँ आवा। नाय सीस कर जोरि मनावा॥
करहु छमा औ देहु असीसा। जेहि तेँ छिमा करै जगदीसा॥
तब यूसुफ दोउ हाथ पसारा। मिटि गा गरज कौँध अँधियारा॥
कीन्ह बहुत हठ बेचन हारे। तेहि कारन बेरी पग डारे॥
बैरी पाँव ते काटि बहावा। करि अशनान बसन पहिरावा॥

मालिक देखि अधीन भा, कीन्ह बहुत अरदास।
जैसे पकरि मँगाय कै, सौंपि दीन्ह मो दास॥

लैआए यूसुफ कै पासा। कहा कि है दोषी यह दासा॥
जो तुम कहौ सो सौंमति करहीं। जेहि तें सबहि दास तोंहि डरहीं॥
यूसुफ नबी बोल यह चेरा। निज बाहुन तेहि आनन फेरा॥
हत्यो जो रंग स्याम अँधियारा। चाँदा सम होयगा उँजियारा॥
मलिक देखि मो अचरज कीन्हा। वह सुदास यूसुफ कहँ दीन्हा॥
पुत्र समान रखै तेहि लागा। कहै कि भाग मोर अब जागा॥
नित नवीन बागा पहिरावै। अपने संग सो भोग खवावै॥
यूसुफ नबी करै नित रोवा। सँवर सँवर याकूब बिछोहा॥
मलिक भेद बहुत निरभावे। छुटि सुदास नहिं और बतावे॥

मालिक साज समाज के, चला मिसिर के देस।
कहूँ बिरह दुख ताकर, कीन्ह जो मिसिर परवेस॥

जुलेखा बरनन खंड

अब बरनौं यह कथा सुनावा। जासु बिरह तेहिँ मिसर लैआवा ॥
मगरिब देस सो नगर बखाना। तहँ तैमूस शाह सुलताना ॥
सबुह कछु ताहि दीन्ह करतारा। राज पाट सब कटक सँवारा ॥
संतति और न दीन्ह गोसाईं। सुता एक अछरी कै नाईं ॥
सो कन्या हुत बार कुमारी। नाम जुलेखा दई सँवारी ॥
भई तरुनि जग बास बसानी। रूप अनूप जगत सब जानी ॥
देस देस के नृप सुलताना। कीन्ह चाह सुलतान न माना ॥
दुहिता जोग रूप कहँ पावा। जेहि तें होय सँजोग मरावा ॥
कहँ यह जोग जगत महँ कोई। जो यह कन्या कर बर होई ॥

सात दीप से चाह उत, लागे आवे जाय।
काहू देय न उत्तर नृप, तौ लै गरब सुभाय ॥

अब नख सिख बरनौं तेहि केरा। बाउर होय जो दरसन हेरा ॥
प्रथम कहौं माँग कै रेखा। सुरसती जमुना बिच देखा ॥
खरग धार बह माँग सोहाई। सेंदुर तहाँ न रकत लगाई ॥
औ ता महँ गूँथे गज मोती। राहु केत महँ नखत कै जोती ॥
दुओ दस घन बादर जस छावा। मध्य कौंध चमकै दिखरावा ॥
दामिन अस वह माँग सोहाई। केस घमंड घटा जस छाई ॥
जस जमुना के नदी अपारा। माँग बाँध तिन्ह सुघर सँवारा ॥
सेत बंध तस माँग सोहाई। बिरही नैन बार जनु पाई ॥
जो न होत वह माँग अनूपा। डूबत नैन स्वरूप अनूपा।

माँग सुहाई सुख बँधी, भाग अधिक तेहि दीन्ह।
राहु केत दोउ दस तहाँ, मनहु किरन रब कीन्ह ॥

केस सीस का करौ बखाना। तछक देखि सो ताहि लजाना।
मुख पर लरहिँ जो होइ बेकरारा। तब सदेह करै ससारा ॥
कोउ कहै अहै तम राजा। सोहै तहवाँ जोत बिराजा ॥
कोउ कह अहै दिनेस सोहावा। बरत हेत कालिंदी आवा ॥
कोऊ कहै कि नागिन कारी। दीन्ह छाँड़ि मन सो उँजियारी ॥
कोऊ कहै श्याम अलि मोहा। पुहुप पराग आय तेहिं सोहा ॥
पुहुप चित्र महँ मृग मद बारा। खींची चित्र चितेरन्ह मारा ॥
केस सीस मानो निसि कारी। प्रात काल मुख कै उँजियारी ॥

केस रचत तज आस न पासा । को तेहिं जाय सो पावै बासा ॥
सिरिस फूल तहँ सोभा देई । श्रो चोटी लखि मन हरि लेई ॥
बेनी गूँथी लरी से, जग नागिन बन लीन्ह ।
मूँगा चौकी पीठ पर, भान छाँड़ि तेहि दीन्ह ॥
अब लिलाट बरनौ सुखकारी । राका ससि तासों उँजियारी ॥
कनक खोर सो टीका दीन्हाँ । ससि गुरु कमल अंथ ग्रह कीन्हाँ ॥
मंगल बूँद सुरंग सोहावा । ससि गुरु सुम्म एक ग्रह पावा ॥
राहु केत गज दोउ दस कारे । मध्य सोम पूरन उँजियारे ॥
तहाँ सो झलक किनारी देखा । जस ससि महँ दामिनि परबेसा ॥
इत अवरोध उधुध सुहावा । दुओ दस राहु गुपुत दिखरावा ॥
गुर सुर कुज ससि कै यक ठाईँ । सोहैं सदा लिलाट सोहाई ॥
गिरवर गढ़ सोहै तिन्ह सारा । होय बिकल तेहिं देखन हारा ॥
जोत कहिय मन झूँठि कै जाना । उन कै अग बिकल मै आना ॥
चंद लिलाट न सोहै, पूरन जोत अपार ।
वह कलक बिकलक नहिं, वह षट बुध लहि सार ॥
भौंह धनुक का बरनै कोई । जाय सो ग्यान तहाँ लखि खोई ॥
बरनै सर वह धनुख समाना । ताहि देख जग डरपै प्राना ॥
भौंह कमान चढै नित रहै । सर सधान सो मारन्ह चहै ॥
गाछ गाछनैं सुन्दर सोहैं । लखि भृकुटी सो सूर मन मोहैं ॥
इन्द्र धनुक तेहि देखि लजाना । खीन बान होइ बेगि बिलाना ॥
धनु महँ जीव आप परबेसा । दुओ दस केस सोहावन केसा ॥
भौंह सरासन भृकुटी बाना । नैन बान इत बाँधहिं बाना ॥
देखि ताह थिर रहै न ग्याना । जाय भूलि सब सुद्धि पराना ॥
तिन्ह बेंदा कोटिन छबि देई । धनि मानहु जीवन हरि लेई ॥
धनु भौंहें बिधनै रच्यौ, भृकुटी सनमुख बान ।
देखि सरासन सिर चढ़ै, काँपै जगत परान ॥
नैन देखि मन होय बेहाला । जासु कटाछ हिए महँ साला ॥
सेत साम श्रो अरुन सोहावा । बिख अमिरित मधु घोर दिखावा ॥
जाकहँ लखै भये चख राता । मरि मरि जियै रहै मदमाता ॥
अंबुज बरन दिधिग अरुनाई । भानु बरन होय गयो लुभाई ॥
अञ्जन जोर सदाँ मतवारे । घूमहि निस दिन प्रेम अखारे ॥
दौ बोहित दोउ नैन सँवारा । लाज सनेह बोझ दोउ भारा ॥
दुअ अँमिरित कै सुभग कटोरी । ता महँ सरब हलाहल घोरी ॥
लहर कटाछ न जाय बखाना । जिन देखा तिन निश्चय माना ॥
दोइ खजन सारद रितु माहीँ । राका ससि निरभरै लडाहीँ ॥

दुश्रो सुनैन जग में किए, जाल सितासित साज।
जाय विछावा मधुर विष, मन मोहन के काज ॥
दोउ सरवन दुइ सीप सुहाये। मोती भरा सदा दिखराए ॥
करनफूल औ पात सुहाए। बाली तेहों अधिक छवि आए ॥
बरनि न जाय मरव रस ताके। प्रेम बचन सुनि निसि दिन जाके ॥
प्रथम प्रेम कर सरवन वासा। बिन नैनन कर करहिँ पियासा ॥
बहुरि हिए महँ करि बर बेमा। करहिँ ताहि बाउर कै बेसा ॥
पुनि सरूप सरवन सुख दाई। करन करन का बरन सोहाई ॥
कान अनूप सो प्रेम नगीना। कानन ते उपज्यो नित हीना ॥
कान न करहिं सो कान सोहाए। सुनहिं बचन सो वह मन भाए ॥
सरवन अधिक सोहाने, दुश्र दस रूप अनूप।
बिन कटाक्ष करतार कहँ, दुश्रो दस रतन सरूप ॥
नासिक रसिक सदा रस गाहक। बास सुबास लिए जेहि लाहक ॥
नथ बेसर छवि खेल कराए। मोती डोलत हिया डोलाए ॥
मानहु हाथ सिकन्दर केरा। रूप भँवर ते लहरन फेरा ॥
मोती पडसि अधर पर आई। चिनगी मनो चकोर चुराई ॥
सबहु मुख कै सोभा वह नासिक। सब रस लीन्ह औरहिँ सो बासुकि ॥
जस चपै की कली सोहाई। खड्ग धार तेहि मन विकसाई ॥
नासिक रसिक महा सुकुमारा। निरखहिं मनुस अनेक अपारा ॥
धन नासिक की रीत सोहाई। गुन अवगुन सबहु दीन बताई ॥
सभै बदन कर अहै सिँगारा। बाँधै काम खरग कै धारा ॥
नासिक सोभा का कहैं सब मुख सोह बढाय।
तापर ऊँच सुहाए, उत समुद्र अधिकाय ॥
अब कपोल बरनौ सुख दाई। गात गुलाब देखि मुरझाई ॥
सबहि कपोल सुरंग सुहावा। देखत काम ताहि छवि आवा ॥
कँवल कपोल न जाइ बखाना। कहँ ससि पर जग ताहि समाना ॥
बेसर देख सो आन लजाए। कहँ तेहि सम जेहि उपमा लाए ॥
ता मे दसन अनूप सोहावा। तिल कपोल छविबरनि न आवा ॥
बिसुकरमै लखि सुघर कपोला। दीठ परै तिल दीन्ह अमोला ॥
ईँगुर जान कपोलन गाना। उत सुरग तिन्ह भँवर भुलाना ॥
सिहर सुहावन बोल अनूपा। जाय रूप लखि जाय सुरूपा ॥
रचा चतुर बिधि सुघर चितेरा। परी बूँद खसि केरिन हेरा ॥
कँवल कपोल सोहाने, तिन सोहै तिल स्याम।
जस अलिन्द अरबिंद पर, आन कीन्ह बिसराम ॥
अधर सुधा धर बरनि न जाई। भये अनूठि वै जूँठन पाई ॥

अँबिरित सम देखतन कर जूँठा। वह सो अधर पुहुप अनूठा ॥
जानि न परहिं अधर उत खीने। नित भाखैं वै मधुर नवीने ॥
सुनत बचन वै अधर सोहाए। ऊख पियूख बनूख सुखाए ॥
अधर सजीवन मूर सुहावा। सुधा पिडाक बिरंचि बनावा ॥
अधर खोल जब वह मुसकाई। खान सजीवन की खुलि जाई ॥
जब मुसकाय सखिन्ह सें गारी। झरहिं फूल औ होहिं अंजोरी ॥
अरुन मृदू औ अमिय सुधारा। रहत अधर पियूख अधारा ॥
जो वह अधर मधुर मुसकाई। तो मिरतक कहँ देत जियाई ॥
अधर सुधाधर मधुर उत, कीन्ह सुरँग सुख भाग।
जेहिते बोलें औ हिये, सदा सजीवन पाग ॥
चिबुक सो ताहि का बरनै कोई। सिद्धि सदन महँ कूप सो होई ॥
देखत कूप होय बिकरारा। बूड़ै मरै जिऐ इक बारा ॥
प्यारे बदन सिद्ध करतारा। तहाँ कूप महँ चिबुक अपारा ॥
चढ़े दिष्टि मुख देखै लागै। पड़े कूप महँ जाय सो थाकै ॥
भँवरन पड़ै डीठि वह जाई। टक टक रहे सो थाह न पाई ॥
चिबुक गाड़ उत सुडौल सँवारा। मज्जहिं जग मानुस बिसतारा ॥
वह सुभ्झलक जेहि उपमा पाहीं। बूड़हिं तड़पहिं चित तेहि माहीं ॥
परे जबहिं डूबहिं उतराहीं। पार घाट तेहि पावत नाहीं ॥
गाड़ अनूप बार बिसतारा। चमकै सुभग सो दई सँवारा ॥
चिबुक सुहावन सुंदर, गाड़ अनूप अपार।
को तिन महँ बूड़हि तरहिं, कतहुँ न पावे पार ॥
गिवँ अनूप बरनै का कोई। देखत पाप जाय तेहि धोई ॥
गीँव सुहावन सुभग अनूपा। जातरूप डरि जाइ सुरूपा ॥
कुंदन चाक चढ़ाय बनाए। देहि अदेहिन गार सों सुहाए ॥
चमकै अरुन सुहावन गोऊँ। कनक खोट जेहि लखि जीऊँ ॥
बिसुकरमै उत सुंदर साजा। गीवा देखि हिये महँ लाजा ॥
लखि सुगीँव थिर रहै न ज्ञाना। साँचे ढार रचा सज्ञाना ॥
चंपक कली उर बसै अनूपा। कहँ भूखन जो गिवँ रस रूपा ॥
सभै अंग बिधि आप सँवारे। सभ ऊपर वह गीँव निवारे ॥
कंठ अमोल गोल उत सोहा। मुनि गँधरब रिपि ता लखि मोहा ॥
गीव उठाने गरब तें, पड़ै कूप अभिमान।
रंभा सिध औ उरबसी, रमा मनोज लजान ॥
उर चमकै जस उदित जुन्हाई। तिन्ह उरोज दुइ मुरति सुहाई ॥
कोमल कुच बन्यौ बरनीमा। बरन लरै फल रंग महेसा ॥
नारंगी सो उरज कठोरा। कुछ उपमा तेहि जाय न जोरा ॥

उर कुंदन पानी जस डारा । दुइ मूरति महँ आप उतारा ॥
दोउ लाल कै मूरति साजा । देखि सो लाल रंग वह लाजा ॥
कुंदन बागन क्यारि बनाई । दुइ अँबिरित फल तहाँ सोहाई ॥
कँवल कोविदहि उरज सोहाई । चख अलिंद रस लीन्ह लुभाई ॥
सुरत मनोज देखि कै हारा । निज अँवधाय सो रख्यौ नगारा ।
घुँघची सम तेहि रंग सोहावा । तहाँ स्यामता उन छवि पावा ॥
तहाँ हार औ मोहन माला । होय प्रान हाल बेहाला ॥
कुच कठोर देखत हरै । सुर नारी एक बार ।
काम कला पूरन तहाँ, कीन्ह आप बैपार ॥
छतिय अनूप दुइ लई सँवारा । पान फूल कै रहे अधारा ॥
रोमावलि रेखा तिन्ह सोहै । नैनन्ह देखि देखि ताहि मन मोहै ॥
अँबिरित कुंड सो नाभ सोहाई । रहै नागिनी मुख लपटाई ॥
देखि गरुड़ वह चकिरित भई । नागिनि ढहकि तहाँ रहि गई ॥
अँबिरित कुंड नाभिमुख पूरा । रहि पाछे मुख फेरि न मोरा ॥
छतिय निहारि सखिन्ह ललचाहीँ । सुर नर मुनि कोउ देखा नाहीँ ॥
जो देखे वह छतिय सोहावा । पूरन काम सो आन सतावा ॥
ता पर पीठि अनूप सँवारा । होय मलीन दीठि कै मारा ॥
कोमल चिमल पेट निरमाया । रोमावलि बेनी कै छाया ॥
रोमावलि बेनी बिरह, सोहै छत्र अनूप ।
गात सोहावन उत बिमल, छाया अतुल सरूप ॥
का बरनै भुज सोभा कोई । रचा चित्र महँ चित्रित सोई ॥
भुज ते कर अँगुरिन लहि सारा । चढ़ा उतार सु चित्रित धारा ॥
पुहुप छत्र वह दंड सोहावा । काम चितेरै चाक फिरावा ॥
भुज भूखन कर भूखन सोहै । अँगुरिन मुदरि लखि मन मोहै ॥
दोउ कर सोहै ललित कलाई भले देख अच्छ पाय अछाई ॥
वह सावक चंदन कै साखा । लपटे रहैं करैं अभिलाषा ॥
कर भुज ते उत सुंदर साजा । रोम रोम छवि सिस्ट बिराजा ॥
भुज भूखन नौ रतन सोहावा । कर पहुँचीन जरत छवि पावा ॥
चित्त हरा लखि पावन रूपा । धनि पावन कर रूप अनूपा ॥
इंदु बुंद्ध अरु मेहदी, रतनक जनु तेहि बान ।
तेहि ईंगुर छवि देखि कै, रहै मोहि मन मान ॥
पीठहिँ तेहि कर गोल बेयारी । ता पर परी जो चोटी कारी ॥
मूँगे की चौकी छवि देई । तिन बैठे नागिन छवि देई ॥
पीठ के तन को सकै निहारी । डँसै डीठ महँ नागिन कारी ॥
वह सो पीठि जेहि तजै न डीठी । देखा करै सदा वह डीठी ॥

देखत रहे पीठि चख हारी। पाछु परे रह डीठ न पारी॥
सुदर पीठि कनक रँग धारा। बिसुकरमै जस साँचै ढारा॥
पीठि देखि मन चकित होई। कुसल छेम लखै का कोई॥
दुअ दस पीठि अपूरव देखा। सोहै बुद्ध कनक कई रेखा॥
सो रेखा लखि ज्ञान हराई। कदलि रेख के पटतर लाई॥
पीठि दीठि देखत सदा, होय हिए बिकरार।
नागिन बेनी तिन्ह बसी, डँसी पीठि एक बार॥
निसँक लंक बरनी नहिँ जाई। डीठि भार कत सकै उठाई॥
रहैं सखी अचरज कै माहीँ। कोउ कह आह कोउ कह नाहीँ॥
बार चाह कटि कोमल बेनी। देखि न सकै सो डीठि बिहूनी॥
नारिन संग जहाँ पग धारा। लचि लचि जाय बार कै भारा॥
चलत नारि मन संग करेई। डुमची लचि धनु हिया डराई॥
कनक तार अस लंक सोहाई। काँप दीठि सो रहै-डराई॥
धन चरित्र वह सुघर सँवारा। सहै नारि सभ तिन कै भारा॥
सभ तन देखैं नैन सोहाए। अंग संग लखि तेहि डर खाए॥
कटी भाग छबि देइ अपारा। मोहहिँ सुर मुन तेहि भकारा॥
निरगुन सुरगुन पाव जस, तस कटि परै न देखि।
अवर अंग देखैं नयन, भागहिँ लंक बिसेख॥
जंघ तत का करौं बखाना। कँवल अमोल सुभग सुर ताना॥
भारी जंघ तत सोहावा। पिँडुरी जहाँ अधिक सुख पावा॥
मूँगा की यह जंघ सुहाई। तस पिँडुरी अस चाँक सुहाई॥
का बरनै ताकै सुकुमारी। सभ तन सौँह तासु अधिकारी॥
औ पिँडुरी सोहै उत गोरी। नैनन भार होय मति थोरी॥
पिँडुरी जंघ लखि रहै न ज्ञाना। लखि तँत जंघ तजहिँ सब प्राना॥
जैस तत तस जंघ सोहाए। तस पिँडुरी अस चाक फिराए॥
चाक चढाय सँवार्‌यो ताही। होय अधीर नैन लखि जाही॥
तिन्ह पायल पैजनी सोहाई। घुँघरू बिछिया बुद्धि हेराई॥
जंघ सोहावन देखि कै, सत्त धरम भजि जाहिँ।
पिँडुरी निरखत पाप दुख, हरै पला छिन माहिँ॥
नख अमोल कछु बरनि न जाहीँ। कँवल चरन लखि संपुट गहहीँ॥
जस अरबिंद सुरंग सुहावा। तस वह चरन अनूप* बनावा॥
देखि कमल होय रंग बिहीना। वह सुचरन सुख रँग रस लीना॥
चरन बरन तेहि जाहिँ सोहाए। देखत पाप सोभाग हेराए॥
औ अँगुरिय तेहि सुंदर आनी। मेहँदी ईंगुर ही के पानी॥
यक नूपुर बिछिया उत सोहै। कोकिल सुनत सबद वह मोहैं॥

रूपौ चरन सब सोभा साधा। देखत चित्त रहे तेहि हाथा।
उत कोमल ऍड़ीय सोहाई। देखि महाउर हिए लजाई॥
जब तरुनी भइ राजकुमारी। काम अनग अग सचारी॥
उत ऍड़ी सुकुमार तेहि, अँविरित लाल लगाय।
धरत पाँव वह बाल के, बासुकि देखि लजाय॥
सखिन्ह जो चाहैं पाँव पखारा। चकित भान रग लखि सारा॥
रूप अधिक तैं हिए उछाहा। भूखन रचि तिन गंधरब लाहा॥
निस दिन सखिन्ह सग फुलवारी। करै कुलाहल कोट घमारी॥
मदन प्रवेस हिए महँ कीन्हा। पेम सुरग अग महँ कीन्हा॥
देख सरूप सखिन्ह ललचाहीँ। पवन बास तिन्ह पावत नाहीँ॥
धाइ खिलाई सखिय सहेली। तेहि के सग करहि सुख केली॥
साज सिँगार औ अभरन जोरा। रूप गुमान न काहुन जोरा॥
मता पिता के प्रान अधारी। समय सोच नहि जानै नारी॥
और रोग तेहि तैं मुरझाही। गात तत उन्नत अधिकाहीं॥
भय बालापन बारी, सदा रूप अधिकाय।
मात पिता वहि तरुनि लखि, लागै हिये लजाय॥

स्वप्न खंड

एक रात जो करै सोहावन । प्रेम स्वरूप बिरह उपजावन ॥
प्रेम भरी रजनी उँजियारी । सखिन्ह साथ सोवै सो नारी ॥
आधि रात लहि जागि कुमारी । प्रेम कै बात सुनत सुखकारी ॥
आई नींद तमसि अलसानी । सोइ गईं सब सखी सयानी ॥
सोवा पहरू औ कोतवारा । सोवा सो उत घट बजनहारा ॥
सोवैं सुखी दुखी नर नारी । सोवै खग मृग खेत करारी ॥
सब सोवा कोउ जागत नाहीं । जागत एक प्रेम जग माहीं ॥
सोवै लगि तेहि समय जुलेखा । यूसुफ कहँ सपने महँ देखा ॥
मीठी नींद सबै जग सोवा । प्रेम बीज हिय जा महँ गोवा ॥

भाँन सरूप तहँ आय गय, देखि रहै टक लाय ।
लीन्ह प्रान तिन्ह काढि कै, रूप अनूप दिखाय ॥

देखत नारि बिमोहित भई । निरख रूप बाउर होइ गई ॥
नैन बान ते बेधा हिया । बात न आउ मौन भइ तीया ॥
छिन एक ठाढ रहा रँगराता । पुन मुसकाय कीन्ह अस बाता ॥
हम तुम्ह का चाहा चित लाई । तुम्ह हियँ ते जिन देहु भुलाई ॥
कहि यह बात चहा उर लावा । जागि परी कुछ दिष्टि न आवा ॥
जागत कै चकचौंहट लागा । जस पछी कर ते उड़ भागा ॥
हिरदै लागि प्रेम की गाँसी । भयो सुज्ञान हानि तन नासी ॥
सोवत सुख जागत दुख पावा । रोम रोम तन बिरह अकुलावा ॥
मूरत एक सुदिष्ट दिखाई । हिए माहि जस गई समाई ॥

प्रेम फंद अरुझाने, गई ज्ञान मति भूल ॥
सँवर रूप अकुलाय मनु, उठै हिये महँ सूल ॥

उठि बैठी मुख सँवरत सोई । नई लगन कहि सकै न कोई ॥
जब सँवरै मुख तब बिलखाई । लै सुलाज तें रोय न जाई ॥
बिरह बान बेधा एक बारा । रोम रोम व्याकुल तेहि छारा ॥
चिनगी बिरह आगि कै लागी । सुलगै लाग हिए महँ आगी ॥
सखिन्ह देखि घन बदन मलीना । मन व्याकुल तन सुध बुध हीना ॥
पूँछै कत तुम्ह चित्त उदासा । कवन सोच तुम हिरदैं बासा ॥
तुम्ह सब कर जग प्रान अधारा । काहे लाग भई निकरारा ॥
सम सुख तुम्हहिं बिधाता दीन्हाँ । मन मलीन केहि कारन कीन्हाँ ॥
पान न खाहु न सूँघहु फूला । अभरन अवर सिँगारहु भूला ॥

दिन भर मौन किये रहै, भूख प्यास गये भूल।
पान न खाय न रहि सकै, कोंट भए सब फूल॥
भूखन रतन उतारि जो डारा। दुख दायक भये सबहिं सिंगारा॥
मन महँ सोच करैं मुरझाई। लैगा प्रान स्वरूप दिखाई॥
नाउँ ठाउँ कछु जानत नाहीं। कहाँ सो खोज करूँ जग माहीं॥
नियरे ठाढि रहै वह मूरति। जेहि बिन तन मन प्रान बिसूरत॥
रूप दिखाय सो चेटक लावा। मधुर बचन कहि अधिक लुभावा॥
सेज परै जागै फिरि सोवै। लखै न रूर उठै फिर रोवै॥
ना वहि मूरत ना वहि ठाऊँ। कौन हत्यो वह का नहिं नाऊँ॥
छूटै आँसु चलै जस मोती। कहै के अय मनभावन जोती॥
कहाँ गयो वह रूप दिखाई। नट नाटक चाटक अस लाई॥

तोहि संपति वहि दइ किये, जिन्ह कीन्हाँ तोहि भूप।
एक बार फिरि आवहू, आनि दिखावहु रूप॥
ज्ञान हेराय तो मूरत हेरानी। लागत आगि न बरसै पानी॥
जातवेद होय सेज जराई। जानि बेघ सब बेद भुलाई॥
पावक झर से पवन जो लागे। रोम रोम लै सरागन दागे॥
खिन उठ सेज परै बिकरारा। खिन उठ कै बैठे बिसँभारा॥
खिन तन डहै से अगिन उदासा। खिन बरसै चख ऊदक झरना॥
खिन सो उठै बिरह कै ज्वाला। खिन मुख सँवरत होय बेहाला॥
कहै कि ए बैरी दुख देवा। का मै कीन्ह चूक अस खेवा॥
खिन रोवै खिन नैन छिपावै। खिन सोवै पै नींद न आवै॥
बिकल सरीर भयो जस पारा। बिरह अगिन ते सुठि बिकरारा॥

खिन चख बरसै अगिन जल, करत न बनै पुकार।
कल न परै पल ना लगै, सहै दुकूल न भार॥
यहि बिधि निसि बीतै दिन आवै। सखिन्ह देख चख नीर छिपावै॥
अधिक बिकल होय प्रान गँवावै। रोवत बनै न कहत सोहावै॥
बैठहिं मौन साध बैरागी। हिये सँभार बिरह कै आगी॥
उठ धाईं सभ सखी सहेली। करत सदा जस कूकत बेली॥
देखा आप जो प्रान पियारी। सखिन्ह होंय अधिकौ बिकरारी॥
निस दिन खोज करै सभ कोई। कँवल भेद का जानै कोई॥
धाई लखा पेम कै पीरा। चरचा देखि मलीन सरीरा॥
जब सु एकंत भईं तब काहा। केहि बिधि अंबुज सपुट गहा॥

कहौ भेद धनि आपन जो कुछ बिरह बियोग॥
करौं उपाय सो रोग कै, लै मेरऊँ तेहि जोग॥

मैं तोहि का केहि चाह से पाला। दिन दिन देखि सो होहुँ बेहाला॥
बालापन तोहिं हियँ चढाये। फिरौं चहूँ दिसि तोरे फिराये॥
पोखयों सो तन छीर अधारा। प्रान तें अधिक सो प्यार तुम्हारा॥
नित छाती पर तोहिं सोलावा। नैन ओट मोहि चैन न आवा॥
तोर सो दुःख हरयो मोर चैना। कैसे दुखी लखौं निज नैना॥
सुनि यह बात चरन सिर लावा। आपन अरथ सो बरनि सुनावा॥
तुम माता तें अधिक पियारी। तोहि छुट अवर न हितू हमारी॥
औ तोहिं सम कोउ नाहिं सयानी। तोहिं सब वेद भेद जग जानी॥
पै दुख मोर कठिन है धाई। जेहि दुख कर कोउ नाहि सहाई॥

कहा हौं मोह्यौं अछरी, कहु मानुख केहि मान।
जेहि के नित मोहि आस है, कत दुख सहै परान॥

कह्यो लाज ते कहा न जाई, जो न कहौं कत प्रान रहाई॥
प्रान जात का भेद छिपाऊँ। कहौं बिथा जो औषध पाऊँ॥
धाय कहा तुह प्रान अधारा। तोरे लाग तजौ घर बारा॥
सौं देखौं तोहिं चित्त उदासा। कहाँ मोहि अब रहै हुलासा॥
सो जानहु हम गुन अधिकारी। कस न कहहु तुम भेद उघारी॥
जानहु प्रेम कीन्ह तन रेखा। काहुन कहँ तुम नैनन देखा॥
तेहिं कर करौं सो ओखध खोजू। हरौं सकल दुख डारौं रोजू॥
कहा जुलेखा सुन मोर बाता। मोर हिया कुठाउँ सुराता॥
सपने महँ वह रूप बिसेखा। जो कबहूँ ना सुना न देखा॥

करौ जतन अब धाय, न तो मरौं जिव खोय।
कहा भेद मै तुम्ह ते, सुने न दूजा कोय॥

तेहि कर बिरह बान मोरे लागा। लागत रोम रोम तन जागा॥
चहहु प्रान तो करहु उपाऊ। हौं पखिय जेहिं पंख न पाऊ॥
मोहि बारे बिधि हिये सँवारा। लाजन न मरों न जाय उघारा॥
जो निलज्ज होय प्रान लुटावँहु। जन परिजन महँ लाज गँवावँहु॥
धाई सुना प्रेम कै बाता। उपज्यो रोम रोम दुख गाता॥
कहा बिरह पद कठिन अपारा। जेहि के प्रेम वार नहिं पारा॥
भये सपने लखि प्रान उदासा। पूछि न लिह्यो नाउँ औ वासा॥
नाउँ ठाउँ जेहि कर कुछ नाहीं। को जानै कछु उन जग माहीं॥
कै दुहुँ सरग लोक कर कोई। दैगा दुख दिखाय मुख सोई॥
कै दुहुँ कछु चाटक देखरावा। झूँठ साँच कोउ जान न पावा॥

काह करौ कत जाउँ चलि, कासों कहौं दुख रोय।
बिना नाउँ औ ठाँउ कर, का जाने को होय॥

सुनि यह बात सो भई अधीरा। बाढै अधिक प्रेम कै पीरा॥

भई अधीरज औ अज्ञाना। कहा कि कौन अहै सुलताना॥
अहै सो मोर जीव लेनहारा। देउँ प्रान तो वहि हत्यारा॥
आई सखी धाय चहुँ ओरा। लिये भोग औ कनक कटोरा॥
बैठी रहै मौन की नाईं। सखिन्ह खवावहिं भोग बरियाईं॥
वह जिय अवर भोग कै जोगू। बिरह बिथा औ प्रेम बियोगू॥
भूला खेल औ भोग बिलासा। भूला सुख औ खेल हुलासा॥
भूला बेद औ कथा कहानी। प्रेम के पंथ बँधहु अरुझानी॥
भूला अभरन रांग सुहागा। सखिय भई दारुन बिछुनागा॥
भूला खेल कोलाहल, सुख संगत गय लूट।
प्रेम फंद अरुझाने, अवर फंद सब टूट॥
चार जाम दिन यहि बिधि खोई। बोलत बात सिखिहिं मुख जोई॥
निस कों सेज बिछावै रोगी। धाइ पड़ै पट ओढ़ बियोगी॥
चलैं आँसु जस झलझल सेजा। रोय बुझावै तपत करेजा॥
सखिन्ह पाँव जो चापैं बैसे। बेधहि बान सुदारुन ऐसे॥
कहैं कथा जो सखिय सयानी। चित्त बियोग को सुनै कहानी॥
फूल सो आन बिछावन सेजा। दहकै देह औ तपै करेजा॥
चंदन आनि बदन महँ लावें। लागि आगि तन दुगुन दुखावें॥
भवन भाकस अस घर खाये। अभरन तनु जस काल डँसाये॥
रोम रोम जारै दुख दीन्हों। भा तन फाँस बरन वह नेहों॥
होय बृथाकुल बिलखाय, पल न लगै बेहाल।
तज धीरज चख मूँदि कै, बिनवै दीनदयाल॥
बूड़हि देहु थाह मँझधारा। बिछुड़े तोहिं मिलावन हारा॥
कहाँ मुरत औ ताकर बासा। कवन हतो जिन कीन्ह उदासा॥
का तेहि नाँव ठाँव तेहि कीन्हीं। कलपौं नाथ जाऊ मैं ताही॥
कहाँ रूप उपज्यौ करतारा। कहाँ सो अहै जीव लेनहारा॥
पियुखन कै अस बचन बतावा। लैगा प्रान सो बोल सोहावा॥
केस सीस वै कहाँ बनाये। कवन जाल तिन्ह प्रान फँसाये॥
यहि बिधि रोवत जोवत आसा। सब निसि जात भरत ऊसाँसा॥
निसि बीते यह दग्ध अपारा। बिरह बिहाय होय भिनुसारा॥
कहाँ नैन औ रसभ कपोला। कहाँ सो अधर सुधाधर बोला॥
मरै जियै लाजन डरै, करै न बिरह उघार।
जेहि पर परै सो जानै, लगन कै अगिन अपार॥
दिन भर सखिन्ह संग मुख जोवै। निसि एकत होय झल झल रोवै॥
भीजे सेज औ पाट बिछावन। सँवरै हिये रूप मन भावन॥
नींद भूख सगरौ परिहरै। सोय रहै नित मोती भरै॥

छुट रोदन औषदहि अपारा। और न कुछ तेहि नींद अहारा॥
बिरह बिथा हिय अंदर राखै। लाज खोय न काहू तें भाखै॥
यहिं बिधि दिन बीतै निस आवै। रात दिवस धन रोय गँवावै॥
देखै सखी कँवल कुम्हिलानी। पै कछु भेद परै नहिं जानी॥
पूछे भेद कहै कछु नाहीं। बैठी रहै भवन कै माहीं॥
कहाँ रैन वह चैन कै होई। जो फिर दरस दिखावै कोई॥
दिन भर रहै सो बद महँ, सूर जरावत दीन्ह।
दिन तें पीर बढ्यो सखि, निसि तें बढ़ै सनेह।
बीता बरख हरख तन त्यागा। रह्यो अकेल बिरह बैरागा॥
भए अस दुखित छूटिगा भोगू। जोगउ ते साधा सुठ जोगू॥
चरचै बिरह सो सखी सयानी। जेहि के मरम परै नहिं जानी॥
माता देख भई बिन प्राना। कौन तुसार कँवल कुँभिलाना॥
लीन्ह बुलाय हिये महँ लाई। लाय हिये महँ धीर बँधाई॥
माता भेद सखिन्ह से पूँछे। का वै कहैं भेद सो पूँछे॥
डरहिं सखिय तेहि देखि सुभावा। रहा निकट दुख कठिन नियावा॥
निसि दिन जरै बिरह कै जारे। उतपत प्रेम भये सुख कारे॥
देखि सुता जननी अकुलानी। आरत करै आप सुग्यानी॥
चढ़ी माय कैलास पर, भोग दई से हाथ।
सेवा करै अनेक बिधि, राखै निसि दिन साथ॥
कोटि जतन कै हारी सोई। एक दिवस बिधि आन सँजोई॥
मूँध चहै हिय परगट केरा। खोलन चह हिय केर अहेरा॥
सोवै तन जागै वह जीऊ। हिये नैनन ते देखै पीऊ॥
जेहि बिधि आदि परघट भो सोई। आवा फेर ना जानै कोई॥
धाय नारि पाँव लै परी। हाथ जोरि आगे भइ खरी॥
कहा कि प्रीतम लेहु न प्राना। देहु बिछोह किहेउ तन हाना॥
तोरे दरस परस कै आसा। रह्यो आस घट पजर साँसा॥
तुम अस कत भुलायो मोहीं। मैं नित जरेयौ सपन लखि तोहीं॥
निस दिन सीस चढायों खेहा। भसम बिरह तोहि अबुज देहा॥
तुम अस निठुर बिछोही, बहुरि न लीन्ह्यो चाह।
मुयौ सो बिरह बिछोह तें, अब कछु करहु निवाह॥
कहा कि अस मोहिं उपज्यो सोगू। तुम्ह ते अधिक सो बिरह बियोगू॥
तुम पर कौन बिथा अस बीती। हौं जस सहौं सो प्रेम पिरीती॥
तोरै बिरह भयो अज्ञाना। छाँड्यो देस औ नगर अपाना॥
तोरै लाग भयो परदेसी। मिला न कोई प्रेम सँदेसी॥
सो तुम मोहिं भुलावहु नाहीं। राख्यौ प्रीत सदा हिय माहीं॥

सदा मोंहि तुम नियर विसेखो । दूजे पुरुख और जनि देखो ॥
जो चाहो हम दरसन राता । दूजे ते जिन बोलहु बाता ॥
जब सॅवरों तब हौं तुम्ह पासा । हम तुम्ह आस रहौं तोरे आसा ॥
होय बिलव सोच जनि मान्यहु । प्रेम न कतहुँ अबिरथा जानहु ॥
मोहिं भूल्यहु जिन प्यारी, औ सॅवरहु दिन रैन ।
करो सदा बैराग चित, तब पावहु सुख चैन ॥
कहि यह बात चहा उर लावा । जागि परी कुछ दिष्टि न आवा ॥
वहै सु सेज वहै सोउनारी । अधिक भई व्याकुल वेकरारी ॥
उठि बैठी औ लागी देखै । देखै सभै न ताहि बिसेखै ॥
कहा कि अरे प्रानपत मोरे । बॅध्यो प्रेम फाँस मै तोरे ॥
कब देखहि भरि नैन अघाई । केहि दिन हिय की प्यास बुझाई ॥
कब वह घडी सो पल फेरि आवै । जेहि दिन दरस परम उन पावै ॥
मै बाउर कछु सुध न कीन्हीं । नाऊँ औ ठाऊँ पूॅछ नहि लीन्हीं ॥
कहि ते कहौ सो आपन हारा । पूॅछ न लिहयौं सो अरथ अपारा ॥
प्रेम आय हिय में बसा, बसा सो आठों अग ।
दिन दिन वह बिरहिन दहै, कौन सु चरचै सग ॥
दिन भर रहै मौन की नाईं । रैन जाग और रोय बिहाईं ॥
परसन भयो जो सपने माहीं । नाऊँ ठाऊँ कुछ जान्यों नाहीं ॥
अब की वेर फेर तोहि पाऊॅ । बरुनि सजल पग साँकर नाऊँ ॥
राखो नैन वालि बिलॅमाई । मूदौं पलक देहुँ नहिॅ जाई ॥
आवत लख्यों न गोपित देखा । भयौ मोर बाउर कै लेखा ॥
कहॅ विधिना अस करै सुभागा । मिलौं कनक जस काेटि सुहागा ॥
तोर जोति मोर हिये समानी । दूसर और कहा मै जानी ॥
पिउ आए मै पापिन छूॅछी । नाॅउ ठाॅउ कछु लेहु न पूॅछी ॥
जब लहि आवागवन करेहूँ । तब लहि अधिक बिरह दुख देहूँ ॥
यह बिधि बीती रैन सभ, भयो चराचर रोर ।
धाई आइ निकट उठि, और सखिन चहुँ ओर ॥
तब धाई ते कहा उघारी । सपने दरस फेर चख चारी ॥
कहा कि दरस भयौ परकासा । पूॅछि न लेहुँ नाउॅ औ बासा ॥
रखै लाग चित अबिरम जोगू । भये मोहित लखि बिरह बियोगू ॥
चित बैराग औ हिये उदासा । रही लूटि होय नाउॅ कै आसा ॥
वहि के हिये सो विरह बियोगू । जानहिं लोग भयौ कुछ रोगू ॥
औषद देहिॅ पिलावहिॅ मूरी । औ सुख चैन दीन्ह तिन दूरी ॥
माता देखि भई बैरागी । तन मन उठै कोख कै आगी ॥
दुहिता रोग सुना सुलताना । औ सब नगर देस कुल जाना ॥

भयौ प्रगट सभ जगत महँ, दुहिता रोग विराग।
बेल अँकूरे हिये महँ, बाढ़ि दरग कहँ लाग॥
भइ बाउर तन सुध बुध त्यागी। चाहा जाय सु घर ते भागी॥
पातसाह तब बैद बुलाये। होय ब्याकुल नाड़िका दिखाये॥
औषद भाँति भाँति कै कीन्हा। काढ़ा औ चूरन रस दीन्हा॥
तेहि ते अधिक बिथा तेहि बाढ़े। भागे बैदन कहि दिन गाढ़े॥
प्रेम पीर तें भई अधीरा। होय ब्याकुल तन फारे चीरा॥
उठि उठि चलै छाँड़ घर बारा। तन पर लागि चढ़ावै छारा॥
पातसाह तब लाज लजावा। दुहिता पग बेरी लै आवा॥
बेरी परी न मानै नारी। निसि दिन सखी रहँ रखवारी॥
कहै कि ए मन मोहन प्यारे। पग साँकर देखौ अनियारे॥
मोरे मन सँकरी परी, तन सँकरी केहि मान।
निज नैनन देखौ निरख, यह तन मन कै हान॥
यक दिन पहरु चौराहर सोये। सँवर सँवर सुख ब्याकुल होये॥
सँवरै वही स्वरूप अमोला। दुख तें नैन जल परलै खोला
कहा कि ऐ मोरे प्रान अधारा। भल दिये दरस बिछोहन मारा॥
कहि के सपथ अब प्रीतम प्राना। जिन्ह तोहि दीन्ह रूप औ ग्याना॥
नाँउ ठाँउ अब देहु बताई। एक बार फिर दरस दिखाई॥
कै किरपा औ सहसन दाया। निज दासी पर फिर कर माया॥
तोरे बिरह मरौं अब रोई। सोऊँ सेज रकत जल बोई॥
सखी सहेली न निकँ सोहाई। मात पिता कुल कान गँवाई॥
छाँड्यों भोग भुगत तोरे नेहों। छाँड़ सिँगार चढ़ायो खेहाँ॥
छाँड्यो सब सुख दुख सह्यो, कियो जोग तेहि लाग।
एक बार फिर आवहु, आनि बुझावहु आगि॥
एक रैन फिर आन तुलानी। आये समुख नींद अलसानी॥
तीसर सपन फेर वैं देखा। वहै रूप जो आद बिसेखा॥
जानहु आप फेर अस बोला। अमीकुंड अधरन तैं खोला॥
मैं तोहि लाग तज्यों घर बारा। पर्यो कूप महँ मोहि निसारा॥
मोर तोर प्रीत आदि लिखि राखा। करहु सो अंत भोग अभिलाखा॥
तब दुख हटै होय सुख सारा। जब पाऊँ मैं दरस तुम्हारा॥
यह सुन नारि भई तब ठाढ़ी। अरुझी बेल प्रेम की गाढ़ी॥
अब की बेर जाय नहिं देहूँ। जब लहि नाउँ पूँछ नहिं लेहूँ॥
अब लहि यहि जिव निकसि न गयऊ। जो फिर दरसन प्रापत भयऊ॥
नाउँ ठाउँ बतलावहु, पठऊँ जहाँ सँदेस।
होय जोगिन बैरागिन, चलि आवहुँ वहि देस॥

तब मुसकाइ कहा सुन प्यारी। मिस्र देस महँ बास हमारी ॥
मिस्र साह कर सचिव सोहावा। आवहु वहँ तब होय मेरावा ॥
सचिऊ नाम जगत नित सोहै। और नाम बिरला कोउ कहै ॥
मैं अपने बस महँ हौं नाहीं। आवहु वेगि मिस्र के माहीं ॥
कछु दिन सहौ बिरह दुख दाहू। बिन दुख प्रेम न प्रापत काहू ॥
जो दुख तें नहिं होय उदासा। अंत होय सुख भोग विलास ॥
जस चाहौ तुम मों कहँ प्यारी। तस चाहौ तोहि अनत कुँवारी ॥
सपने महँ सुनि भई हुलासा। जागि परी कोउ आस न पासा ॥
रोय उठी गहबर अकुलानी। नाउँ ठाउँ सुनि कै बिलगानी ॥
जिऊँ तो जाउँ मिसिर कहँ, मरूँ तो मारग माहँ।
छार होहुँ उडि जाउँ अब, जहाँ बसै मोर नाहँ ॥

× × ×

जुलेखा बिरह खंड

सदा जुलेखा रोदन करै। यूसुफ रूप हिए महँ धरै॥
रूप दिखाय कत छल कीन्हाँ। बिरह बियोग जोग दुख दीन्हों॥
झूठ बात कहि मोहन बाता। काहे कियो सो छल कै बाता॥
मैं तोर बचन साँच परमाना। लाज गँवाय मिसिर कहँ आना॥
जो तेहि हते जराऊँ साधा। जरतिउँ बैठि तऊ दुख बाधा॥
रहत सत्त मोर यह संसारा। अब का करौं कठिन दुख डारा॥
मिटै रोग आवै हम पासा। सत्त धरम कर होइ बिनासा॥
हौं आपत पत्त राखहु लाजू। प्रान गए जीवन केहि काजू॥
खायों कुल कै लाज सुहावनि। भयों निलज जग ढीठ कहावनि॥

लाज धरम सब छाँड़ि कै, आयों मिसिर के देस।
चहौ प्रान पत मोर जो, करहु बेगि परबेस॥

जेहि कारन मैं लाज गँवावा। सो न भयो सब हत्यो छलावा॥
रोगिनि भई रहौं कब ताईं। यक दिन मरौं रोय हिय माहीं॥
तोर रूप मैं सपने देखा। भयो मोर अब तिहि कर लेखा॥
हेरै गयो हुमाय जो कोई। उलू मिला जो सरबस खोई॥
पानी हेरै गयो पियासा। रेती देखि सो भयो तरासा॥
कोइ बोहित चढ़ि चाहत पारा। बोहित फट्यौ जाइ मँझधारा॥
बहा जात भा ब्याकुल प्राना। आगे आनि काठ उतराना॥
भयो काठ वह प्रान अधारा। बूड़त बहत सो ताहि सँभारा॥
जब वह काठ नियर भा आई। काल सरूप भयो दुख दाई॥

करम हमार है पातर, को अब करै सहाय।
गहिर अहै मँझधार महँ, परेउ काल बस आय॥

यूसुफ मूरत हिएँ उरेखै। धरै ध्यान निज आगे देखै॥
करै बिलाप कहै दुख सारा। का मोहि बिरह अगिन महँ जारा॥
देहु दरस औ आस पुरावहु। कबहुँ न मिसिर नगर कहँ आवहु॥
करै मोर दुख परसन पाऊँ। निसि बासर दुख रोय गँवाऊँ॥
जो मोहिं आसा देत न दाता। करत्यौं वहै दिवस अपघाता॥
जेहि दिन दरस न तोर मिसेखा। सूर के ठाऊँ राहु मैं देखा॥
काहे क अब लहि जरत्यौं जारे। मरत्यौं वही दिवस बिन मारे॥
एक सपन दूजे सरग के बानी। किहेउ न तेहि असा जिवहानी॥
निसि दिन तोहि भरोस जिव राखै। बार बार बिनती यह भाखै॥

जेहि विधि सपन देखावहु, लायहु चित सो चित्त ।
तेहि विधि आनि जिआवहु, मरौं तोहि बिन नित्त ॥
कबहूँ कहै पवन तें रोई । करै बिलाप अधीरज होई ॥
मारुत सदा करहु परबेसा । फिरहु राति दिन देस बिदेसा ॥
कवन ठाउँ जहँ तुम नहिं जाहू । काटहु मोर बिरह अधिकाहू ॥
जाहु जहाँ वह पीतम प्यारा । कहहु जाय दुख दुखद अपारा ॥
कहौ कि सपन माहँ गहि बाँहाँ । दिहेउ भुलाइ फेरि कस नाहाँ ॥
दै धोका मोहिं मिसिर बोलायहु । तुम अजहूँ लगि लाल न आयहु ॥
मैं जोऊँ नित बाट तुम्हारी । रहौं बंद महँ बिरह के मारी ॥
केहि कारन अस बाचा कीन्हयौ । देस छुड़ायो सुधि नहिं लीन्हयौ ॥
नैहर तज्यौं न पायों तोही । तेहि पर धरम करम करमोई ॥
धृक जीवन पिउ प्रान बिन, धृक बिन धरम परान ।
दुअ जग करिआ होय मुख, होय सत्त कै हान ॥

× × × ×

षड़ ऋतु खंड

रितु बसंत बन आदिन फूला । जोगी जती देखि रँग भूला ॥
पूरन काम कमान चढ़ावा । बिरही हिऐं बान अस लावा ॥
फूले फूल सिखी गुजारहिँ । लागी आगि अनार के डारहिँ ॥
कुसुम केतकी मालति बासा । भूले भँवर फिरहि चहुँ पासा ॥
मैं का करूँ कहाँ अब जाऊँ । मों कहँ नाहिं जगत महँ ठाऊँ ॥
टेसू फूल तो कीन्ह अँजोरा । लागी आगि जरै चहुँ ओरा ॥
तुन फूले औ आँब फुलाने । करुना करीं दिस बास बसाने ॥
फेरी त्यागि भिरिग दुख दाहे । कानन भँवर सदा दुनाए ॥
पीतम भूल गए सुख पाई । निरमोहीं कहँ दया न आई ॥

यह रितु चित कैसे रहै, सहै बिरह के पीर ।
पुहुप देखि बसंत रितु, कैसेहु धरै न धीर ॥

कवित्त

भागे सोच बियोग बँजार सबै, बिन काम कुलाहल चाखहिँ ।
चाखे जोगी जती अनुराग, सों भँवर पतिंग सबै रस पावहिँ ॥
पाखे पेम सुरग में दीन्ह, सनेह भरित ऋतु लाज जो लागहिँ ।
लागहिँ टेसू दवान चहूँदिसि, कौन दिसा होइ बिरहिनि भागहिँ ॥

सोरठा

हरे हरे ऋतुराज, बनि आवैं लोहित भए ।
आवे कौने काज, कत न पूछे बात मोहिं ॥

ग्रीषम ऋतु उत परहि अँगारा । घेरि अगिनि बिरहिन कहँ जारा ॥
यह ऋतु महँ सब जाय सुखानी । बिरह बेल अजहूँ न लहानी ॥
ग्रीषम तेज बिरह के आगे । मोरे हिए दाँउ अस लागे ॥
मदिल छाय उसीर सोहावा । रवन भवन आवन मन भावा ॥
उमडि घुमड़ि घन चढ़ै अकासा । सजोगिन मन मुदित हुलासा ॥
बरै लाग पावस कर डेरा । फिर धिर (घर) कामक मठ घेरा ॥
तग तन मैन जरावै जीऊ । काह करै निरमोही पीऊ ॥
फल अँबिरित बौरे चहुँ ओरा । हम कहँ बिरह हलाहल घोरा ॥
निठुर कत नहि पूँछहि बाता । का हियँ लगे फल अँबिरित राता ॥

नीर घटा उमडी घटा, घटा मोर चख नीर ।
नैना घट समझहि सदा, घट घट ढेर सरीर ॥

कवित्त

सूखि समुद्र गए रवितेज, सूखि गए सरिता जल धारी ॥
सूखि गए पुहुमी पति मंदिल, सूखि गए जल मेघ सुखारी ॥
सूखहि कूप तडाग लता द्रुम, बेलि बली बन औ फुलवारी ॥
सूखहिं 'निसार' अबुनल सूखहिं, नाहिन ये अँखियान दुखारी ॥

सोरठा

सूखि भए बेचैन, ग्रीषम ऋतुद्रुम बेलि बन।
एकन सूखे नैन, नित तरसहिं बरसहिं सखी ॥

ऋतु पावस घन घोर बिराजे। घोर घमंड घटा चढ़ि गाजे ॥
घन गरजै दामिनि लौकाहीं। नारि कंत के गोद छिपाहीं ॥
ज्यों ज्यों चमक गरज अधिकाई। त्यों त्यों नाह नारि उर लाई ॥
हम केहि के गिउ लावें बाहीं। पावस समय देहि बलनाहीं ॥
खग मृग कवि औ मानुष सारा। साजि सदन सुख करहिं अपारा ॥
घर हमार सब भरिगा पानी। उत राजा हम बहि उतिरानी ॥
जिन के छिन पिउ तजहिं सुनाहीं। सुखी नारि पावस ऋतु माहीं ॥
करम हमार भयो दुख दाई। का प्रीतम कहँ आस लगाई ॥
दोस हमार जो अवगुन कीन्हों। निरमोही का मन चित दीन्हों ॥

पावस घन अँधियार महँ, कैसे बचिहे प्रान।
होय रैन बज्जर कै, जो जागे सो जान ॥

कवित्त

बोलहिं मोर वियोग भरे, कोकिल कूल हिया निज घोलहिं।
झूलहिं स्याम बिना घन स्याम, घमंड ते मेघ चहूँ दिस झूलहिं ॥
डोलहिं आसन जोगी जती के, 'निसार' महारस घूँघट खोलहिं।
खोलहिं मेघ वियोगिन को दुख, डूबहिं चित जो पिया भग कूलहिं ॥

सोरठा

दादुर मोर अँदोर, एक ओर घन घोर उत।
सती पवन झकझोर, सूने मँदिल न जाइ रहि ॥

सारद समै रैनि उँजियारी। हँसि हँसि पिय हिय लागहिं नारी ॥
देखि वियोगिन कचन जोरी। सारद लाय दीन्ह जस होरी ॥
भा परकास अगस्त दिखरावा। सरिता सागर नीर सुखावा ॥
सरद चाँदनी निरमल देखा। भा हमार बाउर कर लेखा ॥
सब निसि बीती गिनत तराई। सुख सोवहिं जिन के घर साईं ॥
सेज अकेल सोभ तन जारी। जम घायल कहँ चाँदनि मारी ॥
सरद समय पिउ चाहन सेजा। धृक जीवन हिय फटै कलेजा ॥
सचिऊ के साजहि सुख साजा। बरन चाँदनी निसि उपराजा ॥

सेत बादला सेत किनारी। हीरा मोति चंद धन सारी॥
सभै सेज होय दुख अधिकाए। सेत बहुत सो घन कहँ भाए॥
सेत भभूत रमाय मुख, कर जोगिन कै तंत।
धूनी लाऊं जाय तहँ, जहँ निरमोही कंत॥

कवित्त

हिव सो जरे बिरहानल तें, दिन प्रीत रखै वह आगि जराए।
घायल प्रेम के बान मोहीं, करि है बिन प्रीति सरूप लखाए॥
घायल और जगे न जिए, सभ लोग सहैं सन जोत दिखाए।
काहे ते प्रान तजो सजनी, नित रार करे सें समुख धाएँ॥

सोरठा

लगे प्रेम के बान, जरै बिरह की अगिनि सो।
केहि बिधि तजै परान, सरद चादनी के चुनी॥
अब हेमत परघट्यो पाला। हिम तन उठहि बिरह कै ज्वाला॥
आवत जात न दिन निर माई। रैनि पहाड़ परै पुनि आई॥
भए जुरावन सभै सँजोगिन। औ कुफनू भय जरै बियोगिन॥
बदन जुरावा सभ नर नारी। बिछुरे प्रान जाय दुखारी॥
यक यक पछी दुहूँ के होए। मिलि कै उठहिं उटेरे सोए॥
कुफनु पछि सम यह रितु नाहीं। नित तन बिरह अगिनि निकसाहीं॥
अपने मुख तें पावक छारा। अपने अगिन होय जरि छारा॥
होय चकई निसि जागि बितावे। जस बूड़त महँ थाह न पावे॥
बाढा बिरह रैन जस बाढ़ै। अरुझे पेम फाँस हिय गाढ़े॥
निसि हेवत पहाड़ भय, बिन पिउ कटै न रैन।
जागि बिहाऊँ रैन दिन, जाड़ करै बेचैन॥

कवित्त

छाय गयो सब सेत 'निसार', लगे खग खग थिर सरसों।
कैसे कटे यह रैन पहाड़ सों, बँचे जो हिया हिया सरसों॥
देखिए कौन बसंत समय जब, धाँक सती से बसे सरसों।
हेवत गए अपने बिन सगहिं, अब औं खिन फूलि गई सरसों॥

सोरठा

हेवँत ऋतु उत गाढ, बिरह जनावे आन तन।
घटा दिवस निसि बाढ़, जागे बिरह बिहाय तब॥
लाग सिसिर ऋतु चित बैरागी। पवन उदास भए अब लागी॥
लाग बसन सो लाग सुहावे। सिरी पंचमी चाह जनावे॥
राग हिएँ अँग कीन्ह अलसाहा। नर नारी हिय उपजे थाहा॥
भए हरख डफ बाजन लागे। कामिनि काम आय तन जागे॥

चहुँ दिसि उड़ै गुलाल अबीरा। केहि विधि धरें सुहियरें धीरा ॥
पुरब जनम कर पाप कमावा। जो यह समय बिरह दुख पावा ॥
पहिरहिं सखिहिं बसती बागा। परगट भयो प्रेम अनुरागा ॥
खेलहिं फाग जो साँवरि गोरी। हम तन लाय लीन्ह जस होरी ॥
बौरें आँब बास महकाने। फूले कुसुम चाह अधिकाने ॥
तिय से तैमे अउर भए, बौंरे आँब लतान।
मै बौरी दौरी फिरौ, सुनि कोयल की तान ॥

सवैया

लाग तुषार परै चहुँ ओर, सखी तेहि अम्बुज देह डहे को।
पिउ बिन रैन दुहेली बिहाय कैसे अकेली ह्वै दुःख सहेको ॥
आवे जाड जनावे तुषार, हिए बिरहानल बुझाय भए को।
बौरी सभै दौर फिरे ललिता सखि, बौरी लता फिर कैसे रहे को ॥

सोरठा

चहुँ दिस बेल निसान, हिएँ आन जागा मदन।
केहि विधि रहे परान, बिरह बान बेधे सदा ॥

× × × ×

यूसुफ जुलेखा मिलन खंड

यूसुफ भयो मिसिर कर भूपा, न्याव दान नित करै अनूपा ॥
यक दिन हिये कीन्ह अस ज्ञाना। मो कहँ दई कीन्ह सुलताना ॥
बिन मत्री जो होय महीपा। जैसे सदन होय बिन दीपा ॥
पै कोइ ऐस दिष्ट नहिं आवे। जाह सचिव कै कोरे चढावे ॥
जबराइल तेहि अवसर आये। सचिव कुरी कहँ अरथ जनाये ॥
भोर मँदिर तें बाहर आवहु। पहले मिले सो सचिव बनावहु ॥
यूसुफ भोर जो बाहर आवा। लकडी लिये जो मुख देखरावा ॥
उत दुरबल औ नृप बल हीना। महा सुखी औ जीरन दीना ॥
तब मन महँ निज कीन्ह बिचारा। कत उठावे यह जग कर भारा ॥
भये सोच महँ डाह तबाँई। जबरैल तब आइ सुनाई ॥

कौन सोच हिरदैं करो, औ मन होहु अधीर।
सचिव करहु यह पुरख कहँ, दुरबल दीन्ह सरीर ॥

इन तुम्ह ते बहु कीन्ह भलाई। दई चहे तोहि उरिन कराई ॥
यूसुफ कहा बहुत गत कीन्हा। दियो अरथ मैं ताह न चीन्हा ॥
कहा कि है बालक यह सोई। ताकर मरम न जानै कोई ॥
मिसिर सचिव तोहि चहा सँघारा। दै साखी तोर प्रान उबारा ॥
ते मानुस कर बालक अहा। जिन मुख बचन न्याव को कहा ॥
सो बालक यह दुरबल दीन्हा। जहाँ नाहि औ रूप बिहीना ॥
सचिव ज्ञान कर चाहे आगर। सो यह होय बुद्धि कर सागर ॥
तब यूसुफ तेहि हिये लगावा। औ ता कहँ हम्माम भेजावा ॥
करि असनान पन्हावा जोरा। तास बादला जोत अँजोरा ॥
कँलगी औ नवरतन पेन्हावा। ताह सचिव कै कोरि चढावा ॥

अलख निरजन न्याव कर, एकहि एक बिचार।
काहू कै सेवा न-फल, करै न तनिक 'निसार' ॥

अब बरनौ वह बिरह बियोगिन। यूसुफ लाय भई जो जोगिन ॥
चालिस बरस जोग जिन्ह कीन्हा। दरब भँडार खोय सभ दीन्हा ॥
जेहि दिन नाँव लिये कोउ आए। तेहि दिन खजन भोग कराए ॥
जेहि नाँव सुनै नहि नारी। रोय रोय काटै निस सारी ॥
कुछ न रहा तब जोग कमाई। दरब अरथ सभ दीन्ह लुटाई ॥
रोवत नैन भये अँधियारे। रोम रोम तन बिरहिन जारे ॥
जब लहि नैन हुते वह केरे। तब लहि दरस प्रीतमहि हेरी ॥

गये नयन भइ रक भिखारी। बिरह स्वरूप भई वह नारी॥
कूबर निकसि पीठ महँ आवा। वक्र अग भा सूध सोहावा॥
लै लकुटी हेरत फिरै, नित यूसुफ कै बाट।
जो कोइ नाँव सुनावे, भुइँ महँ धरे लिलाट॥
बालक झूठि सुनावहिं आई। यूसुफ नाँउ सुनत बौराई॥
कहैं कि निकसी आज सवारी। धाई फिरै होत बलिहारी॥
जब लहि हर्यौ दरब ओ दाना। दीन्ह नाँव सुनि कौटि समाना॥
यूसुफ़ काज सबहि कुछ दीन्हा। कुछ न रहा तब काहु न चीन्हा॥
तब सब लोग सो बाउर कहैं। विपत परे कोउ सग न रहैं॥
पावहिं अरथ दरब पहिरावा। खाहिं भोग लै नाम सोहावा॥
जब न रहा कुछ सभ अलगाना। हर्यौ नेत्र सभ भये बेगाना॥
जेहि तें कहे बात पर नारी। सो रिस खाय देइ तेहि गारी॥
लगुटी लिये गली गली, फिरैं मंत्रि के आस।
सुनत सवारी मंत्रि कै, धाइ फिरै चहुँ पास॥
गई निकसि सभ दासी चेरो। अपने यक प्रीतम कहँ हेरी॥
सेवक दासी रहा न कोई। विपत पड़े कोइ साथ न होई।
रहै बहुन महँ अकसर दुखी। होय अदरार रहै निक सुखी॥
जो कुछ रहा सो सबहै गँवावा। पिया प्रेम विन अवर न भावा॥
हर्यो भोग सुख नींद विलासा। हर्यो चैन औ हर्यो हुलासा॥
जोबन हरयो रूप हरि गयो। बिरघ स्वरूप सभै तन भयो॥
भयो अंग सबूह ढील समाना। पै न गयो तेहि प्रेम को बाना॥
भये तेज तन पौरुख हारा। नैनन मेटि गयौ उँजियारा॥
नास कीन बिधि, सब गयो, खोये सुख अरु चैन।
जोबन रूप न थिर रहा, रहा बिरह तन मैन॥
एक दिन एक नारि पहँ जाई। रोवे लागि सँवरि सुख दाई॥
तेहिके चरन सीस लै आवा। आवा पुनि सभ भेख देखावा॥
यूसुफ नवी कै मोंहि सवारी। देहु दिखाय होउँ बलिहारी॥
सँवर नार पाछिल दिन सोई। लाखन दरब लीन्ह सब कोई॥
उठै मया भइ तेहि के सगा। जो दीपक सँग भई पतिंगा॥
चहुँ दिसि फिरै सग लै नारी। अकस्मात मिलि गई सवारी॥
उठै धूम तिल ऊपर मयऊ। चहुँदिस अरध अवध होय गयऊ॥
लै सो पाट पर ताहि बैठावा। कहा चेत अब यूसुफ आवा॥
ओ यूसुफ ते कहा पुकारी। बैठे पाट जुलेखा नारी॥
नाम जुलेखा नार मुख, पडा जो यूसुफ कान।
मया मोह जब उपजै, हियें प्रेम कर मान॥

देखा बिरिध भई वह बाला। ना वह रूप न रंग न हाला ॥
कढा एक करै महँ सोहै। पूछें लोग कि यूसुफ को है ? ॥
नैन नाह जो देखै नारी। पौरुख नाह जो होय बलिहारी ॥
लगुटी लिये बाट पर ठाढ़ी। बक्र पथ मँह चिंता गाढी ॥
रोवत ढाऊ ढाढ जो फोरी। जोबन रतन लीन्ह क्यों छोरी ॥
हर गये जोत नैन से पानी। माँस झुरान नसैं अरुझानी ॥
अंबुज रंग हरिद रँग भयऊ। रती माँस सभ भूरा भयऊ ॥
जो देखै सो निकट न जाये। देखि बिरिध मुख जाय हेराये ॥
जो सवार आये तेहि पासा। कहे न आव मन्त्र के बासा ॥
सब्ह सवार के पाछे, यूसुफ नबी जो आय।
कहा भये हैं यूसुफ। जिन मोहि ऐस बनाय ॥
लखि यूसुफ मन भयो दुखारी। कौन हाल तुम्ह कीन्हों नारी ॥
औ कैसे मोहिं छीन्यहु बाला। नैन अंध औ हाल बेहाला ॥
सब्ह सवार आये तुम्ह पासा। काहू देखि न कियो हुलासा ॥
कहा नारि सुन सुन प्रेम पियारे। चालिस बरस बिरह दुख जारे ॥
जब तुरग हम सौंह चलावा। चारिव घरी सो हियें चढ़ावा ॥
तुम्ह दौड़ाय तुरी लै आये। हम ऊपर खुर खद कराये ॥
चालिस बरस बिरह कै आगी। मोरे हिये रैन दिन जागी ॥
कठिन बिरह की ताह सभारे। छिन मँह अगिन जगत कह जारे ॥
जो यह अगिन समुद्र मँह डारैं। सोख समुद्र मघवानल जारैं ॥
डारौं अगिन समीर पर, तो अजन होय जाय।
धन सो हिया अनि मूरख, जेहि यह आगि समाय ॥
जस सो अगिन महँ रहै समुदर। औ समुद्र महँ बसै जलधर ॥
तस होऊँ यह समुदर माहीं। जीवन मोर अगिन के माहीं ॥
जो यह अगिन न हिय महँ होती। जस घट महँ वह पूरन जोती ॥
तो कत जीवन होत हमारा। बिरह अगिन मोर प्रान अधारा ॥
निस दिन अगिन हिये सुलगावै। हिय पसीज चख आँसू आवै ॥
बडवानल तन प्रान हमारा। जिन यह अगिन प्रेम सभारा ॥
चित डौंडी बुधि फेरी लावै। मन दूनौ कै भीड उठावै ॥
वह सो अगिन कर अहै पसीना। धरहिं नैन ते तेज बिहीना ॥
बिरह बुद्धि दोउ करहिं लराई। जस पारा लखि अगिन हेराई ॥
बसै समुँदर अगिन महँ, ताको जीवन सोय।
छिन बिछुड़ै तन लागै, पुन सो निर्जीवन होय ॥
यूसुफ कहा कि बात अपारा। हियें अगिन को राखै पारा ॥
राखि न सकै आगि यह कोई। दग्धै तनु जरि छार सो होई ॥

तुम्ह महँ हाल रहा कछु नाहीं। एक सो झूठ रहा तन माहीं ॥
झूठ प्रेम कर का फल पावै। झूठ बात कहि धरम नसावै ॥
कहा नारि सोचहु मन माहीं। जग महँ अगिन कहाँ है नाहीं ॥
अगिन धुध जेहि ओर न छोरा। पूरन वहै अगिन चहुँ ओरा ॥
देखहु अगिन बीच कै छारा। सूरज अगिन जगत सब्ह जारा ॥
अगिन भार जरत होय लोका। गरज गरज महँ देख भभूका ॥
मधवानल वहि अगिन समानी। अगिन अगस्त सोखावत पानी ॥

आगिन सरग रवि ससि, चन्दन घन नखत निहार।
कत मानुख वहि अगिन ते, रहा न लोह 'निसार' ॥

अगिन तरुन नित लावत दाऊँ। अगिन बिरिछ महँ रवहिं ठाऊँ ॥
अगिन बिपत ते करै प्रकासा। भूमि अगिन चढि जात अकासा ॥
सब महँ अगिन परघट परचँड़ा। गूदर बाँस सरहर सरकण्डा ॥
जो नाहीं आगे दुख देखहु। काह माँह वह अगिन बिसेखहु ॥
कहा कि तुम सब्ह पढ़ा औ जाना। प्रेम अगिन तेहि हियें समाना ॥
सुन यह बात जुलेखा रोवै। परघट अगिन हिये जो गोवै ॥
तोरे हाथ कुछ यूसुफ आहै। कहा कि जाकहँ ताजिना कहै ॥
कहा कि मोंह देहु पकराई। बिरह अगिन तब देहुँ दिखाई ॥
फुदन लीन्ह कोंड कर हाथों। लै लायो ताकहँ हिय साथों ॥

फुदन जरा तजियाना जारा, दस्ता जरै जो लाग।
डार दीन्ह तब यूसुफ, देखि बिरह कै आग ॥

कहा जुलेखा सुन नर नाहा। राख्यों अगिन जो हिरदै माँहा ॥
जबहीं बुध मानुख उपराजा। चार तत्त कर पजर साजा ॥
यहै अगिन जो आद सँवारा। आद जोत वह अगिन सँचारा ॥
तेहि छुट दूत होय ससि सूरू। कोउ न सकेहु रखि प्रेम अँकूरू ॥
चकमक तें जस पथरी झारै। उठा भभूका हियें परचारै ॥
आद पिता कहँ अगिन सो दीन्हा। जेहि ते सभ नर परगट कीन्हा ॥
सब्ह तेहि सकेउ न आग सँभारी। पेमै हियें रख्यो पर चारी ॥
सो पावक मैं हिये निचोवा। चालिस बरस बीज जस गोवा ॥
तेहि सो आग कै एक चिंगारी। जगनायक यक सकेहु सँभारी ॥
पूरन चहुँदिस अगिन बिसाला। खाल माँह वदिह अगिन कै ज्वाला ॥

देख अवस्था नारि कै, औ हिरदै कर आग।
सभै लोग अचरज करहिं, प्रेम हिये महँ जाग ॥

धन यह नार आग जिन बोई। बिरह बीज जस हियें निचोई ॥
अहै अगिन वह प्रेम कै थाती। दीपक माँह जरै जस बाती ॥
धनि वह हिया अगिन जिन राखा। धनि वह नारि प्रेम रस चाखा ॥

पीठि औ पेट सरापन लागा। अबहुन मिटेहु विरह बैरागा॥
ज्यों ज्यों विरध होय सरीरा। लाजन बठै औ होय अधीरा॥
यह मन कबहूँ मरे न मारा। जब बहि पड़े न तन पर भारा॥
मन मारै सोई बड़ साईं। घाय निसार पड़ै तेहि पाईं॥
भयो अँग सब्ह ढील समाना। निकसन तेहि ते प्रेम को बाना॥
नैनन रूपन देखहुँ, कानन सौंह न बात।
केहि कारन पछिता करौं, भयौ रैन परभात॥
धन सम्रत औ शब्द सुख साजा। बिनु पौरख सभ कौने काजा॥
अब तन नैन गये सब्ह खोई। तबहुँ न दरस परायत होई॥
तो कहँ देखि आय कहँ रोवा। मोरे लिखत सबै तुम खोवा॥
कहाँ रूप वह जोबन जोरा। कहाँ नैन जस समुंद हिलोरा॥
कहाँ अधर सुरंग अमोला। कहाँ मदन वह खिहर कमोला॥
कहाँ कठं वह कोकिल बोली। कहँ कठोर गुजराती चोली॥
कहाँ लंक जो बारम्बारा। लचि लचि जायँ बार के भारा॥
कहाँ चरन वह कँवल सोभावा। कहाँ अँग वह सूध सोहावा॥
कहा कपोतहि जोबन वाला। सदा जो सौतिन के तन साला॥
कहा सरवर कहँ हसँ, वह मोती चुन चुन खाय।
लाग चुनै अब कोंकर. झूरे में मरि जाय॥
का भा तोर सरूप सोहावा। चाँद सुरज जेहि देखि लजावा॥
कहा कि रूप तुम्हें सब्ह दीन्हा। तोरे बिरह अगिन हर लीन्हा॥
कहा कि तै जो कीन्ह निठुराई। मैं जोबन औ जोर गवाँई॥
कहा कि वह जीवन औ जोरा। जाके सौंह न काहुन जोरा॥
कहा कि नैन कटाच्छ सोहाये। कहा गये कोऊ हियें न लाये॥
कहा कि रोय रोय मैं खोवा। गये नैन तोर बिरह बिछोहा॥
कहाँ गये वह अमिरित बानी। जेहि ते भये आग औ पानी॥
तोरे प्रेम सभै हरि लीन्हा। सभै बात मैं तोंहि कहँ दीन्हा॥
कहाँ गये लाल जवाहर मोती। लेइ तेहि झलक सो रब के जोती॥
सुनेउँ नाँउ तोर मैं, दीन्हों सभै लुटाय।
सभ कुछ गयो न कुछ रहा, रहा प्रेम चित छाय॥
कहाँ गये वह दासी चेरी। रूपवंत जो काहुन हेरी॥
तास बादला रग हरीरा। असावरी कर करै को चीरा॥
कहा कि टूक टूक करि डारा। तोरे बिरह बसन सब फारा॥
अब तन पर कामरी टूका। हियें फिरावहि बिरह भभूका॥
तेहि कमरी पर देसी सोहै। प्रेमै लोग देखि तेहि मोहै॥
कहाँ गयो वह गरब तुम्हारा। जेहि ते न काहुक ओर निहारा॥

दरब गरब औ जोबन जोरा। मन्ह यह अहै हरा मन तोरा ॥
नैन अधीन औ रग नियावा। गरूडै कोऊ बैरन खावा ॥
तोरे प्रेम सभै कुछ खोवा। एक प्रेम निज हिरदैं गोवा ॥
तेरे विरह हरयो सभै, नैन बैन गुन ज्ञान।
सब कुछ गयो न रहा कुछ, रहा एक तोर दगान ॥
लागै कहै रोय पर नारी। चालीस बरस बीत कै सारी ॥
निस दिन अगिन सो हियें निचोई। सुलगत रहै न चांपा कोई ॥
यहि सो अगिन कै तेहि कर साना। थाँभहि निकरयो जगत सुलताना ॥
तुम्ह सुलतान करो सुख भोगू। का जानहु दुख बिरह श्रा सोगू ॥
चालिस बरस अगिन पर चारा। छुट तोर बिरह और सब्ह जारा ॥
जो कुछ दुःख सहयो दिन राती। का कोउ सहै बज्र कै छाती ॥
कागद सात अकास बनावै। सात समुद्र मियानी लावै ॥
लिखनी बिरिछ होय जग सेरे। तीन लोक सब्ह होहिं लिखेरे ॥
चारिव जग बीतहिं तेहि माहीं। दुख हमार लिखि जाय सो नाहीं॥
बारह मास बियोग दुख, यूसुफ सो भयो हमार।
चालीस बरस बन जारे, तेहि सभ दुखद अपार ॥
चालीस बरस जो आग निजोई। बारह मास कहुँ दुख रोई ॥
यक यक दिन जुग होय बीता। कहँ लौं कहौं अहै सुनीता ॥
दिन यक दुख जो सुनहु हमारा। तुम्हो राज जुग जुग अधिकारा ॥
तोहिं बुध कीन्ह छत्र पुत भारी। सुनहु दुःख जो अहै दुखारी ॥
जा कहँ दई बड़ा कर देई। सो दुखिया दुख कहा करेई ॥
कबहुं मोर कहा न माना। ब्याह न भयो गवन नियराना ॥
कबहूं दिष्ट न मो तन फेरे। भयो अध तब देखहुं हेरे ॥
भयऊँ बिरिध अब मरत सँघाती। सुनहु बिरह दुख हुलसै छाती ॥
जो दुख सुनहु करो तुम दाया। मानहु दीन्ह अनेकन माया ॥
मै तुम तें माँगहु यहै, सुनहु बिथा दुख मोर।
होय मीच सुख सो मरौं, रिझौं सो अवगुन तोर ॥
चैत मास तपि गयो बिछोये। तब ते रकत आँसु मैं रोये ॥
सब्ह जग होय बसत धमारी। मो कहँ बिरह आगि ते जारी ॥
बन उनये हरियर होय फूला। केतक भिरँग तबस्ता फूला ॥
भँवर भुलान फिरै चहुं ओरा। कुहकै कोकिल चातक मोरा ॥
पिव कर नाउ पपीहा लेई। बिरह हियें अधिकों दुख देई ॥
सीतल पवन अग कहँ भावे। बिरहिन के तन आगि लगावै ॥
रित बसत सोहै सखी, काह लगै बिन पथ।
जग तरूर फूलै फलै, बिरहिन वेल उदत ॥

कवित्त

चैत तरुवर फूल फूले भॅवर सब्द भूले फिरैं ।
पवन सीतल तन सेराने कवित के प्रानन करैं ॥
रित अनूप लखि स्याम मुॅदिल सुख सज्जा करें ।
आॅसु की सरिता बढै, निठुर बिरहिन बूड़ै मरैं ॥

बारहु मास सोहावन आवा । रित बसत सजोगिन भावा ॥
तन बसाय औ हिया भिंगाये । भूले भवर पवन महकाये ॥
कुञ्ज छाॅह बन लाग सोहावा । सीतल पवन हिये कहॅ भावा ॥
उपजै सुभग समै अनुरागा । कामी आय काम तन जागा ॥
चितै सती तन गंधरय छावा । रित बसत सब के मन भावा ॥
तैसे आग लाग मन माहीं । हरीं कहाॅ भाग अब जाहीं ॥
अब अवगुन महॅ भरे अॅगारा । बिरहिन हिया सरागन जारा ॥
फूले फूल सुरग कचनारन । लागे आग अनार के डारन ॥
कर माया मैं बसी चहुॅ ओरा । बोलहिं कोकिल चातक मोरा ॥
सुख सोहाग के समय नहिं, लोग कहैं रखराज ।
हमहिं बसत दुख दइ यह, सर पजर सम साज ॥

कवित्त

मास माधो सनेह सोहावन, जगत सुख छायो सभै ।
बिटप फूलत फलत तरुवर, अब सों बौरन भये ॥
बहुत सीतल छाॅह सुदर, सुख सॅयोगिन कै रहे ।
कौन हरियर करै पिउ बिन, बेल बिरही से डहे ॥

सोरठा

सीतल छाॅह गॅभीर, अग सोहाय सोकालिनी ।
सुख औ भोग सरीर, सदा उसीर सोहाय अब ॥

लाग चैन अब तपै करेजा । कामी काम करैं सुख सेजा ॥
फल पाके अमिरित रस पाके । काम आय कामिन तन जागे ॥
रैन घटी दिन बहुत बढावा । बिरहिन आग अग लै लावा ॥
कठिन धाम तन जरैं हमारा । मूखन मदिल औ सपर सॅवारा ॥
सीसी लै गुलाब डरवावहिं । औ कुमकुम कहि अग लगावहिं ॥
रोव रोवॅ औ सुख अधिकाये । बिसैं करत अग सुख पाये ॥
बात कहत निसि जाय बिहाई । दिन कहॅ भोग भगत अधिकाई ॥
चैत मास बिरहिन कहै जारा । दीन्हा आग लाय ससारा ॥
बरखा हितु अब तपै करेजा । करेज भयो रगरेज क रजा ॥
ग्रीषम रितु अगिन बैठ, ढूॅढहिं सीतल छाॅह ।
ऐसे समय बियोगिन, भाग सोख दस जाॅह ॥

कवित्त

जेठ ग्रीषम विषम आगम पान भोग बिना करैं ।
'निसार' बियोगी छाँह तपिहै अग कै सीतल करे ॥
भुवन सीतल पवन आवैं रोवँ रोवँ मैं चित धरैं ;
गुपुत परघट एक पिव बिन बिरहिनै निसि दिन जरैं ॥

सोरठा

जेठ जरावे देह, नेह माहँ मारै सखी ।
चहुँ दिस उठै सनेह बिरहिन कै दारुन समै ॥

लाग असाढ़ सो गाढ़ जनाईं । घन गरजै दामिन चमकाई ॥
उमड़ घमड घन घोर बिराजै । काम बिसाल नवो खँड बाजै ॥
कूँधत मोँह चकूँधत जीऊ । केहि के कठ लगै बिन पीऊ ॥
पँछिय पतिंग सबहि घर साजा । जगत काम कर बाजन बाजा ॥
मोर कुटी के छावै पीऊ । केहि बिधि दय देइ मोंहि जीऊ ॥
दादुर मोर जो करहि अँदोरा । नार कथ छिन तजहिं न कोरा ॥
बिछुड़े मुये सो दुओ दुखारी । बिनल जरा भा सभ नर नारी ॥
कोकिल कूक लूक हिय लावे । कुकनू सम भभूक रचावै ॥
कैसे कटै सो यह रितु भारी बिन पिव घमड घोर अँधियारी ॥

मास असाढ सोहावे, पिव भावे निज सेज ।
देख घटा औ दामिनी, काँपे मोर करेज ॥

कवित्त

रितु असाढ घन घेर आयो, लाग चमकै दामिनी ।
रितु सोहावन देख मन, महँ हरख बैठ भामिनी ॥
रितु घमड सो मेघ धाये, दिवँस भई जस जामिनी ।
रैन दिन करुना करैं, घर में अकेले सामिनी ॥

सोरठा

बीतो जात असाढ, कत भूल सुख महँ रहे ।
बिरहिन यह दिन गाढ, पिव बिन कहु कैसे कटै ॥

आयो सखी सोहावन सावन । भावन रैन बिना मन भावन ॥
घर घर कामिन साज हिंडोला । देख समै सगुर चित डोला ॥
जोगी जती के आसन छूटा । साध संत के मका टूटा ॥
काहु के चित रहा थिर नाहीं । हरषित चित यहै रित माहीं ॥
भवन नियोगिनि काटै खाई । देखि देखि यह समै सोहाई ॥
परहिं जो आँसु भूमि पर टूटी । रेग चली जस बीर बहूटी ॥
जुगनू चमक चमक देखराहीं । बरसे अगिन जो सावन माहीं ॥
सावन मास सोहावन बीना । तन तन काम अपरबल बीना ॥

सावन मन भावन नहीं, जोवन बिरथा जाय।
काल न आवे यह समै, कैसे रैन बिहाय॥

कवित्त

भा सावन रितु सोहावन भावन मन भावे नाहीं।
काम कला पावा सखी छिन यक कल्पावे नाह॥
रैस बीती जात सजनी सेज सुख पावा नहीं।
जाहु सावन बहुर आवन कत घर आवहि नहीं॥

भादौ भुवन बेहावन भयो। देखत घटा प्रान हरि गयो॥
दिन औो रैन जाय नहिं जानी। उनई घटा रहे भरि पानी॥
जल थल पूर सो नीर अपारा। होय गये एक नदी औो नारा॥
जल परवाह जगत मा बाढा। बिरही बिरह परा दुख गाढा॥
घन गरजत लरजत तन मोरा। दामिन दमक चहै पिव कोरा॥
गरजै कूँध लखि मरि मरि जाई। बिना कत को लेइ जियाई॥
ऐसे समय सो नारि अकेली। निठुर कत जिन दुख परहेली॥
धन अकेलि औो भादौं राती। धन सो अहे बजर कै छाती॥
धन भादों कै मास सँवारा। तासो नार औो पुरुष सँचारा॥
भादौं रैन बिहावन केहि बिधि रहौं अकेली।
धृक जीवन तेहि नार का जेहि सामी परहेली॥

कवित्त

मास भादों रैन कारी देख कर दूभर भई।
कत बिन सखि सेज सोई नीद नैनन से गई॥
मन हमार निपट व्याकुल स्याम बिन सब दुख हिये।
बिरह सरिता उमड़ि आई कैस क बचिये दई॥

सोरठा

भादों केहि रँग भीर, धरै धीर केहि बिधि हिया।
बाढ़ै बिरह-क पीर, कथ न पूछै बात मोहिं॥

लाग कुआर सरद रितु आए। घटा जुनीर सब अग सुखाए॥
जहँ तहँ पथी तुरी पलाना। पीय प्रान बाहर बेहराना॥
जो कहु छाय रहे बजारा। सो फिर कै परदेस सिधारा॥
हम पछी तेहि सोच हमारे। ऐसे समय सो दीन्ह बेसारे॥
रहे नगर महँ लाल हमारा। नैनन मोंह कोट पहारा॥
जो निरदई करे नहि दाया। का भा निकट रहे निरमाया॥
सहस कोस तेहि पाछे आवे। माया मोह हिया उपजावे॥
रहे मदिर महँ करे न दाया। सहस कोस ता कहँ निरमाया॥
मास कुआर घटा जल सारा। भय परकास मिटेहु अँधियारा॥

सारद समय सुहावन, मन भावन नहिं पास ।
भय सूरत लखावनी, जो हिन नहीं हुलास ॥

छंद

कुआर मास अब लाग सुदर, चाँदनी निरमल भई ।
सरद रग बेभाल सोहित, सरद आवत निरभई ॥
जल अग सब सब सोन लीन्हो, नींद नैनन सो गई ।
चख वियोगिन के नहिं सूखै अवर जल सोखै दई ॥

सोरठा

यह रितु सोख्यो नीर, जब अगस्त ऊदित भयो ।
नयनन भयो अधार रितु, रात दिवस पूरन रह्यो ॥
कातिक मास महा उँजियारी । सजोगिन सुख समय पियारी ॥
देख चाँदनी करें हुलासा । जिनके कत रहैं नित बासा ॥
चहुँदिस होहि हरष अनुरागा । कामिन काम एक महँ लागा ॥
यह रित महँ सोहै उँजियारी । कैसे जिये वियोगिन नारी ॥
पिय कै लगन हिये अधिकाई । गगन नखत सखि रैन बेहाई ॥
सभै लगन सजोग समाना । काटे खाय न जाय बखाना ॥
बिरहिन बिरह अगिन से जारी । चन्द्र चाँदनी डारै मारी ॥
घायल बिरह बियोगिन बाला । निरख चाँदनी होय बेहाला ॥
सरद समय बहु दुख अधिकारी । बिरहिन प्रान जुआ जस हारी ॥
मोही निदित जगावा, पिय मोही के लाग ।
कहँ मोहन अस पावा, मिटै हिये कै आग ॥

छंद

मास कातिक सुठ सहेला, चाँदनी लखि चित हरै ।
देख के यह रितू सुदर, नार कथ पिव परहरैं ॥
दुओ दिस बिरख फूले, देख कै बिरहिन चरै ।
सरद रितु की चाँदनी मे, बिरह के मारे मरै ॥

सोरठा

कातिक सोहावन घन बैठ, भोग रजनी बैठ ।
बिरहिन बदन मलीन भय, देख रगै सखी ॥
अगहन दिवस घटा निस बाढ़ै । बिरहिन बेल तुसारन डाढ़ै ॥
जाड़ आन तन मॉह समाना । घर घर असन बसन अधिकाना ॥
साजहिं सौर सपेती नारी । हरियर सब मसियत रतनारी ॥
भयो चार ते प्रीतम प्यारी । जेहि तन ते नहिं होय निनारी ॥
पवन उदास बहै अब लागी । हम कुकनू सम झारहिं आगी ।
भाँति भाँति के बसन सोहाये । संयोगिन प्रीतम सँग पाये ॥

सरसों फूल रहीं चहुँ ओरा। लाग तुसार परै निसि मोरा ॥
बाढ़ै रैन बढ़ा सँग मोगू। लागे केल करे सब लोगू ॥
बिरहिन भई रैन बहु भारी। जगत जाय सो बिरह दुखारी ॥
अगहन मास सोहावन, भा दूभर बिन कंथ।
सेज अकेले रैन महँ, मिलै न आवत कंत ॥

छंद

मास अगहन जाड़ ब्यापै, देह लागै थर थरे।
कंत बिना दूभर भये ढहि, रैन होय करवट परे ॥
निठुर कंत नहि बात पूँछे, मास अगहन हर हरे।
सुख सोहागिन सेज सोहैं, एक दम बिरहिन जरे ॥

सोरठा

हेवँत रितु अनग, जाड़ कँपावे देह कहँ।
मोहि प्रीतम की चाह, बात न पूँछे निठुर वह ॥

पूस जाड़ अधिकों तन लागा। घर घर नारि पुरुष अनुरागा ॥
बाढ़ै रैन तन काम समाना। घटा दिवस सुख साज हेराना ॥
लाग परे जग माँह तुसारा। कँवल बदन हम बिरहिन जरा ॥
अंबुज बदन भयो जर कारा। प्रगट जाड़ नें काँपहि दारा ॥
छिन बिरही जिनके तेहि लासे। उनका यह रित कथ बिसरासे ॥
हम का करहिं जाहिं कब भागी। चहुँदिस जारी बिरह की आगी ॥
रैन पहाड़ न जाय बेहाई। काँप-काँप तन उठै झुराई ॥
है रे निठुर नाह दुख दाता। कबहूँ न पूँछा हम दुख बाता ॥
निठुर नाह नहि दाया आवै। हमहिं जाड़ दिन रात सतावै ॥
पूस मास दिन घन अब, आवै जाय न बार।
बिरहिन निस दारुन भये, हाय के परे निहार ॥

छंद

पूस मास भये निस दिन, रैन जग सम होय गये।
तन तुसार सम कँवल के जर, छार बिरहिन के भये ॥
कंत तोहिं बिन सेज सूनी, रैन दूभर निरमई।
ऐस रितु में लाल बिन, कैसे जिवें ललिता दई ॥

सोरठा

पूस भयो दिन छोट, रैन बेहाय न कंत बिन।
बिरहिन लाग न खोट, निठुर कंत पूछे नहीं ॥
माघ मास सोहै दुख साजा। तिल तिल दिन बाढ़ा दुख भाजा ॥
जेहि दिन पवन नीच अधिकाये। तेहि दिन देहि तुसार कराये ॥
कैसे बीते मास सोहावा। निठुर नाह नहिँ दरस देखावा ॥

सिरी पचमी बौर सोहाये । माली बौर देखाये आये ॥
रग बसत सो लाग सोहावा । बिरह बियोगिन दुख अधिकावा ॥
यह सो मास बिन कत बेहावै । प्रेम काज अब हिया जरावै ॥
दारुन बिरह जरावे देहाँ । सून बसत बिन उपजै नेहाँ ॥
अब कैसे यह दिवस बेहाऊँ । बिना पीउ रँग बसँत गवाऊँ ॥
धावै काम कमान चढाये । बिरहिन हिया बोझ सिर लाये ॥

माघ बिछोहें कत जेहि, धृक कामिन तन सोय ।
ऐसे रितु अकसर रहे, कैसे जीवन होय ॥

छंद

माघ थिर थिर देह कॉपि, निस अकेले सोय ॥
नींद नैनन मे न आवे, सँवर प्रीतम रोय ॥
बैस सुंदर जातपिव बिन, आँसु से मुख धोय ।
कत बिन बिरहिन तपै तन, प्रान बर तेहिं खोय ॥

सोरठा

मोहन आये नाहि, कवन छाँह हम (कहँ) करै ।
कठिन समै अवगाह, कैसे कै धीरज रहै ॥

फागुन मास कीन्ह परगासा । घर घर उपज्यो रग हुलासा ॥
बाजे डफ मृदग सोहाये । काम आय निज रूप देखाये ॥
लागे पवन बहे हरिहरा । तरुवर पात सभै खसि परा ॥
निस बिरहिन पुन भा पतझारा । रोम रोम तन बिरहिन जारा ॥
सजोगिन सभ खेलहिं होरी । रग गुलाल सो भर भर झोरी ॥
डारहिं रग सोरग हँकारहिं । दुख दारिद कहँ मार निसारहिं ॥
जिवँ जिवँ पवन तेज अधिकाई । बिरहिन हिये न रंग समाई ॥
धृक जीवन जेहि कत नियासा । मरे बियोगिन दरस के आसा ॥
यह रित मा भा सुख परगासू । बिरहिन जेर बिरह दुख बासू ॥

फागुन समे सोहावने, मन भावन नहिं सेज ।
रन तुरग अरग कहि, बिरहिन जरै करेज ॥

छंद

मास फागुन सुठ सहेला, आन सुख परघट भयो ।
काम पूरन जगत छावा, सोग दुख जग से गयो ॥
यह समै पिव बिन सखी, यह देह बिरहिन के तयो ।
दुख पुराये रह गयो यह, मास सभ सत कुछ गयो ॥

सोरठा

खेलहिं लाल सु फाग, केसर बीर उड़ावहीं ।
जरहिं बियोगिन भाग, फागुन सुक्ख न पावहीं ॥

एक बरिस दुख बरन सुनावा। यहि बिधि चालिस बरिस बितावा ॥
सदा बसत ओ पावस आवे। मोहिं कहँ उठि बिरह जरावे ॥
निस दिन लाग रहै जस होरी। दिये जराय बिरह तन कोरी ॥
वहै रैन वह दिन नित आवे। मास मास रितु अवर दिखावे ॥
मोंहि कहँ सदा गिरीषम रहा। बिरहानल दुख जाय न कहा ॥
चालिस बरस बिरह अधिकाना। नित उठ हिये लाग जस बाना ॥
दिन दिन बिरह तेज अधिकाई। चालीस बरस सो रोय गँवाई ॥
वहै भोर साँझहिं सो आवै। निस दिन बिरहिन हिये जरावै ॥
तुम प्रीतम कुछ कीन्ह न दाया। अस तुम्ह भूल गयो निरमाया ॥

प्रीतम बिरथा जाय जग, मैं सो जर्यों जेहि लाग।
तुम्हरे मन उपज्यो नहीं, धिरिग मोर बैराग ॥

कहा जुलेखा प्रेम कहानी। नैने भरे जस पावस पानी ॥
रोय रोय सभ बरन सुनावा। सुन यूसुफ मन उठ्यो छोहावा ॥
सेवक सब कै मँदिल पठावा। आय अहेर खेल लहरावा ॥
आयो मंदिर सेज पर गयऊ। हिये जुलेखा सो रत भयऊ ॥
कहा बोलाय चहो का नारी। सो अब देऊ जो होहुँ सुखारी ॥
जो माँगहु सो देऊँ मँगाई। सोन रूप नग बसन सोहाई ॥
कहा जुलेखा एक न चाहौं। धन लक्ष्मी सभ झार बहावौं ॥
मँदिर गाँव मोरे बाग सोहाये। जो मागै तेहि देउँ मँगाये ॥
लेउ गाँव औ मँदिल सोहावा। चेरी दास लेउ चित भावा ॥
महा सिद्ध के सुत कहलावहु। औ तुम्ह सिद्ध सदा सुख पावहु ॥
कीन्हों बहुत तपस्या जोगू। अलख तृसा तुम कीन्ह न भोगू ॥

माँगहु तुम्ह करतार तें, देहिं नैन कर जोत।
जेहि ते देखहुँ तोर मुख, चहौं न हीरा मोत ॥

तब याकूब यूसुफ तें कहा। जो कुछ अरथ भेद सब रहा ॥
सुना जुलेखा नबी कर नाऊँ। परे जाय याकूब के पाऊँ ॥
महा सिद्ध औ पर उपकारी। सुनहु कान दे बिथा हमारी ॥
जेहि का अंग बिरह दुख मेजे। सो दुखिया दुख दीन्ह पसीजे ॥
तुम्ह जस जर्यो सो बिरह कै आगी। तेहि तें अधिक जर्यों वहि आगी ॥
तुम्ह समुझ्या मोरे दुख कै पीरा। पुत्र बिरह तुम डह्यो सरीरा ॥
वह निरदई न जाने प्रेमा। जानहि सो जेहि धरम औ नेमा ॥
तुम्ह सभ कुछ तेहि पंथ न पावहु। कस तेहि तें तुम प्रेम छिपावहु ॥
चालीस बरस जरायो देहों। वहि के हिये न उपज्यो नेहों ॥
तुम्ह अब न्याव हमार करेऊ। निरदाई सुन कहँ सुख देऊ ॥
सबहि गरथ तेहि देहु सिखाई। प्रेम के अच्छर न देहु पढ़ाई ॥

जेहि ते जानहि प्रेम वै, बेग पठावहु सोय ।
देहु असीस उठाय कर, नैन जोत जेहि होय ॥
अब कुछ और न चाहूँ नाथा । रहौं सदा चेरी के साथा ॥
पाऊँ नैन दरस जो देखहुँ । जब लगि जिवों सरूप बिसेखहुँ ॥
किह्यों जनम भर मूरत पूजा । तेहि छुट अवर न जान्यों दूजा ॥
अब तेहि पर कीन्हों अनखानी । फोरयों सीस रोय बिलखानी ॥
यूसुफ अलख सो अहै सोहावा । जेहि सेवक से भूप बनावा ॥
मैं सो जन्म भर सीस नवावा । तुहँ दर दर मोंहि भीख मँगावा ॥
तुहँ मोर अलख किये यहि हाला । दर दर माँगहु भीख बेहाला ॥
जब मोर आस पुराई नाहीं । भयो क्रोध मोरे हिय माहीं ॥
तब रिसाय मैं मूरत फोरा । टूक टूक फेंक्यों चहुँ ओरा ॥
यूसुफ अलख तें अब मन लायों । औ मूरत ते हाथ उठायों ॥
वह दाता करतार जिन्ह, सभ यूसुफ कहँ दीन्ह ।
तेहि सो अलख आनद कहँ, ग्यान ध्यान मैं कीन्ह ॥
तब याकूब सो हाथ उठावा । तेहि अवसर जबरैल सोहावा ॥
कहा जुलेखा कहँ लै जाहीं । कहो सखिन हम्माम कराहीं ॥
नार अनेक सघ कै दीन्हा । तब बरबस हम्माम सों कीन्हा ॥
मजन औ अस्नान करावा । ईंगुर अँग चदन तन भावा ॥
जब अस्नान कीन्ह वह नारी । चौदह बरस-क भई कुमारी ॥
आइ रूप जस हत्यो सुहावा । तेहि तें अधिक रूप छबि पावा ॥
चौदह बरस क भई कुमारी । नैन कटाच्छ तेज अधिकारी ॥
लाय सखी यक आरसि दीन्हा । देखत रूप सो अचरज कीन्हा ॥
धन करता हरता सुखदाई । तुहँ सभ दीन्ह सो कहत नियाईं ॥
प्रेमी प्रेम न निरफल गयऊ । कस सो निरास जुलेखा भयऊ ॥
मैं तो तोहिं न जान्यो, जनम अकारथ खोइ ।
धन्य गरीब नेवाज तुहँ, को अस दूसर होय ॥
ईंगुर अंग मजन असनाना । हरिहर मानख सुघर सुजाना ॥
लागे षट्-दश होय सिंगारा । चोटी गूँघ सो माँग सँवारा ॥
तेल फुलेल लाय कै साजा । पाटी पार माँग उपराजा ॥
बार बार गूँथे गज मोती । सेंदुर दीन्ह सुरज कै जोती ॥
गुल गेसुन कपोलन लावा । दै अजन खजनै बढ़ावा ॥
मेंहदी कर पग सोहाग सँवारा । बीर बहूटी कै रग धारा ॥
दाँतन स्याम सो मसी जमाए । चमक सोभाग सो बरन न जाए ॥
मुख तँबोल गह्यो अपने पाना । अतर लगाय कीन्ह अरगाना ॥
फूल सो लाय पेन्हावे जोडा । पुहुप माल तन सोहे कोरा ॥

आयसु रहा सिंगार के, बारह अभरन लाय ।
दीन्ह नार कुमार कहँ, सभ अभरन पहिराय ॥
बारह अभरन साज बनावा । सहस फूल औ मडन भावा ॥
बेसर औ कनफूल सोहावा । करन भूखन सब्हन पहिनावा ॥
कठा भूखन सोहैं जेहि ताईं । गर भूखन उर पास सोहाई ॥
कठ माल बाजूबँद साजा । कर भूखन सो पहुँची बिराजा ॥
अँगुरी मुँदरी उत छबि देहीं । नेवल बद गुन ज्ञान हरेहीं ॥
साज सिंगार सखी सब्ह मोहैं । रूप अपछरा तासो सोहैं ॥
धन वह अलख रूप जिन दीन्हा । भर के बार कुमार सो कीन्हा ॥
लाय सेज पैठारहिं कोरी । मिले न तीन भुवन महँ जोरी ॥
उर केसर फिर अधिक सोहाए । मगल बूंद सो रग बनाए ॥
बैठी सेज सुनार, भूखन साज सिँगार ।
अब नख सिख का बरनौं, सभ सुदर सुघर निसार ॥
अब माथे गूंधे गज मोती । राहु केत मनो चद कै जोती ॥
दुऔ दस घन बाद जस छावा । मध्य कौंध चमकै देखरावा ॥
दामिन अस वह माँग सोहाये । केस घमड घटा जस छाये ॥
जस जमुना कै नदी अपारा । माँग बाँध जस सुघर सँवारा ॥
सेत बद जस माँग सोहाए । बिरहिन नैन परे तेहि पाए ॥
जो न होत अस माँग अनूपा । डूबत नैन स्वरूप सरूपा ॥
चमकै माँग माँग कै बानी । सेंदुर रकत रग तहँ सानी ।
पहले कहूं माँग के रेखा । जमुना बीच सरसुती देखा ॥
खरग धार वह माँग सोहाए । सेंदुर तहाँ रकत रँग लाए ॥
माँग सोहावन सुख भरे, भाग अधिक तहँ दीन्ह ।
राहु केत दुऔ दस तहाँ, रब-कि किरन अस कीन्ह ॥
केस सीस का करौं बखाना । नागिन देख सो ताह लजाना ॥
मुख पर परै जो होय बेकरारा । तपा सदा करै ससारा ॥
कोऊ कहै अहै तुम राजा । सोहै तहाँ जीत चँद राजा ॥
कोऊ कहै सो दई सोहावा । ... ... ॥
कोऊ कहै स्याम अति मोहा । पुहुप परान आय तहँ सोहा ॥
पुहुप छत्र महँ मग मद तारा । खींचे चतुर चित्र तहँ मारा ॥
केस सीस मानो निसि कारी । सोहै परत काल उजियारी ॥
सो प्रभात पर भयो दिखाये । स्याम लाय नित हाथ छिपाये ॥
बेनी गूघ लिलाट तें, मनो नागिन मन लीन्ह ।
मूँगा चौकी पीठ पर, वहाँ छाँड तेहि दीन्ह ॥
अब लिलाट बरनौं सुख कारी । रब, ससि, निसि औ उँजियारी ॥

केसर खोर . ... । ...

तब जबरैइल कहा तेहि बाता । रूप नैन तेहि दीन्ह बिधाता ॥
देखहु जाय जुलेखा सोई । प्रेम न सकत अबिरथा होई ॥
के अस पुरुष प्रेम करेई । सुफल प्रेम पग दिन दुख हरई ॥
दूसर जनम जुलेखा लीन्हा । सो दयाल अब तुमकों दीन्हा ॥
तुम पूरुख वह नार तुम्हारी । दूजे बार सो दई सँवारी ॥
जेहि तें रहै सो सुरत हुलासा । रहहु जुलेखा के नित पासा ॥
वह के सुख दयाल सुख मानै । दुखी भये परभू दुख मानै ॥
वह अज्ञा तज किह्यो न काजू । वह समान यह जगत न राजू ॥
ना अस रूप न प्रेम न ज्ञाना । दई दीन्ह सब्ह ताह सुजाना ॥

सुन यूसुफ सिर नाइ के, कीन्ह ब्याह कै चार ।
बाजै लाग जो नौबत, नाच गौड़ झकार ॥

जो कुछ होत ब्याह कै चारा । सो सब्ह कीन्ह राग रँग सारा ॥
सुफल घरी भा ब्याह सोहावा । दुखिया दान दरब बहुपावा ॥
आन्यो भोग छतीसो जाती । भये किनआँ के लोग बराती ॥
तब याकूब निकाह पढावा । देख जुलेखा बहु सुख पावा ॥
बाढ़ा प्रेम धन नार सोहागिन । धन्य अलख जिन कीन्ह सोहागिन ॥
सेज सँवार सो रग सोहाए । दुलहिन ब्याह दुलह पहँ आये ॥
यूसुफ देख हिए हुलसाना । धन वह अलख दीन्ह जिन दाना ॥
जस मैं रूप आदि निरमाया । तेहि तें जोबन रूप सोहावा ॥
रहस नार कहँ कँठ लगावा । जनम जनम दुख बिरह नसावा ॥

प्रेम जुलेखा कहँ मिल्यो, यूसुफ कहँ दुख दाह ।
भई जुलेखा भगत अब, यूसुफ कहँ दुख दाह ॥

दिन दुइ चार कीन्ह रस भोगू । लागी करै जुलेखा जोगू ॥
मैं बिरथा यह जनम गँवावा । प्रेम बिपत मानुख सो लावा ॥
काहे न प्रेम अलख ते लाऊँ । जेहिं तें मोख मुगत पुन पाऊँ ॥
का मानुख मानुख का चाहै । चाहै अलख मुगत कर लाहै ॥
निस दिन लाग तपस्या करै । जब जोगिन ते प्रीत छबि धरै ॥
अलख काज छुट अवर न काजू । यूसुफ देख बाढ़ उर लाजू ॥
निस बासर जप तप कै माहीं । एको छिन प्रभु बिसरै नाहीं ॥
यूसुफ प्रेम हिये ते भागा । अलख पेम आठौ अँग जागा ॥
कुछ यूसुफ कै चिंता नाहीं । कबहूँ न सोच करै मन माहीं ॥

निसि दिन वह तप जप करैं, सँवरै अलख सुजान ।
जेहि की दाया तें मिला, अब रूप बैस गुन ग्यान ॥

यूसुफ नबी सो रहे अधीरा । बाढ़ै हिये प्रेम कै पीरा ॥

जब लहि दरस देह नहिं नारी। तब लहि यूसुफ़ रहें दुखारी॥
वह निस दिन राखे तेहि प्रीती। भई जुलेखा आन सो रीती॥
कहैं कि सँवरो वह करतारा। अंत काल जो लावै बारा॥
मैं मानुख का प्रीत हमारी। जोबन रूप रहै दिन चारी॥
बहुर न यहि जोबन नहिं रूपा। सँवरहु पुरुख अकाल अनूपा॥
यूसुफ़ नबी करें मनुहारी। होय न सुचित जुलेखा नारी॥
कहा जुलेखा मोहिं न सतावहु। जाय सो ध्यान अलख महँ लावहु॥
मैं जोबन अरु रूप उतगा। देख लीन्ह कुछ रहे न संगा॥
जाय फूल कुँभिलाय, जब रहै रंग न बास।
तेहिं ते सँवरहु एक वह, जेहि के दुओ जग आस॥
यूसुफ़ कहा सुनो अब प्यारी। जतन नाह नित रहीं दुखारी॥
बिन देखे मोहिं कल न परई। दारुन बिरह कठिन दुख धरई॥
दया करो औ दरसन देहू। मोहिं दुखित जिन रार करेहू॥
प्रान तें अधिक तुम्हें मैं जानहु। रूप तुम्हार हिये महँ आनहु॥
निस दिन रहे मो ध्यान तुम्हारा। मन अधीन जस व्याकुल पारा॥
जस तुम्ह बिरह अगिन ते जारा। तस अब करहु भोग सुख सारा॥
मोहिं दुखित जिन राखो प्यारी। छुआ मोख दुख देहु निनारी॥
दई बढावा हम तुम प्रीती। राखहु दया प्रेम की रीती॥
दई देह यह रूप सोहावा। मोहिं कारन तुम्ह फिर कै पावा॥
मोहिं तें होहु न निठुर अब, हिये लखहु अब और।
कहै जुलेखा नाम सुनहु, दास तुम मोर॥
एक दिन बहुत कहा नहिं माना। कहा जान मोहिं दास समाना॥
जस आगे तुम्ह राखब प्रीती। राखहु दया हियें तें रीती॥
अब सो अलख कर दीन्ह सँजोगू। देहु मिटाय बिछोह बियोगू॥
जस दुख सबहि करै अब प्यारी। जाय भुलाय बिरह दुख भारी॥
चालीस बरस कीन्ह तप जोगू। रात दिवस तुम छोह बियोगू॥
करहु सेज सुख भोग बिलासा। निस दिन होय सो दुख कै पासा॥
कोट बिनति कै यूसुफ़ हारा। चाहा हाथ गले माँ डारा॥
कहा जुलेखा मोहिं ना भावै। अलख ध्यान छुट आन न भावै॥
मोहिं को एक अलख कै आसा। बिरथा यह सुख भोग बिलासा॥
दिना पाँच का रूप सिँगारा। होइहै अंत देह तेहि छारा॥
जोबन रूप सिँगार सब, सँघ जाय तेहि खोय॥
काहें न सँवर सो अलख कहँ, जानो मुक्त कब होय॥
अब मोहिं का सुख भोग न भावै। मृत्यु भये कुछ काम न आवै॥
यहि जग मा छुट जीवन थोरा। अब जिन करहु खोज तुम मोरा॥

निसि दिन लेहु अलख कर नाऊँ। जेहि तें मिलै सरग मँ ठाऊँ ॥
मैं अब निजु जान्यो तेहि साईं। जिन सबहू दीन मोहिं बरियाई ॥
सो साईं तज अवर न भावे। बिरथा सुक्ख भोग चित लावै ॥
यूसुफ नबी बहुत समुझावा। एक जुलेखा कान न लावा ॥
तब बरबस उठि हाथ चलावा। भागि जुलेखा यूसुफ धावा ॥
दामन फार रहा तेहि हाथाँ। गई भाग वह दार के हाथाँ ॥
धन चरित्र वह अलख देखावा। यह कर फरा सो वह कर पावा ॥
एक दिन हत्यो जुलेखा, फारा यूसुफ़ पाट।
अब यूसुफ़ के हाथ तें, धन कर दामन फाट ॥
यह बिधि रहै जुलेखा मार्गी, यूसुफ़ लगन रहै नित लागी ॥
निसि दिन रहै नार से ध्याना। नार हिये उपज्यो अब ज्ञाना ॥
राज काज कुछ ताहि न भावे। निस चित हित बनिता तें लावै ॥
बरबस करै नारि से भोगू। आवै ताह जाय औ जोगू ॥
यूसुफ कहैं भयो तोहि काहा का भा तोर प्रीत औ चाहा ॥
कहा सुनो स्वामी सब बाता। तब सों मोर मन तोहँ सो राता ॥
मूरत तोर हिये महँ आन्यो। छुट तोर प्रीत आन नहिं जान्यो ॥
तब सो अलख कहँ जान्यों नाहीं। मूरत तोर रहै हिय माहीं ॥
अब सो अलख हिये तर बासा। तेहि कर ध्यान हिये पर कासा ॥
एक हिये दुई प्रेम अब, कैसे कहो समाय।
जग सामी कै प्रीत अब, रहै हिये महँ छाय ॥
बरबस करै भोग सुख सारा। सुत तिन दिये तेहि करतारा ॥
पाँच पूत दुई दुहिता भयो। जब तप करै प्रान पर छयो ॥
दुहिता सुत सामी नहिं भावै। नित उठ चित्त अलख से लावै ॥
धाई कोर रहे सुत बारा। औ प्रतिपाल करै करतारा ॥
करै जुलेखा निसि दिन जोगू। भावै ना तेहि सुख औ भोगू ॥
धन करता कहँ खेल सोहावा। करै सोय जो वह मन भावा ॥
कबहुँ पुरुष कहँ नारि कै चेता। कबहुँ नार कहँ पुरुष कै मीता ॥
वहिक पास यह मन नित आवै। जेहि ... ... सोहावै ॥
बारह बँधु के बस पुन, भये बहुत अधिकार।
करै राज सुख भोग सब, बड़ँ बहुत परिवार ॥
भये याकूब सुखी मन माहाँ। निसि दिन करै पुत्र पर छाहाँ ॥
सब सुख देख कुटिल परिवारा। तब लहि आय पुन काल हमारा ॥
बिरथा तेज नबी जब भयो। सेवा का यूसुफ चलि गयो ॥
सभै पुत्र का पास बोलावा। कीन्ह बहुत उपदेस सोहावा ॥
औ यूसुफ कहे सब परिवारा। सो तब आप सिवलोक सिधारा ॥

जब याकूब देह तजि दीन्हा। तब यूसुफ बहु रोदन कीन्हा॥
औ रोवें सगरो परिवारा। बारह पुत्र ! ... सारा॥
रोवैं सभै सुतन की नारी। औ रोवें दुहिता पुन सारी॥
दुहित पुत्र कै अंस सोहाये। रोय रोय सिर छार चढाये॥
भा अँदोर सभ नगर महँ, रोवें नर औ नार।
ऐसे पुरुष सो चलि बसे, को दूसर संसार॥
रोई बहुत जुलेखा नारी। सँवर सुरत तज भई दुखारी॥
यूसुफ पिता अन्हवावा। औ पुत्रन सभ साज बनावा॥
चले साज कै पिता जनाज़ा। दुख बाजन घर-घर महँ बाजा॥
मिसिर नगर महँ परै अँदोरा। नारिन करै रोट चहुँ ओरा॥
औ यूसुफ़ का भा दुख भारी। रोवें बहुत सो छोड़ डफारी॥
छाड़ सो लोग कुटँब परिवारा। होय अकेल अब पिता सिधारा॥
बहुत बस कुछ काज न आए। अकसर पिता सो सरग सिधाए॥
सुत बिन बधु पुत्र ओ नारी। सबह् तजि गयो गयो पैयारी॥
कोऊ न सँघ जाय तेहि गैला। गयो अकेल छाड़ सबह् खेला॥
छिन बिछुरे दुख होई। छिन-छिन राख सकै नहिं कोई॥
... ... सभ साथ।
... ... राख न सकै कोऊ हाथ॥
गयों समूल छाड़ कै नाऊँ, रहा सूख सबह् ठावें ठाऊँ॥
यूसुफ़ नबी साज सब साजा। स्याम देस लै गये जनाजा॥
अयस नाम याकूब कै भाई। एक सँग बिधि जनम गँवाई॥
तेहि दिन अयस मरे तेहि देसा। ओ याकूब पहुँच परबेसा॥
एकै संग वै दूनों भाई। रहे सोय दुओ खुमार समाई॥
एकै सग जनम वै लीन्हा। एकै सग प्रान तजि दीन्हा॥
एकै सग रहे यक पासा। एकै संग गये कैलासा॥
जगत धन्ध सब छाड़ कै, गय अकेल निज धाम।
लोग कुटँब परिवार सबह्, कोऊ न आयो काम॥
दोउ पिता कै गत पत कीन्हा। मुरत अमोल छार रख दीन्हा॥
खावा भोग ओ भूल अँदेसा। धधा लाग करै सब देसा॥
फूल चढ़ाय फिरे सभ लोगू। लागे खाय अन्न ओ भोगू॥
महा सिद्ध जग रहै न कोई। दूसर कौन अमर जग होई॥
यूसुफ नबी बहुत दुख माना। बेद भेद कों करे बखाना॥
अब न पिता देखब जग माँहीं। कवन करै हमहि अब छाँहीं॥
कहि तें दुख सुख बरन सुनाऊँ। केहि तें अपरम मरम सो पाऊँ॥
कवन करै हम कौ उपदेसा। कवन सुनाइह अलख सँदेसा॥

काटिय गाढ सो कवन हमारी। कूट बचन बरनै को भारी ॥
गाढ़ परे केहि सँवरब, कूट साँच उपदेस।
अब ना पिता को देखियत, गये सो कौने देस ॥
तब जबरैल सरग तें आए। यूसुफ कहँ सुठ बचन सुनाए ॥
करहु पिता कर अब सतोखा। जेहि तें होय दुओ जग मोखा ॥
पैठो तुम सो पिता के ठाऊँ। सँवरहु सदा अलख कर नाऊँ ॥
औ सुख देहु करहु सुख सारा। पूजै तुम्हैं सभै संसारा ॥
तुम का नबी अलख अब कीन्हा। बुद्धि सुद्धि सभ तुम कौ दीन्हा ॥
तब यूसुफ सभ नगर बोलावा। अलख सँदेस सो बरन सुनावा ॥
सभ जग आय सो सीस नवावा। औ सुख भयो मन सभ पावा ॥
तुम सो अहो याकूब के ठाऊँ। हम आधार सो राउर नाऊँ ॥
जस वे वेद भेद बतलावहिँ। हिन्दु तुरुक कहँ राउर नाऊँ ॥
सभ जग सीस नवावा, दीन्ह नबी कहँ हाय।
दीन्हा सभ सुख पूजा, अवर भये सब साथ ॥
भयो बिरिध बालक घट्यो हारा। घट्यो चाह और घट्यो परहारा ॥
रूप रँग बल बुध सुख खाँगा। यूसुफ मीच देव तन्ह माँगा ॥
उपज्यो क्रोध औ काम हेराना। कामिन देख सो नैन लजाना ॥
रह्यो न रूप सो सभ जग चाहा। रह्यो न बल जेहि करब बेसाहा ॥
रह्यो न केस भँवर अस कारी। रह्यो न दसन दाडिवँ जेहि हारी ॥
रह्यो न सरवन सुरत अमोला। रह्यो न सुदर स्वभाव कपोला ॥
रह्यो न द्रग मृग खजन भजन। रह्यो न बानी कोकिल गजन ॥
नार पुरुष नहिं आदर करहीं। नारि बिरिध कर नाउँ सो धरहीं ॥
जेहि के ओर चाहे चख हेरा। देख बिरिध सो अब मुख फेरा ॥
रहै न हाथ पावँ कै सोभा। जेहि का देख सभै जग लोभा ॥
रह्यो न रग रूप वह, जेहि चाहे संसार।
कँवल बदन कुँमिलात, नित मनसा तव गा हार ॥
जो मन चाहत रँग सोहागा। सो सब .. .. ॥
जो मन चाहत उड़न खटोला। लागे ... नहिं ... डोला ॥
हँस अमोल जो सरवन सोहा। जा कहँ देख सती जग मोहा ॥
बिन पानी अब हँस पियासा। लखि सरवर मन भयो उदासा ॥
कहाँ गये वे दिवस सोहाये। रूप रग दिन दिन अधिकाये ॥
अब दिन दिन वह रोब घटाहीं। बल बुध जाइ सो जात हेराई ॥
रहे न सुदर मुरत न मानी, ठौर ठौर रह गये निसानी ॥
गये रैन भूला सुख चाहू। भयो भोर उठ गयो बटाऊ ॥
मोती लर जस चमक बतीसी। सो सँग छाड़ भयो परदेसी ॥

रूप भाव नहिं रह गये, डार कंठ ले हाथ ।
भूल बात सब चल बसे, गये झाड़ कै हाथ ॥

हँस हँस फूल झुम्म खसि परैं । देख सकामिन रोदन करैं ॥
फूले फूल भये पत झारा । यहै हाल अब होय हमारा ॥
तब लहि मोर बात नहिं मानै । जब पत झार होय तब जानै ॥
औ दयाल तुईं सबुह कुछ दीन्हा । सब दाता सोई मोहिं कीन्हा ॥
दीन्ह जनम मोर नबी के बारा । नबी के सुन नहि मोर अधारा ॥
वहै रूप सबुह जग उपराहीं । वहै . ... जग माहीं ॥
भाइन मोहिं कूप महँ डारा । नबी कृपा कर मोहिँ निसारा ॥
बहू देस सब गाहक मोरा । बंद डार तुम कीन्ह बहोरा ॥
भये राज बाढा सभ भोगू । मात पिता कीन्हे संयोगू ॥
भाईं लोग सभ भये अधीना । पिता मिलाय सभै दुख दीन्हा ॥
दीन्हा नार जगत उमराहीं । दीन्हा सुख सतति जग माहीं ॥

सभ कुछ दीन्ह दयाल तोहिं, कछु ईंछा अब नाँह ।
करौ कूच अब जगत सें, करो सो महि पर छाँह ॥

यहि जग मा जस कीन्हे दाया । वह जग करो अभय निचि माया ॥
मुनि रिखि सिद्ध रहें जेहि ठाऊँ । तहँ मोर अलख कहावहु नाऊँ ॥
अब मोहिँ अवर न इछा मोहे । यही जगत मन व्याकुल होये ॥
अब तहँ चलूँ जहाँ कै आसा । रहौं सदा जेहि मँदिल उदासा ॥
अब यह जग मोहिं तनिक न भावै । चलौ अत जहँ सब कोउ जावे ॥
अब दिन दिन अवगुन अधिकाईं । गयो रूप जेहि जगत लुभाईं ॥
अब जीवन से भला सो मरना । रस धावन ... ... ॥
तेहि तें वेग उठावहु मोहीं । देखहु पिता जो कियो बिछोही ॥

भोर आय नियराया, लेउँ न रैन बसेर ॥
ज ... ... , चलना तहाँ सबेर ॥

पुन दस बरस जो यूसुफ़ जिया । सत्त सोभाव जगत महँ किया ॥
धरम नीति सें कीन्ह सो काजू । दीन्ह सुधार दुखी कर काजू ॥
दरब दान दुखिया कौ दीन्हा । नीत छाँह परजा पर कीन्हा ॥
धरम नीत औ न्याव करेहीं । वेद मेंद सब्ह कौ सुख देहीं ॥
पुत्र सयान हिये सुख माहीं । मात पिता के सर परछाहीं ॥
वेद मेंद सब सुख निरमावा । वधु बस कहँ वेद पठावा ॥
यूसुफ नबी कौ अमर न बारा । जेहि घर मा मूसै अवतारा ॥
ता कों अलख नबी अस पावा । आद गरथ तुरत भेजावा ॥
दीन्हा अलख बस अधिकारा । बारह कुटी बैठ ससारा ॥

बारह पुत्र के बस वै, इसराईल कहाहिं॥
मिसिर नगर, लों बसा अधिकाहिं॥
पातसाह सब के सुत आवा। सो फिरोज़ जग माँह कहावा॥
इबन अमी सुत कै सुत मूसा। डार दीन्ह जग जान मँजूसा॥
सो पुन कथा अहै बिस्तारा। कहौं कथा यूसुफ कर सारा॥
दसमे बरस आय जम राजू। यूसुफ नबी प्रान कै काजू॥
कहा अलख जो आशा कीन्हा। चहौं प्रान तोर मैं लीन्हा॥
यूसुफ कहा जो आज्ञा होई। तो सम लेउँ सीस पर सोई॥
देख लेउ मैं दरस जुलेखा। तब हम करहु जो अवगुन लेखा॥
तब जमराज कहा यह बाता। आशा नाह लखो मुख राता॥
अब तुम तजो प्रेम वहि केरा। करहु प्रेम जो करहिं निबेरा॥
बहुत भाँति बिनती कै हारा। पाव न जुलेखा रूप निहारा॥
यूसुफ चाहा बहुत मन, लखै जुलेखा रूप।
पै जमराज न माना, अज्ञा अलख अनूप।
जब लहिं आय जुलेखा पासा। तब लहि फूल गयो तजि बासा॥
आय नार जो पीव के तीरा। दखै परा सो सून शरीरा॥
पुन निहार यूसुफ कहँ देखा। रह्यो न रूप रंग न रेखा॥
मूँदे नयन खुलैं अब नाहीं, बैन हरे मुख बोलत नाहीं॥
हाथ पाँव मुख सरवन नासा। सब ते हरत गए जस बासा॥
सून सरीर परा बिन जीऊ। ठहक मार देखहिं मुख पीऊ॥
धँसक अहै हिय माँह समाना। गयो छाड़ जस देहँ सें प्राना॥
मुरझ रहै नार बस फिरै। .. ... ॥
नार देख पिउ कर तन सूना। बिना प्रान सभ पिंड बिहूना॥
कौन हस सरवर हत्यो, केहि दिस गयो हेराय।
जेहि पुन सून सरीर मै, काहु न कहा सोहाय॥
परी जुलेखा होय बिन जीऊ। बहुर न देखा आयन पीऊ॥
तब नहलाय साज सभ कीन्हा। लै गये सौंप घर कहँ दीन्हा॥
छार मिलाय सो छार उड़ावा। थाती सौंप लोक फिर आवा॥
जो जाकर तेहि सौंपा सोई। साथी सग रहा नहिँ कोई॥
तीन दिवस दुख रह्यो अपारा। रहीं जुलेखा अतिहि बेकरारा॥
पिव गवनब कछु जानत नाहीं। रहै सोनार सूख पट माहीं॥
तिसरे दिवस मोर होय भयो। तब पुन चेत जुलेखा भयो॥
देखा खोल नैन चहुँ ओरा। कहा कि आज भयो कस मोरा॥
पिउ जागत सब मोहिं जगावै। आज सखी कहुँ दिस न आवै॥
अब मैं आज मोर कें जागी। अयो पीऊ कस अकसर भागी॥

पिऊ कर मुख नहिं देखहु आजू । मोहि तज अजहूं करत न काजू ॥
जब लगि रहौं सेज पर, कत न छाँड़हि मोंह ।
अब राजत्याज कहाँ गयो, लाल सो मोहिं बिछोह ॥

कहा सखी उन सरग सिधारे । हम कों बिरह आग महँ जारे ॥
सुन यह बात सो खाई पछारा । फिर फिर सीस भुम्म पर मारा ॥
जहाँ सो पीउ होय निहि चिता । तहँ लै चलो जहाँ मोर मिता ॥
चलै सखी सँग व्याकुल नारी । जहाँ कथ सोवै सो नारी ॥
तेहि के ठहर जाय सिर नावा । परथम केस तोर छितरावा ॥
छितराइस मोतिन कै हारा । जूड़ा टूक टूक कर डारा ॥
बार खसोट तुरंतहि डारा । अभरन तोर बहु सह सिगारा ॥
चूरी फोर सीसन तब फोरा । झार मिलाय दीन्ह बह चूरा ॥
परै ढेर पर झार उड़ावहिं । बिपत-बिपत मुख बैन सुनावै ॥
नैन काढ दोउ लिहिस, दीन्हेसि ढेर पर डार ।
जेहि नैनन पिउ तोहिं लखैा, देखैा काह निहार ॥

कहा कंत तुम कहँवा गयऊ । नैन बैन मुख सुन सब भयऊ ॥
गात गुलाब देख मुरझाई । सो तन झार लीन्ह अब खाई ॥
जेहि मुख बोलत अमिरित बानी । अमृत बोल वे कहाँ हेरानी ॥
नित मो प्रीतम करत जो दाया । कस अब लाल भयो निर्माया ॥
मैं पापी तुम्ह सँग न लागी । अहौं करम की सदा अभागी ॥
मोहिं छाड़ कत कत सिधारे । नैन ओट न करत बयारे ॥
जब जमराज प्रान तोर लीन्हा । निठुर लाल मोहिं खबर न दीन्हा ॥
मैं जम तें अस करत निहोरा । लिहो लाल सँग प्रान सो मोरा ॥
एकहु छिन न मोहिं बिसारेहु । चलत बार मोहिं कसन पुकारहु ॥
नैन ओट कहुँ होत रहु, मोहिं ते आशा लेहु ।
ऐसे कंत बिदेस कहँ, मोर न खोज करेहु ॥

चालिस बरस जो जोग कमावा । तब प्रीतम हम तुम कौ पावा ॥
दरब अरथ सब देहु लुटाई । जोबन रूप अनूप गँवाई ॥
कीन्ह दया तब अलख गोसाईं । दीन्हा रूप सोय सुख माहीं ॥
तब महिमा मैं तोर न जानी । निसि-दिन रह्यों हिये अभिमानी ॥
सो अब कंत कहाँ तोहिं पाओं । चरन लाय सिर तोहि मनाओं ॥
तुम्ह नित करो मोर मनुहारी । मैं न करौं कुछ कान तुम्हारी ॥
का अब करहुँ मनाऊँ कैसे । बिनती करहुँ कीन्ह तुम्ह जैसे ॥
तुम्ह साईं मैं चेरी मोरी । का अब करहुँ अहौं मति थोरी ॥
नित सिर पर राख्यो तोर चरना । का अब करहुँ दई कर करना ॥

सात बरस बँद राख्यों, लायो दोख न मोहि ।
औगुन मोर छिपायो, कह्यो न तुम कछु मोहिं ॥
सात बरस राख्यों बंद माहीं । मन महँ रोस कियो कुछ नाहीं ॥
चलत बार तोर रूप न देख्यों । वचन न सुन्यों न नयन विलेख्यों ॥
सो लालन तजि रहे अभागी । गई लाल मैं सोय न जागी ॥
जब तोहिं का बाहर बहिराए । बैरिन नींद कहाँ ते आए ॥
देख्यों जाग मँदिर तोर सूना । नगर कोट घर भयो बिहूना ॥
आयो फूल छाँड़ फुलवारी । काँटा रह्यो बाग महँ झारी ॥
गयो कत सो बेग सुभागा । पाछे रह्यो कलक सो लागा ॥
दिह्यो उत्तर मोहि कत सोहाई । फाटै भुम्म अब जाऊँ समाई ॥
यह कलक अब दिह्यो मिटाई । उठ कै लाल लिह्यो सँग लाई ॥
ऐसो रतन मिला जग, छार समान्यो आय ।
धृक जीवन जो लाल बिन, जग माँ जियत रहाय ॥
यह घर बार सो देस तुम्हारा । भयो सून सब जग अँधियारा ॥
कवन बताइहि भेद करम था । भूलै कवन देखाइहि पथा ॥
को तुम बिन यह भार उठाई । नेम धरम दिन-दिन अधिकाई ॥
अब तुम अस जग उपजा नाहीं । कौन सो करै दुखी परछाहीं ॥
तुम्ह समान जग फेरि न आई । को अस रूप ज्ञान बुध पाई ॥
भरम नींद रह्यो पिउ सोई । नार सो उत्त चेत न कोई ॥
तुम निहचिंत भयो पिव जाई । सोच हमार तज्यो सुख दाई ।
सभै लोग हैं यह ससारा । तुम्ह बिन कोऊ न अहे हमारा ॥
केहि-क देख मन हुलसैं पीऊ । तृखा बुझाय पियासै जीऊ ॥
वह बसत वह पावस, वहै फूल फल सोय ।
सब अपने रितु देखब, तुम्हें न देखै कोय ॥
वहै मदिर औ सरवर तीरा । करहिं धमार सदा वह तीरा ॥
वहै फूल फूले चहुँ ओरा । वह चातक रँग खजन मोरा ॥
वहै पावन जो फिर फिर आवै । वहै दिवस वह रैन दिखावै ॥
एक न तुम जेहि बिन ससारा । होयगा तीन भवन अँधियारा ॥
वह तरुवर वह पात सहावन । भावन एक बिना मन भावन ॥
एक दिन हत्यो सो भाग सोहावा । जेहिं दिन तोहि कहँ नायक लैआवा ॥
भये धूम सम मिसिर के देसा । उठ धावा सभ रँग नरेसा ॥
बैठ्यो नील करै असनाना । नर-नरेस सबइ देख लोभाना ॥
यक दिन आज सो देख्यों, सो मुख छार छिपान ।
का भा रूप अनूप वह, जेहि संसार लुभान ॥
सपने देख बिमोह्यों तोहीं । उपजा बिरह तेज लखि तोहीं ॥

आयो मिसिर कथ तोहिं लागी । कह्यों कि का गुन कीन्ह अभागी ॥
प्रेम हमार साँच विधि कीन्हा । पाहन स्वरूप सो हम कौं दीन्हा ॥
जब प्रीतम हम सें मुख मोरा । जीवन भयो दरस लखि तोरा ॥
चालीस बरस जोग मैं कीन्हा । सुन कै नाँव सबै कुछ दीन्हा ॥
जब तोर नाउँ सुनावै कोई । पावे लाख देऊँ जो होई ॥
बीस बरस रह्यों दरस अधारा । बीस बरस सुन नाम सँभारा ॥
अब तोर दरस हरा मुख माहीं । नाऊँ तुम्हार सुनब अब नाहीं ॥
देखहुँ दरस सुनहुँ नहिं नाऊँ । केहि के अधार रहौं यह ठाऊँ ॥
ना पिउ बोल सुनावहु, न अब दरसन देहु ।
करहु दया पति राखहु, यह जीवन आपन लेहु ॥
अब पत रहै जो जाय पराना । धृक जिव तुम बिन पुन छिन माना ॥
जिवन भला जब लहि पिउ होई । बिना पीव धृक जीवन सोई ॥
पिव बिन सून सभै ससारा । सुख सपत सम पिव बिन जारा ।
बिन पिव कोई सँघाती नाहीं । केहि बिधि रहे प्रान घट माँही ॥
जरै जाय सुख संपत साजा । बिना पीउ आवै नहिं काजा ॥
पिव लै सँग जो होय भिखारी । बिन पिउ सुख सपत बलिहारी ॥
पिव के सँग ... ... । बिना पीव सुख बिलसै नाहीं ॥
तुम बिन कत जगत अँधियारा । भयो उजार सभै संसारा ॥
निठुर प्रान जो अब लहि रह्यो । पाहन हिया निठुर दुख सह्यो ॥
खाय पछार जो छार पर, करै आह एक बार ।
पछी प्रान सो उड़ गयो, रहे छार महँ छार ॥
यूसुफ निकट राख तेहि दीन्हा । बिरहिन प्रेम समापत कीन्हा ॥
धन वह सती प्रेम चितलावा । आद अत लहि प्रेम लगावा ॥
जब लहि जियै प्रेम रस चाखै । पिव सँग गये प्रान पुन राखै ॥
जो कुछ अहै जो जीवन माहीं । मरै प्रात निठुर कुछ नाहीं ॥
रिखि मुनि सिद्ध तपा औ जोगी । प्रेम पुरुष औ बिरह बियोगी ॥
पंडित कवी औैर सयाना । मीर अमीर राव सुलताना ॥
रूपवंत गुनवत सोहाई । तेजवत बलवत बनाई ॥
ऐसे लोग रहै ना पाये । केहि कारन यह जग माँ आये ॥
सब आए यहि जगत महँ, कीन्ह सो गुन बिस्तार ।
कोउ रहे पुनि आवा, खाय लीन्ह यह छार ॥

उपसंहार

उन लोगन कहै सॅवर 'निमारा'। उठा रोय मनमहँ एकबारा ॥
जब ते जनम लीन्ह जग माहीं। छुट दुख और सो देख्यो नाहीं ॥
जब लहि जिऊँ पिऊँ दुख नीरा। माथहिं दीन्ह सो दुख कै पीरा ॥
अवर दुःख मैं सब कुछ सहा। भयो एक दुख बाउर महा ॥
पुत्र अनूप दई मोहिं दीन्हा। रूप अनूप बुध आगिर कीन्हा ॥
बाइस बरस रहा जग माहीं। छुट विद्या उन जान्यो नाहीं ॥
नाम लतीफ अनूप सोहावा। सब गुन ज्ञान दई अधिकावा ॥
बात भुलात नहिं पुत्र सोहावा। सायर सुघर सो ग्रंथ बनावा ॥

बाइस बरस के बयस महँ, छाड़ दीन्ह उन देह।
मुरत अनूप गुलाब से, जाय मिले पुन खेह ॥

तब मैं भयऊँ सो बाउर भेसा। करे सदा अपकाल अँदेसा ॥
सबहू औषध कीन्हा उपचारा। बिनति किह्यों सो बारम बारा ॥
जब तें लतीफ कर मरम बिसेख्यो। तब सपत अबिरथा देख्यो ॥
तब मैं कहा पुत्र से रोई। फिरत सोहाय नहीं अब कोई ॥
मोहिं का जान पड़ा जग माहीं। कोइ ठाकुर औ सूरत नाहीं ॥
तब उन कहा कहै का ताता। हमका दोख होय यह बाता ॥
अहै सो सत्त एक करतारा। वह कर खेल सो अहै अपारा ॥
तुमको दोख होब अब ताता। दइ सुखिया कहँ दोख बिधाता ॥
जो कुछ ... ... मारा। सो पुन अहै को मेटन हारा ॥

जेहि दुख ते अकुलाव तुम, करहु पिता संतोष।
बड़े लोग सब दुख सहै, होय मुगत गत दोख ॥

जेहि लहि नबी भये जग माहीं। छुट दुख और सो देखा नाहीं ॥
काहुँ कहै कवि लास निसारे। रोवत आद बीन कै सारे ॥
काहु बाँध अगिन महँ डारा। काहू अँध कीन्ह अँधियारा ॥
काहु कहँ आरसी चीरा। काहु कहँ सर तज्यो सरीरा ॥
काहु मीन के मुख महँ डारा। काहू कूप डार निसारा ॥
जेहि के लाग रच्यो ससारा। तेहि का दुख वार न पारा ॥
औ श्याम दुख सब्द जगजानी। जब लग वै सो दुख निभानी ॥
जहँ लहि भये सिद्ध अवतारा। सभ का दुख दीन्हों करतारा ॥
कोऊ न यह जग दुख तें बाँचा। सहै आँच सो कुदन साँचा ॥

रामचंद्र जो दुख सह्यो। सो जान्यो सब कोइ ॥
मानुष देह धर सभ, दुख तें व्याकुल होइ ॥
तेहि ते दुखित होइह जिन ताता। करहु न अब रोय अपघाता ॥
सत साधु कहँ वह दुख दईं। कनक जराइ खरा कर लईं ॥
अब तुम करहु मोर सतोखा। देहु असीस जो पाऊँ मोखा ॥
यह जग मा सुठ जीवन थोरा। अन काल सुठ होइअ मोरा ॥
कोउ दिन दस आगे कोउ पाछे। है नित काल सो काछे-काछे ॥
उन लोगन कै मेट न होना। होने हुए, सो हुए न होना ॥
देखउ यह जग को गत ताता। दईं जनम भर मरन बिधाता ॥
जे कोइ जनम लीन्ह जगमाहीं। सो जान्यो एक दिन है नाहीं ॥
जनम साथ यह मरन है, मरन साथ गत मोंख।
हिये बोल न गाँठहु; करहु पिता सतोख ॥
कहि यह बात जियन मुख मोरा। गयो प्रान तजि प्रान सो मोरा ॥
सब सँवरहुँ वह लाल अमोला। हिया फाट मुख आव न बोला ॥
जस याकूब सो पुत्र बिछोहा। रह्यों प्रान सो निठुर बिछोहा ॥
तस यह प्रान निठुर अब रहे। यूसुफ बिरह नेह निर्दहै ॥
यूसुफ सभ कहँ पुत्र सोहावा। कहँ अस पुत्र सो जगभा आवा ॥
निसि दिन करै तपस्या जोगू। जब तप करै चहै सुख भोगू ॥
जाय जोग महँ रैन बहाईं। तरुन बस महँ बिरिध सोहाईं ॥
कईं ग्रथ अनूप बनावा। जिन देखा चख नीर बहावा ॥
सँवर रूप गुन ज्ञान सोहावा। रात-दिवस जल चख बरसावा ॥
हिया बजर का भयो हमारा। को लै गयो सो लाल हमारा ॥
गयो लाल केहि देस कहँ, जेहि कै मिलै न खोज।
होय सोइ निहिचिन्त, सो देइ हमें दुख रोज।
सबै गये हौं रहा अकेला। पहिले पढहि मोह पर हेला ॥
तेहि पाछे मोहिं छाड़ सिधारा। .. ... ॥
यह जग छाड़ सोई निहचिंता। गये पैठ और सागर मीता ॥
अब सँवरौं वह समै सोहाये। छाती फाट बेहर न जाई ॥
कहाँ गये औ कहाँ ते आये! जान न परे भेद निरभाये ॥
सँवर सँवर वै लोग सुजाना। रोवे निस दिन होयँ अज्ञाना ॥
अपने मीत्र सँवर सुख पायहु। होय बोध मनका समुझावा ॥
वै सभ गये तुम्हीं यह देसा। केहि दिन कर अब करहुँ अँदेसा ॥
तुम का अत वहै नहिं जाना। तेहि का कौन सोच पछिताना ॥
जेहि पथ सिधारें, सभैं बटाऊ लोग ॥
चलहु सुचित जेहि मारग, और न जोग न भोग ॥

रोय रोय यह बिरह बखानी । कोऊ न रहा जग रहै कहानी ॥
यह जग तें मन रहै उदासा । सँवरो जहाँ सदा कर बासा ॥
देखि जगत कर कूकत हाला । होय सदा मन हाल बेहाला ॥
जान न परैं भेद अवगाहाँ । जग जीवन उपज्यों भुव काहाँ ॥
देहु दयाल मोरहिँ कर मोखू । दरद मोर अब अवगुन दोखू ॥
पैठ प्रेम कै अचर कोई । दिहेन असीस मोहिँ मन होई ॥
हम न रहे अनकर रह जाई । सँवर हियों लोग हिये सुख पाई ॥
सात दिवस महँ कथा सोहाई । कीन्ह समापत दीन्ह बनाई ॥
सभ लोकन कहँ लाऊँ सीसा । लावहु दोख न देहु असीसा ॥
गुन आखर ... , ...जहाज ।
जनम .. ... , ...लाज ॥